अध्याय - 5

प्रेमचंद की अन्य कहानियों का वर्गीकरण

प्रेमचंद की अन्य कहानियों का वर्गीकरण

1. सामाजिक एवं पारिवारिक कहानियाँ
2. नारी-विमर्श की कहानियाँ
3. दलित - विमर्श एवं छुआछूत पर आधारित कहानियाँ
4. ऐतिहासिक कहानियाँ
5. राजनीतिक कहानियाँ
6. साम्प्रदायिक कहानियाँ
7. राष्ट्रप्रेम पर आधारित कहानियाँ
8. शैक्षणिक कहानियाँ
9. बाल-मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
10. पशुओं पर आधारित कहानियाँ
11. अंध-श्रद्धा पर आधारित कहानियाँ
12. आत्मकथात्मक कहानियाँ
13. आधुनिक साधनों से हो रहे नुकसान पर आधारित कहानियाँ
14. अन्य समस्याओं पर आधारित कहानियाँ

1. सामाजिक एवं पारिवारिक कहानियॉं

प्रेमचंद अपने युग के सबसे बड़े कहानीकार थे। उन्होंने अपने समय के सामाजिक परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखकर अपने साहित्य की रचना की। जिसमें उनकी कहानियॉ भी अछूती नहीं रही हैं। प्रेमचंद ने कुल 302 कहानियॉं लिखी है। जिसमें से चार कहानियॉं ऐसी हैं जिसकी कथा अन्य चार कहानियों की कथा से मिलती है। सिर्फ कहानी का शीर्षक ही अलग है। जिसकी वजह से प्रेमचंद की कुल 298 कहानियॉं ही होती है।

कहानी का शीर्षक अलग, कथा एक :--

कहानी का नाम	**प्राप्त हुई कहानी का नाम**
1. प्रतिज्ञा	रूहे स्याह (कलुषित आत्मा)
2. नबी का नीति-निर्वाह	न्याय
3. प्रतिशोध	खूनी
4. बोहनी-1	बोहनी-2

प्रेमचंद की 298 कहानियों में से मैंने 38 कहानियों को 'नवजागरण से संबंधित कहानियॉ' शीर्षक के अन्तर्गत रखा है। वैसे तो प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ को नवजागरण को दर्शाती हैं पर 38 कहानियॉ ऐसी हैं जहॉ प्रेमचंद ने खुले रूप से समाज की कुरीतियों का विरोध किया है। बाकी की 260 कहानियों को मैने इस अध्याय में विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत रखा है, जैसे---

	शीर्षक		**कहानियों की संख्या**
1.	सामाजिक एवं पारिवारिक कहानियॉं	--	83
2.	नारी-विमर्श पर आधारित कहानियॉं	--	63
3.	दलित - विमर्श पर आधारित कहानियॉं	--	18
4.	ऐतिहासिक कहानियॉं	--	17
5.	राजनैतिक कहानियॉं	--	07
6.	साम्प्रदायिक कहानियॉं	--	03
7.	राष्ट्रप्रेम पर आधारित कहानियॉं	--	13
8.	शिक्षा से संबंधित कहानियॉं	--	06
9.	बालमनोवैज्ञानिक कहानियॉं	--	08

10.	पशु पर आधारित कहानियाँ	--	05
11.	अन्ध श्रद्धा पर आधारित कहानियाँ	--	02
12.	आत्म कथात्मक कहानियाँ	--	04
13.	आधुनिक साधनों पर आधारित कहानियाँ	--	01
14.	सन्दिग्ध कहानियाँ	--	33

1. सामाजिक एवं पारिवारिक कहानियाँ

किसी ने ठीक ही कहा है कि- "साहित्य समाज की सर्वाधिक सशक्त और संपूर्ण अभिव्यक्त होता है।" प्रत्येक साहित्य को समाज के भूत और वर्तमान से बड़ा ही गहरा संबंध होता है, और साहित्यकार इन्हीं प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सम्बन्धों के आधार पर अपने पाठक को अपने समकालीन सत्य ; अतीकालीन संस्कार और संभावनीय भवितव्य से परिचित कराता है। इसलिए ध्यान से देखने पर ज्ञात होता है कि साहित्य अपने व्यापक अर्थ में समाज के मूक इतिहास का मुखर सहोदर भाई है। वह अत्यधिक संशिलष्ट रूप में अपने समाज का पूरा इतिवृत्त सवाक् चित्रों के माध्यम से उपस्थित कर देता है। प्रेमचंद ने भी अपने साहित्यमें समकालीन समाज का हूबहू चित्रण किया है। प्रेमचंद का समय ई.स. 1880 से 1936 तक माना जाता है। यही वह समय था जब पीढ़ियों से हमारे देश में चले आ रहे रूढ़िगत नीति-नियमों का खण्डन शुरू किया गया था। राजाराम मोहन राय , दयानंद सरस्वती, विवेकानन्द आदि के साथ-साथ कई संस्थाओं ने मिलकर समाज के अन्ध-विश्वासों एवं रूढ़िगत नियमों को बदलने की शुरूआत की।

प्रेमचंद यथार्थवादी लेखक थे। वे 'कागद की लेखी' नहीं 'ऑखिन की देखी' कहते थे। सदियों की गुलामी और विदेशी शासन तथा प्रगतिशील मान्यताओं के सम्पर्क के अभाव ने हिन्दू-समाज को पतन की दिशा में पहुँचा दिया। जब भारतवर्ष का अंग्रेजों, फ्रासीसियों जैसे पाश्चात्य सभ्यता के धनिकों के साथ परिचय बढ़ा तब यह स्वाभाविक ही था कि उनके उन्नत विचारों का आलोक भारत पर पड़े और इसी के परिणाम स्वरूप हमारे साहित्यकारों ने भारतीय समाज में चले आ रहे रूढ़िगत नीति-नियामों और मान्यताओं पर न केवल लिखा बल्कि उसका खुलकर विरोध भी किया। जिसमें प्रेमचंद का स्थान सर्वोच्च है। प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं में उस समय के समाज के हर पहुलुओं को जैसे कि पूंजीवाद, जातिवाद, कट्टरता, मूर्तिपूजा, ब्राह्मणों का वर्चस्व आदि के बारे में न केवल खुलकर

लिखा है , बल्कि उसका विरोध भी किया है। प्रेमचंद की 84 कहानियों को मैंने सामाजिक एवं पारिवारिक कहानियों के परिप्रेक्ष्य में रखा है। जिनकी संक्षिप्त चर्चा इस प्रकार है।

1. नसीहतों का दफ्तर

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू की जमाना नामक पत्रिका में मई -जून 1912 को 'आलिम-बेअमल' नामक शीर्षक से हुआ बाद में हिन्दी में गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानयिाँ -1 में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में लेखक ने बाबू अक्षयकुमार को माध्यम बनाकर दरिद्रता से ऊपर उठे हुए मनुष्य की मन: स्थिति को दर्शाया है। कहानी के प्रारम्भ में ही प्रेमचंद दिखाते हैं कि अक्षयकुमार जो पटना के बड़े वकीलों में से एक थे। वे भी एक जमाने में दरिद्र थे। जैसा कि हम जानते हैं ज्यादातर अमीर लोगों के यही किस्से मशहूर होते हैं, चाहे पहले के जमाने के हो या आज के जमाने की बात हो। अक्षयकुमार के लिए भी कुछ ऐसा ही लोग कहते हैं कि--" अक्षयबाबू को देखा, आज दरवाजे पर हाथी झूमता है, कल पढ़ने को तेल भी नहीं मयस्सर होता था, पुआल जलाकर उसकी आंच में पढ़ते, सड़क की लालटेनों की रोशनी में सबक याद करते। विद्या इस तरह आती है। कोई-कोई कल्पनाशील व्यक्ति इस बात के भी साक्षी थे कि उन्होंने अक्षयबाबू को जुगनू की रोशनी में पढ़ते देखा है।'' 1 वैसे यहॉ पर अक्षयकुमार की जुगनू और पुआल के प्रकाश में पढ़ने की बात अतिशयोक्तिपूर्ण लगती है। दरअसल प्रेमचंद यहॉ इस बात को स्पष्ट करना चाहते हैं कि अक्षयकमार काफी गरीबी से ऊपर उठकर आए हैं। जिसमें उनकी पूरी जवानी चली गई।

अक्षयकुमार के पास सारी अच्छाइयॉं थीं पर उनमें एक दुर्गुण भी था वह था, कंजूसी का। इस पर प्रेमचंद लिखते हैं कि--" जिस तरह दानशीलता मनुष्य के गुणों को छिपा लेती है उसी तरह कृपणता उसके सद्‌गुणों पर परदा डाल देती है। कंजूस आदमी के दुश्मन सब होते हैं, दोस्त कोई नहीं होता। हर व्यक्ति को उससे नफरत होती है। वह गरीब किसी को नुकसान नहीं पहुॅंचाता, आमतौर पर वह बहुत ही शांतिप्रिय, गंभीर सबसे मिल जुलकर रहने वाला और स्वाभिमानी व्यक्ति होता है, मगर कंजूसी काला रंग है जिस पर दूसरा कोई रंग, चाहे कितना ही चटख क्यों न हो, नहीं चढ़ सकता।'' 2

बाबू अक्षयकुमार के पास पैसा, प्रतिष्ठा थी लेकिन वे इतने कंजूस थे कि दो घोड़ों की फिटन पर कचहरी नहीं जाते थे, ना ही घर में नौकरों की फौज रखते थे। वास्तव में यह मनुष्य का स्वभाव है ,कि वह जिस स्थिति में पला बड़ा रहता है उस स्थिति को भूलता नहीं है। आज अगर कोई

व्यक्ति ऐशो-आराम में पला बड़ा होता है तो वह पैसे की थोड़ी तंगी भी बरबाद नहीं कर सकता है। बाबू अक्षयकुमार की पत्नी सुन्दर हसमुख 'हेमवती' उनके बिल्कुल विपरीत थीं वे जितने कंजूस थे उतनी उनकी पत्नी खर्चालु। पति-पत्नी नदी के किनारों की भांति थे केवल दोनों का प्रेम एक दूसरे को बांधे हुए था।

एक दिन बाबू अक्षयकुमार कचहरी से लौटे तो उनकी पत्नी ने उन्हें निमंत्रण पत्र दिया जो एक नाटक का निमंत्रण था और हेमवती ने डाक्टर किचलू की बीबी को जो इस नाटक का आयोजन कर रही थी उन्हें ड्रामे में एक्ट करने के लिए हा कर दिया था। जब अक्षयकुमार को पता चला तो वह डर गए। क्योंकि पिछली बार ड्रामे के कपड़ों में काफी पैसे चले गए थे। इसलिए उन्होंने वकालत का सहारा लिया और मीठी जुबान से यह जताया कि उसके परफोरमस और रूप से कितनी ही औरतों का नाहक ही जी जलेगा, जो अच्छी बात नहीं है। पत्नी पति की चालाकी को समझकर पति को बड़ी चतुराई से बताती है कि वह नया ड्रेस नहीं लाने वाली है, और न ही वह अब ड्रामे मे परफारमेनस देगी, भले ही डाक्टर की बीबी नाराज हो जाए। उस समय अक्षयबाबू अपनी मूर्खता पर पछताते हैं।

दूसरे दिन अक्षयकुमार हवाखोरी के लिए आनंद बाग गए और अपनी खास जगह पर बैठे। तभी एक आदमी ने उन्हें एक सुगन्धित बन्द लिफाफा दिया। इस लिफाफे में एक पत्र था, जिसमें एक औरत ने अक्षयकुमार की अच्छाइयों के पुल बांध रखे थे। जिसका अक्षयकुमार पर इतना प्रभाव पड़ा कि दूसरे दिन शहर की सारी फैशनेबुल दुकानों की सैर कर आए। उन्हें देखकर दुकानदार भी चौंक गए कि उन्होंने आज इतना खर्चा किया था कि फिटन में उनके लिए बैठने की फुरसत नहीं थी। यहॉ तक घर पर लेट पहुॅचने और सुबह जल्दी निकलने एवं पत्नी हेमवती के पूॅछने पर गलत जबाब भी दिए और कहा कि जिगर में दर्द था, तो डॉ. चड्ढा को दिखाने गया था। अंत में शाम को वह तैयार होकर पत्र में निश्चित की गई जगह यानी डाक्टर किचलू के घर पर, जहॉ आज ड्रामा होने वाला था , वहॉ पर गए और हरे रंग के कपड़े वाली स्त्री को ढूॅढ़ने लगे जो कि खत के हिसाब उन्हें वहॉ अशोक कुंज में मिलने वाली थी। अक्षयकुमार के ठाट-बाट को देखकर सब अचम्भित रह गए। किसी ने न सोचा था कि वे इतने गबूर जवान और अच्छे दिख सकते हैं। सब इनकी तबियत के बारे में पूॅछ रहे थे, लेकिन अक्षयकुमार उस औरत को ढूॅढ़कर सबको यह दिखाना चाहते थे कि कोई स्त्री उन पर कैसे अपना प्यार न्योछावर कर सकती है। अक्षयकुमार आधा एक घंटे तक नजर दौड़ाई, नाटक शुरू हो गया, फिर वह औरत न दिखी लेकिन नाटक मे हेमवती के परफाम को देखकर गुस्सा

जरूर आया। नाटक के दौरान कितनी ही बार बाहर जाकर देखा पर जब वह न मिली तो खुद को कोसने लगे। नाटक के खत्म होने पर जब बाहर निकले तो उन्होंने देखा कि एक हरे वस्त्र वाली स्त्री उनको बुला रही है। बस फिर क्या था, वहॉ जाकर अक्षयकुमार ने फिल्माना अन्दाज में प्यार का इजहार किया , अक्षय बाबू ने उस स्त्री का घूँघट उठाया और उसे देखते ही झेंप गए। उनके मुख से केवल इतना ही निकला --" हेमवती, अब मुँह से कुछ मत कहो, तुम जीती, मैं हार गया। यह हार कभी न भूलेगी।'' 3

2. त्रिया - चरित्र

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन 'तिरिया-चरित्तर' नाम से जमाना में जनवरी 1913 में हुआ। तथा बाद में प्रेमपच्चीसी में भी इसका संकलन किया गया। हिन्दी में इसका प्रकाशन ' त्रिया-चरित्र' नामक शीर्षक से किया गया। बाद में गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ - 1 में भी इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी के पात्र सेठ लगनदास के माध्यम से लेखक ने समाज के एक ऐसे पहलू को उजागर किया है जो आज भी हमारे शिक्षित समाज में देखा जाता है। लगनदास संसार के सभी सुखों से युक्त था। उसे अगर किसी बात की कमी थी तो वह यह थी कि वह नि:संतान था। वैसे तो एक पत्नी व्रत के कायल थे लेकिन संतान के अभाव में उन्होंने पांच शादियॉ की। फिर भी चालीस साल की उम्र तक कोई संतान न हुई। उन्हें चिन्ता इस बात की थी कि उनके न रहने के बाद उनकी संपत्ति का वारिसदार कौन होगा ? एक दिन घर वालों की परवाह किए बिना उन्होंने एक अनाथ बालक को गोद ले लिया। लड़के का नाम मगनदास रखा वे उसे बहुत प्यार करते थे। उसकी सारी इच्छाएं वे पूर्ण करवाते थे। उसकी पढ़ाई के लिए उन्होंने उसे विदेश भेजा तथा उसकी शादी भी नागपुर के करोड़पति सेठ माखनलाल की बेटी इन्दिरा से करवायी। सेठ की एक भी पत्नी उस लड़के से प्यार नहीं करती थी वह किसी को भी पहले से ही गवारा नही था कि सेठ जी कोई बच्चा गोद ले। मगनदास मॉ के प्यार से वंचित रहा। उसकी तकदीर ज्यादा समय तक अच्छी न रही जब--" वह सैर -सपाटे के इरादे से जापान गया हुआ था कि दिल्ली से खबर आई कि ईश्वर नें तुम्हें एक भाई दिया है। मुझे इतनी खुशी है कि ज्यादा अर्से तक जिंदा न रह सकूॅ। तुम बहुत जल्द लौट आओ। --- मगनदास के हाथ से तार का कागज छूट गया और सर में ऐसा चक्कर आया जैसे किसी ऊॅचाई से गिर पड़ा है।'' 4

अक्सर ऐसा देखा जाता है कि जब किसी परिवार में किसी अनाथ बालक को गोद लिया गया हो और उसके बाद कोई संतान पैदा हो जाती है तब उस अनाथ बच्चे पर से माँ-बाप का प्यार कम हो जाता है। परिवार उसको दुत्कारने लगता है उसका सब कुछ छिन सा जाता है। कुछ अनाथ बच्चों को उसके माता-पिता घर से निकाल तक देते हैं। ऐसे निर्दयी दंपतियों की वजह से वे अनाथ मासूम बालक दर-दर की ठोकरें खाते हें और उनके मन पर इतना बुरा प्रभाव पड़ता है कि वे आगे जाकर कई गलत काम भी करने लगते हैं। अनाथ बच्चों को गोद लेना तो ठीक है लेकिन उन्हें अपने बच्चे जैसा पालना-पोसना बड़ा कठिन है। दुनिया में ऐसे भी कई बच्चे हैं जिन्हें मां-बाप अपने बच्चे की तरह पालते हैं और बाद में वही बच्चे नाम भी रोशन करते है जैसे कबीर, तुलसी, नाना साहेब, महाराजा सयाजीराव गायकवाड़, रतनटाटा आदि।

मगनदास रात के समय घर के दरवाजे के पास पहुँचा तो घर में नाच- गाना हो रहा था। वह अन्दर न जा सका। दुकान के चबूतरे में बैठकर सोचने लगा कि अब क्या करें। पता था कि सेठ जी उसे प्यार करेंगे। अब तो उनकी मझली पत्नीं के अलावा सारी पत्नियाँ भी उससे अच्छा प्यार करेंगीं। वह अब तक जिस घर का मालिक था उस घर पर अब नौकर बन कर न रहना चाहता था। इसीलिए उसने उस घर को छोड़ दिया। सिर्फ अपनी पत्नी इन्दिरा के बारे में सोचकर उससे मिलने चला गया। मगनलाल ने तय किया था कि वह बाहर ही इन्दिार के तौर-तरीके को भांप लेगा, अगर उसमें रईसी की बू आएगी तो वह वहाँ से भी चला जाएगा और अगर रूखी-सूखी खाने को तैयार होगी तो इससे अच्छा क्या होगा ? वह रात को नागपुर पहुँचा। मक्खनलाल के बगीचे में पहुँचकर इधर-उघर देखने लगा। जहाँ उसे एक मालिन दिखाई दी, जो इन्दिरा के लिए फूल बना रही थी। उसी से उसे पता चला कि इन्दिरा बड़ी शौकीन और ठाट-बाट से रहने वाली है। उसको यह भी पता चला कि जब उसको पता चला कि सेठ लगनदास को बेटा हुआ तो वह खूब रोई, सेठ मक्खनलाल उसे बहुत समझाया और वह दामाद को घर जमाई रखने का निश्चय कर लिया है।

यह बात सुनकर मगनदास वहाँ से चला गया। उसको विश्वास हो गया कि उसका निर्वाह वहाँ न होगा। जब मगनदास बात कर रहा था उस समय झरोखे में बैठकर इन्दिार सारी बातें सुन भी रही थी। मगनदास शहर के बाहर एक सयान में ठहरा, जहाँ शराब की दुकान थी। सुबह जब उठा तो उसके शरीर पर कपड़ों के अलावा कुछ भी न था वह अपनी किस्मत का रोना न रोकर कोई काम करने के बारे में सोचने लगा--" लिखने और गणित में उसे अच्छा अभ्यास था मगर इस हैसियत में उससे फायदा उठाना असंभव था। उसने संगीत का बहुत अच्छा अभ्यास किया था। किसी

रसिक रईस के दरबार में उसकी कदर हो सकती थी मगर उसके पुरुषोचित अभिमान ने इस पेशे का अख्तियार करने की इजाजत न दी। हां वह आला दर्जे का घुड़सवार था और यह काम मजे में पूरी शान के साथ उसकी रोजी का साधन बन सकता था। पक्का इरादा करके उसने हिम्मत से कदम आगे बढ़ाए।'' 5

प्रेमचंद यहॉ पर उस कड़वी सच्चाई को समाने रखना चाहते हैं कि व्यक्ति अगर अमीर है तो उसका रहन-सहन भी अमीरों जैसा होगा। उनके लिए पैसों का मोल इतना नहीं होता जितना एक आम् इन्सान के लिए होता है। ऐसे इन्सान को यदि बाहर बिना किसी साधन के निकलना पड़े तो उसे कितना खराब लगता है और उसे कितनी शरम लगती है।

मगनदास ने कई जगह पर नौकरी ढूँढ़ी पर ऐसे कहीं कोई नौकरी न मिली तो वह मायूस हो गया अंत में उसे नागरघाट के ठाकुर अटलसिंह के यहॉ नौकरी मिली और रहने के लिए एक पक्का मकान मिला। कई साल पहले इस गांव के आधे से ज्यादा लोग प्लेग के शिकार हो गए थे। मगनदास वहॉ रहने लगा। उसके गंदे कपड़े और मुरझाये हुए चेहरे को देखकर ऐसा लग रहा था कि हिम्मत और हौसला मुश्किल को आसान और ऑधी तूफान से बचा तो सकेंगें पर उसके चेहरे को खिला नहीं सकंगें। एक दिन वह खाट पर लेटा हुआ था और एक परिचित आवाज वाली बुढ़िया भीख मॉगने आई। वह मालिन थी। उससे मगनदास को पता चला कि उस दिन रात को इन्दिरा ने उनकी बातें सुन ली थीं और उसे निकाल दिया। मगनदास ने मालिन को अपने घर में आसरा दिया तथा यह पता चलने पर कि उसकी एक भतीजी भी नागपुर में हैं और वह भी बेसहारा है तो उसे भी अपने घर में आसरा दिया। मालिन और उसकी भतीजी रम्भा घर का काम करती और मगनदास भी काफी मेहनत करता लेकिन उसकी उदारता के कारण उसे हमेशा तंगी में गुजर करना पड़ता। इसी बीच रम्भा और मगनदास में प्रेम हो गया और अब रम्भा पड़ोसियों के कपड़े सिलती और खूब पैसे कमाती। साल भर के बाद वह मकान अच्छा खासा घर बन गया तभी एक दिन लगनदास का दोस्त जो कि विलायत में उसके साथ था वह उसे ढूॅढ़ते हुए वहॉ आ पहुॅचा। उसने बताया कि सेठ मगनदास का बेटा चेचक से मर गया और सेठ जी ने दुख के मारे आत्म हत्या कर ली। अब वही उसकी जायदाद का स्वामी है घर के सारे लोग जायदाद को लेकर अंदर ही अंदर झगड़ा कर रहे हैं। नौकरों की पांचों उंगलियॉ घी में हैं। बड़ी सेठानी ने आपको बुलाने के लिए भेजा है। मगनदास उसे एक हप्ते में वापस आने का वादा करके रम्भा को सारी सच्चाई बताता है और वह उसे यह भी बताता है कि उसकी शादी इन्दिरा से हो गई है। रम्भा यहॉ पर मगनदास पर गुस्सा नहीं होती और

न ही रोती है वह सिर्फ इतना ही कहती है कि वह उसकी लौंडी बनकर भी रह लेगी लेकिन वह उसे कभी न भूले। मगनदास वादा करता है कि वह उसे कभी नहीं भूलेगा, फिर भी प्रेमचंद मगनदास द्वारा पुरुष की कमजोरी को सामने रखने का प्रयत्न करते हैं। मगनदास मुस्करा कर कहता है कि--" अब इन्दिरा तुम्हारी लौंडी बनेगी, मगर सुनता हूँ वह बहुत सुंदर है, कहीं मैं उसकी सूरत पर लुभा न जॉऊ। मर्दों का हाल तुम नही जानतीं, मुझे अपने आप से डर लगता है।'' 6 यह सौ फिसदी सही है कि एक स्त्री अपने आप पर काबू पा सकती है लेकिन पुरुष नहीं। मगनदास रम्भा से वादा करता है वह दिल्ली नही जाएगा। इस पर रम्भा उसे समझाती है वह दिल्ली जाए वह उसके बगैर रह लेगी। मगनदास के न मानने पर रम्भा और बुढ़िया दोनों रात को ही घर छोड़कर चले गए। मगनदास सुबह उठा तो सारा घर छान मारा पर कुछ न मिला सिर्फ रम्भा का एक पत्र मिला, जिसमें उसने अपने प्यार का इजहार और बड़े दुखी मन से घर छोड़कर जाने के बारे में लिखा था।

मगनदास खूब रोया और बाद में दिल्ली लौट गया। वहॉं उसने सारा कार्य भार संभाला और जब कभी मौका मिलता तो रम्भा और कभी इन्दिरा के बारे में सोचता। अब उसके दिल के एक कोने में इन्दिरा के लिए भी जगह थी और उसके इसके लिए उसके दिल में हमदर्दी भी पैदा हो गई। उसे डर भी लग रहा था कि इन्दिरा रम्भा की जगह न ले ले। एक दिन परिवार वाले इन्दिरा को बड़ी धूमधाम से विदा कराके घर लाए। मगनदास अभी भी द्वन्द्व में था और उसका द्वन्द्व तब टूटा जब उसने सुहागसेज पर रम्भा को देखा। बाद में उसे पता चला कि रम्भा और इन्दिरा एक ही है। अब वे दोनों साथ-साथ और सुखी जीवन व्यतीत करने लगे। वे अभी भी अपने प्रणय के दिनों को याद करते। उस झोपड़ी मे जाते, जहॉं अब मालिन रहती है। रम्भा अभी भी लोगों के कपड़े सिलती है और मगनदास गॉव के जमींदार के यहॉं घोड़े निकालते हैं।

3. नेकी

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन ' बेगर्ज मुहासिन' नामक शीर्षक से उर्दू में अदीब में सितम्बर 1910 में हुआ। हिन्दी में नेकी नाम से गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में भी इसका संकलन किया गया।

वैसे तो यह कहानी सामान्य हे लेकिन इस सामान्य कहानी में भी प्रेमचंद ने एक ऐसी कहावत को सिद्ध किया है जो प्राय: सभी लोग जानते हैं ' नेकी कर दरिया में डाल'। हम सब जानते हैं कि कोई व्यक्ति किसी के लिए थोड़ा भी कुछ कर देता हे तो वह सामने वाले को बार-बार याद दिलाता है कि मैंने आपके लिए यह किया था जिससे लोग उसके एहसान तले दबे रहें, जो अपने आप

में एक शर्मनाक बात है। आज हर एक व्यक्ति स्वार्थी है। बिना स्वार्थ के कोई कुछ भी काम नहीं करता है। जो आज भी देखा जाता है और लेखक के समय में भी कुछ ऐसा ही था । गांवो की हालत फिर भी अच्दी है लेकिन शहरों में आज भी लोग देखकर भी अनदेखा कर देते हैं।

कहानी का प्रारम्भ प्रेमचंद सावन के महीने में लगने वाले मेले से करते है। आज पंडित चिंतामणि की पत्नी बन-ठनकर अपनी लड़की जो गोद में है और सात साल के बेटे हीरामन को लेकर मेला दिखाने जाने वाली हैं। बूढ़ी सास से जब इजाजत मॉगती हैं तो वह उसे सॅभलकर जाने हिदायतें देती है। गॉव के मेले में अक्सर लड़के-लड़कियॉं बन ठनकर आते हैं। लड़कियॉ अपने गुड़ियों को सजाकर पानी में ससुराल जाने को बहाती हैं, जहॉ उसके सुख के दिन खतम हो जाते हैं। लड़के खेल-खेल में गुड़िया पर लकड़ियॉ और डंडे की बौछार करते हैं। रेवती यह सब देखती है। अचानक हीरामन फिसलकर पानी में गिर जाता है। रेवती पछाड़े खाकर रोती है और मदद की गुहार लगाती है लेकिन उसकी मदद कोई नहीं करता है। सबको अपने कपड़ों और बालों की पड़ी है। वहॉं पर काफी मर्द भी थे लेकिन किसी ने हिम्मत न जताई। आज भी हम देखते हैं कि लोग नदी-नालों में डूब रहे होते हैं और उन्हें बचाने वाला कोई नही होता है। हीरामन को बचाने के लिए कोई नहीं जाता है तभी एक मुसलमान फरिस्ता बनकर आता है और उस लड़के को सागर में से निकालकर उसकी जान बचाता है और फिर वह गायब हो जाता है। सब उसको बहुत ढूंढ़तें हैं पर वह नहीं मिलता है। बीस साल गुजर जाते हें । रेवती अब सास बन जाती है और "हीरामणि अब एक हस्ट-पुष्ट लंबा-चौड़ा नौजवान था- बहुत अच्छे स्वभाव का नेक। कभी-कभी बाप से छिपाकर गरीब आसमियों को यों ही कर्ज दे दिया करता । चिन्तामणि ने कई बार इस अपराध के लिण बेटे को ऑखें दिखाई थी और अलग कर देने की धमकी दी थी। हीरामणि ने एक बार एक संस्कृत पाठशाला के लिए पचास रूपया चंदा दिया। पंडितजी उस पर ऐसे क्रुद्ध हुए कि दो दिन तक खाना नहीं खाया।'' 7

यहॉ प्रेमचंद पाठकों को हीरामणि के स्वभाव से परिचित कराते हैं जो कि दयालु एवं लोगों की मदद करने वाला है। जिसके कारण उसके पिता उससे नाराज भी हो जाते है। अब लेन-देन का बहीखाता हीरामणि के हाथों में आ गया है आज हीरामणि की सत्ताइसवीं सालगिरह है। रेवती अपने दोनो पोतों को लेकर खूब दान दे रही है। उस दान पुण्य में चिन्तामणि भी भाग लेतें हैं। इस दिन रेवती खुश भी होती है और रोती भी है। वह उस भलाई करने वाले गुमनाम इन्सान को खुब दुआएं देती है जिसने उनके बेटे की जान बचााई थी। श्रीपुर नीलाम पर चढ़ा था हीरामणि ने रेवती से बात

करके उसे खरीद लिया और उसकी सैर करने निकला। वहॉ जब वह पहुॅचा तो गॉव के लोगों ने नए जमींदार का स्वागत कुछ नजराना देकर किया। शाम तक उसके पास 500 रूपये हो जाते है।

इसके माध्यम से प्रेमचंद जमींदारी प्रथा को बताना चाहते हैं। और यह भी बताते हें कि इन्सान चाहे गरीब हो या अमीर उसे जमींदार को नजराना देना ही पड़ता था नहीं तो जमींदार अपनी बेइज्जती समझता था। वैसे भी पैसा बड़ी खराब चीज है इसका नशा लोगों को चौबीसों घंटों बना रहता है, जिसके कारण नेक इन्सान भी बदल जाते है। हीरामणि का भी घमंडी होना स्वाभाविक था। प्रेमचंद लिखते हैं कि--" हीरामणि को पहली बार जमींदारी का मजा मिला, पहली बार धन और बल का नशा महसूस हुआ। सब नशों से ज्यादा घातक धन का नशा है।'' 8 हीरामणि का यह नशा हमें तब देखने को मिलता है, जब तखतसिंह जो कि एक आसामी हैं और वे उनसे मिलने नहीं आते हैं, जब उन्हें बुलवाया जाता है तब--" थोड़ी देर में एक बूढ़ा आदमी टेकता हुआ आया और दंडवत करके जमीन पर बैठ गया, न नजर, न नियाज। उसकी यह गुस्ताखी देखकर हीरामणि को बुखार चढ़ आया। कड़ककर बोले- अभी किसी जमींदार से पाला नहीं पड़ा है। एक-एक की हेकड़ी भुला दूॅगा।'' 9

यहॉ पर हीरामणि में हुए बदलाव को हम देख सकते हैं। जो इन्सान पहले गरीबों को अपने पिता से छिपकर पैसे देता था आज वही इन्सान पैसे न मिलने पर उसकी बेइज्जती करता है। तखतसिंह ने अपने स्वाभिमान को बचाया तथा उसने पहचान लिया कि यह वही लड़का है जिसकी जान उसने 20 वर्ष पहले बचाई थी। वह वहॉ से चला गया। कुछ दिन बाद रेवती अपने बच्चों के साथ श्रीपुर घूमने आई। वहॉ व ठकुराइन की बातचीत के लहजे से खुश हो गए। अब दोनों आए दिन मिलने लगी। इसी बीच हीरामणि की उनतीसवीं सालगिरह आई। रेवती ने ठकुराइन को न्योता दिया पर उसी दिन हीरामणि ने तखतसिंह के खेत नीलाम करवा दिए। अब तखतसिंह के पास केवल एक गाय बची थी उसी के दूध और उपले से घरबार चलता था। लेकिन यह भी भगवान को मंजूर न था। खूब बारिश आने के कारण मकान गिर गया और गाय उसी में दब कर मर गई। तखतसिंह को भी काफी चोट आ गई। उसी दिन से तखतसिंह बीमार रहने लगा। एक दिन रेवती अपने बेटे की तरफ से तखतसिंह के पास माफी मॉगने आई और साथ में कुछ पैसे देने पर भी तखतसिंह ने पैसे लेने से इन्कार कर दिया। दूसरे दिन हीरामणि जब वहॉ गया तो तखतसिंह का टूटा-फूटा घर देखकर मुस्काराया।,उसे लगा कि तखतसिंह माफी मॉगेगा, लेकिन उसका घमंड तब टूटा जब वह उससे मिलने

गया और उसके हाल-चाल पूॅछने पर " ठाकुर ने धीरे से कहा-- सब ईश्वर की दया है, आप कैसे भूल पड़े ? '' 10

हीरामणि ने दूसरी बार मुँह की खाई। वह चला गया। उसी रात तखतसिंह इस दुनिया को छोड़कर चला गया। बूढ़ी ठकुराइन अब अकेले थीं, वे उपले बेचकर अपना गुजारा चलाती थीं। इस बुढ़ापे में भी वह लकड़ी बेचकर , खेतों में काम करके और गोबर की टोकरी सिर पर रख कर लाती। यह दृश्य बड़ा दर्दनाक था। हीरामणि को उस पर दया आई और उसने खाने-पीने का कुछ सामान रेवती के साथ भिजवा दिया पर उस बुढ़िया ने सामान वापस कर दिया। इसके बाद फिर कभी हीरामणि को हिम्मत न हुई कि वह उसकी कोई मदद करता। रेवती भी जब एक दिन 1 पैसे के 30 उपले के बजाय 20 उपले ही खरीदती है तो उस दिन से वह उनके यहॉ उपले बेचना बंद कर देती है। इस पर प्रेमचंद लिखतें हैं कि--" ऐसी देवियां दुनिया में कितनी हैं ! क्या वह इतना न जानती थी कि एक गुप्त रहस्य जबान पर लाकर मैं अपनी इन तकलीफों का समाना कर सकती हूॅ। मगर फिर वह एहसान का बदला न हो जाएगा, नेकी कर और दरिया में डाल। शायद उसके दिल में भी यह खयाल ही न आया कि मैंने रेवती पर कोई एहसान किया ।'' 11

आज लोग कम पैसे से ज्यादा चींजे खरीदनेवाले मिलते हैं जबकि ठकुराइन रेवती के ज्यादा पैसे में कम उपले खरीदने पर उपले देना बंद कर देती है। हीरामणि की तीसवीं सालगिरह पर ढोल की थाप बज रही थी तभी किसी ने आकर बताया कि ठकुराइन की तबियत ज्यादा खरब है और वे आपको बुला रहीं हैं। रेवती ठकुराइन के पास नहीं जाती हैं और न ही हीरामणि को जाने देती हैं।

यहॉ प्रेमचंद यह बताना चाहते हैं कि व्यकित किस प्रकार बदल जाता है। वही रेवती जो दया की पुतली थी, रहमदिल थी नेक इन्सान थीं वही आज बीमार ठकुराइन के पास अपने बेटे को जाने से मना कर देती है। फिर भी हीरामन ठकुराइन के पास जाता है तब वह अन्तिम सांसे गिन रही होती है। वह तखतसिंह की हड्डियां और सुहाग का सेंदुर गंगा में बहाने को कहकर दुनिया से विदा ले लेती है। हीरामणि को पिटारी खोलने पर उन दोनों चीजों के साथ 10 रूपये भी राह खर्च के लिए मिलते हैं। उसी रात रेवती को स्वप्न दिखता है कि ' उसी मेले में हीरामणि में सागर में डूब रहा है और एक बूढ़ा उसे बचाता है। वह बूढ़ा और कोई नही बल्कि तखतसिंह ही है। आज भी श्रीपुर वहीं था पर वहॉ का नक्शा बदल गया तखतसिंह के मकान की जगह एक शिवालय और उसके सामने एक पक्की धर्मशाला थी और पक्का कुँआ। मुसाफिर यहॉ आते और उसका गुणगान करते। धर्मशाला और शिवालय आज भी उसके नाम से मशहूर है।

इस कहानी में लेखक यह बताना चाहते हैं कि अगर आप किसी पर उपकार करतें हैं तो उससे फल लेने की उम्मीद मत रखो और जो नि:स्वार्थ किसी पर उपकार करता है उसे भगवान अपने आप फल देता है।, जैसे मदर टेरेसा ने नि:स्वार्थ भाव से ही कितने बच्चों एवं गरीबों की सेवा की थी जिसके कारण आज उन्हे पूरा विश्व 'मधर' की उपधि से जानता है।

4. करिश्मा-ए-इन्तिकाम (अद्‌भुत प्रतिशोध)

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में फरवरी 1911 में जमाना में हुआ। हिन्दी में 2 जुलाई 1976 में सारिका में भी इसका प्रकाशन किया गया। बाद में इसका संकलन 'सोलह अप्राप्य कहानियॉं, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य-भाग-1 तथा प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में भी इसका संकलन किया गया।

प्रेमचंद इस कहानी के माध्यम से यह बताना चाहते हैं कि व्यक्ति जन्म से ही बुरा नहीं होता है, कभी-कभी उसके हालात और परिस्थिति उसे बुरा बनने पर मजबूर कर देतें है। कहानी का प्रमुख पात्र शिवनाथ, जो कि 20 साल पहले बुन्देलखण्ड के एक खंगार में रहता था, जो 3 रूपये वेतन से थाने में चौकीदारी करता था। उसी गॉंव में एक लालसाहब नामक एक नम्बरदार रहता था, जो गॉंव की बहू-बेटियों को बुरी नजर से देखता था। सब औरतें उससे परेशान थी। लालसिंह ने अपने प्रेमजाल में शिवनाथ की पत्नी को भी फंसा लिया। शिवनाथ को जब यह पता चला तो उसने लालसिंह को समझाया, अरज की--" मगर लालसिंह नशे- ताकत में भूला हुआ था। शिवनाथ को डॉंट-डपट बतायी और धक्के देकर निकलवा दिया, शिवनाथ को गुस्सा आया मगर जब्त कर गया। और जाकर उसने थानेदार साहब को सारी कैफियत बयान की। थानेदार ने लालसिंह को थाने में बुलाया, मगर शाम को लोगों ने उसे मूॅंछों पर ताव देते हुए लौटते देखा। बेदाग छूट आया। सौ-पचास रूपयों ने मुश्किल आसान कर दी। गरीब शिवनाथ को इस दरबार से मायूस (निराश) होना पड़ा। आखिर उसके दिल ने वह फैसला किया जो ऐसी हालतों में अक्सर आखिरी फैसला होता है।'' 12

प्रेमचंद शिवनाथ के माध्यम से मध्यमवर्गीय एवं निम्नवर्गीय परिवार की सामाजिक स्थिति को तथा अमारों के शोषण की पद्धति को लालसिंह के माध्यम से पाठकों के सामने प्रस्तुत करना चाहते हैं। गरीबों के लिए उनकी इज्जत पैसे से भी बढ़कर होती है। आज भी कितने अमीर अपने पैसों के जोर पर कई मासूम लड़कियों को फॅंसा कर अपनी हवस का शिकार बनाते हैं। आज के युग में लालसिंहों की संख्या बढ़ गई है। जैसे हिमाचल प्रदेश के डी.आई. जी राठोड़, तमिलनाडु के नित्यानंद स्वामी आदि।

एक दिन शिवनाथ ने अपनी पत्नी से कहा कि वह तीन-चार दिन के लिए बाहर जा रहा है। इस बात पर उसकी पत्नी और लालसिंह को अपनी मुराद पूरी करने का मोका मिल गया। शिवनाथ पूरे दिन जंगल में छिपा रहा और आधी रात को छप्पर से घर के आंगन में कूदा तो दोनों प्रेम में मग्न थे। शिवनाथ इसी ताक में था और उसने लालसिंह का गला छूरे से काट डाला और पत्नी को शर्म के मारे डूब मरने की हिदायत दी। शिवनाथ खुद कटा हुआ गला लेकर थानें में गया और थानेदार को धमकाया । यही वह मोड़ था जब शिवनाथ एक चोर से डाकू बन गया। अब वह दिन दहाड़े सबको लूटता। एक दिन वह दंगल को लूटने गया और दंगल ने उसे अपना गुरू मान लिया। अब दोनों ने खूब लूट मचायी। एक दिन उसने पहाड़ी पर से एक बारात जाते हुए देखा और उसे लूटने गए। वह धनीसिंह की बारात थी। उन्होंने धोखे से धनीसिंह के हाथ पैर बांध दिए और ठकुराइन को लूटने गए लेकिन ठकुराइन कुंए में गिर पड़ी। दंगल ने धनीसिंह को छोड़ा तब धनीसिंह ने कहा कि--" अच्छा तो खबरदार रहना। तुमने दगा की मार मारी है। में भी दगा की मार मारूँगा।'' 13

इस बात को एक महीना गुजर गया और तभी एक और बात का प्रचार हुआ कि जगतसिंह डाकू ने धूम मचायी है जिससे शिवनाथ और दंगल के कारनामे धूमिल पड़ गए हैं। पर यह डाकू खून खराबे से दूर रहता है। इसके दंगे में दो चार झोपड़े जलते हैं पर किसी की जान नहीं जाती है। लोगों को सिर्फ इतना पता होता था कि इस डाकू ने यहॉ डाका डाला पर क्या नुकसान हुआ किसी को पता नहीं होता। दंगल ने उसे गिरोह में शामिल करने का सोचा। शिवनाथ ने भी हॉ कहा। उनके बुलावे पर जगतसिंह किनारे मिला वो धनीसिंह था। उसे देख शिवनाथ और दंगल अवाक रह गया, लेकिन धनीसिंह ने पुरानी बातें भूल जाने को कहा। वे तीनों ने कई लूटें की। एक बार धनीसिंह होली के दिन लूट करके लौटा और तीनों शराब के नशे धुत थे, धनीसिंह अपना वादा नहीं भूला था और उसने उसी समय दंगल को नशे की हालत में ही मार डाला लेकिन शिवनाथ वहॉ से भाग निकला। धनीसिंह अब एक नंबर का डकैत बन गया था। उसे पुलिस प्रोटेक्सन मिलता था शिवनाथ रोज आता और दो चार गोलियॉ मार कर चला जाता लेकिन धनीसिंह को नहीं मार पाया। अब शिवनाथ का कहीं पता न था। सब कहते वह मर गया, लालसिंह के नाम का एक चबूतरा बनवा दिया गया।

प्रेमचंद इस कहानी के माध्यम से बताना चाहते हैं कि ज्यादातर मनुष्य किसी घटना या परिस्थिति के कारण या किसी राजनैतिक घटना के शिकार होकर गलत राह पर निकल जाते है और

बाद में समाज के साथ उन लोगों को भी परेशान करते हैं जिसके कारण वे इस स्थिति में पहुँचे हुए होते हैं। इसका सबसे बड़ा उदाहरण 'ओसामा बिन लादेन' है।

5. बड़ी बहन

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में जुलाई 1911 में 'अदीब' में हुआ था और हिन्दी में जुलाई 1980 को 'कादम्बनी' में प्रकाशित हुई। सोलह अप्राप्य कहानियॉं,- 1 और प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य भाग-1 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-1 में भी इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने मुख्य रूप से समाज के उन मनुष्यों पर कुठाराघात किया है जो लोभ, लालच, अहंकार के कारण जान बूझकर दूसरों का हक छीनते हैं। कहानी की पात्र तारा मौजा शिवगंज गॉंव की मुँहफट औरत थी। जो निडर होकर हमेशा सच कहती थी। कुन्दन उसी गांव का चौधरी जयपाल की पत्नी थी, जयगोपाल के पास कुछ न था परंतु जयगोपाल के ससुर यानी कुन्दन के पिता बाबू मधुसूदन के पास जायदात ज्यादा थी। जयगोपाल ससुर की जायदाद पर ऐश करते थे। पर 60 साल की उम्र में जब मधुसूदन को एक बेटा हुआ तो वह यह सुनकर जल-भुन गया, क्योंकि अब उसका उसके ससुर की जायदाद पर कोई हक नहीं रह जाएगा। कुन्दन ने भी बाप को खूब कोसा और नवजात की लाश देखने की तमन्ना जाहिर की। वह कहने लगी कि--" बूढ़ा साठ बरस का हुआ, मगर हविस नहीं गयी। अब उसे गले से बॉंधे। यह सआदत मंद (सुयोग्य आज्ञाकारी) बेटी थी ! खुदगरजी ! वाह, ऐ खुदगरजी ! '' 14

प्रेमचंद यहॉं दर्शाते हैं कि यह वही बेटी है जिसे पाल पोसकर मॉं-बाप ने उसे बड़ा किया है, उसका ब्याह करवाया है तथा बाद में ऐशो-आराम की जिन्दगी दी और आज अपने पिता को ही कोस रही है। वह भी इसलिए कि बुढ़ापे में उनको एक बेटा पैदा हुआ जिसका नाम नैनीचंद रखा गया।

मदनलाल को वह बिल्कुल नहीं अच्छा लगता था और वह अपनी रोजी-रोटी के लिए आसाम चला गया। वह धन कमाता और खर्च करता। विरह में कुन्दन का प्यार बढ़ गया। भले ही उसके तीन बच्चे थे, अब वह अपने यौवन का अनुभव खुद में करती थी। तीन महीने में कुन्दन की मॉं मर गई और उसने नैनी को कुन्दन के हवाले कर दिया। धीरे-धीरे कुन्दन की नजदीकियॉं बढ़ने लगी और कुन्दन नैनी को अपने बेटे से ज्यादा प्यार करने लगी। मधुसूदन के मरने से पहले (जयगोपाल आसाम से वापस आया) नैनी के नाम जायदाद करके जयगोपाल को उसका संरक्षक बनाया था। उसके मन में नैनी के प्रति पहले से ही गलत विचार थे--" जयगोपाल ने पहले ही दिन नैनीचंद के साथ मुगायरत (बेगानापन, प्रतिकूलता) का बर्ताव करना शुरू किया। उसकी तरफ देखता तो नफरत के

साथ, बात करता तो कुर्श लहजे में। कुन्दन भाई की मुहब्बत में शौहर को अपना शरीक बनाना चाहती थी, लेकिन अगर वह कभी उसे गोद में लेकर जयगोपाल के पास चली जाती तो वह नफरत से मुँह फेर लेता। कुछ दिनों तक गरीब कुन्दन ने बहुत कोशिश की कि किसी तरह जयगोपाल के दिल में सफाई हो जाये ; मगर आखिरकार उसे मालूम हो गया कि उसने नौनी का कसूर अब तक नहीं माफ किया और न अब इसकी तवक्को (आशा) थी और वह कसूर क्या था ? पैदा होना ! '' 15

अक्सर इन्सान अपनी लालसा में , गुस्से में या स्वार्थ के कारण उन लोंगों को दु:ख देने लगता है जिनका कोई कसूर नहीं होता है। यह समस्या न केवल परिवार तक सीमित है बल्कि यह हमारे देश की समस्या बन चुकी है। चाहे वह क्षेत्र राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक कोई भी क्यों न हो ? जयगोपाल को नौनी एक ऑख नहीं भाता था वह उसे मारता -पीटता था, कुन्दन कुछ नहीं कर पाती है। पति के लिए उसका प्यार कम हो गया। एक बार नौनी बड़ा बीमार हुआ वैद्य से इलाज करवाने पर भी बुखार न उतरा तो कुन्दन ने शहरी डाक्टर बुलाने की बात की। जयगोपाल ने झूठ बोला कि डाक्टर साहब घर पर नहीं है। नौनी की तबियत ज्यादा खराब होने लगी, कुन्दन उसे लेकर शहर गई और उसका इलाज करवाया। दूसरे दिन जयगोपाल गुस्से से उसे बुलाने आया। कुन्दन के न आने पर उसने उससे कहा कि अब वह उसके घर वापस न आए। तभी कुन्दन ने उसे एहसास दिलाया कि वह घर उसका नहीं उसके भाई का है। तिलमिलाए जयगोपाल ने घर और बगीचे को अपने बेटे के नाम करवाकर जायदाद की नीलामी करवा दी। तारा ने जब यह सुना तो अपनी तेज -तराक आवाज में कुन्दन पर कटाक्ष किया। कुन्दन तुरंत ही नौनी को लेकर कलेक्टर के पास गई और सारा हाल सुनाया। जहॉ जयगोपाल भी बन ठनकर हाजिरी देने आया था। कलेक्टर साहब ने जयगोपाल से जबाब तलब किया। जयगोपाल ने बहाना बनाया कि उसके ससुरजी ने कर्जा ज्यादा लिया था, जिसके कारण जायदाद चली गई। साहब ने उससे पेपर लाने को कहा, जिसके कारण जयगापाल तिलमिलाता हुआ चला गया। कुन्दन नौनी को कलेक्टर के पास छोड़कर वहॉ से चली गई जो बाद में कभी न मिली। नौनी को उसकी जायदाद मिल गई और जयगोपाल आसाम चला गया। सिर्फ एक जायदाद ने हॅसते-खेलते परिवार को बरबाद कर दिया।

6. खौके रुसवाई (बदनामी का डर)

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में अगस्त-सितम्बर 1911 में 'अदीब' में हुआ था। हिन्दी में सोलह अप्राप्य कहानियॉं, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य खण्ड - 1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-1 में भी इसका संकलन किया गया है।

प्रेमचंद प्रस्तुत कहानी के माध्यम से यह बताना चाहते हैं कि व्यक्ति की झूठी शान और नाजायज रिश्तों के कारण न केवल परिवार के रिश्तों की नींव हिल जाती है बल्कि विश्वास भी खत्म हो जाता है। कहानी के पात्र धीरेन चौधरी पुराने खयालों के आदमी थे। उन्हें राजनीति से कोई सरोकार न था। वह कलकत्ता के बड़े बैरिस्टर थे। उनकी पत्नी सरला उनसे विपरीत थीं, वे अंग्रेजी पढ़ी थी तथा स्वतंत्र विचारधारा की आधुनिक महिला थीं। एक बार हैरिसन रोड के किनारे एक नौजवान बंगाली ने एक अंग्रेज को बम्ब से मार डाला। इसका ताल्लुक धीरेन चौधरी से बताया गया। यह हादसा मंगल के रोज चार बजे शाम को हुआ। पुलिस ने धीरेन चौधरी की तलाशी ली। लेकिन कुछ न मिलने पर उन्हें गिरफ्तार करके ले गई। सरला के लिए यह बात अस्वीकृत थी, पर तभी जीतेन्द्रसेन जो चौधरी के मित्र थे उन्होंने बताया कि वह चार से छ बजें के करीब अदालत में नहीं थे और वह नहीं बताते कि वे कहॉ गये थे। सरला परेशान थी उसने कुछ नहीं खाया पिया। उसके दिमाग में उस समय कई ख्याल आने लगे। जब वह दस बजे अपने कमरे में गई तो उसने धीरेन का टेबल देखा। वहॉं पेपर पड़े थे। जब वह उसको सही करने लगी तो नीचे एक पेपर पड़ा मिला। जिस पर मंगलवार शाम को 4 बजे लिखा हुआ था। उसने पेपर पढ़ा और स्तब्ध रह गई।" उसकी अंगुलियों के बीच में कागज का वह पुर्जा हवा के झोंकों से हिल रहा था और ऑखे दीवार की तरफ गड़ी हुई थी। उसका चेहरा खाक की तरह जर्द हो गया था। अज्ब-ए-मफलूज (प्राणहीन, बेजान) की तरह उसके दिल दिमाग इस वक्त बेकार हो गये थे। खत का मजमून भी खयाल में नहीं आता था। वह बहुत देर तक इसी तरह खामोश खड़ी रही। एकाएक उसकी निगाहों के सामने एक पर्दा सा हट गया और सारी कैफियत नजरों के सामने सूरत-पजीर हो गई। उसने एक ठंडी सांस ली और कुर्सी पर गिर पड़ी। आह ! इस खामोशी के यह मायने हैं, इसलिए जबान पर मोहर लगी हुई है। अब मुझे क्या करना चाहिए ? सरला सोचने लगी- बेशक, यह खत धीरेन को इस इल्जाम से बरी कर देगा जो उन पर आयद (आरोपित) है। किसी एहतमाम (प्रयत्न) की जरूरत नहीं। मैं इसे मजिस्ट्रेट के सामने रख दूंगी। जरा सी तहकीकात में सारे वाकियात खुल पड़ेगें और धीरेन फौरन रिहा हो जाएंगे लेकिन उसके बाद फिर कैसे निभेगी ? क्या उसके बाद भी हम एक दूसरे से मुहब्बत कर सकेगें ? ''15

पति-पत्नी का रिश्ता बड़ा नाजुक होता है। अगर उसमें कोई तीसरा आ जाए तो रिश्ता टूटने के कगार पर आ जाता है और कभी-कभी तो रिश्ता टूट भी जाता है। आज कल हमारे समाज में ऐसे कई पति-पत्नी के नाजायज रिश्ते दिखाई देते है जिसका जब पोल खुलता है तो न केवल

रिश्तों में कड़वाहट आती है बल्कि विश्वास भी खत्म हो जाता है। घर के नौकरों को देखकर सरला कम्बल ओढ़े घर के बाहर जाकर एक औरत के घर गई। वह औरत सरला को देखकर चौक गई। सरला ने धीरेन की गिरफ्तारी की खबर दी और पूछा की चार बजे वे कहॉ थे ? औरत ने पहले तो कुछ न बताया पर सरला के खत देने पर बताया कि मेरे साथ थे और वे दोनों एक दूसरे से मुहब्बत करते हैं, धीरेन उस दिन उसके साथ था। सरला ने बड़े टूटे और कठोर दिल से कहा कि वही उसे छुड़ाए और वह घर चली गई। अब तक की धीरेन की बेरुखियों के बारे सोचने लगी। काफी सोचने के बाद सरला ने तय किया कि वह धीरेन को छोड़ देगी ताकि वह खुश रह सके। वह सोचती है कि मुझे अगर पहले पता होता तो मैं उसे आजाद कर देती। ज्यादातर औरतें यह कदम उठाती हैं। एक औरत सब कुछ सह सकती है पर अपने पति की बेवफाई नहीं सह सकती। तभी धीरेन आता है। धीरेन सरला को बड़े प्यार से बहलाने लगा, जाने कुछ हुआ ही नही था। पर सरला ने धीरेन को न केवल यकीन दिलाया कि वह उनके नाजायज रिश्ते को जानती है पर उनको छोड़ने का खुलासा भी करती है। ताकि वह अपनी आगे की जिन्दगी अच्छी तरह से जी सके। इस पर धीरेन कहता है कि--“ कैसी बातें करती हो सरला ! सोसाइटी का खौफ खुदा के खौफ से भी ज्यादा है। अगर तुमने यह रविश (ढंग) अखित्यार की तो मेरी इज्जत खाक में मिला दोगी और मेरा मुस्तकिल (भविष्य) स्याह (अन्धकारपूर्ण) हो जाएगा। मैं सोसाइटी की निगाहों में जलील हो जॉऊगा। सरला , तुम इस वक्त गुस्से में हो, मगर जब तुम्हारी तबियत ठंडी होगी, गुस्सा फरो (शान्त) हो जायेगा और तुम इस मसले पर गौर करोगी तो यकीनन मेरी यह खता माफ कर दोगी। ऐसी बहुत कम औरतें होगीं जिन्हें अपनी जिन्दगी में ऐसी गुत्थियां न सुलझानी पड़ती हों। मैं मुबालगा (अतिशयोक्ति) नहीं करता हूॅं, सोसाइटी में ऐसी बातें आए दिन हुआ करती हैं मगर पर्दे के अन्दर । मैं दूसरे का शैदा नहीं, क्या तुम्हें भी मेरी मुहब्बत नहीं। उसी मुहब्बत के सदके, तुम इन सारी बातों को भूल जाओ। मैं पुख्ता वायदा करता हूॅ कि अब फिर ऐसा मौका कभी न आएगा।'' 17 यह समझाकर धीरेन बाहर चला जाता है और सरला सोचती है के --“ सोसाइटी का शीराजा (व्यवस्था) ऐसे कच्चे धागे से बॅंधा हुआ है।'' 18

यही इस समाज की कड़वी सच्चाई है। इन्सान चाहते हुए भी समाज एवं सोसाइटी के विरुद्ध नहीं जा सकता है। इन्सान चाहता है कि वह जो भी बुरा काम करे उसकी भनक भी सोसाइटी को न पड़े ताकि उसकी प्रतिष्ठा बनी रहे और समाज में उसका सम्मान बरकरार रहे। ऐसे लोगों के लिए

ही यह कहावत प्रसिद्ध है--' पाप का घड़ा एक न एक दिन जरूर फूटता है' और उसकी आवाज पूरे आसमान में गूँजती है। इसमे कोई सन्देह नहीं है।

7. ममता

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'ममता' शीर्षक से फरवरी 1912 में जमाना में हआ। यह प्रेमचच्चीसी में भी संकलित है। बाद में इसका संकलन हिन्दी में मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-1 में भी इसका संकलन किया गया।

लेखक ने इस कहानी में सास-बहू के पारिवारिक झगड़े एवं आर्थिक संपन्नता को ध्यान में रखे बगैर किए गये मौज शौक के कुपरिणामों को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। बाबू रामरक्षादान एक बड़े आदमी थे। उनके घर पर जो भी जाता था उसकी खातिरदारी खूब होती। वे मेहमानों की आवभगत में काफी रूपया खर्च करते थे। वे वाकचातुर्य थे। उनकी कई दुकानें एवं बैंको में काफी रूपये थे। रामरक्षादास की माता को उसकी फिजूलखर्ची बिल्कुल अच्छी नहीं लगती थी। इसलिए सास बहू में पटती नहीं थी। स्थिति यहाँ तक आ गई कि विधवा माता अयोध्या चली गई और रामरक्षा नें अपनी माता के नाम 10 हजार रूपये जमा कर दिए। जिससे उसका निर्वाह चलता रहे। उसी मुहल्ले में एक सेठ रहते थे जिससे रामरक्षा ने कई बार पैसे उधार लिए थे , जो अब तक 20 हजार रूपये हो गया था। दो-तीन बरस रामरक्षा रूपये न चुका पाए तब गिरधारी लाल खुद उनसे मिलने गए। उस समय रामरक्षा एक पार्टी में जाने वाले थे इसलिए उनका स्वागत न कर सका तथा कल आने को कहा। सेठ जी को उनका व्यवहार अच्छा न लगा और कल पैसे लौटाने का वादा लेकर वे वापस चले आए। रामरक्षा अब पैसे चुकाने की चिंता में पार्टी में न जा सके और मुनीम से चर्चा करने लगे। दसी से उन्हें पता चला कि बैंक खाली है। दुकान के पैसे भी अटके पड़े हैं। दूसरे दिन जब वे गिरधारीलाल से पेसे देने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हें तो वे उनका सब कुछ नीलाम करवा देते हें--" मकान नीलाम परन चढ़ा। पंद्रह हजार की जायदाद पांच हजार में निकल गयी। दस हजार की मोटर चार हजार में बिकी। सारी सम्पत्ति उड़े जाने पर कुल मिला कर सोलह हजार से अधिक रकम न खड़ी हो सकी। सारी गृहस्थी नष्ट हो गयी तब भी दस हजार के ॠणी रह गये। मान-बड़ाई, धन-दौलत सभी मिट्टी में मिल गये। बहुत तेज दौड़ने वाला मनुष्य प्राय: मुँह के बल गिर पड़ता है।'' 19

प्रेमचंद यहाँ यह बताना चाहते हैं कि जो आदमी कोई काम बिना योजना के करता है वह इन्सान जिन्दगी में कभी सफल नहीं होता है। इन्सान को जितनी चद्दर हो उतना ही पैर फैलाना

चाहिए। जब भी वह अपनी औकात से ज्यादा खर्च करता है तो वह ऋणी ही बनता है। इस घटना के बाद दिल्ली में म्युनिसपालिटी के मेम्बरों का चुनाव आरम्भ होता है जिसमें गिरधारी सेठ तथा उनके मुहल्ले के मुंशी फैजुल रहमान खड़े हैं। फेजुल रहमान के पक्ष में रामरक्षा थे एनका वाकचातुर्य के कारण वे जीत जाते हें। गिरधारीलाल का मुँह लटक जाता है। तभी एक वकील साहब जो गिरधारी लाल के मित्र थे, उनसे सहानुभूति प्रकट करने आते हैं , उस समय सेठ अपने आंसू और दुःख को वश में करके कहते हैं कि--" वकील साहब मुझे इसकी कुछ चिन्ता नहीं हैं, कौन रियासत निकल गई ? व्यर्थ उलझन, चिंता तथा झंझट रहती थी, चलो अच्छा हुआ। अपने काम में हरज होता था। सत्य कहता हूँ, मुझे तो हृदय से प्रसन्नता ही हुई। यह काम तो बेकाम वालों के लिए हैं, घर पर न बैठे रहे, यही बेगार की। मेरी मूर्खता थी कि मैं इतने दिनों तक ऑखें बंद किये बैठा रहा। परंतु सेठ जी की मुखाकृति ने इन विचारों का प्रमाण न दिया। मुखमंडल हृदय का दर्पण है, इसका निश्चय अलबत्ता हो गया।'' 20 किसी ने ठीक ही कहा है कि मनुष्य लाख सच्चाई छुपाना चाहे तो भी उसका चेहरा उसकी सच्चाई सबके सामने ला ही देता है। संयोग से उसी दिन पुलिस रामरक्षा को पकड़कर ले जाती है, तब गिरधारीलाल खुब खुश होते हें। रामरक्षा की पत्नी गुस्से से लाल होकर गिरधारी लाल को गालियॉ देती हैं और एक पत्र में उनको बुरा संदेश भी भिजवाती है। तभी एक दिन एक औरत रेश्मी साड़ी और सोने के कंगन पहने हुई गिरधारी के घर आती है। वैसे तो पूजा के समय गिरधारी किसी के लिए नहीं उठते लेकिन धनी स्त्री को देखकर उठते है और खयाली महल बनाने लगे। जब खयाली महल उसका तब टूटा जब उसे पता चला कि वह औरत रामरक्षा की माता है वह कहती है कि --" बेटा ममता बुरी होती है। संसार से नाता टूट जाय, धर्म जाय, किंतु लड़के का स्नेह हृदय से नहीं जाता। संतोष सब कुछ कर सकता है। किंतु बेटे का प्रेम मॉ के हृदय से नहीं निकाल सकता। इस पर हाकिम का, राजा का, यहॉ तक कि ईश्वर का भी बस नहीं है।'' 21

माताजी की बातें सुनकर गिरधारीलाल का दिल पिघल जाता है और वे रामरक्षा को छुड़वाते हैं माताजी ने गिरधारी लाल को दस हजार रूपये दे दिए तथा अब गिरधारी लाल के दुकान में रामरक्षा मैनेजर हैं। पहले जैसा ठाट-बाट में रहने लगा। गिरधारी लाल को राय बहादुर की पदवी मिली। रामरक्षा को पुत्र रत्न है पर अभी भी मां अयोध्या में रहती है और पुत्रवधू की सूरत नहीं देखना चाहती।

प्रेमचंद बताना चाहते हैं कि अगर संसार में भगवान के बाद किसी का स्थान है, वह मॉ का स्थान है। कहा भी गया है कि पुत्र भले ही कुपुत्र हो जाए लेकिन माता कुमाता नही हो सकती है।

8. कैफ़रे - कदारे (कर्मदण्ड)

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जुलाई 1912 को 'अदीब' में हुआ था। हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ भाग-1 में भी इसका संकलन किया गया है।

प्रस्तुत कहानी एक सामान्य परिवार की है। कथानक इस प्रकार हैं आजमगढ़ जिले में सरयू नदी के किनारे एक मैदान था। जहॉ एक तरफ नदी तो दूसरी तरफ दलदल तो तीसरी तरफ एक झरना था और वहीं से एक पगडंडी उस मैदान को गॉव से जोड़ रखती थी। वहां कोई नहीं रहता था। शिवराम नाम का एक अहीर वहॉ रहने लगा। उसने एक नाव बनाई, जिससे वह घी, दूध, मछलियॉ बेचकर अपना गुजारा चलाने लगा। थोड़े दिन बाद उसकी पत्नी मलेरिया का भोग बन गई अब उसकी बेटी गौरा घर का सारा काम देखती थी। घर के काम के कारण उसका बाहर निकलना नामुमकिन सा हो गया था। शिवराम उसे मुक्त करना चाहता था पर उसकी सगाई के लिए कोई लड़का नहीं मिल पा रहा था। कुछ दिन बाद शिवराम की यह चिंता दूर हो गई और उसकी सगाई पास में ही गॉव के एक चमार के लड़के से हो गई। अब गोरा से अपने घर का मोह नहीं छूट रहा था। एक दिन गोरा अपनी ससुराल की साड़ी पहन कर इतरा रही थी--" गोरा ने उसे जैबेतन (पहना) किया था और आईने में देख रही थी कि यह मुझ पर खिलती है या नहीं। कभी ऑचल को आधे सर तक रखती, कभी माथे तक। उसका चेहरा बहुत सगुप्ता था, क्योंकि खुशरंग साड़ी उसने कभी नहीं पहनी थी और न वह खुद अपनी निगाहों में ऐसी हसीन मालूम हुई थी। एसे अपने भोले-भाले हुस्न का आज थोड़ा बहुत थोब- सा अन्दाजा हुआ और आईने के सामने से हटी तो उसकी ऑखों में इत्मीनान और गरूर की दिल आवेज झलक मौजूद थी। उसे याद नहीं आता था कि अपने से ज्यादा अच्छी सूरत कभी देखी है या नहीं।'' 22 हर लड़की को अपनी शादी को लेकर कुछ ख्वाब और अरमान होता है। जब किसी भी लड़की का रिश्ता पक्का होता है तो उसे दुनिया में न केवल सब कुछ खूब सूरत लगता है, पर वह खुद को भी सबसे ज्यादा खूबसूरत महसूस करती है। ऐसा ही एहसास आज गोरा को हो रहा था। गोरा अपने सपनों को बुन ही रही थी कि अचानक किसी के पैरों की आहट सुनाई दी। गोरा ने सोचा कि पिताजी होंगे। लेकिन वह कोई अजनबी आदमी था। वह एक डाकू था जो किसी का खून करके लोगों से बचता हुआ जंगल में फॅस गया था और वहॉ से निकलने का रास्ता ढूँढ़ रहा था। डाकू भूखा था। गोरा ने उसे खाने को दिया तथा जाने का रास्ता भी बताया। लेकिन डाकू ने न केवल उसके पिता की नाव लिया पर गोरा को डंडे की मार से बेहोश कर उसकी साड़ी भी छीन ली और भेस बदलकर नाव के सहारे से एक गॉव में पहुॅचा। उसने सोचा

कि एक आदमी को ठार करके उसका माल लूटकर निकल जाऊँगा। इतने मे सामने से एक आदमी आ रहा था। जो गोरा का मंगेतर गोवर्धन था। गोवर्धन ने साड़ी से पहचाना कि वह गोरा होगी, पर जब उसमें से डाकू निकला तो उसे लगा कि गोरा को लूटा गया है। उसने डाकू को गोरा के पास ले जाना चाहा लेकिन डाकू उसे अपनी बातों में फँसाने लगा। गोवर्धन डाकू को उसके पिता की नाव से गोरा के पास ले गया। गोरा को लगा कि वह उसका पिता है पर पति को देखकर घूँघट ओढ़ने लगी। गोवर्धन गोरा को सारी सच्चाई बताकर डाकू को मारने के लिए दौड़ा पर डाकू दलदल में फँस कर मर गया। इसीलिए कहानी के अंत में प्रेमचंद लिखतें हैं कि " जैसी करनी वैसी भरनी।'' 23

9. मनावन

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में जुलाई 1912 को जमाना में हुआ था, तथा प्रेमपच्चीसी में भी इसका संकनलन है। बाद में हिन्दी में गुप्तधन, भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-1 में भी इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी दाम्पत्य जीवन पर आधारित कहानी है। हमारे समाज में विभिन्न प्रकार की प्रकृति रखनेवाले व्यक्ति मिलते हैं। हर इन्सान की सोच अलग-अलग होती है और प्रत्येक व्यक्ति अपनी सोच के अनुसार रिश्तो को बनाता बिगाड़ता है। पति-पत्नी का रिश्ता ऐसा होता है जो दोनों के तालमेल से अच्छा बनता है। कहानी के प्रमुख पात्र बाबू दयाशांकर का मानना था कि--" फिरी हुई निगाहें कभी-कभी मुहब्बत के नशे की मतवाली आंखो से भी ज्यादा मोहक जान पडती। कभी-कभी प्रेमिका की बेरुखीं और खुशियॉं जोश और उमंग से भी ज्यादा आकर्षक लगतीं। झगड़ों में मिलाप से ज्यादा मजा आता । पानी में हल्के-हल्के झकोले कैसा समां दिखा जाते हैं। जब तक दरिया में धीमी-धीमी हलचल न हो सैर का लुत्फ नहीं।'' 24 हर एक इन्सान को मनाना नहीं आता लेकिन जो मनाना नहीं जानते उनके घर में कड़वाहट आ जाती है। अगर कोई पुरुष अपना अहं छोड़कर अपने जीवन साथी को मनाए तो उसका जीवन खुशहाल रहता है। वैसे बाबू दयाशंकर की पत्नी शांत स्वभाव की थी पर अपने पति के स्वभाव को अच्छी तरह से जानती थी। वह छोटी-छोटी बातों में उन्हें मनाने का मौका दिया करती थी ताकि वे खुश रहे। एक बार बाबू दयाशंकर को सतारा जाना था वे बहुत खुश थे, क्योंकि वे कौमी जलसों में बड़ी दिलचस्पी रखते थे और इसी सिलसिले में वे सतारा जा रहे थे। गिरिजा पति से पहली बार अलग हो रही थी इसलिए दु:खी थीं पर दयाशंकर

उत्साहित थे। उसे पति की यह बेरुखी अच्छी न लगी इसलिए वे सोचती हैं कि--" क्या इनके पहलू में दिल नहीं हें ! या है तो उस पर उन्हें पूरा-पूरा अधिकार है ? वह मुस्कराहट जो विदा होते वक्त दयाशंकर के चेहरे पर लग रही थी, गिरिजा की समझ में नहीं आती थी।'' 25

पत्नी-पति की बेरुखी कभी सह नहीं पाती क्योंकि जैसे ही पति उसे बेरुखाई से बात करता है वैसे ही उसे लगता है कि उसका पति उससे नाराज है। गिरिजा को भी अपने पति की यह निष्ठुरता पसंद न आई। बाबू दयाशंकर गए तो थे तीन दिन के लिए लेकिन वक्तव्यों के बाद हौकी मैच का आयोलन था। जिसमें बाबू दयाशंकर ने बड़ा कमाल दिखाया वे उसी रात जाना चाहते थे पर उनके मान में बड़ा नाटक एवं समारोह रखा गया था, इसलिए दूसरे भी दिन न जा पाए। तीसरे दिन जब घर गए तो बहुत सारे तोहफे लेकर गए, पर गिरिजा को कुछ भी रास न आया। उन्होंने दो दिन से खाना न खाया था । दयाशंकर ने उन्हें बहुत मनाने की कोशिश की पर वे न मानी। तभी नौकर ने आकर कहा कि उसकी सखी अहमद की बीबी आई है। जो अपने पति से उम्र में काफी छोटी थी। अहमद साहब ने अपनी पहली शादी तब की थी जब उसके दूध के दॉत नहीं टूटे थे और दूसरी शादी तब की थी जब उनके मुॅह में दॉत नहीं थे। उनके बाल-बच्चे बहुएं सब थे। लोगों ने परिवार वालों ने उसे शादी करने से मना किया और समझाया कि भगवान के घर से कभी भी बुलावा आ सकता है, इसलिए भगवान से मन लगाओ। इस पर वे तर्क देते थे कि जैसे बाग में हम खिले हुए तरोताजा, खुश्बूदार फूलों को ही तोड़ते हैं मुरझाए हुए फूल की तरफ देखते भी नहीं उसी प्रकार यमराज भी इतना समझदार है कि नौजवानों को ही ले जाता है न कि मेरे जैसे बुड्ढे को। रही बात शादी की तो नौजवान बीबी की जरूरत बुढ़ापे में होती है ताकि वह सेवा कर सके, बेटों बहुओं का क्या भरोसा रखना।

प्रेमचंद यहॉ बेमेल विवाह करने के वालों के तर्को को बताना चाहा है। बेमेल विवाह करने वाले ये भूल जाते हैं कि हर एक कार्य को करने के लिए एक समय होता है। समय से पहले और बाद में अगर कोई काम किया जाए तो वह मात्र निन्दनीय विषय बन जाता है। दरअसल दयाशंकर गिरिजा को मनाने के लिए अहमद साहब की बेगम का रूप धारण किया था। पर कोई बात न बनी। तब दयाशंकर थककर गिरिजा से रूठने का नाटक किया और खाना खाने से इनकार किया गिरजा के बुलाने पर भी जब वे खाना खाने नहीं आए तब पासा पलट गया और गिरिजा दयाशंकर को मनाने लगी। तभी दयाशंकर ने गिरिजा को गले लगाया और साथ में बिठाकर खाना खिलाया।

प्रेमचंद यहाँ दर्शाते हैं कि पति-पत्नी के बीच नोक-झोंक होना जरूरी है पर शर्त है कि इसका अंत सुखद हो। पति-पत्नी में से किसी में भी अगर अहं आ गया तो उनका जीवन सुखमय नहीं रह सकता।

10. धोखे की टट्टी

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में नवम्बर 1912 को अदीब में हुआ था तथा हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य -1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-1 में भी इसका संकलन है।

प्रस्तुत कहानी प्रेमचंद की एक ऐसी रचना है कि जो उनके जमाने में जितनी सटीक थी उससे ज्यादा आज के जमाने के लिए लागू पड़ती है। यह कहानी यह सिद्ध करती है कि हर पीली चीज सोना नहीं होती है। इन्सान को जो दिखता है वह हकीकत में वैसा नहीं होता है।

सुरेन्द्र एक बदमाश शराबी और ऐयासी व्यक्ति था। जब वह सोलह साल का था तब वह कभी किताब लेकर पढ़ता न था, लेकिन हमेशा पास हो जाता था। क्योंकि उसमें एक गुण था कि वह किसी भी इन्सान की कमजोरी को जल्दी भांप लेता था, इसलिए वह पास हो जाता है। पर जब वह एन्ट्रेस की परीक्षा देने बैठा तब वह हेडमास्टर से पकड़ा गया। पहले तो वह तिलमिलाया पर बाद में खुश होकर कहने लगा कि --" मुल्के खुदा तंगनेसत (ईश्वर की दृष्टि इतनी संकुचित नहीं है।)।" 26 इन्सान अपनी कुछ खासियतों को लेकर बहुत ज्यादा अभिमानी बन जाता है। जैसे किसी को अपने बोलने पर इतना गर्व होता है कि वह सोचता है वो किसी को भी अपनी मुट्ठी में कर सकता है। तो कोई अपने देखाव के लिए, तो कोई अपने पैसों की वजह से अभिमान रखाता है वे यह भूल जाते हें कि अभिमान तो राजा रावण का भी नहीं चला तो वे किस खेत की मूली हैं। बाद में सुरेन्द्र ने लाहौर कालेज में एडमीशन लिया। वहाँ भी वह थोड़े दिनों तक सही से रहा, बाद में उसने एक युनियन बनाया और अपनी हरकत चालू कर दिया और पहले की तरह बिना पढ़े पास हो जाता । वैसे तो सभी जगह वह बाहरी तौर पर बड़ा सभ्य ही रहता पर अन्दर से कुछ और था। एक दिन वह कालेज से बाहर आ रहा था और उसे अपना पुराना दोस्त हरिमोहन, जो उसकी सारी असलियत जानता था वो मिला। उसे देखकर सुरेन्द्र डरने लगा। जब इन्सान की चोरी पकड़ी जाती है तब वह बौखला जाता है। सुरेन्द्र के साथ कुछ ऐसा ही हुआ। हरिमोहन को देखकर सुरेन्द्र बंगलें में झाँकने लगता है और उससे बड़े प्यार भरे लहजें में कहा कि--" भाई साहब जिसे खुदा ने खराब बनाया है, वह कभी अच्छा नहीं हो सकता। मैंने बहुत कोशिश की कि नेकबख्त बन जाँऊ, मगर ना बन सका। हाँ नेक बाख्ती की शोहरात हासिल कर ली। यहाँ बजाय आपके कोई दूसरा मेरे हालात से वाकिफ

नहीं है। इसलिए मुझ गरीब पर नजरे-इनायत रखिएगा। आप चाहें तो बात की बात में मेरा रंग फीका कर सकते हैं। मैं बिल्कुल आपके बस में हूँ, मगर मुझे आप पर भरोसा है। आपको मैं हमेशा अपना बुजुर्ग और खैर-अंदेश समझता रहा हूँ।'' 27

आज भी हमारे देश में ऐसे कई लोग हैं जो न केवल गलत काम करते हैं पर लोगों के सामने सफेद पोष बने रहते हैं लेकिन जब किसी को उनकी सच्चाई पता चलती है तो वे उसका मुँह पैसों से या उसे भगवान के पास पहुंचा कर बंद कर देते हैं। कहानी का सबसे बड़ा मोड़ तब आता है जब मिस गुप्ता जो गर्ल्स होस्टल की मिस्टिीट थी, उनकी बदली होकर उनकी जगह मिस रोहिणी आई। सुरेन्द्र को वह अच्छी लगी। बस फिर क्या था ? रोहिणी के सामने सबसे अपनी तारीफ करवाकर उसे अपने प्रेमजाल में फॉस लिया और उससे शादी करके हनीमून के लिए शिमला चले गए और वहॉ से एक महीने में ही वापस आ गए। रोहिणी के पास कुछ न बचा था, एक जोड़ी कपड़ा तक भी नही। वहॉ सुरेन्द्र ने सब कुछ बेचकर शराब पी ली और जुआ खेल डाला। अब वह यहॉ भी वही करता। कहीं नौकरी भी नहीं करता। थककर रोहिणी को लाहौर से इस्तीफा लेना पड़ा और वे दोनों कश्मीर गए लेकिन अब वह अपनी शादी से पछताने लगी। वह मिस गुप्ता को खत लिखते हुए कहती है कि--" बहन मेरा हाल क्या पूँछती हो ? अब जिन्दगी से जी भर गया । मुझे अपनी कुछ फिक्र नहीं , मगर तुम्हारे बहनोई साहब की हालत निहायत खराब है। खुदा गवाह हैं, में अब तुम्हारे बहनोई साहब की पूजा करती हूँ। मैंने अपना सब कुछ उन पर निछावर कर दिया, मगर हाय ! शराब तेरा सत्यानाश हो, हाय ! जुआ तेरा बुरा हो। ये दो मार्ग उनकी जान के गाहक हो रहें हैं। बस और ज्यादा नहीं कहूँगी। तुमसे कहते मुझे शर्म आती है और शर्म की तो इतनी परवाह नहीं, क्यूं कि मुद्दत हुई उसे रुखसत कर चुकी, मगर तुम्हें सुनकर रंज होगा। बस यही समझ लो कि तुम्हारी भोली-भाली रोहिणी अब अपने किए पर पछताती और खून के ऑसू रोती है।'' 28

ज्यादातर यही होता है जब मनुष्य बिना सोचे समझे दूसरों की बातों में आकर अपनी जिन्दगी का सबसे बड़ा फैसला लेता है, तब वे खून के ऑसू रोते हैं, इसलिए किसी ने सच कहा है कि- दिखावे पे मत जाओ, अपनी अक्ल से काम लो।

11. अमावस्या की रात्रि

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में अमावस की रात नाम से अप्रैल 1913 में 'जमाना' में हुआ। बाद में हिन्दी में अमावस्या की रात्रि शीर्षक से मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-1 में भी इसका संकलन हुआ।

इस कहानी में प्रेमचंद ने एक ऐसी सच्चाई को उजागर किया है जिससे न केवल लोग डरते हैं, पर भगवान से ये प्रार्थना करते हैं कि उनके जीवन में ऐसा समय न आए। वह सच्चाई है इन्सान का ऊँचाई से गिरना। पंडित देवदत्त के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। पंडित देवदत्त के पूर्वज काफी धनवान थे। वे लेन-देन का धंधा करते थे, पहले पैसे का व्यापार एक कागज पर लिखकर ही होता था। परंतु अंग्रेजों के आने के बाद कई राजा रजवाड़े खत्म हो गए और सादे कागजों पर लिखा गया व्यवहार बंद हो गया। जिससे पंडित का पूरा खानदान बर्बाद हो गया। उनके पास एक पुरानी हवेली के अलावा कुछ भी न बचा। घर भी " गंभीर इसलिए कि उसे अपनी उन्नति के दिन भूले न थे, भयंकर इसलिए की यह जगमगाहट मानो उसे चिढ़ा रही थी । एक समय वह था कि जब ईर्ष्या भी उसे देख-देखकर कटाक्ष करती थी और एक समय यह है जब कि घृणा भी उस पर कटाक्ष करती है। द्वार पर द्वारपाल की जगह अब मदार और एरंड के वृक्ष खड़े थे। दीवानखाने में एक मतंग साँड़ अकड़ता था। ऊपर के घरों में जहॉं सुन्दर रमणियॉं मनोहर संगीत गाती थीं, वहॉं आज जंगली कबूतरों के मधुर स्वर सुनायी देते थे। किसी अंग्रेजी मदरसे के विद्यार्थी के आचरण की भॉंति उसकी जड़ें हिल जाती थीं और उसकी दीवारें किसी विधवा स्त्री के हृदय की भॉंति विदीर्ण हो रही थीं पर समय को हम कुछ नहीं कह सकते। समय की निन्दा व्यर्थ और भूल है , यह मूर्खता और अदूरदर्शिता का फल था।'' 29

यहॉं हमें प्रेमचंद जी की कल्पना दृष्टि का सर्वोत्तम उदाहरण देखने को मिलता है। प्रेमचंद ने हवेली के दुखमय और सुखमय दोनों रूपों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। पंडित देवदत्त के पूर्वज धनवान थे पर सन् सत्तावन के बलवे ने कंगाल बना दिया। वचन लेख के अधीन हो रहा था तथा लेख में भी सादे और रंगीन का भेद होने लगा था। पंडित देवदत्त के पास न धन था न कोई व्यापार , न इतनी शिक्षा ही थी कि नौकरी कर सके। मात्र उनके पूर्वजों के लेन-देन के पत्र थे, जो सत्तर लाख के थे। उन पर उन्हें गर्व था। उनकी पत्नी गिरिजा थी जो कई सालों से बीमार थी। वह रात अमावस्या की थी। सारे शहर में दिए जल रहे थे पर केवल देवदत्त के घर में अंधेरा था। उसी दौरान गिरिजा को अचानक होश आया और उसने दिए जलाने की बात की, जिससे देवदत्त रो पड़े। आज गिरिजा की तबियत बहुत ही खराब थी। उस गांव में केवल लाला शंकरदास अच्छा वैद्य था पर वह किसी पर दया नहीं खाता था, बगैर पैसे लिए वह किसी के साथ नहीं चलता था। देवदत्त उसके पास गया लेकिन वह न आया। तभी देवदत्त ने उसे मन में कई गालियॉं दी और घर आ गया। तभी एक नौजवान ने दरवाजा खटखटाया। वह किसी रजवाड़े का मालिक था और उनके पूर्वजों

ने देवदत्त के पूर्वजों से कुछ रकम उधार ली थी जो आज पचहत्तर हजार हो गई थी, वह पूर्वजों का पिंडदान करना चाहता था और अपने पूर्वजों का कर्जा चुकाना चाहता था। नौजवन ने पंडित देवदत्त से कागज मांगे और पंडित देवदत्त की आंखों के सामने अंधेरा छा गया क्योंकि उसने पैसों के कारण लाला शंकरदास के घर न आने पर गुस्से में कुछ कागज जला दिए थे। उसे लगा कि कागज न मिलने से तो घर आई लक्ष्मी चली जाएगी लेकिन कागज मिला और उस नौजवान से पैसे भी मिले। वह पैसे लेकर गिरिजा के पास खुशी बॉटने गया लेकिन तब तक गिरिजा मर चुकी होती है, जब पंडितजी कागज मिलने पर उसे गले लगाते है पर खुशी के मारे वह यह महसूस नहीं कर पाते। देवदत्त उसी समय पैसे लेकर लाला के घर जाता है। लाला ऑखे मलते-मलते दरवाजे खोलते हैं --" सहसा देवदत्त उनके सामने जा खड़े हो गये और नोटों का पुलिंदा उनके आगे पटक कर बोले - वैद्य जी ये पचहत्तर हजार के नोट हैं। यह आपका पुरस्कार और आपकी फीस है। आप चलकर गिरिजा को देख लीजिए और ऐसा कुछ कीजिए कि वह केवल एक बार ऑखें खोल दे। यह उसकी एक दृष्टि पर न्योछावर है-- केवल एक दृष्टि पर। आपको रूपये मनुष्य की जान से प्यारे हैं। वे आपके समक्ष हैं। मुझे गिरिजा की चितवन इन रूपयों से कई गुनी प्यारी है।'' 30

यहां प्रेमचंद बताना चाहते हैं कि मनुष्य अपनी स्वार्थवृत्ति के कारण कभी-कभी ऐसी गल्तियॉ कर बैठता है कि जिसका हरजाना वह जान देकर भी नहीं चुका सकता है। यहॉ पर भी लाला शंकरदास अपने चंद पैसों के कारण गिरिजा का इलाज नहीं करते हैं और गिरिजा मर जाती है। पंडित देवदत्त जब लाला को पचहत्तर हजार रूपये सिर्फ अपनी पत्नी की दृष्टि के लिए देता है लेकिन लाला उतनी क्या उससे ज्यादा रकम में भी उसकी पत्नी की दृष्टि नहीं लौटा पाता है। बाद में खूब पछताता है और लज्जावश देवदत्त से कहता है कि --" मुझे अत्यंत शोक है, सदैव के लिए तुम्हारा अपराधी हूॅ। किंतु तुमने मुझे शिक्षा दे दी। ईश्वर ने चाहा तो ऐसी भूल कदापि न होगी। मुझे शोक है सचमुच है ! '' 31

लाला को जब अपनी भूल का पछतावा हुआ तो समय काफी बीत चुका था। कहा भी गया है कि ' अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत।''

12. मिलाप

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में जून 1913 को जमान में हुआ था। बाद में हिन्दी में गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ -1 में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में लेखक ने अमीर बाप के बिगड़े हुए बेटे एवं प्रेम के कुपरिणामों को दर्शाया है। लाला ज्ञानचंद का एक बेटा था-नानकचंद। वह नंबर एक का ऐयासी था। वह पड़ोस के बाबू रामदास की बेटी ललिता से प्यार करता था। एक दिन नानकचंद ने अपने पिता से उनके अकेले बेटे होने का फायदा उठाकर काश्मीर घूमने के बहाने पांच सौ रूपये लिए और ललिता को भगाकर कलकत्ता चला गया। ललिता के पिता ने बदनामी के डर से आत्महत्या कर ली। ज्ञानचंद को पता चल गया कि यह उनके बेटे नानकचंद का ही काम है। दो महीने के बाद जब पैसे खत्म हो गये तब उसने पिता को खत लिखकर पैसे मॅंगवाए। ज्ञानचंद ने नानकचंद को ललिता को अपनी पत्नी स्वीकार करके वहीं निर्वाह करने लगा। ज्ञानचंद तीन साल तक लगातार पैसे भेजते रहे। इसी बीच नानकचंद को एक प्यारी सी पुत्री कमला हुई। तभी एक दिन नानकचंद को एक खत आया कि पिताजी मर गए। वह बहुत रोया और बनारस जाने को तत्पर हुआ लेकिन बदनामी के कारण ललिता को लेकर वहॉं न जा सका इसलिए--" वह एक दिन शाम को दरिया की सैर का बहाना करके चला गया और रात को घर पर न आया। दूसरे दिन सुबह को एक चौकीदार लालिता के पास आया और उसे थाने ले गया। ललिता को हैरानी थी कि क्या माजरा है। उसके मन में तरह-तरह की दुश्चिंताएं पैदा हो रहीं थी। वहॉं जाकर जो कैफियत देखी, तो दुनिया ऑखों में अंधेरी हो गई। नानकचंद के कपड़े खून से तर-ब-तर पड़े थे। उसकी वही सुनहरी घड़ी, वही खूबबसूरत छतरी, वही रेश्मी साफा, सब वहॉं मौजूद था। जेब में उसके नाम के छपे हुए कार्ड थे। कोई संदेह न रहा कि नानकचंद को किसी ने कत्ल कर डाला। दो-तीन हप्ते तक थाने में तहकीकातें होती रहीं और आखिरकार खूनी का पता चल गया। पुलिस के अफसरों को बड़े - बड़े ईनाम मिले, इसको जासूसी का बड़ा आश्चर्य समझा गया। खूनी ने प्रेम की प्रतिद्वन्द्विता के जोश में यह काम किया । मगर इधर तो गरीब, बेगुनाह खूनी सूली पर चढ़ा हुआ था और वहॉं बनारस में नानकचंद की शादी रचाई जा रही थी।'' 32

यहॉं प्रेमचंद ने न केवल एक पति की बेवफाई को बताया है परन्तु हमारे कानून एवं पुलिस अफसरों की सच्चाई को भी उजागर किया किया है। न किसी का खून हुआ पर बेगुनाही को खूनी बनाकर फॉसी पर लटकाया गया। आज भी हमारे समाज में कितने ऐसे केश सामने आते हैं जहॉं पुलिस नकली गवाह बनाकर बेगुनाहों को सजा देते है और गुनेहकारों को बरी कर देती है। आज भी कितने ऐसे केश होतें हैं जहॉं पुलिस बेगुनाहों को सजा देती है। फर्क सिर्फ इतना है कि वे केश कभी बाहर नहीं आते, क्योंकि इन केशों में बड़ी बड़ी हस्तियॉं शामिल होती हैं। नानकचंद ने तीन बार शादी की तीसरी शादी से पुत्र रत्न हुआ वह थोड़े ही समय के बाद भगवान को प्यारा हो गया।

नानकचंद को अब अपनी गल्ती का ऐहसास हुआ पर तब तक दस साल गुजर गए थे। अपनी गल्ती को सुधारने के लिए वह अब कलकत्ता गया और अपनी पत्नी और बेटी को मिला। ललिता मुरझा गई थी वह सिलाई करके अपना और अपनी बेटी का गुजारा चला रही थी। जब नानकचंद को देखा तो उसे लगा कि यह उसकी आत्मा है इसलिए वह रोती हुई बोलती है कि--" मुझे भी अपने साथ ले चलो। मुझे अकेले किस पर छोड़ दिया है ! मुझसे अब नहीं रहा जाता।'' 33 बिचारी अबला को कहाँ पता कि उसने जिस पति को अपना परमेश्वर मानकर अपने वैधव्य को बेदाग रखा है। वह पति कितने ऐशो आराम से जीता था और लाचार होकर वापस आ कर अपने पति होने का फर्ज अदा करना चाहता है और कहता है कि--" ललिता, अब तुम्हें अकेले नहीं रहना पड़ेगा, तुम्हें इन ऑंखों की पुतली बनाकर रखूँगा। में इसलिए तुम्हारे पास आया हूँ। मैं अब तक नरक में था, अब तुम्हारे साथ स्वर्ग का सुख भोगूँगा। तो ललिता चौंकी और छिटककर अलग हटती हुई बोली' आंखों को तो यकीन आ गया मगर दिल को नहीं आता। ईश्वर करे यह सपना न हो ! '' 34 ललिता को अभी तक यकीन नहीं आ रहा था कि वह अभी तक जिन्दा है।

प्रेमचंद इस कहानी के माध्यम से यह सत्यता बताना चाहते हें कि किसी भी लड़की को अपनी जिन्दगी का फैसला करने के पहले दस बार सोचना पड़ता है। हमारे माता-पिता हमारे दुश्मन नहीं होते हैं। वे जो कुछ करते हैं , हमारी भलाई के लिए ही करते है। एक गलत काम हमें ललिता जैसी हालत में पहुँचा सकता है।

13. दारू- ए-तल्ख (कड़वी सच्चाई)

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 17 जुलाई 1913 को 'हमदर्द' में हुआ था। बाद में हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य, भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-1 में भी इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी प्रेमचंद के अनुभवों पर आधारित है। इस कहानी में यह बताना चाहते हैं कि आज के जमाने में सिर्फ अच्छा पढ़ा लिखा होना ही काफी नहीं है पर इसके साथ हमारी पहचान भी अच्छी चाहिए। तभी कोई इन्सान उंचाइयों को छू सकता हैं। वरना दर-दर की ठोकरे ही नसीब में आती है। लक्ष्मीदत्त और गोविन्दराम बड़े गाढ़े मित्र थे। वे चार साल से एक ही होस्टल में रहते थे। अब परिक्षाएं खतम हो गई थी और बिछुड़ने का समय आ गया था। पर वे रोज घर जाने को सोचते और नहीं जा पाते। मगर एक दिन जब लक्ष्मीदत्त के पिता हरिदत्त एवं गोविन्दराम की पत्नी ललिता का पत्र आया तो हरिदत्त एवं गोविन्दराम को घर जाना पड़ा। लक्ष्मीदत्त के पिता हरिदत्त एक डाक्टर

थे। उन्होंने अपने बेटे को नैनीताल ले जाकर उन्हें एक अच्छी नौकरी लगवा दी। महीने के 300 रूपये मिलते थे। पहले तो हरिदत्त अपने मित्र को याद करके खूब रोता था पर बाद में बढ़ोत्तरी के पथ पर लग गया लेकिन इधर तीन महीने से गोविन्दराम दफ्तरों के चक्कर काटता था, पर कोई नौकरी उसे नहीं मिली--" कभी -कभी उसे लक्ष्मीदत्त पर रश्क आता, मैं उससे किस बात में कम था ? मेरी मदद से ही उसने डिग्री पायी, मगर वह तीन सौ रूपये माहवार का अफसर है, और मैं तीन रूपये की गुलामी के लिए ठोकरें खाता फिरता हूॅ। रसूख और अहकाम के मुकाबले में लियाकत की यह गुलामी ? '' 35 यह संसार की सबसे बड़ी सच्चाई है जिसे आदमी निगल नहीं पाता, शायद प्रेमचंद के समय में यह बात कम रही हो पर आज के जमाने में कुछ ज्यादा देखने को मिलती है। आज के जमाने में बिना परिचय के कोई आदमी आगे नही निकल सकता है, चाहे वह कोई भी क्षेत्र क्यों न हो ? हर जगह एक सूत्रधार की जरूरत होती है। आखिरकार उन्हें 50 रूपये महीने में एक मदरसा में नौकरी मिल गई। वह गुमान करने लगा पर अब उसे कानून की परीक्षा देने का जोश चढ़ा, जिसके कारण प्रिसिंपल से कई बार कहा सुनी हो गई थी। उपर से वह डींगें भी मारता था--" अजी हमने कौन सा हमेशा गुलामी करनी है। यहां तो चन्द दिनों के और मेहमान हैं, फिर तो इस मदरसे में आग लगा दूॅगा। चार घण्टे का नौकर हूॅ, कुछ काम का ठेका नहीं लिया है। तर्जुमा की कापियॉं घर पर नहीं ले जा सकता। मदरसा का काम मदरसा में होगा। ख्वाह, किसी को बुरा लगे या भला । चेखुश मेरा तो कापियॉ देखते ही जी भर गया है।'' 36 निराशा के कगार पर आकर अगर मनुष्य को कुछ मिलता है तो कुछ भगवान का शुक्रगुजार होतें हैं और कुछ उसे पचा नहीं पाते हैं। यही हाल गोविन्द राम का भी होता है। अब वह मन ही मन अमीर बनने का नया तरीका मकान बनवाने का सपना देखने लगा। उसकी बीबी घर का सारा काम करती , पर उसको पहनने ओढ़ने को भी सही ढंग से न मिलता। उसके पास चूड़ियों के भी पैसे नहीं थे। एक दिन उसने पड़ोस की औरत से दो तीन दुपट्टे उधार लिए और तन्ख्वाह मिलने पर पैसे चुकाने का वायदा किया पर गोविन्दराम अपनी किताब लाने के कारण पैसे न दिए और दोनों में तकरार हो गई। तीन दिन तक चूल्हा न जला। अक्सर ऐसा देखा जाता है कि पति-पत्नी की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उदासीन हो जाते हैं। वे यही सोचते हैं कि घर की रोजिन्दा चीजों के अलावा और किसी चीज की क्या जरूरत है। पर ऐसा नहीं होता प्रत्येक व्यक्ति के कुछ शौक होते हैं और उसे हर व्यक्ति को ध्यान देना चाहिए। हर व्यक्ति को यह ध्यान रखना चाहिए कि हमें अपने स्वार्थवश किसी के अरमानों का गला नहीं घोटना चाहिए।

14.नमक का दारोगा

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में हुआ था। पर प्रकाशन तिथि निश्चित नही है। कलम का सिपाही (अमृतराय) के अनुसार नमक का दारोगा का प्रकाशन 1914 से पूर्व हो चुका था और दयानारायण निगम के लिखे गए प्रेमचंद के पत्र दिनांक 10 दिसम्बर 1913 से स्पष्ट है कि कहानी तब छप चुकी थी। बादमें हिन्दी में 'मानसरोवर-8 तथा प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ -1 में भी इसका संकलन किया गया। नमक पर आधारित यह कहानी 1914 ई. के पहले जब गांधीजी हिन्दुस्तान की राजनीति में नहीं आए थे तब की है।

अंग्रेज सरकार ने नमक को लेकर जो कानून बनाया था उसे यह कहानी संबोधित करती है। शिवकुमार मिश्र इस सन्दर्भ में कहते हैं कि--" नमक का दारोगा प्रेमचंद की आरम्भिक कुछ ऐसी बहुचार्चित कहानियों में से एक है जिसमें असत्य, अन्याय और अनैतिक आचरण पर सत्य न्याय और नैतिकता की विजय दिखाई गई है। '' 37 इस समय में नमक बड़े दामों से मोल लिया जाता था, जिसके साथ नमक की चोरी होना शुरू हो गया था। छल प्रपंच, घूस आदि बढ़ने लगीं थी। इसलिए प्रेमचंद लिखतें हैं--" अधिकारियों के पौ बारह थे। पटवारीगीरी का सर्वसम्मानित पद छोड़-छोड़कर लोग इस विभाग की बरकंदाजी करते थे। इसके दारोगा पद के लिए तो वकीलों का भी जी ललचाता था। यह वह समय था जब अंग्रेजी शिक्षा और ईसाई मत को लोग एक ही वस्तु समझते थे। फारसी का प्राबल्य था। प्रेम की कथाएं और श्रृंगार रस के काव्य पढ़ कर फारसी दॉ लोग सर्वोच्च पदों पर नियुक्त हो जाया करते थे।'' 38

कहानी के मुख्य पात्र मुंशी वंशीधर की पढ़ाई खतम हुई तब उनके पिता ने उन्हें समझाया कि कोई ऐसी नौकरी ढूँढ़ना जहॉ तनख्वाह तो मिले ही पर साथ-साथ ऊपरी आमदनी भी हो। भगवान की दया से वंशीधर को नमक का दारोगा की नौकरी मिल गई। पूरा परिवार खुश था लेकिन यह खुशी ज्यादा दिन तक न चल पाई। एक दिन रात को बंशीधर चौकी में सो रहा था तो अचानक उसे कुछ गाड़ियों की जाने की आवाज सुनाई दी। उसे कुछ गड़बड़ लगा। इसलिए वह भागा गया, तब उसे पता चला कि काफी सारी गाड़ियॉ नमक लादे जा रहीं हैं और वे सारी गाड़ियॉ उस इलाके के पंडित आलोपीदीन की थी। इनको सारा इजाका पूजता था और अंग्रेज जब भी आते थे तब उनके यहॉ ही रुकते थे। वे जवानी के जोश में तथा अपने उसूलों के अलावा पैसों की कदर न करते थे। आलोपीदीन को पच्चीस हजार देने पर भी न छोड़ा। उन्हें गिरफ्तार कर लिया। यह बात सारे गॉव में फैल गई। दूसरे दिन पंडित आलोपीदीन अदालत में पेश हुए, पर सारे वकील उनके हाथ में थे

इसलिए वे बाइज्जत बरी हो गये। थोड़े दिन के बाद वंशीधर को एक पत्र मिला जिसमें उसे बरखास्त करने की बात की गई थी। घर जाने पर पिता और पत्नी द्वारा उसे कड़वी बातें सुनने को मिली। किसी ने भी कई दिनों तक सीधे मुँह बातें न की। इसी सन्दर्भ में रामदीन गुप्त जी कहते हैं कि--" यदि प्रेमचंद 'नमक के दारोगा' के पद से मुंशी बंशीधर की बरखास्तगी के साथ ही अपनी कहानी को समाप्त कर देते तो प्रस्तुत कहानी वर्तमान अर्थ-प्रधान न्याय-व्यवस्था पर एक बहुत ही तीखा और चुभता हुआ व्यंग्य बन जाती। उस अवस्था में 'नमक का दारोगा' की गणना प्रेमचंद की कतिपय श्रेष्ठ हानियों में की जाती- इसमें सन्देह नहीं है।'' 39

कहानी का मोड़ तब आता है जब पंडित आलोपीदीन एक दिन बन-ठन कर ठाट-बाट से वंशीधर के घर उन्हें अपने कारोबार का मैनेजर बनाने गए। आलोपीदीन ने बंशीधर के सामने प्रस्ताव रखा कि उन्हें बंगला, गाड़ी, नौकर-चाकर तथा छह हजार रूपये वार्षिक वेतन तथा ऊपरी खर्च, सवारी के लिए घोड़ा आदि मिलेंगे। उसे केवल उनके कारोबार को देखना है। बंशीधर ने अपने को कम लायकात वाला बताया पर पंडितजी न माने और बोले--"न मुझे विद्वता की चाह है न अनुभव की न मर्मज्ञता की, न कार्य कुशलता की । इन गुणों के महत्व का परिचय खूब पा चुका हूँ। अब सौभाग्य और सुअवसर ने मुझे वह मोती दे दिया है जिसके सामने योग्यता और विद्वता की चमक फीकी पड़ जाती है। यह कलम लीजिए, अधिक सोच-विचार न कीजिए, दस्तखत कर दीजिए। परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वह आपको सदैव नदी के किनारे वाला बेमुरौत, उदंड कठोर परन्तु धर्मनिष्ठ दरोगा बनाये रखे।'' 40

यहाँ प्रेमचंद यह बताना चाहते हैं कि हर व्यक्ति वंशीधर नहीं बन पाता पर जो व्यक्ति बंशीधर होता है उनकी कद्र करने वाले पंडितजी जैसे इन्सान भी मिल जाते हैं। अंत में वंशीधर ने आलोपीदीन का प्रस्ताव स्वीकार किया और पंडितजी खुश हो गये । शिवकुमार मिश्रजी इसी सन्दर्भ में कहतें हैं कि--" बहरहाल' नमक का दारोगा' कहानी का अंत सुखद होता है। परंतु एक सवाल है जो कहानी के इस समापन को लेकर उठा और उठाया गया है। जरूरी है कि उसकी नोटिस ली जाय। प्रश्न है कि पंडित आलोपीदीन का हृदय-परिवर्तन क्या वास्तविक हृदय परिवर्तन है ? क्या उन जैसा चलता-पुर्जा दुनियादार आदमी, जो धन के बल पर धर्म को नहीं डिगा सका, अंततः विनय उदारता, विशाल-हृदयता के छद्म और धन-बल से भी उन्हीं वंशीधर को धर्मनिष्ठ बनाए रखे, पर क्या वे स्वतः अपने अधीनस्थ कर्मचारी को धर्म-निष्ठ बने रहनें देंगे ? बड़बोलेपन और अहंकार के साथ जुड़ा धन वंशीधर को जीत लेता है। सवाल प्रेमचंद की 1914 के आसपास की मानसिकता को देखते हुए

भले ही असामयिक और अप्रासंगिक लगे, परन्तु विचार का एक नया आयाम जरूर खोलता है।'' 41 इसी संदर्भ में डॉ. नूरजहॉ कहती हैं कि--" आधुनिक सभ्यता का आधार धन है। धन के अभाव में व्यक्ति पंगु सा दिखता है। पूँजीपति वर्ग किसाानों पर जो अत्याचार शोषण-रूप में करते हैं, उसका आधार भी धन नहीं है। 'नमक का दारोगा' कहानी इसी आर्थिक दृष्टिकोण से लिखी गयी है।'' 42

15. अपनी करनी

इसका प्रकाशन उर्दू में 'शामते आमाल' (शामते-एमाल) नामक शीर्षक से सितम्बर-अक्टूबर 1914 को जमाना में हुआ था। तथा 'खाके परवाना' शीर्षक से उर्दू कहानी संग्रह खाके परवाना में संकलित हुआ। बाद में हिन्दी में अपनी करनी शीर्षक से गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-1 में भी इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी में प्रेमचंद ने एक पति की बेवफाई को दर्शाया है कि कुंवर श्यामसिंह रूपवान नौजवान एवं धनवान थे। लोग उनके रूप की ईर्ष्या करते थे। उनकी एक पत्नी इन्दू और दो बच्चे थे। इंदु आज्ञाकारी, सुन्दर एवं सुशील था, जिसका श्यामसिंह गलत फायदा उठाता था और ऐयाशियां करता था। एक बार शाम को मछली का खेल देखने बाग में गए। जहॉ उन्हें दुर्जन माली की बेटी ने देखकर भी अनदेख कर दिया, जो कुंवर न सह सका। फूलमती वैसे इतनी खूबसूरत न थी पर उसमें अदाएं बहुत थी। कुँवर का ध्यान घर की तरफ से हटकर उसकी तरफ गया और उसने उससे मेल-जोल बढ़ाए। उसे मंहगे-मंहगे उपहार दिए। घर खर्च भी नहीं देते इसलिए इन्दुमती घर की कीमती चीजें बेचकर घर चलाती। एक बार फूलमती कुंवर के सारे उपहार पहनकर उन्हें दिखाने बाग में खड़ी थी पर तभी महराज वहॉ आए और फूलमती को देखा। महाराज को जब पता चला कि वह माली की बेटी है तो उसने माली को इतनी कीमतीं चीजों का न केवल हिसाब मॉगा पर दगा देने के जुर्म में उसे निकालना चाहा। पर तभी माली ने बताया कि उनका कोई अफसर उसे यह सब देता है। उस समय कुंवर साहब वहीं थे। उनको लगा कि वे साफ-साफ बच गये पर महाराज नें अपनी खूफियों को उसे ढूँढ़ने को कहा। कुंवर के घर एक बुद्धा भिखारिन के वेश में गया और उसकी पत्नी से सारा हाल सुना, जो उसने महाराज को बताया। महाराज ने कुंवर को माली में शामिल किया और कुंवर की पत्नी का उसकी जगह दी। कुंवर शर्म के मारे बम्बई चला गया और एक कारखाने में काम करने लगा। साल भर बाद जब वह चोरी से घर आया तो उसने देखा कि फूलमती ने दूसरा अमीर आदमी फॅसा रखा है और उसकी पत्नी अच्छे से घर चला रही थी और उसकी राह देख रही

थी। पर कुंवर घर न जा पाया और वापस बम्बई चला गया इसलिए किसी ने सच कहा है कि जैसी करनी वैसी भरनी।

16. गैरत की कहार

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में जुलाई 1915 में जमाना में हुआ था तथा प्रेमपच्चीसी में इसका संकलन है। हिन्दी में इसे प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 तथा गुप्तधन-1 में भी इसका संकलन किया गया है।

इस कहानी में प्रेमचंद जी एक औरत की बेवफाई तथा उसकी अदाओं पर फिदा होकर किस तरह मर्द मूर्ख बनते हैं उसका जिक्र किया है। कहानी की स्त्री पात्र नईमा एक सुन्दर स्त्री है जिसने हैदर से प्रेमलग्न किया । दोनों खुश थे पर एक दिन नासिर की नजर नईमा पर पड़ी और वह उसकी सुन्दरता का कायल बन गया। नासिर उसको कई मंहगी चींजे उपहार के तौर पर देने लगा और वह उस पर आकर्षित होने लगी। हैदर और नईमा में झगड़े होने लगे और दोनों अलग होने लगे। बाद में नईमा नासिर के साथ ऐशो आराम से रहने लगी तभी एक दिन हैदर उसे मारने आया लेकिन उसी समय नईमा जाग गई। उसने उसे अपने बातों के जाल में फॅंसाकर उससे उसकी तलवार ले ली और बाद में उससे भाग जाने को कहा और कहती है कि एक औरत केवल ऐशो आराम चाहती है। अगर पुरुष यह न दे पाए तो गैरत कहॉं ? नईमा ने उसकी तलवार लेकर हैदर से कहा कि यह तलवार मेरे पास रहेगी ताकि उसे पता चले कि उसने इज्जत के साथ गैरत भी खो दी है।

17. बेटी का धन

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में नवम्बर 1915 में जमाना में तथा देहात के अफसाने और प्रेम-बत्तीसी में हुआ। बाद में हिन्दी में अक्टूबर 1918 में 'लक्ष्मी' में प्रकाशित हुई और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-। तथा मानसरोवर भाग-8 में संकलित है।

इस कहानी में प्रेमचंद ने ये बताना चाहा है कि बेटों से ज्यादा बेटियॉं मॉं-बाप के काम आती है। सुक्खू चौधरी के तीन बेटे तथा तीन बहुऐ और एक बेटी तथा कई पौत्र-पुत्रियॉं हैं। वह गॉंव में आने वाले मुसाफरों एवं अफसरो को पुराना राजमहल एवं उनके ठाट-बाट के बारे में बताता। उसमें वाक चातुर्य की कला थी। जिससे गॉंव का झगडू साहू उससे जलता था। एक बार गॉंव में मजिस्ट्रेट दौरा करने आये थे। उस गांव का जमींदार ठाकुर जितनसिंह बड़ा जुल्मी था। उससे लोग बड़ा परेशान थे, इसलिए गॉंव वालों ने सुक्खू चौधरी को ठाकुर के बारे में मजिस्ट्रेट के जुल्मों को बताने के लिए तैयार किया। मजिस्ट्रेट ने ठाकुर से इसका जबाब मांगा। इसका फायदा झगडू साहू

ने उठाया और ठाकुर को सारी हकीकत बयान की। उसी वर्ष सुक्खू कुछ पारिवारिक स्थिति के कारण पूरा लगान न दे पाया। ठाकुर ने अपनी भड़ास निकालने के लिए उसके ऊपर डिक्की लगा दिया। सुक्खू ने जब आपने बेटों से मदद मांगी तो उन्होंने हाथ खड़ा कर दिया और ऐसे रहने लगे कि कुछ हुआ ही नहीं। झगडू साहु की वजह से कोई पैसा न देता था। आखिर बेटी ने अपने गहने दिए और सुक्खू न चाहते हुए भी झगडू साहू के घर गहने गिरवी रख कर पैसे लेने गया पहले तो झगडू साहू बड़ी-बड़ी डींगे हांकने लगा लेकिन जब झगडू साहू को पता चला कि यह गहने उसकी बेटी के हैं तो उसने बिना गहने लिए ही पैसे दिए क्योंकि वह बेटी का धन लेकर अपने सर पर पाप चढ़ाना नहीं चाहता था। पहले का दुश्मन आज सुक्खू के काम आया। पहले के जमानें में लोग लड़की के घर का पानी भी नहीं पीते थे, फिर साहू उस लड़की के गहने कैसे गिरवी रख लेता।

18. दो भाई

जिसका प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1916 को 'जमाना' में हुआ था। तथा प्रेमबत्तीसी में संकलन किया गया। बाद में हिन्दी में सितम्बर 1918 को लक्ष्मी में प्रकाशित हुई और मानसरोवर, भाग-7 तथा प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं - 1 में इसका संकलन किया गया।

प्रेमचंद प्रस्तुत कहानी के माध्यम से यह दर्शाना चाहते है कि किस प्रकार छोटें से कारणों की वजह से संयुक्त परिवार टूट जाते हैं। कलावती के दो पुत्र थे। बडें का नाम केदार था और छोटे का नाम माधव था। वे दोनों एक दूसरे के बिना नहीं रह सकते थे। बड़े होने पर दोनों की शादी हो गई। केदार की शादी चम्पा से तथा माधव की शादी श्यामा से हो गई। थोड़े दिन बाद माधव के बच्चे हुए और केदार के कोई बच्चा नहीं हुआ अब घर का सारा काम श्यामा चम्पा से करवाने लगी। इसलिए थोड़े दिन बाद ही घर में सब अलग हो गए। माधव को चार पुत्र तथा चार पुत्री हुई । वह तीन बेटियों की शादी में कंगाल हो गया। अब उसके पास घर के अलावा कुछ भी न था। उस पर भी लगान भी तीन साल का न भर पाने के कारण उस पर चलान पड़ गया था। माधव के पास कुछ न होने की वजह से उसे कोई पैसा न देता था। इसलिए माधव अपने बड़े भाई केदार के पास गया। केदार और उसकी पत्नी चम्पा उसका घर हथियाना चाहते थे और उसने घर के बदले जरूरत से कुछ कम रकम देना चाहा पर माधव भाई-भाभी की चाल को समझ गया। उसने सोचा कि इज्जत ही जा रही है तो पूरी रकम लूँ। माधव ने भाई की बदनामी की बात की तो वह डरा और उसने कहा कि एक महाजन घर के बदलें में पूरी रकम देने को तैयार है। दूसरे दिन पूरी पंचायत तथा गॉववाले एवं मुख्तार और दाता दयाल के सामने कागज लिखा गया तब पता चला कि वह

घर को खरीदने वाला और कोई नहीं उसका सगा भाई केदार ही है। जिस पर न लोग केदार पर हँसे बल्कि खरी-खोटी सुनाने लगे, जब मॉं को पता चला तो वह फूट-फूटकर रोने लगी और अपने भाग्य को कोसने लगी।

19. शंखनाद

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में माघ 1972 विक्रमी संवत को 'प्रभा' में हुआ। तदनुसार फरवरी 1916 में मानसरोवर-7 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में भी इसका संकलन हुआ। उर्दू में 'बॉंगे-शहर' नामक शीर्षक से भी इसका प्रकाशन अगस्त 1920 को प्रेमबत्तीसी में हुआ।

यह कहानी पारिवारिक कहानी है। कहानी के मुख्य पात्र भानु चौधरी के दो बेटे मेहनती हैं तथा तीसरा बेटा कामचोर है। चौधरी गांव का मुखिया है। तथा उनका इतना रोब था कि गॉंव का कोई भी आदमी बिना उससे पूछे कोई काम न करता था। दरोगाजी की बड़ी इज्जत थी। चौधरी उनका बड़ा बेटा वितान कानूनी पढ़ाई में अव्वल था तथा होशियार था। दूसरा शान था जो खेती के काम में होशियार था और तीसरा गुमान था जो मंद बुद्धि का था और कामचोर, आलसी और उदंड था। चौधरी और उसके बेटे, बहुएं उसे ताना देती लेकिन उसमें कोई सुधार न आता उसकी सजा उसकी पत्नी को भुगतनी पड़ती। एक बार गुमान ने तंग आकर रेश्मी कपड़ों की दुकान खोली और सारे कपड़े अपनी ऐयाशियों में उड़ा दिए, जिस पर भौजाइयों ने उसके कपड़े जला दिए और घर का बॅंटवारा करवा दिया। हर मंगलवार को गुरदीन मिठाई वाला आता। जिसकी आवाज सुनकर गॉंव के सारे बच्चे अपनी मां को लेकर मिठाई लाने जाते। गुरदीन भी बच्चों का दिल न तोड़ता और अगर पैसा न होता तो बाद में ले आता और मिठाई दे देता। वितान तथा शान की पत्नी अपने लड़के को लेकर मिठाई लाने गई पर गुमान का पुत्र अपनी मॉं से मिठाई की जिद करने लगा। गुस्से में आकर उसने उसे दो-तीन थप्पड़ लगा दिए। गुमान यह न देख सका, उसे अपना बेटा बड़ा प्यारा था। यह देखकर उसने अपनी पत्नी को धन्यवाद देते हुए उससे कहा कि तुमने मेरे कानों में नई जागृति का शंखनाद कर दिया है।

20. ईश्वरी न्याय

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जुलाई 1916 को सरस्वती में हुआ। बाद में मानसरोवर, भाग-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-1 में भी इसका संकलन हुआ। उर्दू में 'ईमान का फैसला' नाम से अगस्त 1920 को प्रेमबत्तीसी में संकलित हुई।

प्रस्तुत कहानी के प्रमुख पात्र पंडित भृगुदत्त एक बहुत बड़े जमींदार थे, जिनके यहॉ मुंशी सत्यनारायण काम करते थे। पंडित जी सारा काम उन्हें सौंपा करते थे। एक बार पंडितजी का पैर गंगाघाट में फिसलने के कारण उनकी आकस्मिक मृत्यु हो ई। पंडितजी के दो बच्चे थे। उनकी जिम्मेदारी उनकी पत्नी भानुकुमारी पर आ गई। भानुकुमारी जी ने घर और पूरी जायदाद का पूरा काम मुंशीजी पर छोड़ दिया, उनको मुंशीजी पर बड़ा विश्वास था। सारा काम अच्छी तरह चल रहा था, पर लालच किसी को नहीं छोड़ती है। गंगाघाट पर एक अच्छा उपजाऊ गॉव था, जिसका मालिक किसी मुकदमें में फंसने के कारण उसे तीस हजार में बेच रहा था, मुंशीजी ने भानुकुमारी से इसकी चर्चा की और उसको खरीद लिया, और बच्चे छोटे होने की वजह से उन्होंने अपना नाम रखा। पर उनकी नियत धीरे-धीरे खराब होने लगी और मुंशी जी उस गॉव का हिसाब अलग रखने लगे और किसी को न बताते। बात धीरे-धीरे फैल गई और भानुकुमारी को इस बात का पता चला तब उन्होंने मुंशीजी से इस बात में बात की तो उन्होंने साफ तौर कह दिया कि वह गॉव भानुकुमारी का नहीं है सिर्फ उसे भानकुमारी को 30 हजार रूपये देने है। इस पर भानुकुमारी ने उन पर केश किया और सारे पेपर जप्त करके उन्हें दफ्तर से निकाल दिया। मुंशीजी ने सारे कागजाद उनके घर में घुसकर रात को गंगा में फेंक दिया। सारे शहर में मुंशीजी की बदनामी हुई। केश तो वे जीत गए पर बाद में भानुकुमारी ने उन्हें कसम खाने के लिए कहा पर वे झूंठी कसम न खा पाए।

मुंशीजी को बड़ा पश्चाताप हुआ और बाद में वे सारा गॉव भानुकुमारी जी को लौटा दिए। भानुकुमारी ने दुबारा उन्हें सारा काम सौंपा और एक साल बाद फिर से उनके नाम पर वह गॉव सौंप दिया, जो मुंशीजी ने कृष्णार्पण करके उसकी कमाई का उपयोग दीन दुखियों की मदद करने में करने लगे। इसी पर रामदीन गुप्त कहते हैं--" प्रेमचंद दिखाते हैं कि मनुष्य मूलतः ! सत्यप्रिय और न्यायप्रिय होता है, असत्य और अन्याय का आश्रय वह केवल परिस्थितियों के चक्कर में पड़कर ही लेता है। स्वभावगत सत्य और परिस्थितिगत असत्य के इस संघर्ष में यदि किसी प्रकार मनुष्य के हृदय के देवत्व को जागृत कर दिया जाय तो इसमें संदेह नहीं कि सत्य और न्याय की रक्षा एवं पुनर्स्थापना के लिए वह बड़े से बड़ा त्याग और आत्म बलिदान कर सकता है। '' 43

21. महातीर्थ

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'हज्जे अकबर' शीर्षक से सितम्बर 1917 में जमाना में तथा नवम्बर 1918 में 'कहकशा' में हुआ और बाद में प्रेमबत्तीसी में संकलन हुआ। हिन्दी में 'महातीर्थ' नाम से मानसरोवर, भाग-7 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-2 में भी इसका संकलन है।

इस कहानी में लेखक ने कहानी के प्रमुख पात्र इन्द्रमणिजी का खर्च ज्यादा तथा आमदनी कम की चर्चा करनी चाही है। जिसके कारण वे कैलासी दाई को भी नहीं रख सकते हैं जो कि उनके बेटे की देखरेख करती हैं। कैलासी भी उनके बेटे रुद्रमणि को खूब प्यार करती है वह खुद न खाकर उसको खिलाती है। लेकिन उसकी पत्नी को वह फूटी ऑंख भी न भाती थी। वह कैलासी को हमेशा डॉंटती रहती थी एक बार तो बाजार से देर में वापस आने के कारण उसे घर से निकाल दिया। कैलासी रोती हुई चली तो गई लेकिन रुद्रमणि की हालत दिन-प्रतिदिन खराब होने लगाी और वह ज्यादा बीमार हो गया तथा खाना भी न खाता। सुखदा ने नई दाई रखी पर रुद्रमणि कैलासी को न पाकर मुर्झाने लगा। मुंशीजी से जब न रहा गया तब वे कैलासी को ढूॅंढ़ने निकल पड़े, सुखदा पहले तो आना-कानी की पर बाद में बेटे की हालत देखकर मान गई। मुंशीजी जब कैलासी के घर गऐ तो पता चला कि वह तीर्थयात्रा पर जा रही है। रेल्वे स्टेशन पर जब मुंशीजी गए तो पहले तो कैलासी ने जाने से मना किया पर बाद में रुद्रमणि की हालत सुनकर वह मान गई और मुंशीजी के घर आ गई । कैलासी को देखकर रुद्र नाचने लगा। मुंशीजी ने कैलासी के तीर्थ पर न जाने पर खेद व्यक्त किया तो कैलासी ने कहा कि 'यही सबसे बड़ा महातीर्थ है'।

22. कप्तान साहब

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'दवा और दारू' शीर्षक से दिसम्बर 1917 को जमाना पत्रिका में हुआ तथा 'खाके परवाना' में संकलित है। बाद में हिन्दी में कप्तान साहब नाम से पांच फूल और मानसरोवर-2 तथा प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ - 2 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी का प्रमुख पात्र जगतसिंह है जो कि बड़ा चोर था। वह हमेशा घर की चीजें चुराकर बाजार में बेंच देता था और उस पैसे से चरस, शराब गांजा आदि खाता-पीता था। माता-पिता तथा परिवार के अन्य उसे गालियॉं देते थे। उसे घर पर न आने देते तथा उसे खाना भी न देते । एक बार जगतसिंह के पिता भक्तसिंह जो कि डाकखाने में नौकर थे, वे किसी के बीमे पकने की रकम घर ले आए और जगतसिंह ने उसी दिन पिता जी से पैसे मॉंगे जब उन्होंने न दिया तो कमीज तलाशने लगा और उसने बीमे की रकम ले ली पर कुछ लेकिन जब उसे कुछ शर्मिन्दगी महसूस हुई तो बीमे की रकम लेकर मुम्बई चला गया, जहॉं वह दुकान खोलना चाहता था। पर वह मुम्बई में फौज में भर्ती हो गया। दूसरी तरफ भक्तसिंह पर जालसाजी का मुकदमा चला और उन्हें पॉच साल की सजा हो गई। एक बार जब जगतसिंह ने घर चिट्ठी लिखी, जिससे पता चला कि उसके पिता जेल मे है और उसकी मॉं बीमार है। वह घर आना चाहता था, पर उसे छुट्टी नही मिली । चार साल

तक युद्ध चला अब वह कप्तान बन गया था, सभी जगह उसके चर्चे थे। वह अपनी तनख्वाह की बड़ी रकम घर को भेजता और पिता की रिहाई के लिए प्रयत्न करता। पिता की रिहाई के समय जब पिताजी अपने बेटे को कोस रहे थे तब उसी समय वह वहाँ पर घोड़े पर सवार होकर जगतसिंह आया हवलदारों ने सलामी दी और जगतसिंह घोड़े से उतरकर पिता के चरणों में गिर पड़ा। भक्तसिंह को ध्यान देने पर पता चला कि वह उसका बेटा है। यहीं पर कहानी खतम हो जाती है।

23. दुर्गा का मन्दिर

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में दिसम्बर 1917 को सरस्वती मे हुआ, तथा बाद में मानसरोवर-7 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ -2 में भी इसका संकलन किया गया। यही कहानी उर्दू में दुर्गा मंदिर नाम से सन् 1919 में 'जखीरा' में छपी थी।

इस कहानी के प्रमुख पात्र बाबू ब्रजनाथ हैं, जो वकालत पढ़ते थे पर बच्चों की वजह से घर में पढ़ाई न हो रही थी, इसलिए वे बाग में जाते थे । जहाँ उन्हें एक दिन एक पुड़िया मिली जिसमें कुछ गिन्नियाँ और उसमें कुछ पैसे थे। ब्रजनाथ ने पुलिस में रपट लिखवाने को कहा पर पत्नी भामा ने मना किया। दूसरे दिन उनके मित्र गोरेलाल आए जिनको पैसो की जरूरत थी। पत्नी के पैसे न देने पर ब्रजनाथ ने पुड़िया में से दो गिन्नियाँ दी। गोरेलाल ने कल पैसे को लौटाने को कहकर वायदा तो किया पर वापस न आया, तो ब्रजनाथ खुद उनके घर गया और उन्हें पता चला कि उनकी सारी कमाई उड़ गई है और वह गाँव जा रहा है। ब्रजनाथ को गुस्सा आया और दूसरे दिन से रात-दिन पढ़ाई करके पच्चीस रूपये जमा किए पर अभी भी पैसे बाकी थे और उन्हें ज्वर हो गया। पत्नी को निश्चित हो गया कि यह सब उस पैसों की वजह से हुआ। नवरात्रि शुरू हो गई थी और भामा दुर्गा के मन्दिर गई जहाँ उसे ऐसा महसूस हो रहा था कि माँ उसे कह रही है कि पराए आदमी का पैसा लौटा जाने देना चाहिए। तभी एक तुलसी नाम की औरत माँ के सामने न केवल रो रही थी बल्कि उस इन्सान को गालियाँ दे रही थी जिसने उनके पैसे लिए थे। भीमा ने उससे सारी बातें जान लीं। उसके पैर छुए और पूरे पैसे लौटाए। गौरेलाल ने पैसे लौटाते हुए माफी मागी । ब्रजनाथ ने ये पैसे भामा को बूँदे खरीदने के लिए दिए क्योंकि उसकी बदौलत ही उसे पैसे मिले थे। इस पर डॉ. इन्द्रनाथ मदान कहते हैं कि--" दुर्गा का मन्दिर एक एसी कहानी है, जिसमें गरीबों की उस सहज ईमानदारी का वर्णन है, जिसे वे बेईमानी पर विजय पाने के लिए काम में लाते हैं। एक ईमानदार आदमी के मन कें द्वन्द्व का चित्रण करने की एक मनोवैज्ञानिक परिस्थिति पैदा की गई है।'' 44 साथ ही साथ वे आगे भी कहते हैं कि--" प्रेमचन्द एक शिक्षा देना चाहते हैं। जो विश्वास अमीरों

में नष्ट हो गया है वह साधारण ग्रामीणों और गरीबों में अब भी जीवित है। धर्म अमीरों के लिए निरर्थक है, परन्तु सीधे-सादे और गरीब लोगों के लिए वह अब भी सजीव यथार्थ है।'' 45

24. कर्मों का फल

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में मार्च 1918 में प्रेमपच्चीसी में हुआ था। हिन्दी में इस कहानी का संकलन प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-2 और गुप्तधन-1 में किया गया है।

प्रस्तुत कहानी आत्मकथात्मक रूप से कही गई है। मैं बड़ा विस्मित होता हूॅं जब लाला साईदयाल को देखता हूॅं। वह न धनवान था, कर्जे में सारा घर बिक गया था। बस स्टेशन पर कपड़ों की एक दुकान थी, पर उसमें गजब का साहस था। वह दुबला-पतला मनों सामान उठाता और उसके चेहरे पर हंसी एवं साहस छलकता रहता। मैं जब मुम्बई से एक महीने बाद लौटा तो उसके घर गया जहॉं उसका बेटा प्लेग का शिकार हुआ था और उसी समय मर गया था। में खूब रोया पर साईदयाल न रोया। उसमें अब भी साहस था। थोड़े दिनों के बाद मेरी बेटी चन्द्रमुखी निमोनिया का शिकार हो गई मैं भी रोया तथा साईदयाल भी मुझे गले लगाकर खूब रोया। आज हम दोनों नदी के किनारे बैठते हैं मैं अपने आंसू छिपाने के लिए नदी के किनारे पर मुॅंह धोने जाता हूॅं पर वह आज भी साहसी था। जब मैंने इसका कारण पूछा तो उसने कहा कि ये जो हो रहा है वह मेरा कर्म है और मैंने उसे न केवल गले लगाया है बल्कि में उसकी इज्जत भी करता हूॅं।

25. सच्चाई का उपहार

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन अज्ञात है। हिन्दी में 1918 को प्रेमपूर्णिमा के प्रथम संस्करण में प्रकाशित है तथा मानसरोवर-8 और प्रमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-2 में इसका संकलन भी है।

इस कहानी के मुंशी भवानी सहाय जो बरांव गॉंव की मदरसा के प्रधानाध्यापक थे उनको बागगानी का बड़ा शौक था। इसलिए वे स्कूल के आस-पास तरह-तरह के फूल-पौधे लगाते, जिसमें वे बच्चों की मदद लेते। पर कुछ बच्चे जमींदार के थे, जो इसको अपना काम नहीं मानते थे और दूसरों के बच्चों को डरा धमका कर काम करवाते थे। एक बार तो उन लोगों ने पूरी बागगानी तहस नहस कर दी, जिसको उनके सहपाठी बाजबहादुर ने देख लिया। उन लड़कों ने उसे धमकाया पर उसने कहा कि अगर सर मुझसे पूॅंछेगें तो मैं सच बताऊॅंगा और ऐसा हुआ भी। फिर क्या था जब मुंशी को पता चला तो उन्होंने जमींदार के लड़कों को बुलाकर खूब पीटा। बाद में जमींदार के लड़कों ने बाजबहादुर को खूब पीटा और वह मुर्च्छित हो गया डर के मारे जमींदार के बेटे तीन दिन तक स्कूल न आए। तीन दिन के बाद जब बाजबहादुर उन लड़कों को बुलाने गया तो उन्हें पता

चला कि उसने मुंशीजी से उनकी शिकायत नहीं की थी इस पर उन लड़कों ने बाजबहादुर को स्कूल का लीडर बना दिया।

26. बैंक का दिवाला

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में फरवरी-मार्च 1919 को कहकशां में हुआ था तथा प्रेमबत्तीसी में भी इसका संकलन किया गया। हिन्दी में मानसरोवर, भाग-7 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-2 और प्रेम द्वादशी में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी के लाला साईंदत्त हैं, जो कि नेशनल बैंक के मैनेजर थे। वे अपनी बैंक की प्रगति करने के लिए किसी को लोन देने की ही सोच रहे थे कि बरहल की महारानी ने उनसे दस लाख की लोन माँगी, मगर जमानत में अपनी जबान दे रही थी। पहले तो बंगाली बाबू और अन्य डाइरेक्टरों ने मना किया पर साईदास ने अपनी जिम्मेदारी पर लोन दे दिया। तीन महीने तक बिना कुछ कहे सुने 45 हजार की थैली आ जाती थी। जिससे डायरेक्टरों ने साईंदत्त को बड़ा मान दिया लेकिन बाद में चौथे साल में पैसे न आए और रानी के मरने की खबर आई। बाकी के पैसे रानी के वारिसदार ने देने से साफ मना कर दिया। लोग अपने पैसे लेने के लिए बैंक में दौड़े, बैंक का दिवाला निकला। कुँवर जगदीश सिंह ने पहले इतने अमीर न थे। उनके पिता अपने भाई के मरने पर जायदाद के वारिस बनने के लिए अदालत गए, उनका घर बार बिक गया पर रियासत न मिली। बाद में जगदीश सिंह बड़े दुख सहे। लोगों क तलवे चाटे इसलिए अब वे किसी को एक पैसे न देना चाहते थे। कुंवर जगदीश सिंह अपनी गाड़ी से लखनऊ आए थे उन्होंने बैंक के सामने न केवल भीड़ देखी बल्कि लोगों को रोते बिलखते देखा। जिसमें उनका दोस्त नसीम और शिवदास भी था। शाम को जब वे नदी के किनारे घूमने गए तो वहाँ उन्हें एक तैरती हुई लाश दिखाई दी जो कि उनके मित्र शिव की थी, पूँछने पर पता चला कि उसने आत्म हत्या इसलिए कर ली क्योंकि वह अहीरों का कर्ज न चुका पाया था। कुँवर ने सोचा कि वह बैंक के पैसे लौटा देगा जिससे उसके घर के सारे लोग न केवल उससे नाराज हो गए पर उनकी दुश्मनी भी मोल लेनी पड़ी। अब कुँवर के पास एक हजार रूपया बचा जिससे उसका घर जैसे-तैसे चल रहा था।

27. इज्जत का खून

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'खूने-हुर्मत' नाम से सितम्बर 1919 को 'सुबहे-उम्मीद' में हुआ तथा बाद में प्रेमबत्तीसी में भी इसका संकलन हुआ। हिन्दी में 'इज्जत का खून' नाम से गुप्तधन-2 (संकलनकर्ता व रूपान्तरकर्ता श्री अमृतराय) एवं प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ

और अमृतराय की सोलह अप्राप्य कहानियॉं में भी इसका संकलन मिला है। डॉ. गोयनका ने 'खून-हुर्मत' (प्रतिष्ठा की हत्या) शीर्षक से उर्दू में रूपान्तरण करके दुबारा 'प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य' में संकलित किया।

जुबैदा अपने पति से बहुत प्यार करती है और सईद भी उसको बहुत प्यार करता है। उसकी पत्नी जुबैदा ने अपनी सारी जायदाद पति के नाम कर दी। धीरे-धीरे पति सईद ने अपना रूप दिखलाना शुरू किया। अब वह दूसरी हसीनाओं के चक्कर में रात-रात भर घर नहीं आता था। जुबैदा ने सईद की बेवफाई को अपना लिया। सावन के महीने में जब जुबैदा ने बांग में झूला लगाकर झूल रही थी तब हसीना ने उसे जलाने की कोशिश की जिसमें दोनों में बहस हो गई। इस पर जुबेदा ने अपनी भड़ास निकाल ली पर हसीना ने उसे झूले से बांधकर उसे कमची से बेतहासा मारा । सईद खड़ा देखता रहा। मारने का सिलसिला तब खतम हुआ जब कमची टूट गई। नौकर ने जुबैदा को छोड़ा और जुबैदा सईद की इज्जत को दागदार करने के लिए मण्डी में गई। तीन दिन के बाद मण्डी में सावन का मेला लगा और सईद ने जुबेदा को देखा तो मारे शर्म के सिर झुका लिया। दूसरे दिन खबर आई कि सईद का किसी ने खून कर दिया और हसीना का सिर धड़ से अलग कर दिया। जुबेदा को जब पता चला तो उसे लगा कि यह सईद का काम है। चार दिन बाद जब वह घर पहुँची तो उसे लगा कि वह सालों बाद घर आई है । जुबेदा सईद की मुहब्बत तथा बेवफाई दोनों को नहीं भूल पाई।

28. दफ्तरी

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में अक्टूबर 1919 को 'कहकशां' में हुआ था। तथा प्रेमबत्तीसी में इसका संकलन हुआ था। बाद में हिन्दी में 24 अप्रैल 1921 को 'आज' में प्रकाशित हुई। साथ ही मानसरोवर, भाग-8 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-2 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी का पात्र रफाकत हुसैन लेखक के दफ्तर का दफ्तरी था। वह बड़ा सीधा-सादा था और संतोषी था। उसकी पत्नी भी वैसी थी। पशु प्रेमी होने के कारण गाय, कुत्ता, बिल्ली, बकरी आदि को पालता तथा दूध वगैरा उन्हीं जानवरो ंको पिला देता था। एक बार दफ्तर से सब लोग मछली खरीदने गए और रफाकत हुसेन को भी ले गए। उस दिन खूब बारिस हुई और बाढ़ आ गई। रफाकत ने घर आकर देखा तो घर खुला पड़ा था, कुत्ता रो रहा था और बीबी को सॉप ने काटा था। जिससे वह मर गई थी। अब वह घर का सारा काम वही करता और दफ्तर के लोग उसे कम काम देते । उसके मुहल्ले के एक अरदली ने उसका विवाह करवाया। थोड़े दिन तक सब सही चला

पर बाद में दूसरे पत्नी जो पैसे वाले घर से आई थी वह सारा दूध पीती और खाने-पीने की शौकीन थी। जिसके कारण उसे दफ्तर में से कर्ज मॉगने तक की नौबत आ गई। पशु भी हाड़ पिंजर हो गए। उधार बढ़ने लगा। बाद में नानबाई बकरी और गाय ले गया। बिल्ली भाग गई, कुत्ता सिर्फ वफादरी करता रहा। एक दिन दफ्तरी जब लेखक के पास पैसे मांगने आया तो पहले तो उन्होंने मना किया पर बाद में उसने अपनी राम कहानी बताई तो उसने पॉच रूपये दिये यह वह सिपाही था जो गृहदाह में जल रहा था। इस पर डा॰ शैलेष जैदी कहते हैं कि --" उसकी श्रेष्ठता उसकी सहजता में है और उसकी सहजता आकस्मिकता से उत्पन्न वास्तविकता न होकर परिस्थितियों की टकराहट से जन्मी सच्चाई है, एक ऐसी सच्चाई जो कार्य-कारण - क्रम को विश्लेषित करती है।'' 46

29. आत्माराम

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1920 को जमाना में हुआ था तथा प्रेमबत्तीसी में संकलन किया गया। हिन्दी में 26-27 मई 1921 को आज में प्रकाशित हुई तथा प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ, भाग-2 और मानसरोवर, भाग-7 में इसका संकलन किया गया।

यह कहानी बैदों गॉव के एक महादेव की है, जो कि एक सुनार है। जिसके तीन पुत्र तथा तीन पुत्रियॉ है। कई पोते आदि हैं। पर बेटे निठल्ले थे, इसलिए पूरा घर महादेव को संभालना पड़ता था। महादेव को एक तोता प्यारा था, जिसको वह पिंजरे में रखता था। घरवालों को उससे कोई सरोकार न था। महादेव भोर होते ही एक हाथ में पिंजरा और दूसरे हाथ में लकड़ी लेकर निकलते और बोलते 'संत गुरुदत्त शिवदत्त दाता, राम के चरण में चित लागा'। जिससे लोगों को पता चल जाता कि सवेरा हो गया है एक दिन किसी ने पिंजरा खुला छोड़ दिया था उसके कारण तोता उड़ गया और महादेव पूरे दिन उसके पीछे दौड़ते रहे लोग उनकी हॅसी उड़ाने लगे और रात में वे वहीं सो गये जहॉ तोता बैठा था। उसी रात चोरी करके कुछ चोर एक पेड़ के नीचे मशाल जलाकर बैठे थे। महादेव को पता न था जब वे चोर हैं। उसने चोर से जब चिलम मॉगी तो चोर दौड़े। महादेव जब वहॉ गया तो वहॉ अशर्फियों का भरा कलश पड़ा था। सुबह होते-होते तोता पिंजरे में आ गया और वह जल्दी से घर आ गया। उसी दिन उसने गॉव के पंडित को कथा और सत्यनारायण का न्यौता दिया। पंडित अचम्भित हो गया उसने सारे गॉव में बात फैला दी। कथा के बाद महादेव ने गांव वालों से अपने बाकी ले जाने को कहा तथा साथ में यह भी कहा कि वह एक महीने तक सबकी राह देखेगा और बाद में यात्रा पर चला जाएगा। एक पुरोहित ने महादेव के द्वारा एक सोने के कड़े हथियाने की बात की, जिस पर महादेव ने उसे दो अशर्फियॉ दी। पचास वर्ष बाद आज भी उस ठाकुर

के द्वार पर कलश है। उसके नजदीक में तालाब है जहॉ मछलियॉ नहीं मारी जाती। आधी रात को वहॉ सूत्र सुनाई देता है महादेव के बारे में कहा जाता है कि वह हिमालय चला गया और वह आत्माराम से प्रसिद्ध है। पोपट कब का स्वर्ग सिधार गया। इसी सन्दर्भ में शिवकुमार मिश्र कहते हैं कि--" व्यक्ति के मनोविज्ञान और सामसजिक जीवन बदले और बदलते हुए यथार्थ बोध और इन दोनों की रचनाकार मन से हुई अन्विति के तहत उपजी यह कहानी है जो चर्चित और प्रसिद्ध भी है। इस कहानी का रचना शिल्प वैसा सरल सादा नहीं है जैसा आमतौर से प्रेमचंद की कहानियों की विशेषता है, इसमें प्रेमचंद रूपक और प्रतीक का सहारा लेकर एक ही आदमी के चरित्र और व्यक्तित्व की संश्लिष्ट प्रस्तुति करतें हैं। ''47 वे आगे भी लिखते हैं कि--" समूची कहानी ऊपर से एक धार्मिक, नैतिक, आध्यात्मिक प्रभामंडल की छाया में विकसित होने का आभास देती है। परन्तु प्रेमचन्द की अपनी दखल से उपजी व्यंजनाएं उस प्रभामंडल को छांटते हुए उसे एक सामान्य मनुष्य के आत्माग्रस्त मनुष्य के अपने पाप बोध और उनसे उबरने के स्वाभाविक प्रयासों के यथार्थ तक ही सीमित रखती है।'' 48

30. पुत्र प्रेम

जिसका प्रकाशन हिन्दी में जून 1920 को सरस्वती में हुआ था तथा बाद में गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ -2 में भी इसका संकलन हुआ है। उर्दू में 'महर-ए-पिदर' शीर्षक से जुलाई 1920 को जमाना में प्रकाशित हुआ।

इस कहानी में बाबू चैतन्यदास अर्थशास्त्र के ज्ञाता थे जो कि एक वकील भी थे। गांव में जमीन थी और बैंक में पैसे थे पर खर्च सोच समझकर करते थे। उनके दो पुत्र थे। बड़े का नाम प्रभुदास तथा छोटे का नाम शिवनाथ था। उनकी पत्नी का नाम तपेश्वरी देवी था। बड़ा लड़का पढ़ने में होश्यािर था और वे उसे लंदन बैरिस्टरी पढ़ने भेजने वाले थे पर बी.ए. की परीक्षा के समय वह बीमार हो गया और डॉक्टर ने उन्हें बताया कि उसे ट्युबरक्यूलोसिस यानी कि तपेदिक हो गया है। चैतन्यदास उसकी दवा में काफी पैसे खर्च किए , लेकिन कुछ ठीक होते न दिखा डॉक्टर ने उसे इटली ले जाने की सलाह दी और उनसे यह भी कहा कि वह वहॉ से ठीक होकर लौटेगा कि नहीं यह नहीं कहा जा सकता है। पिता और भाई उसे इटली भेजने के खिलाफ थे , पर मॉ उसे भेजना चाहती थी। ऐसे में छ महीने गुजर गए। चैतन्यदास ने अंत में उसे इंग्लैण्ड भेजा लेकिन वहॉ जाने के एक हप्ते बाद ही वह मर गया। चैतन्यदास उसे जलाने के लिए मणिकर्णिका घाट पर ले गये वहॉ उन्हें एक बारात दिखी जहॉ एक पुत्र अपने पिता को जलाने आया था, जिसने अपनी सारी संपत्ति

पिता को बचाने में उड़ा दी। यह सुनकर चैतन्यदास को बड़ी ग्लानि हुई और उन्होंने प्रभुदास के अंत्येष्टि संस्कारों में हजारों रूपये खर्च किए।

31. मुबारक बीमारी

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'मर्जे मुबारक' नाम से अगस्त 1920 को प्रेमबत्तीसी में हुआ। हिन्दी में ' मुबारक बीमारी' नाम से गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-2 में संकलन किया गया।

कहानी में लाला हरनामदास की एक चक्की थी जो पहले बहुत चलती थी पर अब नई मशीनों के कारण न चलती थी। उनका बेटा हरिदास अच्छा पढ़ा लिखा था, लालाजी उसे धंधा संभालने के लायक न समझते, कोई सलाह भी उससे न लेते। हरिदास की पत्नी देवकी पतिव्रत एवं घर को संभालने वाली सुशील नारी थी पर पति और श्वसुर के बीच पिसती थी। एक बार लाला को लकवा मार गया और उन्होंने सारा काम दीनानाथ पर छोड़ दिया। पुत्र को बुरा लगा पर उसने यह मौका न छोड़ा उसने कामचोर और आलसी नौकरों को निकालने की हिदायत दी। नई मशीने और नए पुरजे मंगवाए। अब धंधा बहुत अच्छा चलने लगा। लाला बहू और बेटे से धंधे के बारे में पूँछता पर वे धंधें के बारे में न बताते। लाला उनको कोसता। एक दिन उससे न रहा गया और दीनानाथ को बुलाकर पूँछा पर जब दीनानाथ से धंधे की प्रगति के बारे में सुना तो उससे न रहा गया और वह चक्की पर गया। वहाँ जाकर उसने जो देखा उससे वह दंग रह गया और बेटे से न केवल माफी माँगी पर उसने बीमारी को मुबारक कहा।

32. विषम समस्या

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जनवरी 1921 को प्रभा में हुआ था तथा बाद में मानसरोवर और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-2 में संकलन किया गया। यही कहानी 'समस्या' शीर्षक से मानसरोवर-4 में संकलित है। उर्दू में 'मुअम्मा' शीर्षक से मार्च 1921 को जमाना मे प्रकाशित हुई।

इस कहानी में एक गरीब का चित्रण किया गया है। कहानी का पात्र गरीब है जो दफ्तर में काम करता है। वह बड़ा सीधा-सादा है और सत्यवान है, सबका सारा काम करता, रोज टाइम से आता लेकिन डॉट भी उसी को पड़ती । ऑफिस में तीन और चपरासी थे, उसमें एक मुसलमान था जिसका भाई थानेदार था इसलिए सब उससे डरते थे, दो ब्राह्मण थे जो लोंगो को आशीर्वाद देते थे। ये लोग सिर्फ बड़े बाबू से डरते थे। गरीब को ऊपरी कमाई में हिस्सा न देते थे। एक बार गरीब से

बड़े बाबू का मेज साफ करते समय दावात उलट गई और रोशनाई मेज पर गिर गई, जिसके कारण उसको बड़े बाबू ने उसे इतना डॉटा कि वह रोने लगा। मुझे जब पता चला कि उसके पास खेत, हल, बैल, पशु सब हैं और घर में दूध घी भी अच्छा होता है तो मैंने समझाया कि वह गांव से ये सब चीजे लाकर कर्मचारी को खुश करे ताकि तुम्हें डॉट न पड़े और हुआ भी वही उससे सारे कर्मचारी खुश रहने लगे। अब गरीब टाइम पर न आनेवाला, कामचोर, आलसी और रिश्वत लेनेवाला इन्सान बन गया। गरीब अब केवल बाबू को खुश रखता । एक बार बड़े बाबू ने उसे पार्सल छुड़ाने को स्टेशन पर भेजा, उसने बारह आने सवारी की और बाबू से लेकर बारह आने ठेलेवाले को दिए और उसे रुला धुलाकर भी चार आने अपना कमीशन लिया। में यह देखकर मैं दंग रह गया।

33. प्रारब्ध

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'दस्त-ए-ग़ैब' नाम से अप्रैल 1921 में जमाना में हुआ तथा 'ख्वाबेखयाल' में संकलन किया गया। हिन्दी में प्रारब्ध नाम से अक्टूकर 1921 को विशाल भारत में प्रकाशित किया गया। तथा मानसरोवर-7 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-2 में इसका संकलन भी किया गया।

इस कहानी के प्रमुख पात्र लाला जीवनदास मृत्यु के कगार पर थे, उनकी बीमारी का अंत नहीं हो रहा था। वे सारे डाक्टर हकीम की दवा करा चुके थे। पर कोई फायदा न हुआ। उनको परिवार की चिन्ता सता रही थी। डाक्टर ने उन्हें छाती पर मलने के लिए जहरीली दवा दी थी उन्होंने वह दवा बीबी और बेटे लखनदास को पिलाकर पकड़े जाने के डर से घर से भाग गया। आज पंद्रह साल हो गये वह अब भी जीवित है। उसके पास धन-दौलत वह सब कुछ है जो अमीरों के पास होता है। उसमें अमीरों के सारे गुण विद्यमान थे वह नाच-गाना आदि का भी शौकीन था। एक दिन जीवनदास को हरिद्वार में एक सजीला नौजवान मिला जो दिखने में संपन्न था। अपने मित्रों के साथ जीवनदास ने उसे फॅसाने का प्रयत्न किया, वह लड़का उसका खुद का बेटा लखनदास था जिसने उन्हें पहचान लिया और वह उसे अपने साथ लखनऊ ले गए। वह जो दवा जीवनदास ने अपने परिवार को पिलाई थी वह टोनिक थी। जीवनदास ने देखा कि बेटे ने उसके नाम का सकूल खोल रखा है। उसका बड़ा मकान है एवं उसके दो बेटे हें। रात को जीवनदास ने जैसे-तैसे बिताया और सुबह होते ही वह ग्लानि वश गोमती की लहरों में समा गया।

34. लोकमत का सम्मान

कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'हुस्ने-जन' शीर्षक से अक्टूबर 1922 को जमान में हुआ थां हिन्दी में लोकमत का सम्मान नाम से मानसरोवर, भाग-7 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ, भाग-2 में इसका संकलन किया गया।

कहानी का पात्र बेचू धोबी गांव का सबसे कुशल आदमी था एवं उसकी पत्नी को गाँववाले सभी पूँछते थे। बेचू कारिन्दे साहब से बहुत डरता था। गरमियों के दिन थे, गाँव का तालाब सूख गया था, जिसके कारण वह कारिन्दे साहब के कपड़े न धो सकता था इसलिए उसे गाँव छोड़कर जाना पड़ा। अब वह शहर में आया और उसे थोड़े ही दिन में वहाँ की हवा लग गई। वह कमाता तो अच्छा लेकिन सारे पैसे को शराब में उड़ा देता था। घर में खाने का फाके पड़ने लगे। एक दिन उनके पड़ोशी मुंशी दाताराम को मजबूरन शादी में जाने के लिए कपड़े उधार देने पड़े। बेचू भी मुंशीजी के साथ गया और वहाँ कपड़े का मालिक अताई मौजूद था। उसने मुंशीजी से पूछा तो वे खुल पड़े और उन्होंने बेचू का नाम दिया। बेचू चादर ओढ़े सोने का नाटक कर रहा था। अताई मुंशीजी से बेचू की सच्चाई और उसकी सज्जनता की बात करने लगे। बेचू ने जब यह सब सुना तो वह पहले जैसा हो गया। अब घर में पैसे की कभी तंगी न रहती। बेचू ने अपने बेटे की शादी में पैसा कम पड़ने पर दारू न पिलाई पर उसकी पत्नी ने लोकमत के सम्मान के कारण कुछ खौद निकाला और बेचू हँसने लगा।

35. बैर का अंत

कहानी का प्रथम प्रकाशन अप्रैल 1923 को सरस्वती में हुआ। और मानसरोवर-7 तथा प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-2 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में सिद्धेश्वरी राय, विश्वेश्वर राय और रामेश्वर राय तीन भाई दिखाए गए हैं। सिद्धेश्वर के मरने पर उनके दोनों भाई ने उसका खेत गिरवी रखकर 300 रूपये लिए और लोगों को बताया कि षोडशी में सब पैसा खर्च हो गया। सबको पता था कि खर्च केवल 100 रूपये ही हुए हैं और बाकी वह खा गया है। साल भर बाद विश्वेश्वर नले 300 रूपये कमा लिए और खेत छुड़वा दिया तथा रामेश्वर से कहा कि 150 रूपये जमा करके खेत में हिस्सा ले जाय। देने को कहा, पर 30 साल तक रामेश्वर के बेटे जोगेश्वर ने घर की गाड़ी खींच-खींचकर 150 रूपये जमा किए थे, पर तब विश्वेश्वर पलट गया इस पर जोगेश्वर ने सिद्धेश्वर की बेटी तपेश्वरी जो कि अब विधवा थी और उसके बेटे को ढाल बनाकर अदालत में मुकदमा दायर किया। जिसमें उसका सारा घर-बार लुट गया और तपेश्वरी ने भी उसे कुछ न दिया। वे अब भूखों मरने लगे, दो साल बीत गए। एक रात

रामेश्वर और उसका बेटा जोगेश्वर बैठे थे तभी पता चला कि विश्वेश्वर मर गया। रामेश्वर दुश्मनी के कारण न गया। विश्वेश्वर अपने परिवार के लिए कुछ न छोड़ गया था जिससे उसके परिवार का निर्वाह हो सके। जो था वह तीनों बेटियों की शादी में खत्म हो गया बेटे अभी छोटे थे। जोगेश्वर अब खुद मेहनत करता और चाचा के लड़कों को खाना देता। परिवार वालों को जब पता चला तो उसकी पत्नी, पिता सबने उसे डाँटा लेकिन जोगेश्वर उसने कहा कि बैर का अंत बैरी के साथ ही हो जाता है।

36. आप बीती

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जुलाई 1923 को माधुरी में हुआ था। तथा बाद में मानसरोवर, भाग-6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-3 में इसका संकलन किया गया।

कहानी के मुख्य पात्र के रूप में लेखक स्वयं है। कहानी का कथानक इस प्रकार है। एक लेखक था, जो स्वयं प्रेमचंद जी हैं। मेरा लेख छपा। उससे प्रेरित होकर उमापति नामक एक कवि ने खतों के माध्यम से मुझसे न केवल मित्रता की अपितु एक दिन मेरे घर भी आए। वे विचित्र लग रहे थे। मैंने खाना-पीना दिया दूसरे दिन जाते समय उन्होंने मेरे पास से 50 रूपये माँगे, बीबी ने मना किए पर मैंने दिया। सातवें दिन वे कानपुर से अपने बीबी बच्चों को लेकर आए और मेरे घर दो दिन रुके। उन्होंने फिर 25 रूपये माँगे और दो महीने मे लौटाने को कहा। दो महीने हो गए उन्होंने पैसे न लौटाए। अब मुझे पत्नी की बात सच लगी। मेरा 75 रूपये का नुकशान हुआ और लोगों पर से विश्वास हट गया। जिसके कारण मैंने अपने बीमार नौकर को भी पैसे न दिए, पर मेरे मुनीम ने दिए। जिसको उस नौकर ने पाँचवे दिन चुका दिये। जिससे मुझे शर्म महसूस हुई। इसका उल्लेख मैंने अपने लेख में किया। जिसका परिणाम यह हुआ कि चौथे दिन उमापति का खत आया और साथ में 75 रूपये भी। उसने माफी माँगी। यह बात मैंने अपनी पत्नी को बताई तो उसने मुझे निर्लज्ज कहा, पर मैं धन में डूबा हुआ था।

37. आभूषण

कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में अगस्त 1923 को माधुरी में हुआ था। तथा मानसरोवर, भाग-6 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ, भाग-2 में इसका संकलन भी किया गया।

प्रस्तुत कहानी आभूषणों की लालसा से होने वाले परिवार दाह की कहानी है। शीतला की शादी ठाकुर विमलसिंह से हुई थी, जिनके पुरखे किसी जमाने में उस इलाके के इलाकेदार थे, पर आज वह सब कुँवर सुरेशसिंह का है। उनके पिता की वाक् चातुर्यता एवं जमींदारी में दक्ष होने के कारण

अब गांव का बहुत सारा भाग उनका हो गया। शीतला आज कुंवर सुरेशसिंह, जो पहले पश्चिमी संस्कृति के कायल थे आज वे जब से यूरोप से लौट कर वापस आए तब से भारतीय संस्कृति के कायल बन गए। उन्होंने बिना देखे ही माँ-बाप की पसंद से शादी की, उसकी पत्नी को देखने के लिए सास के साथ शीतला आई थी। कुंवर की पत्नी मंगला जो रूपवान थी उसने खूब सारे गहने पहन रखे थे, उन आभूषणों को देखने के बाद शीतला मंत्रमुग्ध हो गई। घर आकर उसने विमल के सामने गहने की माँग की। जिसमें दोनों उलझ गए और बिमल ने तय किया कि वह उसे गहनों से लाद देगा और वह रंगून कमाने चला गया। तीन साल तक उसने कड़ी मेहनत करके 3 हजार रूपये इक्ट्ठा किया, पर जब उसे पता चला कि सुरेश बाबू ने उसे ढूँढ़ने के लिए हजार रूपये का इनाम रखा है और सिपाही उसकी पूछताछ कर रहे थे तब वह घर के लिए वापस निकला। इधर बाबू सरेश सिंह अपनी पत्नी के रूप के कारण नाखुश रहने लगे। दोनों में दूरियाँ बढ़ने लगी। मंगला ने अपने पति को रिझाने के लिए बहुत प्रयत्न किया पर कुछ न हुआ और वह घर छोड़कर चली गई। उधर शीतला की सास, छोटे देवर, ननद, तथा मौके में फौजदारी होने से पिता और भाई उसमें फंस गऐ। जिस पर दो भाई, बहन और माँ एवं खुद का निर्वाह होना मुश्किल हो गया। खाने वाले आठ थे पर घर में खाने के लिए कुछ भी न था। घर में हरदम कुहराम मचा रहता था। लोग परेशान थे। सुरेश बाबू का मन शीतला में लगा रहता था और शीतला कभी पति को और कभी गहने को याद करती। सुरेश सिंह ने उसकी न केवल सहायता की पर उसे आभूषण भी दिए। जिससे सुरेशसिंह से वह प्रीति कर बैठी पर सुरेशसिंह की आँखें तब खुली जब विमल कमजोर होकर घर लौटा और बीमार पड़ा। शीतला उसे देखने भी न गई। विमलसिंह मर गया और शीतला स्तब्ध रह गई। अब वह आभूषण कैसे पहने। सुरेशसिंह ससुराल की घुड़कियाँ और अपमान सहकर मंगला को ले आए और अपनी भूल को स्वीकार किया। इसी सन्दर्भ में डॉ. कु. नूरजहॉं कहती हैं कि--" प्रेमचंद का सम्पूर्ण साहित्य मध्यवर्ग को केन्द्र बनाकर रचा गया है। इस मध्यवर्ग में आडम्बरप्रियता इसके पतन का मुख्य कारण है। यह मध्यवर्ग उच्चवर्ग तक पहुँचने की असफल चेष्टा करता है तो दूसरी ओर निम्नवर्ग को स्पर्श करता है।'' 49 आगे भी वे कहती हैं कि--" कुरूपता भी नारी की एक समस्या है। आधुनिक युग में इस समस्या का विकास उत्तरोत्तर बढ़ता ही जा रहा है। संपूर्ण शिष्ट वर्ग सौन्दर्य प्रेमी दीखता है, भले ही सौन्दर्य गुणहीन हो। कुरूपता स्त्री समाज के लिए अभिशाप है। 'आभूषण' कहानी में इसी तथ्य को स्पष्ट किया गया है।'' 50

38. कौशल

इस कहानी का प्रकाशन केवल हिन्दी में अगस्त 1923 में चॉद में हुआ। बाद में मानसरोवर-3 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- 2 में इसका संकलन भी किया गया।

इस कहानी में पंडित बालकराम शास्त्री, जो कि एक पाठशाला में पढ़ाते हैं और बढ़े आलसी हैं। उनकी पत्नी माया उनसे एक सोने का हार मॉंगती हैं पर वे अपनी तर्क बुद्धि से माया को मना करते हैं। एक दिन माया पड़ोसिन का सोने का हार पहनकर आई और रात को चोरी होने का शोर मचाया। पंडितजी ने छ महीने तक पाठशाला में कथा पूजा करके, कुंडली आदि देखकर, पूजा-पाठ करके थोड़ा सा धन इकट्ठा किया था, उन्होंने उस पैसे से सोने का हार बनवाकर पड़ोसिन को देने के लिए कहा। तब पंडितजी को पता चला कि यह उनकी पत्नी का सोने का हार पाने का कौशल था।

39. मुक्तिमार्ग

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अप्रैल 1924 में 'विशाल भारत' में हुआ था। तथा बाद में मानसरोवर-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-3 में संकलन किया गया। उर्दू में यह कहानी 'राहे नजात नाम से 'फिरदौसे ख्याल' में संकलित है।

इस कहानी के विषय में शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" मुक्तिमार्ग अपेक्षाकृत कम चर्चित पर गहरे मनोवैज्ञानिक और सामाजिक निहितार्थों की कहानी है। इस कहानी में भी किसान के मजदूर बनने की त्रासदी है, परंतु यहॉ वे शक्तियॉं नदारद हैं, जिनके, चलते सामंती और महाजनी दुष्चक्र के दुहरे नागफांस में बेबस होता किसान मजदूर बनता है और उसकी त्रासदी एक पूरे युग और उसके व्यवस्था तंत्र की अमानवीयता को रेखांकित करती है।'' 51

इस कहानी का पात्र झींगुरसिंह हैं। जिसकी गॉंव में बड़ी धैंास है। इस बार उसके खेत में बहुत अच्छी फसल हुई थी। रात को जब वह अपने बेटे के साथ खेत में देख-रेख कर रहा था तो बुद्धू अपनी भेड़ लेकर उसके खेत से जा रहा था, पर झींगुर ने उसे वहॉं से न जाने दिया और भेड़ों को खूब मारा जिसके कारण बुद्धू ने दूसरे दिन रात में खेत में आग लगा दी।, जिससे झींगुरसिंह के साथ कई अन्य लोगों के खेत भी जल गए और वह कंगाल हो गया। लोग उसे गालियॉं देने लगे। झींगुरसिंह ने भी बुद्धू से अच्छा रिश्ता बनाए रखा और अपनी गाय उसे चरान को दी। जिस दिन बुद्धू के घर सत्यनारायण की क्था थी उसी दिन बछड़े को रखा और सुबह मरा हुआ पाया। यह झींगुरसिंह और हरिहर का षडयंत्र था। इसी सन्दर्भ में डॉ. बलवन्त साधू कहते हैं कि--"जिस समाज में सवर्ण लोग दलितों का निर्दलन करते हैं, उस समाज में आतकवादियों के खिलाफ किसी दलित का

उठना सहज सम्भव नहीं होता। भय का संचार उसे सहनशील बना देता है। परन्तु जिस तरह पांचों उंगलियाँ समान नहीं होती उसी तरह सभी दलित भीरू नहीं हो सकते, क्योंकि समय चक्र के साथ किसी दलित में निर्भयता और क्रूरता सम्भव हो सकती है। स्वभाव भिन्नता को नहीं टाला जा सकता। हरिहर ऐसा ही निर्भय और साहसी दलित व्यक्ति है।'' 52

बुद्धू पर गौ हत्या का पाप चढ़ा और प्रायश्चित करने में तो वह कंगाल हो गया। बुद्धू वहीं मजदूरी करता जहाँ झींगुर मजदूरी करता था। दोनो ने अपने-अपने गुनाह एक दूसरे के सामने कबूल कर लिए। इसी सन्दर्भ में शिवकुमार मिश्र जी का कहना है कि--" सवाल है कि कहानी का शीर्षक 'मुक्तिमार्ग' है तो यह मुक्ति और उसका मार्ग कैसा ? किसकी मुक्ति, और काहे की मुक्ति ? प्रेमचंद ने इसे स्पष्ट नहीं किया है। पाठकों के विवेक पर छोड़ दिया है। क्या किसान से सर्वहारा होना उसकी मुक्ति है ? ऐसा नहीं है। वे सर्वहारा बनते हैं- अपने-अपने व्यक्तिगत प्रतिशोध के नाते, बरबाद होतें हैं, अपने किए-धरे के नाते ? जैसा हमने कहा , समानार्थिक कोई शक्ति और इसमें शामिल नहीं हैं। उनके अपने स्वभाव और संस्कार के अलावा सब कुछ से तबाह होकर उनका मजूर बन जाना कोई मुक्ति नहीं हैं। प्रेमचंद के अब तक के संदर्भों के अनुसार यह त्रासदी है। फिर कैसी मुक्ति और कैसा उसका मार्ग ? वस्तुत: यह दोनों की अपने-अपने अपराध बोध से मुक्ति है। दोनों, दोनों के बारे में सब कुछ जानते समझते रहे कह नहीं सके। उस बोझ को उठाये रहे। अब वे अपने अपराध को कहते हैं, कहकर बोझ से मुक्त से होते है जो उनहें भीतर ही भीतर मथ रहा था। दोनों अपना अपराध कहकर हल्केपन का अनुभव करते हैं। मन की कालिख मिट जाती है। यह विरेचन है। उनके अपने कृत्य ने उन्हें बहुत कुछ मूल्यवान, अनुभव के रूप में दिया था। वे अब एकदम सात्विक अंत:करण वाले हैं- आपसी द्वेष से मुक्त, भीतर घात से मुक्त सर्वहारा अपनी मेहनत पर जीने वाले- और साथ- साथ मिलजुल कर।''53

40. डिकी के रूपये

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जनवरी 1925 को माधुरी में हुआ था। बाद में मानसरोवर, भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-3 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में इसी शीर्षक से 'फिरदौसे खयाल' में भी इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी में नईम और कैलाश नाम के 25 साल पुराने दोस्त की कहानी है। वे दोनों अपने सुख दु:ख एक दूसरे से कहते थे। नईम बड़े बाप का बेटा था और कैलाश गरीब का बेटा था। नईम तीसरे दर्जे पर पास हुआ फिर भी उसे शासन विभाग में उच्च पद पर नौकरी मिल गई

और कैलाश पहले दर्जे से पास हुआ फिर भी उसे कहीं भी नौकरी न मिली। वह समाचार पत्र चलाता और सत्य के मार्ग की रक्षा करता। उन दिनों विष्णुपुर के रियासत के समाचार बड़ी चर्चा में थे। वहॉ के राजा के मरने के बाद कुंवरसाहब पर उनकी रियासत आई पर वे नाबालिक थे इसलिए मैनेजर को रियासत का काम सौंपा। मैनेजर के दगाबाजी और गबन करने पर कुंवर साहब ने उन्हें मार डाला। नईम वहॉं पर ब्योरे पर और कैलाश तहकीकात करने पहुॅंचे और दोनों मित्र मिल गए। कैलाश ने वहॉं देखा कि कुॅंवर की मॉ नईम के पैरों पर गिरी है और 20 हजार रूपये देकर केश को दबवा दिया। नईम ने भी लालच में आकर कुॅंवर साहब को निर्दोष साबित किया। नईम की सारी सच्चाई कैलाश जानता था। इसलिए उसने सारी हकीकत पत्र में छापी। जिसके कारण नईम ने उस पर केश किया और पैसे के कारण वह जीत भी गया। अब कैलाश को मान हानि के रूप में 20 हजार रूपये देने पड़े, जिसमें उसका सब कुछ बिकने की स्थिति में आ गया। नईम ने कैलाश के घर जाकर उसकी बीबी से एक मिनट अकेले में बात करने को कहा, वह भी एकान्त में, इससे उसके पैसे चुकते हो जाएंगे। कैलाश को शर्म तो आई पर कुतुहलता वश वह उमा और नईम की बातें सुनने लगा। नईम ने भाभी से खाना बनाने को कहा और यह भी कहा कि कैलाश ने पैसे चुकता कर दिए हैं। इस पर उमा ने पूछा कि पैसे कब चुकाए तब कैलाश ने नईम से अपनी बेइज्जती न करने को कहा तब नईम ने कहा कि तुमने तो सारे लोगों के सामने मेरी बेइज्जती की मेंने तो केवल भाभी के सामने तेंरी बेइज्जती की है। इस पर डॉ. शैलेष जैदी कहत हैं कि--" अपने युग को देखने की लेखक की यह दृष्टि नितांत निजी होते हुए भी उस विचार धारा का प्रतिनिधित्व करती है जो हिन्दुओं को राष्ट्र-सेवक और मुसलमानों को अंग्रेजी राज्य का भक्त समझती रही है। किंतु दृष्टि की इस एकांगिता के बावजूद कहानी एक गहरा प्रभाव छोड़ती है।'' 54

41. सभ्यता का रहस्य

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मार्च 1925 को माधुरी में हुआ था। बाद में मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-3 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'तहजीब का राज' शीर्षक से 'फिरदौसे ख्याल' में से इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी के विषय में कांतिमोहन कहते हैं कि--" इस कहानी का उद्देश्य तथाकथित सभ्य और सुशिक्षित लोगों और तथाकथित असभ्य और अशिक्षित लोगों की तुलना करते हुए इस तथ्य को रेखांकित करता है कि सभ्यता कोई और चीज है, उसका देह से इतना संबंध नहीं है, जितना मन से। यह बात रायसाहब और दमड़ी के चरित्रों के माध्यमों से उभारी गई है।'' 55

इस कहानी के मुख्य पात्र के रूप में लेखक स्वयं है। वे कहते हें कि मेरा एक मित्र राय रतनसिंह जो किशोर वकील था और अच्छा कमाता था, उसे पैसों की लालच थी। उसे मिलने जब मैं उसके घर गया तो वह अपनी नौकर को सिर्फ इसलिए डॉट रहा था क्योंकि वह रात को घर चला गया था। उनके यहॉं वह रात दिन का नौकर था। रतन सिंह ने उसके तीन रूपये वेतन में से काट लिए। उसी समय शहर से कोई अमीर औरत आई थी उसके पति ने खून किया था। उस औरत ने राय साहब की पत्नी को 20 हजार रूपये दिए और राय साहब वह केश लेने के लिए तैयार हो गए। इधर उनके घर का नौकर दमड़ी के घर खाने वाले दो बेटे, दो बेटियॉं, बीबी तथा दो बैल और वह खुद भी था। बैलों ने कुछ न खाया इसलिए वह रात को किसी के खेत में से कुछ चारा चुरा कर काट लाया, जिससे पुलिस ने उसें पकड़ लिया। जब पुलिस को उससे पैसे न मिले तो उस पर केस चला और उस केस में राय साहब ने नौकर की गल्ती होने पर उसे छ महीने की कड़ी सजा दी और दूसरी तरफ उस खूनी को बेइज्जत बरी कर दिया। लेखक कहता कि अब मैं समझ गया कि समाज में वही सभ्य है जो बुरा से बुरा कर्म करके उस पर परदा डाल सके। इसके विषय में कांतिमोहन का कहना है कि--" अछूत समस्या से इस कहानी का कोई सीधा संबंध नहीं लेकिन सभ्य-असभ्य का यह विवाद उस जमाने में छूत-अछूत के प्रसंग में विशेष रूप से चल रहा था। हिन्दू-समाज सुधारक अछूत तबकों की गंदी आदते छुड़ाकर उन्हें ' सभ्य' बनाने की कोशिश कर रहे थे। प्रेमचंद शुरू से ही मध्यवर्गीय उच्च शिक्षित भारतीयों की नेतृत्वकारी भूमिका को संदेह और आशंका की दृष्टि से देखते आये थे। उनके लिए अछूतोद्धार में भी इस समुदाय के लोगों की भूमिका संदिग्ध ही रही। हालांकि एक पत्रकार के रूप में वह खुद इस बात पर आश्वस्त थे कि अछूतों में वाकई कुछ गंदी आदतें हैं और उन्हें इनसे छुटकारा पाना चाहिए लेकिन एक कहानीकार के रूप में वह इस बात को महत्व नहीं देते बल्कि तथाकथित 'सभ्यों' की तुलना में इन 'असभ्यों' की श्रेष्ठता को ही रेखांकित करते हैं। इस कहानी को इसी अर्थ में लेना चाहिए।'' 56

42. भाड़े का टट्टू

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जुलाई 1925 को माधुरी में हुआ था। तथा बादमें मानसरोवर, भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-3 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में इसी नाम से 'फिरदौस-ए-ख्याल' नाम से इसका संकलन हुआ।

कहानी के सन्दर्भ में डॉ. कुमारी नूरजहॉ का कहना है कि--" भाड़े का टट्टू' कहानी में सामाजिक समानता से सम्बन्धित विचार प्रकट किये गये हैं। साथ ही पूँजीपति वर्ग की अवहेलना के स्वर सुनाई देते हैं'' 57

इस कहानी में यशवन्त और रमेश दो गाढ़े मित्र है। दोनों के विचार अलग थे यशवन्त धन को तुच्छ समझने वाला और रमेश लक्ष्मी का पुजारी था। यशवन्त कम बुद्धिमान पर मेहनती होने के कारण आई. एस. ऑफीसर बन गया जबकि रमेश बुद्धिमान था पर आलसी होने के कारण वकील बन गया, लेकिन उसके गुस्सो के कारण उसकी डिग्री छिन गई। बाद में स्कूल में अध्यापक बना और वहॉ बच्चों को राजनीति में घसीटने के कारण वहॉ से भी निकाला गया और उसके बाद राजनीति में आया तो भाषणों के द्वारा पुलिस ने उसे पकड़ा और केस यशवन्त के पास गया। यशवन्त को उसे मजबूरन 5 साल की सजा सुनानी पड़ी। यशवन्त इधर रिटायर्ड हो गया और वकील की पढ़ाई करने के बाद वकालत करके पैसा कमाने लगा। इधर रमेश जेल से छूटकर डाकू बना और अमीरों को लूटकर गरीबों को सामान देता। एक बार रमेश किसी भेदी के कारण पकड़ा गया और उसका केस फिर से यशवन्त के पास गया। उस समय रमेश की पत्नी यशवन्त के पैरो पर गिर पड़ी और उसे दया आई तथा उसने रमेश को रिहा कर दिया। तब रमेश तथा और लोगों ने उसकी निन्दा की और कहा कि जब उसे सजा नहीं देनी चाहिए थी तब उसने सजा दी और जब सजा देनी चाहिए तो उसे बरी किया।

43. दण्ड

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन अक्टूबर 1925 को चॉद में हुआ था तथा बाद में मानसरोवर-3 और प्रेमचंद की सम्पर्ण कहानियॉ -3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में सजा नाम से 'प्रेमचालीसी' में भी इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी शोषण पर आधारित कहानी है। प्रेमचंद ने इस कहानी के माध्यम से यह बताया है कि शोषण के लिए उसकी जाति नहीं देखी जाती बल्कि गरीबी देखी जाती है। इस कहानी का प्रमुख पात्र एक बूढ़ा ब्राह्मण है, जो अपनी जमीन और जायदाद बचाने के लिए जंट साहब मिस्टर सिन्हा जो एक वकील हैं उन्हें अपना केस लड़ने के लिए 150 रूपये में दे देता है लेकिन उसके जाने के बाद पंडित सत्यदेव जंट साहब को एक लाख रूपये दे देता है और वह केस जीत भी जाता है। जगत अपना पैसा लेने के लिए छ दिन तक जंट साहब के घर के सामने भूखा'प्यासा पड़ा रहता है तथा हर आने वालों को अपना दुखड़ा सुनाता। दूसरे दिन पत्नी के कहने पर जंट साहब ने उसे

पॉच हजार रूपये देकर मामला निपटा लिया। पर जगत दो ही कदम गया होगा कि वह गिरा और मर गया। जंट साहब के सर पर ब्राह्मण की हत्या चड़ी। उसके मरने की बात सुनकर पूरे शहर में जंट साहब की न केवल बदनामी हुई बल्कि उन्हें नौकरी छोड़कर घर जाना पड़ा। अमीर होते हुए भी कोई नीच जाति का व्यक्ति भी उनकी बेटी से शादी करने को तैयार न होता था। पत्नी इसी वियोग में चल बसी। बाद में वे अपने आप कोसने लगे।

44. कजाकी

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अप्रैल 1926 को माधुरी में हुआ था। तथा मानसरोवर, भाग-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-3 में इसका संकलन भी किया गया। उर्दू में इसी नाम से प्रेम चालीसी में भी संकलित है।

इस कहानी का पात्र लेखक स्वयं है। लेखक कहता है कि हमारे यहॉं एक कजाकी था जो रोज शाम को डाक लेकर आता था और सुबह चला जाता था। जब वह आता तो मुझे गोद में उठाता खिलाता और कहानी भी सुनाता। एक दिन वह मेरे लिए हिरन ले रहा था जिसके कारण वह लेट आया और पापा ने उसे निकाल दिया। दूसरे दिन जब वह आया तो मैंने उसे आटा और पैसा देना चाहा पर पैसा न दे पाया क्योंकि मॉं को पता चला कि मैं कजाकी को आटा देने चला गया तो वे स्वयं आटा देने बाहर आई पर तब तक वह जा चुका था । मैं भी हिरण के साथ खेलने में उसे भूल गया। कुछ दिन बाद उसकी पत्नी कुछ कमल गट्टे लेकर आई जिसे कजाकी ने मेरे लिए भेजे थे। वह मेरे प्यार में तड़प रहा था। पिताजी ने उसे फिर से आने का संदेश भेजा। वह जब आया तो हिरन चला गया था। कजाकी कुत्ते से बहुत चिढ़ता था। एक दिन कुत्ते ने उसे नोच खाया और वह मर गया।

45. निमंत्रण

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1926 को सरस्वती में हुआ तथा बाद में मानसरावर-5 , प्रेमतीर्थ, -1945 में , 'निमंत्रण और अन्य कहानियॉं,' (प्रथम संस्करण) तथा प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-3 में भी इसका संकलन मिलता है। उर्दू में दावत शीर्षक से खाके-परवाना में संकलित है।

यह कहानी प्रेमचंद की बहुचर्चित कहानियों में से एक है, जो हास्य-व्यंग्य पर आधारित है। इस कहानी के पंडित मोटेराम शास्त्री आज बड़े खुश थें क्योंकि मुरादापुर की रानी ने सात ब्राह्मणों को इच्छापूर्ण भोजन कराने का निमंत्रण दिया है। पंडित मोटेराम ने सोचा कि वे सातों ब्राह्मण उनके

अपने घर के ही हो जाएं। इसलिए उन्होंने अपने बेटों को अलग-अलग पिता का नाम दिया जैसे- **1.** अलगूराम शास्त्री के पिता पंडित केशवराम पांडे, **2.** बेनीराम शास्त्री के पिता पंडित मंगरू ओझा, **3.** छेदीराम शास्त्री के पिता दमड़ी तिवारी, **4.** भवानीराम शास्त्री के पिता गंगू पांडे, **5.** फेकूराम शास्त्री के पिता सेतूराम पाठक। ये पांच हो रहे थे और पंडितजी को चाहिए थे सात। पंडित जी स्वयं को मिलाकर छ हो रहे थे इसलिए पंडितजी ने अपनी पत्नी को सोनाराम शास्त्री बनाया, जिनके पिता का नाम मोहनराम शुकुल रखा गया। पंडित मोटेराम शास्त्री जब अपने बेटों की परीक्षा ले रहे थे तो उनके परम मित्र चिंतामणि आए और उनको भनक पड़ गई। आठ बजते ही पंडित मोटेराम शास्त्री और उनका परिवार तैयार होकर रानी के यहॉ पहुॅच गया। रानी बच्चों को देखकर न केवल हॅसी बल्कि उनको पता भी चल गया कि पंडितजी अपने घर के लोगों को ही ब्राह्मण बनाकर लाए हैं। पंडित मोटेराम भी प्रतिद्वन्द्व में ज्यादा खाने के चक्कर में चिंतामणि को भी बुला लाए। इधर रानी ने भी पंडित को सबक सिखाने का निश्चय किया। रानी ने खाने के समय में ही कुत्ते को बुलाकर खाना जूठा करवाया। दोनों ने सिर पीटा। चिंतामणि और सोना तो खाना चाहते थे पर पंडित मोटेराम नहीं। रानी ने बच्चों को खाने को मिठाई दी और उनसे उनका नाम पूॅछने लगी जिसमें पंडित चिंतामणि उनका साथ देते। आखिर मोटेराम गुस्से में आकर पूरे परिवार को लेकर चले गये और अपनी किस्मत को कोसने लगे। रानी चिंतामणि को अपने हाथों से परोस कर खिलाने लगी और पंडित मोटेराम की बुराई करने लगी।

46. बहिष्कार

इस कहानी का प्रकाशन केवल हिन्दी में दिसम्बर 1926 को 'चॉद' में हुआ था तथा मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-3 में इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी एक पारिवारिक कहानी है। यह कहानी पंडित ज्ञानचंद तथा उनकी पत्नी गोविंदी और सोमदत्त की पत्नी कालिंदी के सांसारिक जीवन की कहानी है। ज्ञानचंद तथा सोमदत्त दोनों मित्र थे। एक बार सोमदत्त और कालिन्दी के बीच इतनी तकरार हुई कि सोमदत्त ने कालिंदी को घर से निकाल दिया। कालिंदी अब ज्ञानचंद के घर रहती जिससे सोमदत्त चिढ़ता था। कालिंदी गोविंदी के बच्चों को पालती ऐसे में तीन साल गुजर गए। सोमदत्त वहॉ से कालिंदी को निकालना चाहता था इसलिए उसने ज्ञानचंद की पत्नी से कहा कि अगर वह उसे तीन दिन में नहीं निकालेगी तो वह बता देगा कि वह अछूत है। ऐसा हुआ भी। कालिंदी ने गोविंदी को न निकाला और उसने पूरे गॉव में यह खबर फैला दी कि गोविंदी अछूत है। इसलिए लोगों ने ज्ञानचंद से व्यवहार रखना

बंद कर दिया जिससे उसका धंधा बंद हो गया। भूख के मारे पुत्र मर गया और कालिंदी सोमदत्त के घर चली गई। गोविंदी गेहूँ पीसती, बच्चों के कपड़े सिल कर गुजारा चलाती। ज्ञानचंद को अपनी कमजोरी से लज्जा आने पर वह रेल के नीचे दबकर मर गया और यह सुनते ही कालिंदी भी मर गई। सोमदत्त ने न केवल दोनों का अग्निदाह किया बल्कि अपने को धिक्कारने भी लगा।

47. गुरुमंत्र

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन अज्ञात है, पर हिन्दी में ' प्रेमप्रमोद' कहानी संग्रह, (प्रथम संस्कारण 1926) में प्रथम बार प्रकाशित हुई एवं बाद में मानसरोवर, भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-3 में संकलन किया गया।

कहानी के पात्र पंडित चिन्तामणि को साधू बनना था, इसलिए पं. मोटेराम शास्त्री जो उनके परम मित्र थे उनके पास गए। पं. मोटेराम ने कहा शुद्ध हिन्दी मत बोलो और एक मंत्र दिया। " न देगा तो चढ़ बैठूँगा।'' यह मंत्र सिखकर वह गया। एक साधु मंडली चिलम एवं गांजा पी रही थी। वह चिंतामणि को देखकर उसे डराने धमकाने लगी पर जब चिंतामणि ने वह मंत्र जोर से बोला तो वे समझ गए कि वह भी उन्हीं जैसा है। उन्होंने चिंतामणि को बड़े मान-सम्मान से बिठाया और गांजा दिया। पर जब वह गांजा न पी पाया तो उसे धक्का देकर निकाल दिया और वे मसत होकर भजन गाने लगे।

48. बड़े बाबू

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में फरवरी 1927 में 'बहारिस्तान' नामक पत्रिका में हुआ था तथा खाके परवाना में संकलन किया गया। हिन्दी में गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ, भाग-3 में भी इसका संकलन किया गया।

कहानी के विषय में डॉ. जगत नारायण हैकरवाला कहते हैं कि---" देश में असहयोग तथा अन्य आन्दोलन के दिनों में सरकारी नौकरियाँ राष्ट्रप्रेमी व्यक्ति के लिए अपमानजनक समझी जाती थी। सरकारी नौकरी की इस सीमा तक निन्दा होती थी कि सरकारी नौकर यदि वास्तव में देश द्रोही नही तो भी नौकरशाही के अंग समझे जाते थे।'' 58

यह कहानी अपनी आप बीती के रूप में लिखी गई है। मुझे नौकरी नहीं मिली थी और नौकरी की बड़ी जरूरत थी क्योंकि बच्चो का पालन पोषण करना था। वैसे तो मैं बड़ा चतुर साहसी होशियार और दिलेर इन्सान था , पर 365 दिन के बाद जब मुझे बड़े बाबू की नौकरी मिली तो में वहाँ पर अपनी चतुराई न दिखा पाया। उनकी सारी बदतमीजी, गुलामी सहने की आदत, अपने धर्म से

गिरकर बड़े लोगों को खुश करने एवं गरीबों पर अत्याचार करने की बात भी उस माननी पड़ी। वह भी बड़ी बेइज्जती सहकर क्योंकि मुझे नौकरी की बड़ी आवश्यकता थी। इस पर भी उन्होंने उम्मीदवारों की लिस्ट में केवल नाम लिखने को कहा नौकरी कब मिलेगी इसका पता भी नहीं था। यह सब मैं इसलिए सह रहा था क्योंकि मुझे अपना परिवार चलाना था। इसी पर विचार करते हुए डॉ. जगतनारायण हैकरवाला आगे भी लिखते हें कि--" उन दिनों की सरकारी नौकरी का यह अर्थ था कि चॉदी के कुछ सिक्कों पर अपनी आत्मा और आत्मसम्मान को बेच देना और मनुष्य के समस्त उत्तम भावों का परित्याग कर देना। 'बड़े बाबू' बेकारी की समस्या के समस्त कुरूप पक्षों पर प्रकाश डालती है किन्तु यह सरकारी नौकरी के विचार की खिल्ली विशेष रूप से उड़ाती है।'' 59 वे इसके आगे भी लिखते हैं कि--" इस कहानी के व्यंग के दो प्रधान उद्देश्य हैं। सबसे पहली बात यह हे कि कहानी लेखक एक राष्ट्रप्रेमी के दृष्टिकोण से सरकारी नौकरी की बुराई करना चाहता है और दूसरी बात यह है कि वह बेकारी के सुखद तथा गम्भीर तथ्यों की विवेचना करता है। पहले के कारण पाठक को हॅसी आती है और दूसरे के कारण बेकार स्नातकों के प्रति सहानुभूति उत्पन्न होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि कहानी का हास्य उसके विषादपूर्ण पक्ष को आच्छादित कर लेगा किन्तु अन्त में लेखक की सहानुभूति लेखनी उस समाज के शरीर पर एक बड़ा गहरा घाव छोड़ देती है जो कि पढ़े-लिखे बेकार नवयुवकों को काम नहीं दे सकता।'' 60

49. सुजान भगत

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में मई 1927 को माधुरी में हुआ था तथा बाद में मानसरोवर भाग-5 और प्रेमचंद की समपूर्ण कहानियॉ, भाग-3 में इसका संकलन भी किया गया।

कहानी का पात्र सुजान वड़ा दिलेर एवं एकसरल स्वभाव का इन्सान था उसकी पत्नी का नाम बुलाकी था। उसके दो बेटे थे , बड़े का नाम भोला और छोटे का नाम शंकर था। सुजान मेहनती किसान था उसकी मेहनत के कारण उसके खेतों में काफी अनाज पैदा होता , इसीलिए वह दान-पुण्य भी काफी करता रहता, साधुओं की भीड़ लगी रहती। सभी रईस जादे वहॉ इकट्ठे होते। एक बार वह साधुओं के साथ यात्रा पर चला गया, वहॉ से जब वह लौटा तो काफी बदल चुका था। वह सूखा खाता, लोगों को सम्मान देता, कर्मचारियों को भीख देता और भक्ति मे लीन हो गया। उसका नाम सुजान भगत पड़ गया। अब उसका सम्मान गॉव में तो बहुत था पर उसके स्वयं के घर में नहीं था। घर के लोग उसका अपमान करते जिसमें उनकी पत्नी भी शामिल थी। एक बार किसी भिखारी को देने के लिए छाब लिया जिसे देखकर उनके बेटे तथा बीबी ने उन्हें खरी-खोटी सुनाई।

वह समझ गया कि अब उसे लोग तुच्छ समझने लगे हैं क्योकि अब वह खेतों में काम करने नहीं जाता था। उसके दूसरे दिन से ही वह खेतों में इतना काम करने लगा कि उसका बेटा भोला भी उतना काम न कर पाता था और इसके कारण उस साल की फसल हर साल की अपेक्षा काफी अच्छी हुई। आठ महीने बाद जब अनाज खलिहान में पहुँचा तो उसने भिखारी को एक मन अनाज दिया और भोला कुछ न बोल पाया। इसी पर रामवृक्ष कहते हैं कि--" परिवार में पिता का प्रभुत्व होता है।, इसे प्रेमचंद साहित्य के सभी पात्र मानते हैं ; परिवार के भीतर सारे कायदे कानून मुखिया की इच्छा व सुविधा के अनुसार बनते-बदलते हैं। परिवार उसका स्वेच्छाधारी शासन होता है। लेकिन मुखिया के परिवर्तन के साथ ही वह उन अधिकारें से वंचित भी हो जाता है। सुजान भगत' पदच्युत होने के बाद भिखारी को सेर भी अनाज देने लगता हौ तो उसका लड़का उसे मना करता है और वही सुजान मुखिया बनकर उसी भिखारी को एक मन अनाज दे देता है, तब उसका बेटा चूँ तक नहीं करता है।'' 61 आगे भी वे कहते है कि--" सुजान भगत में तो परिवार में मुखिया के परिवर्तन होने की नाजुक प्रक्रिया का चित्रण किया गया है और इसी के साथ परिवार में मुखिया की स्थिति को भी स्पष्ट किया गया है।'' 62

50. मॉगे की घड़ी

जिसका प्रकाशन हिन्दी में जुलाई 1927 का माधुरी में हुआ था। तथा बाद में मानसरोवर, भाग-4 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'मुख्तआर घड़ी' नाम से 'खाके परवाना' में भी संकलन किया गया।

कहानी के पात्र के रूप में लेखक स्वयं हैं इससे यह कहानी आप बीती लगती है। मैं एक बार ससुराल जाने के लिए भाड़े के कपड़े और अपने मित्र दानू से बड़ी मिन्नतें के बाद उसकी घड़ी मॉग कर गया, जो वह पॉच सौ रूपये में बेचना चाहता था। जब मैं ससुराल गया तो सब तो मेरे ठाट से खुश थे पर पत्नी मुझे उलाहना दे रही थी क्योंकि वे उनके लिए कुछ भी न ले गया था इसलिए उसने घड़ी अपने पास रख ली। जब वापस जाकर मैंने दानू से घड़ी गुम हो जाने की बात की तो वह मुझ पर खूब गुस्सा हुआ तथा घड़ी के पैसे चुकाने का वायदा लिया। अब मेरी फिजूल खर्ची बन्द हो गई और उसके पैसे चुकाने लगा। दानू को मेरे पर तरस आया तो उसने बड़े बाबू को मेरी तरफ से 15 रूपये ज्यादा देने को कहा और मेरी पत्नी को बुलाकर अपने घर रखा तब उसे पता चला कि घड़ी भाभी के पास है। मैं दानू के घर से थोड़े ही दिन रूक सका, बाद में घर ढूँढ़कर वहॉ रहने के लिए चला गया चला गया। बाद में दानू ने छ महीने के 15 रूपये के हिसाब

से 10 रूपये व्याज के हिसाब से 100 रूपये दिए। छ महीने बाद मुझे पता चला कि वास्तव में मेरी बढ़ोत्तरी अभी हुई है और पहले ज्यादा पैसे दानू देता था।

51. मोटेराम जी शास्त्री

कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जनवरी 1928 को माधुरी में हुआ था। यह कहानी लेखकीय टिप्पणी के साथ पुन: मई 1928 को माधुरी में प्रकाशित हुई और गुप्तधन, भाग-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-4 में इसका संकलन भी किया गया।

इस कहानी में मोटेराम शास्त्री अब अध्यापक की नौकरी से ऊब कर वैद्य बनाना चाहते हैं। पहले उनकी धर्मपत्नी ने बहुत समझाया फिर वह भी पति की बातों में आ गई। वे लखनऊ गये। एक साल उनका धंधा खूब चला। वैसे तो मोटराम शास्त्री को वैद्य का कुछ ज्ञान न थ फिर भी धंधा चला। पत्नी ने इतना जरूर कहा कि वे रानी से दूर रहे पर वे न माने और दिन में चार पांच बार वे रानी के यहॉं जाते। एक बार रानी का हाथ देखकर उनकी हृदय की धड़कन जानने के लिए हाथ धरा और वहॉं पर उपस्थित लोगों ने उन पर खूब डंडे बरसाए। वे वहॉं से घर भागे, पत्नी से सामान बॅंधवाया और घर भाग चलने को कहा। उन्हें अध्यापक वाली नौकरी अच्छी लगी। जब दूसरे दिन वे जाने के लिए निकले तो उनका कोई मित्र नजर न आया।

52. ऑंसुओं की होली

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में 6 मई 1928 को 'मतवाला' के वर्ष-5 अंक-29 में हुआ। तथा मानसरोवर -5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-4 में इसका संकलन हुआ। उर्दू में प्रेमचालीसी में भी इसका संकलन हुआ है।

इस कहानी के श्री विलास जिन्हें घर में सिलबिल कहते थे वे कोई त्योहार न मनाते थे। त्योहार के दिन वे घर में चुपचाप छिप कर बैठते थे। लेकिन अब उसकी शादी चम्पा से हो गई और उसके ससुराल वाले उससे होली खेलने आये। वह होली नहीं खेलना चाहता था इसलिए उनकी पत्नी ने बहाना बनाया और कहा कि उनके पेट में दर्द है और डॉक्टर ने बाहर जाने को मना किया है। लेकिन उनके भाई और साले ने कपड़े गंदे कर दिए। पत्नी देवर के कहने पर पकवान की जगह खिचड़ी बनाई और पति के सामने ले गई तो पति ने डॉटा पर सालों ने जबरदस्ती श्रीविलास को खिचडी खिलायी। बाद में चम्पा पकवान लेकर आई और पत्नी की जिद पर श्रीविलास ने होली खेली पर वह रो पड़ा। श्रीविलास ने चम्पा को त्योहार न मनाने का कारण बताते हुए कहा कि आज से पॉच साल पहले उसका दोस्त मनहरनाथ होली के दिन भंग पीकर मेरे पास आकर एक अछूत की

मंयत में आने को कहा पर मैं न गया और तब से वह न मिला। कई सालों के बाद पता चला कि वह मर रहा है पर जब में उससे मिलने गया तो पता चला कि वह मर गया। इसी कारण तब से मैं होली या कोई और त्योहार नहीं मनाता हूॅ।

53. पिसनहारी का कुँआ

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जून 1928 को माधुरी में हुआ। बाद में मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-4 में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी की पात्र गोमती ने पूरी जिन्दगी पैसे बचाकर 2000 रूपये इकट्ठा किये है। इस पैसे से वह गॉव वालों के लिए एक कुंआ बनाना चाहती है। उसका कोई वारिसदार न था इसलिए अन्तिम समय में उसने वह पैसे गांव के चौधरी विनायक सिंह को दिए जो एक नेक इन्सान थे। चौधरी ने कुंए की सामग्री लाने के लिए अपने बेटे हरनाम सिंह को पैसे दिये, पर बेटे वह पैसे कुछ समय उधार मॉंगे, जिस पर तीन साल बीत गये। जब चौधरी ने पैसे मॉगे तो उसने कोई बहाना बता दिया। जिसमे कुछ और साल निकल गये। आखिर 12 साल बाद चौधरी ने बेटे से पैसे मॉंगे जिस पर पिता और बेटे में तकरार हो गई। हरनाथ ने पैसे तो दिये पर वे पैसे गॉंववालों के थे। हरनाम रात को पैसे चुराने गया तो उसने गोमती को देखा तथा चौधराइन को भी गोमती दिखी। जब दुकान नीलाम होने को आई तो चौधरी ने पैसे बेटे को दिये। अब चौधरी उसका बेटा दोनों मर गये। बहू को बेटी हुई पर बहू मर गई और चौधराइन भी मर गई । अब वह लड़की गॉव वालों के रहेमत पर जीती। एक दिन वह गोमती के घर के पास से गुजरी तो उसने कुॅआ खोदना शुरू किया। जिसमें दूसरे बच्चे भी मदद कर रहे थे। पहले तो गॉववालों ने उसे डॉटा पर बाद में वे भी मदद करने लगे। वह लड़की ईंटे बनाती और लोग उसकी मदद करते। जिस दिन कुॅआ तैयार हुआ वह उसी दिन मर गई। गॉववाले जान गये कि वह गोमती थी, तब से उस कुॅए का नाम पिसनहारी का कुंआ पड़ गया। इसी सन्दर्भ में शैलेष जैदी कहते हैं कि--" वस्तुत: प्रेमचंद के अवचेतन में गांधीजी के पुत्र हरिलाल की कथा है जो अब्दुल्लाह बनने के बाद फिर से हरिलाल बन गये। किंतु कहानी का सपाटपन उसे निदिष्ट चरम बिंदु तक पहुॅचने से रोकता है और लेखक की संस्कारगत प्रतिबद्धता कहानी के भीतर की सच्चाई को उभारने में बाधक होती है।'' 63

54. सम्पादक मोटेरामजी शास्त्री

इस कहानी का प्रकाशन केवल हिन्दी में अगस्त - सितम्बर 1928 को माधुरी में हुआ था। बाद में सोलह अप्राप्य कहानियॉ, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य -1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-4 में इसका संकलन किया गया है।

कहानी के पात्र पंडित चिंतामणि यात्रा से लौटने के बाद पंडित मोटेराम शास्त्री के घर गये पर वहॉ एक चपरासी ने उन्हें अन्दर न जाने दिया तब पंडित चिंतामणि ने चिल्लाकर पं. मोटेराम को बुलाया। पं. मोटेराम जी आये और उन्हें अन्दर ले गये और उन्हें बताया कि वे पत्रिका के सम्पादक बन गये हैं एवं उनकी पत्रिका को 25000 लोग पढ़ते हैं। पं. चिंतामणि पं. मोटेराम के चतुराई का कायल हो गया पर जब अन्दर से मोटेराम की पत्नी आई तो उन्होंने उनका सारा भांडा फोड़ दिया। उन्होंने बताया कि केवल 48 लोग उनकी पत्रिका पढ़ते हैं और लेनदार रोज आकर द्वार पर कुहराम मचाते हैं। पंडित मोटेराम जी ने चिंतामणि को अपनी इज्जत बाहर बनाये रखने को कहा। जिस पर चिंतामणि ने यह शर्त रखी कि वह उसका नाम सम्पादक में रखेगा।

55. बोहनी-1

इस कहानी का प्रकाशन केवल हिन्दी में 7 अक्टूबर 1928 को 'भारत' में हुआ था तथा प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य -1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-4 में भी इसका संकलन किया गया है।

बोहनी -2

यह कहानी इसी शीर्षक से उर्दू कहानी संग्रह' प्रेमचालीसी' (सन् 1930) में संकलित हैं। अमृतराय द्वारा किया रूपान्तर गुप्तधन-2 में संकलित है और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं- 4 में इसका संकलन है।

दोनों कहानियों की कथावस्तु समान है। मात्र शुरूआत अलग है। बोहनी-1 की शुरूआत-- मुझे पान खाने का बहुत शौक था। लेकिन पान की दुकान थोड़ी दूर थी। रोज कवायत हो जाती पर जब मेरे घर के नीचे पान की दुकान एक तम्बोलिन ने खोली तो में खुश हो गया। बोहनी -2 की शुरूआत-- मैं उस दिन जब मेरे घर के सामने वाले रास्ते पर पान की दुकान खुली तब बड़ा खुश हो गया। वहॉं एक फलांग तक पान की दुकान न थी इसलिए दुकान पर बड़ी लम्बी लाइन लगती थी, कभी चूना ज्यादा पड़ जाता तो मुँह में छाले पड़ जाते। मैंने पानदान खरीदना चाहा पर इतनी केफियत कौन करता। दो तीन दिन के बाद तम्बोली के दुकान पर गया।

तम्बोली ने मुझे पान देने में न केवल देरी की बल्कि थोड़ी देर बाद पान ले जाने के लिए कहा और कहा कि आपकी बोहनी मनहूस है। मुझसे न सहा गया। उसने मुझे पान तो दे दिया पर मैने बाद में अपने सारे दोस्तों को खुद की जेब से पैसे निकाल कर पान खिलाया। जिससे मेरे कितने पैसे निकल गये । मैंने तय किया मैं पान न खाऊँगा। पर वह तम्बोलिन घर आकर पान दे जाती और मुझे खर्चा करना पड़ता। मैंने तंग आकर वह मोहल्ला ही छोड़ दिया पर तम्बोलिन बोहनी करवाने वहाँ तक आ गई और कहा कि वह यहीं दुकान रख देगी। अब मैं इस मुसीबत से कैसे निकलता।

56. प्रायश्चित

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जनवरी 1929 को हुआ था। मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-4 में इसका संकलन भी किया गया है। उर्दू में ' कफ्फारा ' शीर्षक से इसका संकलन प्रेमचालीसी में किया गया है।

कहानी के पात्र बाबू मदारीलाल सुभोषचंद्र से कालेज के जमाने से ही ईर्ष्या करते थे क्योंकि सुभोषचंद्र होशियार, बुद्धिमान और चतुर था, जिसके कारण वह मदारलाल से आगे रहता था। दोनों एक साथ आई. ए. एस. की परीक्षा दी पर सुभोषचंद्र उत्तीर्ण होकर अच्छी पोस्ट पर नौकरी पा ली किन्तु मदारी लाल केवल क्लार्क ही बन पाये। उनको लगा कि अब सुभोषचंद्र छूटे लेकिन आज सुभोषचंद्र उनके बॉस बनकर आ रहे थे। मदारीलाल ने सारे ऑफिस में उनकी बुराइयाँ की थीं पर सुभाषचंद्र ने आते ही उन्हें गले लगाया और अपनी तरक्की और धन की बातें की। जिसके कारण मदारीलाल न केवल जले भुने पर उनको नीचा दीखाने का प्रयत्न भी करने लगे। एक महीने में सुभोषचंद्र पूरे आफिस में घुल मिल गये। एक बार बॉड के मदरसों के लिए कुछ लकड़ी का समान मंगवाया था उसके पैसे ठेकेदारों को देन थे जो मेज पर पड़े थे। कुल 5000 रूपये थे। मदारीलाल ने किसी को कानों-कान खबर न हो इस तरह उन्होंने पैसे चुरा लिए और इसका नतीजा यह हुआ कि पैसे न मिलने पर सुभाषचंद्र ने आत्महत्या कर ली। यह सुनकर मदारीलाल पछताने लगा, उन्हें चपरासी से यह भी पता चला कि अन्तिम चिट्ठी में उन्होंने मदारीलाल की खूब प्रशंसा की थी। उनकी बेटी शादी लायक हो गई है। उनके दो छोटे बच्चे एवं उनकी पत्नी रामेश्वरी हैं। मदारीलाल ने उनकी अन्तिम विधि की , बेटी की शादी अच्छे घर में करवायी तथा बीबी और तथा उनके बच्चों की सेवा करने लगे तथा अपने किये पर पछताने लगे।

57. खुचड़

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में फरवरी 1929 को माधुरी में हुआ था तथा बाद में मानसरोवर, भाग-4 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-4 में इसका संकलन भी किया गया।

कहानी के सन्दर्भ में बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" प्रेमचंद स्वाधीनता को जीवन और पराधीनता को मृत्यु समझते थे। 'खुचड़' कहानी में वे लिखते हैं-' जीवन स्वाधीनता का नाम है, गुलामी तो मौत है। इससे प्रेमचंद ने स्वाधीनता- प्राप्ति की प्रेरणा दी है।'' 64

इस कहानी के पात्र बाबू कुन्दनलाल हैं जिन्हें लेक्चर देने में बड़ा मजा आता था। वे अपनी पत्नी रामेश्वरी को हर मामले में जैसे- सब्जी खरीदने में, बिल्ली को मारने में , भीख देने में, दोस्तों को दावत आदि में लेक्चर देते रहते थे , यह नहीं करना वह नहीं करना आदि। रामेश्वरी अपनी गलती मानकर कुछ न बोलती। एक बार शुद्ध घी आया जो गरम करके हाड़ी में डाला। नौकरानी से सफाई करते समय हाड़ी फूट गई जिस पर रामेश्वरी झल्लाई और रही सही कसर कुन्दन ने पूरी कर दी। कुन्दन ने बीबी को भी डॉटा। यह अपमान रामेश्वरी न सह पायी अब कुन्दन जितना बोलते उतना ही रामेश्वरी भी बोलती, दूसरे दिन खाना न बना, नौकरानी ने पॉच रूपये मॉगे तो रामेश्वरी ने पति से बिना पूँछे न दिये। सब्जी भी बिना पूँछे न खरीदती। पति जो कहता वह उतना ही करती। आखिर में कुन्दन ने तंग आकर रामेश्वरी से माफी मॉगी और फैसला किया कि वे घर के किसी कामों में दखल ने देंगे और न ही उनका अपमान करेंगे।

58. अलग्योझा

प्रस्तुत कहानी का प्रकाशन हिन्दी में अक्टूबर 1929 में माधुरी में हुआ था तथा इसका संकलन भी मानसरोवर, भाग- 1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-4 में भी किया गया। उर्दू में अलगदेही नाम से फरवरी 1930 को जमाना में प्रकाशित हुआ और खाके परवाना में संकलन किया गया ।

कहानी के विषय में शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" अलग्योझा' भारतीय संयुक्त-परिवार के बॅटने-बिखरने और फिर एक होने की कहानी है। यद्यपि इस कहानी के केन्द्र में एक दलित परिवार है। गॉवों को अपना प्रेमचंद का निकट से जाना-पहचाना जीवन है, तदनुरूप भाषा और वर्णन-विवरण है, संवाद है, परंतु यदि कहानी का केन्द्र- नगर या जीवन होता, और एकाध अपवादको छोड़कर पात्र भी दलितेतर होते तो भी इस कहानी की केन्द्रीय वैचारिक बुनावट में कोई अंतर नहीं आता।'' 65

इस कहानी के भोला ने अपनी पहली पत्नी के मरने पर दूसरी शादी पन्ना से कर ली। पहली पत्नी का एक बेटा था रग्घू जो आज तक कोई काम नहीं करता था पर आज विमाता के आने पर घर का सारा काम करना पड़ता था। पन्ना वाकचातुर्य थी इससे सबको यही लगता था कि रघु का दोष है। डॉ. कुमारी नूरजहॉ का मानना है कि--" प्राय: विमाता बालक के हित में बाधक सी दिखती है, ऐसी धारणा परम्परागत बन गई है। वास्तव में अधिकांशत: यह धारणा परिपुष्ट सी होती दृष्टिगोचर होती है। 'अलग्योझा' का रग्घू उसी प्रकार दुखी जीवन व्यतीत करता हुआ बालक दीखता है।'' 66

पन्ना के तीन बेटे थे- बड़ा केदार, मंझला- खुन्नू और सबसे छोटा-लक्ष्मण और बेटी झुनिया थी। कुछ समय के बाद भोला मर गया। तब तक रग्घू बड़ा हो गया था। पन्ना को लगा कि वह अब उसे नहीं सम्हालेगा पर उसने देखा कि रग्घू तीनों बेटों को बाप की तरह प्यार करता था, उनके लिए गाय लाया ताकि वह अच्छा खा पी सकें। कुछ दिन बाद जब रग्घू परिपक्व हुआ तो पन्ना ने उसकी पत्नी को विदा करा लाने को कहा। पर रग्घू उसका स्वभाव जानता था। पन्ना के बहुत कहने पर उसे अपनी पत्नी को लाना पड़ा। मुलिया पहले से पन्ना ने रग्घू के साथ जो किया था वह जानती थी इसलिए उसने घर का पैसों का हिसाब अपने हाथ में ले लिया और घर में बॅटवारा करवा दिया। इसी सन्दर्भ में रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" सामन्तवाद और पॅूजीवाद में एक मूलभूत अंतर यह होता है कि सामन्ती समाज व्यवस्था में परिवार एक ईकाई होता है जब कि पॅूजीवादी व्यवस्था में व्यक्ति इकाई होता है। सामन्तवाद में अधिकांश लोग खेती तथा उससे संबद्ध दूसरे घरेलू धंधों पर निर्भर करते हैं, जबकि पूॅजीवाद में बड़े-बड़े कल कारखानों या दफ्तरों की नौकरी पर। कृषि-प्रधान होने के कारण सामन्ती समाज व्यवस्था परिवार को और परिवार के साथ जमीन को छोटे -छोटे टुकड़ों में बॉटने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित नहीं करती। यही कारण है कि इस व्यवस्था में संयुक्त परिवार पर इतना बल दिया जाता है और उसे कुल की इज्जत और आदर-सम्मान का मूल कारण समझा जाता है। और यही कारण है कि जब परिवार को कोई सदस्य अलग होने की बात करता है, तो उसे कुल की इज्जत में बट्टा वाला कुल द्रोही समझा जाता है। यही कारण है कि जब 'अलग्योझा' में रग्घू की पत्नी मुलिया उसे परिवार से अलग होने पर बाध्य करती है तो वह इस कल्पना से कॉप उठता है।'' 67 रग्घू यह सह न सका और अन्दर ही घुलता गया तथा 5 साल के बाद स्वर्ग सिधार गया। तब तक केदार सोलह साल का हो गया था। केदार ने घर सॅभाला क्योंकि रग्घू के दो बेटे थे इसलिए वह उन्हें भी संभालता। पन्ना और मुलिया दोनों साथ-साथ काम करती।

झुनिया की, खुन्नू, लक्ष्मन की शादी हो गई पर केदा नहीं करना चाहता था वह मुलिया पर मरता था। पन्ना ने यह ताड़ लिया और मुलिया तथा केदार की शादी करवा दी।

59. घर जमाई

प्रस्तुत कहानी का प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1929 को माधुरी में हुआ था। तथा मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में ' खान-ए-दामाद' नाम से जादे राह में संकलित की गई।

शिवकुमार मिश्रजी इस कहानी के बारे में कहते हैं कि--" घर जमाई ग्रामीण परिवेश की एक साधारण कहानी है जिसके अन्तर्गत प्रेमचन्द ने घर जमाई बनकर ससुराल में सुख पाने की मानसिकता और उसके तहत होने वाली स्वाभिमान की अति को हरिधन नामक एक पात्र के जरिए विशद किया है।'' 68

कहानी का प्रारम्भ हरिधन नामक पात्र से होता है जिसके पास बहुत सा धन था पर जब उसकी माता मर गई और विमाता घर आई तो वह अपना हिस्सा लेकर ससुराल चला गया। ससुराल में उसकी सास ने मां बनने का और सालों ने भाई बनने का वादा किया। पहले तो पूरा परिवार उनकी उंगली के इशारों पर नाचता था पर जब उसकी दौलत खतम हो गई तो उससे मजदूरों जैसा बर्ताव किया जाने लगा। अब हरिधन सालों के साथ न खा सकता था उसका घर पर कोई अधिकार न था। घर के सभी सदस्य साले ,पत्नी आदि उसको डॉंटते, कड़वे वचन सुनाते, ऊपर से वे चाहते कि हरिधन वहॉं से चला जाए। एक दिन हरिधन ने सालों के साथ खाने की बात की जिस पर उसकी पत्नी और सास ने उसे खूब डाटा और वह बिना खाये वहॉं से अपने गॉंव चला गया, जहॉं उसको उसका दोस्त मॅंगरू मिला जिसके कहने पर वह अपने घर गया। उसकी विमाता ने उसे बड़े प्यार से बुलाया, पिता के मरने पर हरिधन ने विमाता के दो छोटे बच्चों को सहारा दिया। एक महीने में वह हस्ट-पुष्ट हो गया और अच्छा कमाने लगा। तभी उसे पता चला कि गुमानी ने दूसरी शादी कर ली। अब वह बहुत खुश है।

60. ढपोर शंख

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जनवरी 1931 में हंस में हुआ था। तथा बाद में मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की समपूर्ण कहानियॉं- 4 में इसका संकलन भी किया गया। उर्दू में अप्रैल 1931 में इसी नाम से 'चन्दन' में प्रकाशित हुई।

कहानी में लेखक स्वयं अपना अनुभव बताते हैं। वे कहते हैं कि मेरा एक दोस्त था जिसे कोई भी बुद्धू बनाकर चला जाए वह ऐसा था। एक बार उसे में मिलने गया तब देवीजी से पता चला कि उनका एक साहित्यक दोस्त करुणाकर जोशी ने उन्हें इस तरह ठग कर चला गया कि वह उसे 500-600 रूपयों का चूना लगा गया। उसने केवल मेरे दोस्त को ही नहीं पर उनके मुहल्ले के माथुर आदि कई लोगों को भी ठगा था। ये उसे कुछ भी न कह सके। पत्नी के मना करने पर भी उसे कई बार पैसे दिये। इस बात पर पति-पत्नी में जंग छिड़ गई, जब मुझे पता चला कि गल्ती दोस्त की है, पर उसे बचाने के लिए मैंने उसका साथ दिया। देवीजी समझ गई पर कुछ न बोली।

61. आखिरी लीला

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में अप्रैल 1931 को चंदन में हुआ। हिन्दी में अप्रैल 1931 को हंस में प्रकाशित हुइ तथा बाद में मानसरोवर, भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-4 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में लेखक अपने आपको मुख्य पात्र बताते हैं। वे कहते हैं कि मैं नहीं चाहता कि मेरी श्रीमती जी मेरे तीन बच्चों के साथ यहॉं आयें इसलिए में हर बार अपनी पत्नी का यहॉं आने का प्रस्ताव पूर्ण खत का जबाब किसी न किसी बहाने से नामंजूर कर देता। दरअसल में अपनी जिम्मेदारियों से मुॅंह मोड़ कर रसमय एवं सुखमय जीवन जीना चाहता था, इसके चलते मैंने अपनी पत्नी के खतों के कई बहाने बनाए। जैसे--

1. यहॉं का वातावरण और खाना-पीना अच्छा नहीं है।
2. दोस्त हमेशा यहॉं रहते हैं और पैसे ले जाते हैं
3. मकान अच्छा नहीं है।
4. शहर अच्छा नहीं है।
5. शहर बिमारियों का अड्डा होता है।
6. यहॉं की औरतें बड़ी शौकीन होती हैं।

लेकिन मेरे अन्तिम बहाने पर बाजी पलटी और दूसरे दिन वे तीनों बच्चों को लेकर आ गई और घर में कोई औरत है या नहीं उसकी छान बीन करने लगी और मुझे हिदायत दी कि किसी पराई औरत को घर में रखने पर वह मेरा नाक काट डालेगी। तब मुझे पता चला कि मेरा तमाचा मेरे मुॅंह पर पड़ा।

62. लांछन -2

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में फरवरी 1931 कां माधुरी में हुआ था। तथा मानसरोवर-5 तथा प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'फरेब' नाम से जुलाई 1932 में चन्दन में प्रकाशित हुई थी तथा 'जादेराह' में संकलित है।

इस कहानी के मुंशी श्यामकिशोर के यहॉ मुन्नू मेहतर गुसलखाना साफ करने आता था। मुंशीजी की पत्नी जो बहुत खूबसूरत थी और उसे घर से बाहर जाने की इजाजत न थी, वह मुन्नू से बातें करती और अपनी सारी भंड़ास निकालती। मुंशीजी जी को यह बात पसंद न आती थी। एक दिन देवरानी खिड़की पर खड़ी थी और रजा मोची उसके रूप का दिवाना हो गया। मुन्नू के कारण मुंशी जी ने घर बदल दिया लेकिन दो हप्ते बाद वह वहॉ भी पहुंच गया और मोची की तरफ से मुंशी जी और देवरानी के लिए खिलौने भी लाया। देवरानी ने पहले तो मना किया पर उसी समय शारदा वहॉ आई और उसने खिलौने ले लिए। मुंशी जी जैसे ही मुन्नू को जाते देखा वह देवरानी पर गरज पड़ा और खिलौने देखने पर तो उसने देवरानी को खूब मारा तथा घर से निकल गया। देवरानी रो रही थी और शारदा अपनी सहेलियों को खिलौने दिखाने गई और कार ने नीचे कुचल कर मर गई। पूरी रात मुंशीजी की राह देखी पर जब वह सबेरे आए तो पता और पता चला कि शारदा मर गई । बेटी की मृत्यु ने पति-पत्नी दोनों को नजदीक किया। लेकनि दुबारा जब एक दिन रजा मोची देवरानी जी के पास बेटी का दुख प्रकट करने आया था जिसे मुंशीजी ने देख लिया और फिर देवरानी को खूब मारकर वह बाहर चला गय। तब देवरानी ने भी सामान बॉधा और मुन्नू के पास चली गई। तब मुन्नू और रजा ने कहा कि चिड़िया फॅस गई। मुंशी जी सुबह आये तो पता चला कि देवरानी चली गई और वे बदनाम हो गये।

63. प्रेम का उदय

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जून 1931 को हंस में हुआ। मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-4 में इसका संकलन भी किया गया। उर्दू में 'तलुए-मोहब्बत' शीर्षक से सितम्बर 1931 को चन्दन में प्रकाशित हुई ।

कहानी के सन्दर्भ में डॉ. रत्नाकर पाण्डेय कहते हैं कि--" जहॉ तक कथावस्तु की ध्वनि को शीर्षाकिंत किया गया है, उससे प्रेमचन्द की शीर्षक चुनने की अनुभवी सामर्थ्य का प्रत्यक्ष दर्शन हो जाता है। उॅगलियों पर गिनी जाने वाली प्रेमचन्द की श्रेष्ठ कहानियों में इसकी गणना होनी चाहिए। रहस्य और यथार्थ के दो-दो वाद आदर्शवाद की दीवार पर बैठकर यह कहानी के द्वन्द्व निर्माण से संलग्न है। कहानी की आत्मा शीर्षक में बोल उठी है।'' 69 वे आगे भी कहते हैं कि--" कंजड़ो के

जीवन में झाँकते हुए इस कहानी में प्रेमचन्द ने उसके बीच संवेदना, प्यार, सहनशीलता, करुणा और तरल भावनाओं के उफान को जिस तरह देखा-परखा और उजागर किया है, वह उन्हीं अपनी मानवीय संवेदना और आदमी तथा आदमियत पर उनकी बुनियादी आस्था का साक्ष्य है। '' 70

इस कहानी का पात्र भोंदू और बंटी हैं जो पति पत्नी है और जाति से कंजड़ हैं। कंजड़ लोगों का काम है कि चोरी, लूट-पाट करके अपना गुजारा चलाते हैं और पुलिस वालों को भी अपने में मिला लेते हैं जिससे पुलिस भी उनको कुछ नहीं कहती है। पर भोंदू मेहनत की कमाई खाता था जिससे उसकी पत्नी दुखी रहती क्येंकि औंर कंजड़ उससे अच्छा खाते पहनते थे। बंटी ने अपने पति को उलाहना दी जो वह न सह सका, और उसने एक सेठ के घर चोरी करके उसे सारा समान दिया और बाद में माता को खुश करने के लिए एक भेड़ चुरा कर बलि देने गया जहॉं पर उसे पुलिस ने पकड़ लिया। भोंदू यह न जानता था कि चोरी के माल में से कुछ हिस्सा पुलिस को भी देना है। पुलिस ने पूरी रात उसे खूब मारा और इधर बंटी चोरी का सामान पहनकर इतरा रही थी। दूसरे दिन जब उसे पता चला कि भोंद पकड़ा गया है तो वह पुलिस स्टेशन गई और वह भोंदू का दुख न सहन कर पाई। जिससे उसने पुलिस को सब सच-सच बता दिया और भोंदू ने अपनी इज्जत बचाने के लिए चोरी का सारा माल वापस कर दिया। बंटी ने भोंदू से चोरी न करने का वायदा किया और उससे ईमानदारी का काम करने को कहा। दोनों के प्रेम का फिर से उदय हुआ। इसी सन्दर्भ में शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" इस कहानी में प्रेमचंद ने समाज के हाशिए में क्या, उसकी सबसे नीची सतह पर रहने और जीने वाले जरायम पेशा कंजड़ो के जीवन और जीवन-व्यवहारो को अपनी दृष्टि के दायरे में लाते हुए यह दिखाने का प्रयास किया है कि समाज जिन्हें बुनियादी तौर पर आपराधिक मानसिकता का नितांत तिरस्कृत तथा समाज का उच्छिष्ट मानता है, आपराधिक मानसिकता के इन कंजड़ों में भी हृदय होता है, ईमानदार जिन्दगी जीने की आकांक्षाएं होती हैं, सच्चे प्यार की उष्मा होती है, चली आ रही जिन्दगी के ढर्रे से अलग, जोखिम उठाकर भी चल सकने का माद्दा होता है। प्रेमचंद आजीवन इस बात पर दृढ़ रहे हैं कि दुष्ट से दुष्ट व्यक्ति के अंत:करण में भी कहीं न कहीं किसी देवता का निवास होता है, स्थितियॉं जिसे जगाती भी हैं। कहानीकार की दृष्टि को आदमी की जिन्दगी के इन पहलुओं को भी देखने, पहचानने और उजागर करने की क्षमता होनी चाहिए। इस कहानी में प्रेमचंद अपनी मानवीय संवेदना के तकाजे पर कंजड़ों के जीवन के अपवाद स्वरूप ही सही इस पहलू को भी देख पाने और उजागर करने में सफल हुए हैं।''71

64. दूसरी शादी

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में सितम्बर 1931 को हंस में हुआ था तथा मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ -4 में इसका संकलन किया गया है।

कहानी का कथानक इस प्रकार है। मेरी पत्नी दो साल पहले मर गई। मेरा चार साल का बेटा है जिसका नाम रामस्वरूप है। मेरी पत्नी ने मरते समय उसका ख्याल रखने को कहा था और मैंने उसे वादा भी किया था और यह भी कहा था कि मैं दूसरी शादी नहीं करूगा। मैं भी लागों से कहता था कि एक विधुर को कुँवारी से शादी नहीं करनी चाहिए। लेकिन छ महीने के बाद मैंने एक कुँवारी लड़की से शादी कर ली। पढ़े लिखे लोगों ने मुझे ताने भी मारे पर अब क्या होता। मेंने सोच रखा था कि वह रामस्वरूप से प्यार करेगी लेकिन मेरी सोच गलत निकली, विमाता कभी भी अपने सौतेले बेटे को प्यार नहीं कर सकती। अंत मे मुझे रामस्वरूप का अपने पिता के पास छोड़ने की नौबत आ गई।

65. चमत्कार

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मार्च 1932 को माधुरी में हुआ था तथा मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ -5 में इसका संकलन किया गया है। उर्दू में ' जेवर का डिब्बा' शीर्षक से अगस्त 1932 को चन्दन में प्रकाशित हुई और जादेराह में संकलित की गई।

इस कहानी का नायक चन्द्रप्रकाश बी. ए. पास है। पर अनाथ होने के कारण तथा कोई अच्छी पहचान न होने की वजह से वह कोई अच्छी पोस्ट पर नौकरी न पा सका। अपने परिवार का गुजारा चलाने के लिए ट्युशन से कुछ कमा लेता था। वह एक ठाकुर के बेटे वीरेन्द्र सिंह को पढाते जहॉ से उन्हें 30 रूपये महीने मिलता था। ठाकुर काफी धनवान एवं अच्छा भी था उसने चन्द्रप्रकाश को रहने के लिए घर के बगल में एक मकान दे दिया था। ठाकुर जी उस पर बहुत विश्वास रखते थे। हर काम उससे पूछ कर करते थे। वह मानते थे कि पढ़े लिखे लोगों के पास ज्यादा ज्ञान होता है, उनके सामने तर्जुबा किसी काम नहीं। ठाकुर ने अपने बेटे की शादी करवानी चाही और फिर क्या था ठाकुर और उनकी पत्नी ने सारा जोखिम वाला काम चन्द्रप्रकाश के जिम्मे छोड़ दिया। ठाकुर ने अपनी बहू के लिए पांच हजार के गहने बनवाए जिसे देखकर चन्द्रप्रकाश चकाचौंध रह गये। उसने अपनी पत्नी चम्पा को गहने के बारे में बताया पर वह वह जीमार कर बैठ गई पर चन्द्रप्रकाश ने वह गहने चुरा लिए। दूसरे दिन पुलिस आई तो ठाकुर ने चन्द्रप्रकाश को विश्वास वाला इन्सान बताया और पुलिस ने स्पष्ट किया कि चोर चन्द्रप्रकाश की कोठरी से ही गया इस पर उन्होंने अपना गुनाह छिपाने के लिए वह कोठरी छोड़कर दूसरे भाई के मकान में रहने चले

गये जिसका भाड़ा सेठ जी देते थे। चम्पा ने देखा कि चन्द्रप्रकाश छ महीने से एक सन्दूक उससे छिपा रहा है। उसने चुपके से संदूक खोलकर देखा तो उसमें गहने थे। अब वह उससे कटी रहने लगी। चन्द्रप्रकाश ने बताया कि उसे बैंक में नौकरी मिल गई है और वहाँ 20 हजार भरने हैं, जो ठाकुर भरने वाले थे तो पत्नी ने खरी-खोटी सुनाई एवं उसकी गल्ती का एहसास भी करवाया। चन्द्रप्रकाश ने कुछ दिन बाद नौकरी मिलने की खुशी में ठाकुर के परिवार को खाने पर बुलाया और रात को वहीं सुलाया। दूसरे दिन ठाकुर के घर से खबर आयी कि गहने मिल गये और चम्पा खुश हो गई। पति को गले लगा लिया और अच्छे पकवान बनाने लगी।

66. गिला

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अप्रैल 1932 को हंस में हुआ। तथा मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-5 में इसका संकलन भी किया गया। उर्दू में ' शिकवा-शिकायत' शीर्षक से जून 1932 में चन्दन में तथा जनवरी 1937 में जामिया में प्रकाशित हुआ और वारदात में संकलित किया गया।

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने एक स्त्री की भूमिका निभायी है। मेरे पति जो संसार की दृष्टि में सज्जन, बड़े उदार, बड़े शिष्ट तथा बड़क सौम्य हैं। पर उनकी पत्नी यानी मेरी नजर में वे शिष्ट नहीं हैं क्योंकि वे हमेशा मित्रों की मदद करने के लिए अपने पैसे डुबोते हैं। घर की आवश्यकता की चीज भी नहीं आ पाती है। भगवान की दया से दो बेटे और दो बेटियाँ हमें भी थी पर उनके बारे भविष्य के बारे में न सोचने और उनकी गल्तियों पर डाँटने के बजाय उन्हें जाने देते। इसलिए मैं उनसे नाराज रहती थी। घर के नौकर घर का सारा काम कर लेते थे। जब एक बार उन्हें पैसे की जरूरत पड़ी तो उनके किसी मित्र ने उन्हें पैसे न दिए और उनके दिए हुए पैसे भी न लौटाये। उनमें इतने दुर्गुणों के बावजूद भी में उनसे एक दिन भी दूर न रह सकती थी। मैं उन्हें बदलने की कोशिश भी नहीं करती क्योंकि वे मुझसे बहुत प्यार करते थे।

67. झाँकी

कहानी का प्रकाशन केवल हिन्दी में अगस्त 1932 में जागरण में हुआ था। तथा मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-5 में इसका संकलन किया गया।

यह कहानी एक पारिवारिक कहानी है। जहाँ प्रेमचंद एक परिवार की आर्थिक स्थिति को दर्शाते हैं। तीज का त्योहार आने वाला है। माँ मेरी बहने के यहाँ तीज का सामान भेजना चाहतीं है जिसके कारण बीबी, विद्या और मां के बीच झगड़ा हो जाता हैं क्योंकि मां ज्यादा सामान भेजना चाहती

थीं और विद्या घर की परिस्थिति के कारण कम सामान भेजना चाहती थीं। मुझे मेरी बीबी से सहमति थी पर मॉ तैयार न थी। घर में कमाने वाला मैं था और खाने वाले कई थे। दोनों के झगड़े में मैं झुंझला उठा और बीबी को डाट दिया। विद्या और मॉ दोनों नाराज़ हो गये और बच्चे भूखे रह गये क्योंकि शाम को किसी ने खाना न बनाया। मैं अंधेरें में बैठा था तभी मेरा मित्र पंडित जयदेवजी आए और मुझे सेठ घूरलाला के कृष्ण के मन्दिर में ले गये और वहॉं एक किशोर के भजन ने मुझे पत्नी के प्यार और मॉ के वात्सल्य की याद दिलायी। भजन कब खत्म हुआ मुझे पता न चला मेरे मित्र ने पुकार चलते हो या बेठे रहोगे तब मुझे पता चला कि भजन खत्म हो गया है।

68. तगादा

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में 1932 को प्रेरणा तथा अन्य कहानियॉ में हुआ और मानसरोवर-4 में प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं- 5 में संकलित की गई। प्रथम प्रकाशन अज्ञात है।

कहानी इस प्रकार है। कहानी के पात्र सेठ चेतराम बड़े कंजूस हैं। वे जब तगादा करने जाते तो एक समय का खाना वहीं खाते जिससे उनके घर का खाना बच जाता। एक बार चेतराम तगादा करने तीन कोस दूर एक गॉव में किसी किसान के घर गये, जिसने तीन साल का बकाया नहीं दिया था। आधे रास्ते जाने पर तांगे वाला दिखा लेकिन वह बिना पैसे लिए न ले जाना चाहता था। तांगेवाले ने आठ आने मॉगे तो वह एक जगह उतर गया और तीन आने देने लगा। तभी एक औरत सज-धजकर आयी और सेठ को अपनी तरफ आकर्षित कर रही थी वह एक वेश्या थी। उस औरत के कारण सेठ जी उसे चवन्नी दिया और उस औरत ने उसे मिठाई का एक रूपया दिया तो सेठ जी ने उसे एक रूपया निकाल कर दे दिया। उस औरत ने सेठ पर पंखा डाला लेकिन जब सेठ जी को पता चला कि वह मुसलमान है तो अपना धर्म बचाने के लिए वहॉ से भागे। जिसमें उनकी धोती छूट गई और उनका बटवा गिर गया। पर वे न रुके।

69. स्मृति का पुजारी

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में ' वफा का देवता' नाम से 1932 में अस्मत में हुआ तथा दूध की कीमत में संकलित है। उर्दू में 1935 को हंस में प्रकाशित हुआ। और प्रेमचंद की समपूर्ण कहानियॉं-5 तथा मानसरोवर-4 में इसका संकलन किया गया।

कहानी में प्रेमचंद अपने एक दोस्त की बात बताते है। मित्र होरीलाल की उम्र 45 साल की थी । पत्नी के मरने के बाद वे उदास रहने लगे और मैं और मेरे मित्र हमेशा उसक घेरे बैठे रहते पर हम भी क्या करते। होरीलाल मितभाषी थे, सबको पसंद आते थे। इसलिए हम लोगों की पत्नियों

ने उनसे दूसरी शादी करने के लिए कहा, पर वह न माना। इतने में ही मुझे बाहर जाना पड़ा और जब मैं आया तो देखा कि वे बन ठनकर रोज सैर करने जाते, मेंने उसका राज जानना चाहा तो पता चला कि राज मिस इंदिरा हैं। वह अब प्रफुल्लित रहने लगे। कुछ काम की व्यस्ततता के कारण उनसे कुछ दिन में न मिला जब मिला तो देखा कि वे पहले जैसे हो गये मैंने इसका राज जानना चाहा तो पता चला कि मिस इंदिरा शादी करना चाहती थी लेकिन होरीलाल ने मना कर दिया। मैंनें पूँछा तो उसने कहा कि में स्मृति की पूजा करता हूँ और वह स्मृति का पुजारी है।

70. रंगीले बाबू

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में गुरुवार 20 जनवरी 1933 को 'भारत अर्ध-साप्ताहिक में हुआ और प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य -1 एवं प्रेमचंद सम्पूर्ण कहानियों -5 में संकलित है।

बाबू रसिकलाल एक वकील एवं बडे आदमी थे। जितने दुर्गुण एक बड़े आदमी में होने चाहिए थे वे सब उनमें विद्यमान थे। जैसे शराब पीना, जुआ खेलना आदि। मैं उनका पड़ोशी था और उनसे चिढ़ता था। मैं एक शिक्षक था। और उनसे बात कम करता था। वे हमेशा हॅसते रहते थे और कभी दुखी न रहते थे। एक बार उनकी लड़की की शादी थी लड़कों वालों ने कुछ नाजायज फरमाइश की जैसे पिक्चर की टिकिटें, शराब, खाना-पीना आदि। मैंने उनसे यह फरमाइश न पूरी करने को कहा। पर वे न मानें मुझे कहने लगे कि हम लड़की वाले हैं झुककर रहना चाहिए। तीन महीने के बाद उनका दामाद मर गया। बाद में मेरा तबादला हो गया। एक साल बाद मुझे पर खत आया कि उनके बेटे की शादी हैं। मैंने बन-ठनकर उनके घर गया तो पता चला कि उनका बेटा मर गया है। वे बाजे-गाजे के साथ उसको विदा कर रहे थे। जनाजे में हजारों लोग थे पर बाबू रसिकलाल दो बूँद भी न रोये, जब दाह संस्कार हुआ तो वे एक बार अपनी छाती पीट लिये, मैंने उन्हें संभाला। अब मैं भी जान गया कि जिन्दगी जीना कोई ऐसे इन्सान से सीखे। अब कोई मुझे कुछ बोले कर जाय तो मुझे बुरा न लगता और हॅसकर टालने लगता।

71. वैराग्य

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में 1933 को स्वाधीनता में हुआ और सोलह अप्राप्य कहानियॉं, प्रेमचंद की समपूर्ण कहानियॉं-5 तथा प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य-1 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में मई-जून 1960 को ' शायर' (उर्दू मासिक पत्रिका, मुम्बई) में विराग शीर्षक से प्रकाशित हुआ।

इस कहानी के पात्र पंडित बजरंगदास और उनकी पत्नी विंद्धेश्वरी को कोई भी सन्तान न थी। वे दोनों भगवान के बड़े भक्त थे । खूब पूजा पाठ किया पर कोई फायदा न हुआ। पंडित जी

अपनी कमाई का एक बड़ा हिस्सा दान-पुण्य करते थे। उनके पड़ोश में एक बनिया रहता था उसके कई बच्चे थे। एक दिन उस बनिए की दुकान न चली और बनियाइन की तेल की बरनी गिर पड़ी इस पर उसने पंडित पर सारा दोष डाल दिया, जिसके कारण बनिया और बनियाइन दोनों घर छोड़कर चले गये। पंडितजी की पगार अब 120 रूपये हो गई थी और वे दान का हिस्सा निकाल रहे थे। पर पंडितानी ने दान-पुण्य करने से मना किया क्योंकि उससे कोई फायदा न होता था। सारे पैसे वे अब अपनी सुख सुविधा में खर्च करने लगे, ऊपर से उधार भी लेने लगे। 11 साल के बाद उनके यहाँ पुत्र रत्न पैदा हुआ। घर में महोत्सव हुआ। पत्नी ने बनिये को भी सपरिवार बुलाया। उसी रात पंडित के सपने में एक बाबा आये और उन्होंने कहा कि इससे भी अच्छा पुत्र रत्न मिल सकता था। ये तो तेरे दान-पुण्य न करने का फल है। दूसरे दिन पंडित में वैराग्य उत्पन्न हो गया और वे घर छोड़कर चले गये।

72. शन्ति -2

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में फरवरी 1934 में भारती में हुआ। बाद में मानसरोवर, भाग-7 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'सूकने कलष नाम से 1934 में 'अस्मत' (दिल्ली) में प्रकाशित हुआ तथा दूध की कीमत में 'सकूने कलष' और वारदात में शांति नाम सें संकलित हुई।

इस कहानी में स्वयं प्रेमचंद ने एक स्त्री का पात्र निभाया है, जो एक सीधी-सादी आम् हिन्दुस्तानी नारी थी, जो पूजा-पाठ करती थी, सास की घुड़कियाँ सुनती और कुछ न बोलती, घर का सारा काम करती। वह कहती है कि मेरे पति नये विचारों के थे, उन्हें जहीलपन बिल्कुल पसंद न था इसलिए मेरी सास और मेरा हमेशा झगड़ा होता था। मेरे पति ने इलाहाबाद में रहना तय किया। वहाँ उन्होंने एक कमरा भाड़े पर लिया जहाँ मुझे अंग्रेजी सिखाने के लिए, पियानों सिखानें के लिए, गाना सिखाने के लिए मेम आती थी, मैं बिना परदा किए बाहर जाती थी, अंग्रेजी ढंग के कपड़े भी पहनती थी और तो और टेनिस क्लब में मेरे से शुरू करवाया। ये सभी खर्चा उनके खर्च से ज्यादा था मैंने मना किया तो कहा सँभाल लेंगें। अब मेरे क्लब के ढेर सारे दोस्त भी हो गये। जिनके बिना मेरा चलना मुश्किल हो गया। एक बार पति बीमार हुए मैं उनसे मिलने भी न गई, पहले तो ऐसा होता तो मैं घंटो उनके पास बैठी रहती। तीन चार दिन में उनसे मिलने न गई चार दिन के बाद जब नौकर ने मुझे बताया कि वे बहुत बीमार हैं तब मैं उनसे मिलने गई। वे मुरझाये हुये थे। उन्होंने कहा कि मेरे मे वाकई में परिवर्तन आया है, तब मुझे पता चला कि उनको मानसिक बीमारी है।

मैंने तुरंत घर वापस आने का फैसला कर लिया। तीन साल बाद हम घर लौट आए। अब मैं रोज रामायण पढ़ती, सास की सेवा करती और सास मुझे प्यार करती तथा मेरे पति मुझसे खुश थे।

73. बारात

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन एवं संकलन उर्दू में मार्च 1934 को 'आखिरी तोहफा'(प्रथम संस्करण) में हुआ। देवनागरी लिप्यांतरण में 'बारात' नाम से सोलह अप्राप्य कहानिया-एवं प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-5 में इसका संकलन भी हुआ।

इस कहानी के बाबू देवकीनाथ पुराने खयालों के आदमी थे। वे चाहते थे कि उनकी पत्नी पूजा-पाठ करें, पर्दे करें, पर उनकी पत्नी फूलमती स्वच्छन्द विचारों की थी वे चाहती थीं कि उन्हें भी उतना ही मान मिले जितना पति को मिलता है। बस इसी कारण उन दोनों में झगड़ा होता रहता था। फूलमती तीन बार रूठकर अपने मायके चली गई और मित्रों के कहने पर देवनाथ उसे मनाकर ले आते पर अब धीरे-धीरे दोनों में खाई बढ़ने लगी। 15 साल गुजर गये फूलमती अपने मायके है और देवनाथ दूसरी शादी करने जा रहा है। शादी के दिन सारे परिजन आये हुये थे तभी फूलमती के पिता को देवकीनाथ की सादी के बारे में पता चला , वे कुछ न करे सके। फूलमती न मानी वह पति के घर गयी उसी समय देवनाथ स्टेशन के लिये निकल रहे थे, फूलमती ने बहुत रोका पर वे न माने। फूलमती गाड़ी के सामने खड़ी हो गई देवकीनाथ के कहने पर भी वह न हटी देवकीनाथ ने उसके ऊपर से गाड़ी निकाली और वह मर गई। गुस्साये हुए लोग दवेनाथ पर टूट पड़े और उसे मार डाला और दोनों का जनाजा साथ में निकला।

74. स्वांग

कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1935 को जामिया में हुआ था तथा वारदात में इसका संकलन हुआ। हिन्दी में गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं -5 में संकलन किया गया।

कहानी का पात्र गजेन्द्र सिंह एक राजपूत है, पर वह अपने दादा भूपेन्द्रसिंह एवं पिता नरेन्द्र जैसा बहादुर न था। उसमें राजपूतों जैसे कोई लक्षण न थे वह नाजुक था। इस बार वह होली के समय में ससुराल चला गया। उसने सोचा था कि पढ़ाई खत्म हुई है ससुर जी सुबेदार हैं तो उनकी सिफारिश से कही नौकरी मिल जायेगी। वह गया तो उसके ससुर ने गजेन्द्र को उसके साले चुन्न-मुन्न के साथ शिकार पर जाने को कहा। गजेन्द्र को घोड़े पर बैठने से डर लग रहा था इसलिए वे चल कर गये। गजेन्द्र को शिकार से डर लग रहा था इसलिये उसने अपने वाकचातुर्य से

सबको आधे रास्ते से ही वापस लौटने पर मजबूर किया। रात को सब होली के पटाखे फोड़ रहे थे तो गजेन्द्र भागे तब ससुर ने पूछा तो उन्होंने सुफियाना अन्दाज में आत्मा की बात की। गॉव वाले गजेन्द्र की बातों में आकर सारे पटाखे नदी में डाल दिये और रात को गजेन्द्र और उनकी पत्नी श्यामदुलारी रूम में सो रहे थे और पांच डाकू अचानक उनके कमरे में आकर सोना मॉगने लगे। गजेन्द्र डर गया और डर के मारे पत्नी के गहने दे दिये पर उसकी पत्नी न मानी तब डाकू उसकी पत्नी को उठा ले गये। गजेन्द्र ने आकर देखा तो उन्हें पता चला कि वह स्वागं उनकी पत्नी की सहेलियों का था। अब सबने उनका मजाक उड़ना शुरू किया तब गजेन्द्र ने कहा कि मैं पहचान गया था लेकिन अगर मैं बता देता तो तुम लोगों का स्वांग खुल जाता। सभी गजेन्द्र के वाकचातुर्य से चुप हो गईं।

75. कोई दु:ख न हो तो बकरी खरीद लो

कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'गम नदारी बजंजर खरीद लो' हिदी रूप 'कोई दु:ख न हो तो बकरी खरदी लो' नाम से वारदात (पाण्डुलिपि तैयार : मार्च 1935, प्रथम संस्करण 1938) में हुआ। हिन्दी रूप कोई दु:ख न हो तो बकरी खरीद लो शीर्षक से गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-5 में इसका संकलन किया गया।

कहानी में प्रेमचंद खुद को मुख्य पात्र बताते हैं। वे कहते हैं कि मेरा एक छोटा सा बच्चा था जिसके लिये मेरी पत्नी दूध मॅगाती थी पर दूध अच्छा न था, इसलिये मैंने और डॉ. चड्ढा ने मिलकर एक गाय खरीदी। मेरा घर छोटा होने के कारण गाय चड्ढा साहब के घर रखी जाती थी। थोड़े दिनों के बाद फिर से दूध पहले जैसे आने लगा। तीन महीने के बाद डॉ. चड्ढा की बदली हो गई और मुझे गाय बेचनी पड़ी। एक पंडित के कहने पर मैंने एक बकरी खरीद ली। पहले तो वह दो सेर दूध देती थी, पर बाद में एक सेर देने लगी। किसी ने कहा उसे चराओ तो मैंने घर बदल दिया, एक दिन उसने पड़ोस के खेत को उजाड़ दिया। लोगों ने मुझे गालियॉ देना शुरू किया। कुछ लोगों ने कहा कि पत्तियॉ खिलाओ तो अच्छा दूध देगी पर पत्तियॉ तोड़ने में शर्म आती थी। मैंने उसे बेच दिया। अब उसके दो बच्चे थे जिससे पत्नी को बहुत लगाव था वे उसे रखना चाहती था पर मैंने न रखने दिया।

76. जीवन का शाप

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जून 1935 को हंस में हुआ था तथा बाद में मानसरोवर, भाग-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'लानत' नाम से जादे राह में संकलित है।

इस कहानी में कावसजी और सापूरजी दोनों परम मित्र बताये गये है। पर दोनों में बहुत अन्तर है, कावसजी कलम तथा पत्र दोनों द्वारा उतना नहीं कमा पाते थे जितना सापूरजी रूई के धंधें में कमा लेते थे इसलिए कावसजी की पत्नी गुलशन उनसे बहुत नाराज रहती थी। इधर सापूरजी खूब कमाते और ऐश भी उतना ही करते। उनमें सारी बुरी आदतें थी। वे अपनी पत्नी को समय नहीं देते थे। इसलिए मिसेज कपूर उनसे नाखुश थी। एक बार कावसजी और गुलशन दोनों में झगड़ा हो गया और गुलशन घर छोड़कर चली गई। तभी कावसजी को मिसेज शापुर मिली उन्हें उनका स्वभाव अच्छा लगा। अब धीरे-धीरे वे एक दूसरे से मिलते और अपना सुख-दुख कहते। एक बार मिसेज शापुर कावसजी से मिलने आई और उनसे दूसरी शादी का प्रस्ताव रखा और गुलशन से डिवोर्स लेकर दूसरी शादी पर जोर देने लगी। कावसजी ऐसा नहीं चाहते थे। वे सोचते थे कि अपनी पत्नी जैसी भी हो उसी के साथ रहना चाहिए। बाद में वह तांगा लाने गया जहॉं शापूरजी मिले। कावसजी ने उनको समझाने की कोशिश की पर वे न माने। बाद में उसे गुलशन तांगे पर मिली और उसने अपने प्यार को जताया, जिससे कावसजी उसके साथ चले गये और मिसेज शापूर के बारे में बताया।

77. गृह नीति

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अगस्त 1935 को चांद में हुआ था तथा मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में ' जाविए निगाह' नाम से दूध की कीमत में संकलित है।

प्रस्तुत कहानी एक पारिवारिक कहानी है। कहानी में अपने आप को प्रमुख पात्र बताते हैं। कहते हैं कि मेरी मां पुराने ख्यालों की थी, वह चाहती थी, कि बहू उनके पैर दबा दे, खाना बनाये, घर का सारा काम करे पर वह मेरी पत्नी को सारा काम डॉट कर कहती थी, जिसकी वजह से मेरी पत्नी हमेशा उपन्यास पढ़ती रहती थीं। जब मैं घर आता तो मॉ ने मुझसे फरियाद की और जब मैंने उनसे कहा कि तुम उससे प्यार से बोलो तो मुझ पर नाराज हो गई। तभी पत्नी आई और चली गई। पत्नी मुझसे पूॅंछने लगी कि क्या मॉं मेरी बुराइयॉं कर रही थी। मैंने उससे कहा कि मॉं कह रही थी कि बहू को कोई काम मत दो वह पढ़ी लिखी है अभी तो आई है, वह चौंक उठी। उसने तय किया कि वह अब घर का सारा काम करेगी और मॉं का सारा काम करेगी तथा खाना बनाना

भी सीख लेगी। तब मैं खुश हो गया और मैने कहा कि तेरे हाथों की सूखी रोटी भी मुझे पकवान लगेगी। इसी सन्दर्भ में नूरजहां कहती हैं कि-- पग-पग पर नारी जीवन में विषम समस्या खड़ी हो उठती है। बहू से सास कहीं भी प्रसन्न नहीं दिखती। 'गृहनीति' कहानी में भी इस तथ्य के दर्शन हम करते हैं। वधू से अप्रसन्न रहने के परिणाम स्वरूप सास अपने बेटे से भी अप्रसन्न रहने लगती है। अस्तु। इस प्रकार से हमारे समाज में नारी जीवन समस्यापूर्ण है। वह वधू रूप में भी प्रसन्न चित्त नहीं दीखती।'' 72

78. लॉटरी

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अक्टूबर 1935 में हंस में हुआ। बाद में मानसरोवर, भाग-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में यह जादे राह में भी संकलित है।

कहानी में मुख्य पात्र के रूप में स्वयं लेखक हैं। वे कहते हैं कि विक्रम मेरा दोस्त है, वह अपने बाप का इकलौता बेटा है। उसने अपने घर में सबके नाम की लॉटरी खरीदी थी और मेरे नाम से भी साजे में हमारी पुरानी पुस्तकों को बेंचकर खरीदी थी। विक्रम के मामा, चाचा, भाई आदि सभी पूजा-पाठ करने लगे, एक दिन मुझे लगा कि विक्रम मुझे पार्टनर बनाकर पॅूछता रहा है। मैंने उससे लिखा पट्टी करवानी चाही तभी उसकी बहन कुन्ती आई और विक्रम सुन रखा था कि अगर कुंवारी लड़की से पूजा करवायी जाय तो उसकी मन्नत पूरी होगी। उसने कुन्ती से पूजा करने को कहा बदले में उसे गहनों से लाद देने का वादा किया। कुछ दिन बाद पिता और चाचा में लॉटरी को लेकर झगड़ा हुआ। भाई फक्कड़ बाबा से पिटकर आया था। पर जिस दिन लॉटरी निकलने वाली थी उसी दिन विक्रम डाकखाने से प्रसन्नचित्त लौटा और उसने बताया कि किसी अंग्रेज की लॉटरी लगी है। तब सभी ने गालियॉं दी। फक्कड़ बाबा को सभी ने पीटा और विक्रम ने हमारी दोस्ती न टूटने के कारण पार्टी दी। इसी पर शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" लाटरी कहानी मध्यवर्ग की कुछ बुनियादी विशेषताओं को व्यंग्य के बेधक और निहायत खरे अंदाज में उद्घाटित करती है। इन विशेषताओं में सबसे प्रमुख है, इस वर्ग का शेखचिल्ली जैसा चरित्र हवा में छलांगे लगाना, अपनी हैसियत से बहुत आगे बढ़कर शेखी बघारना, वास्तविकता से अनजान कल्पना के महल खड़े करना। महत्वाकांक्षाएं पालना और इनके साथ अवसरवादिता समझौतापरस्ती और उसका व्यक्तिवाद। उसकी धूर्तता और उसकी चालाकी को भी प्रेमचंद ने इस कहानी में रेखांकित किया है, जिसके तहत सारे आत्मीय नाते-रिश्तों की ऐसी-तैसी करते हुए यह वर्ग अपनी स्वार्थपरता और बुलंदी के झण्डे गाड़ता

है।'' 73 वे आगे भी कहते हैं कि--" धर्म, देवता, ईश्वर,, पंडे-पुजारी, नकली बाबा, इनसे जुड़ी आस्थायें तथा विश्वास, मन्नतें और मनौतियॉं सब इस कहानी में व्यंग्य की तेज धार से गुजरी हैं और गुजरा है हमारा 'बेचारा' मध्यवर्ग, उसके ख्याली पुलाव, उसकी महत्वाकांक्षाएं, उसका खोखला अहं, उसका अवसरवाद, स्वार्थपरता, उसकी बेईमानी और उसकी खोटी नियत।'' 74

79. एक अपूर्ण कहानी

प्रस्तुत कहानी की प्रकाशन तिथि अज्ञात है। उर्दू पांडुलिपि से हिन्दी में रूपान्तर, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य, भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-5 में इसका संकलन भी है।

कहानी के बाबू सेवाराम हैं जो एम. ए. तक की शिक्षा प्राप्त थे। वे स्कूल में शिक्षक थे पर अपनी पत्नी से बहुत डरते थे। अगर वह सामने आ जाती तो वे निकल जाते। उन्हें लज्जावती से कुछ कहने की हिम्मत न होती पर एक बार उन्होंने ' प्राचार्य' की डॉट पर लज्जावती से कहा कि मोहिनी को वापस भेजना पड़ेगा।

80. मोटर के छींटे

कहानी का प्रकाशन तो अज्ञात है। पर हिन्दी में मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं 5 में इसका संकलन भी है।

इस कहानी में लेखक एक पंडित का अनुभव बताता है। मैं आज एक यजमान के घर गया साइत निकालवाने के लिए। मुझे बड़ी आशा थी। मैंने एक सफेद और अच्छा सा पोशक पहन रखा था। एक दिन पहले वहॉं थोड़ी बारिश हुई थी इसलिए रास्ते गीले थे। अचानक एक मोटर वाले ने छींटे उड़ाये और मेरे कपड़े गंदे हो गये। अब मैं ऐसे कपड़े पहनकर वहॉं नहीं जा सकता था तथा न घर जाकर बीबी की हॅंसी सह सकता था। मैंने झब्बा और पोथी रखी तभी देखा कि पहले वाली बस वापस आ रही है। मैंने पत्थर मारकर कॉच तोड़ दिया ड्राइवर ने गालियॉं दीं तो दूसरा पत्थर मारा, जो अन्दर बैठे साब को लगा। मैंने उसे ऐसा सबक सिखाया कि दुबारा जाते समय याद रखेगा। उससे 100 उठक बैठक करवायी, लोगों की मदद से गाड़ी रास्ते से गिरा दी। वहॉं से जितनी भी गाड़ियॉं गई सभी को रोक-रोककर उसका सबक सिखाया। अचानक पुलिस की गाड़ी आई और सभी के साथ मैं भी भाग गया।

81. नशा

कहानी का प्रथम केवल हिन्दी में फरवरी 1934 में 'चांद' में हुआ। बाद में मानसरोवर, भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में भी इसका संकलन किया गया।

यह कहानी आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई कहानी है। यह प्रेमचंद की प्रिय शैली में है। नशा प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानियों में से एक है। जिसमें सामाजिक और मनोवैज्ञानिक दोनों आयामों की चर्चा की गई है। इस कहानी के विषय में शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" 'नशा' कहानी प्रेमचंद की रचना धर्मिता के उस दौर की कहानी है जब अपनी बुनियादी आदर्शवादी आस्थाओं से आगे आकर वे यथार्थ जीवन स्थितियों के संदर्भ में मनुष्य के व्यक्तिगत और सामाजिक आचरण को न केवल सामाजिक स्तर पर परखने और पहचानने लगे थे, उससे जुड़े मनोवैज्ञानिक सत्यों को भी बारीकी में जाकर उजागर करने लगे थे।'' 75 इसी सन्दर्भ की चर्चा करते हुए डॉ. रामवृक्ष कहते हैं कि --" उन्होंने यह देखा कि हमारे समाज में कुछ ऐसे व्यक्ति क्रांतिकारी कहलाने लगे हैं , जिनका क्रांतिकारीपन किसी स्थायी सिद्धान्त या लोकप्रेम पर आधारित नहीं है, बल्कि उनकी निजी दशा पर निर्भर है। यदि उनकी दशा सुधर जाय तो उनके भाव और विचार भी बदल जायें। इस प्रवृत्ति को रेखांकित करते हुए उन्होंने उदाहरण के रूप में इस कहानी को गढ़ा है।'' 76 इसी सन्दर्भ पर विचार करती हुई डॉ. नूरजहॉ लिखती हैं कि--" मानव मन की आन्तरिक गहराइयों और जटिलताओं की कोई सीमा नहीं । उसमें इतनी गुत्थियां होती हैं कि उनके रूप रंग की गणना हो ही नहीं सकती। कल हम जिस वस्तु या व्यापार से अपना कुछ भी सम्पर्क स्थापित करने की कल्पना भी नहीं कर सकते अथवा जिस बात को हम जिह्वा पर भी नहीं ला सकते आज वही सर्वस्व बन जाती है। 'नशा' कहानी में इसी प्रकार की मनोवृत्ति के दर्शन होतें हैं।'' 77 कहानी के विषय में अपना विचार प्रस्तुत करते हुए डॉ. बलवन्त जाधव कहते हैं कि--" जमींदारों और आसमियों के सम्बन्ध में प्रेमचंद के विचार माननीय थे। वे असामियों के पक्ष में खड़े रहकर उनके अज्ञान को भगाना चाहते थे, प्रेमचंद की यह विशेषता 'नशा' के ईश्वरी के द्वारा प्रकाशित हुई है।'' 78

इस कहानी में प्रेमचंद ने दर्शाया है कि 'मैं हमेशा जमींदारों सेठों की बुराई करता हूॅ क्योंकि वे लोग गरीबों को चूसते हैं । मेरा दोस्त जमींदार है अगर मेरी कभी इस मामले में बहस होती तो मैं उससे भी जीतता। इस बार में दशहरे की छुट्टी में गॉव न गया क्योंकि उससे ज्यादा खर्च हो जाता और घर की हालत खराब थी। इसलिए मैं अपने दोस्त के घर उसके साथ प्रथम श्रेणी का टिकट लेकर गया। रेल के डिब्बे में उसका बड़ा मान था, पर मेरे कपड़ो के कारण कोई मुझे पूॅछता न था। घर जाकर भी यही हाल हुआ। वहॉ पर मेरे मित्र ने सबसे कहा कि यह मेरा मित्र बहुत अमीर है, पर गांधीवादी विचारधारा का मानने वाला होने के कारण वह ऐसा रहता है। घीरे-धीरे मुझे भी अमीरी का चस्का लग गया। क्योंकि मेरे मित्र ईश्वर के घर सभी काम के लिए नौकर थे। सारा

काम नौकर ही करते थे। जाते समय प्रथम श्रेणी का टिकिट न मिलने के कारण तीसरी श्रेणी के डिब्बे में यात्रा करनी पड़ी, जहाँ पर मैंने फेरीवाले का सामान बार-बार मेरे ऊपर गिरने की वजह से उसे दो तमाचे जड़ दिये। जिस पर न केवल आस-पास के लोंगों ने बल्कि ईश्वर ने भी मेरे ऊपर कटाक्ष किया और मेरा सारा घमंड चूर-चूर हो गया। इसी पर विचार करते हुए शिवकुमार मिश्रजी लिखते हैं कि--" 'नशा' कहानी प्रेमचंद के ऐसे ही परिपक्व कहानी लेखन की देन है, जिसमें विपरीत सामाजिक, आर्थिक हैसियत वाले पात्रों को एक दूसरे के बरक्स खड़ा करते हुए प्रेमचंद ने अपने निम्न मध्यवर्गीय कथानायक के मानसिक विपर्यय को परिवेश तथा सामाजार्थिक दबावों तथा उस वर्ग की अपनी मनोवैज्ञानिक वास्तविकता के सहचर्य से प्रस्तुत और विश्लेषित किया है। इस कहानी कि एक और विशेषता यह भी है कि यह प्रेमचंद के बारे में बनी इस आम् धारणा का भी खण्डन करती है कि ग्रामीण पात्रों के चित्रण में उनके जो महारत है , शहरी मध्यवर्ग के चरित्रों की प्रस्तुति में वह महारत नहीं दिखाई पड़ती। सच्चाई यह है कि इस कहानी में ही नहीं अपनी अन्य कहानियों और उपन्यासों में प्रेमचंद ने शहरी मध्यवर्ग के पात्रों की भी अंतरंग और बहिरंग की प्रस्तुति में अपनी पारखी दृष्टि का प्रमाण दिया है।'' 79 मिश्रजी का विचाार आगे भी विचाारणीय है , वे लिखते हैं कि --" तमाम दूसरी कहानियों की तरह यह कहानी भी कथानयक द्वारा प्रथम पुरुष में आपबीती की तरह शुरू होती है। कथानायक खुद अपनी आपबीती बताते हए अपने को उजागर करता है। कहानी में घटनायें नहीं, कुछ स्थितियाँ तथा प्रसंग हैं जो निम्न मध्यवर्गीय कथानायक के चरित्र को उसकी भीतरी तह तक जाकर उधार देते हैं। वस्तुतः यह कहानी भी एक त्रासद अनुभव की तरह हमारे सामने आती है, अपनी वर्गीय हैसियत भूलकर अपने से उच्च वर्ग के अनुभव की तरह हमारे सामने आती है, अपनी वर्गीय हैसियत भूलकर अपने से ऊँचे वर्ग से जुड़ने की निम्न मध्य वर्ग की सहज मानसिक रुझान को बेबाक आलोचना के साथ और यही इस कहानी में प्रेमचंद का प्रतिपाद्य भी रहा है।'' 80

82. बासी भात में खुदा का साझा

कहानी का प्रथम प्रकाशन अक्टूबर 1934 को हंस में हुआ था, बाद में मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू मे कहर खुदा का' नाम से जादे राह में संकलित की गई।

कहानी के पात्र दीनानाथ को कई साल से नौकरी न मिली, पर जब मिली तो दीनानाथ समय के बड़े पक्के थे और अच्छा काम भी करते थे। उस समय दीनानाथ की पगार 50 रूपये थी और उनका मान भी था। बॉस भी उनके काम से उन्हें शाबासी देता था पत्नी भी खुश थी और एक

साल के छोटे बच्चे के लिए दूध भी मॅगवाने लगे। एक साल तक दीनानाथ की नौकरी ठीक से चली एक दिन उनका बॉस उन्हें बुलाया और प्यार से मिठाई इत्यादि खिलाकर उनसे कहा कि हमारा एक पत्रक है जो हमारी कम्पनी के फायदे में दिखता है। पर अभी घाटे में है। मैनेजर की राइटिंग तुम्हारी राइटिंग से मिलती है तुम सिर्फ एक दूसरा पन्ना लिख दो बाकी हम देख लेंगे। साहब ने दीनानाथ की पगार 50 से सौ रूपये कर दिया। पहले तो दीनानाथ न माने पर पगार बढ़ने के कारण मान गये। कुछ दिन बाद उनका लड़का बीमार पड़ा, जब वह ठीक हुआ तो स्वयं बीमार पड़ गये और बाद में गौरी उनकी पत्नी बीमार पड़ गई। गौरी ने पचास ब्राह्मणों का व्रत रखा दीनानाथ ने कहा ऐसा नहीं होता क्योंकि वह ईश्वर जो दयालु कहलाता है, वह इस तरह का दंड दे तो उसमें और मनुष्य में क्या अंतर, बासी भात में खुदा का साझा ऐसा जरूरी नहीं है।

83. कैदी

प्रस्तुत कहानी का प्रकाशन केवल हिन्दी में जुलाई 1933 को हंस में हुआ। मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-5 में इसका संकलन किया गया।

कहानी इस प्रकार है। कहानी में आइवन ओखोटस्क और हेलेन दोनों एक दूसरे से प्यार करजते हैं और बहुत जल्द शादी करने वाले थे तभी शहर में रोमनाफा नामक सुबेदार आया जो लोगों को बड़ा परेशान करता था। आइवन एक क्रांतिकारी विचार वाला व्यक्ति था। आइवन और हेलेन ने उसे मारने का प्लान बनाया जिसके तहत हेलेन रोमनाफ को अपने प्यार में फॅसाएगी और एक शाम आइवन उसे बाग में मार देगा है। सब कुछ प्लान के अनुसार चल रहा था कि हेलेन को पता चला कि रोमनाफ इतना बुरा नहीं है नौकरी ने उसे बुरा बना दिया है। अब वह दिन आ गया जिस दिन का इन्तजार दोनों कर रहे थे। पर जब आइवन ने रोमनाफ को गोली मारी तो वह उसे छूकर निकल गई और वह पकड़ा गया। हेलेन को अदालत में आइवन के खिलाफ गवाही देनी पड़ी , जिसके कारण आइवन को 15 साल की सजा हो गई। जब वह आया तो नये जोश और बदले की भावना से हेलेन के घर गया, पर उसका वहॉ जनाजा निकल रहा था। रोमनाफ ने उसे बताया कि वह अंत तक उसे चाहती थी और अपने पाप का प्रायश्चित करना चाहती थी । आइवन दफनाने वाली जगह पर गया और खूब रोया।

2. नारी विमर्श से सम्बन्धित कहानियॉ

वैदिक काल से लेकर आज तक नारी के जीवन में कई उतार-चढ़ाव देखे जा सकते हैं। नारी को कई प्रकार के अत्याचारों को सहना पड़ता है। कभी भी नारी के मान-सम्मान के बारे में ध्यान ही नहीं दिया गया। वास्तव में उनकी हालत एक दासी से ज्यादा नहीं है। बाप की सम्पत्ति में बेटे का हक है लेकिन बेटी का नहीं । शादी के बाद बेटी जब ससुराल जाती है तो ससुराल वाले उसके साथ जैसा चाहें व्यवहार करें, उसकी मान-मर्यादा तक का भी ध्यान नहीं दिया जाता है। नारी का कभी भी स्वतंत्र जीवन नही दिखाई देता है। बचपन में वह माता- पिता एवं भाई पर आश्रित रहती है, युवानी में पति पर और फिर बुढ़ापे में बेटे पर आश्रित हो जाती है। वर्तमान सामाजिक जीवन से यह कथन अक्षरश: सही सिद्ध सही होता है। विवाह प्रणाली इतनी दूषित हो गई है कि जो लोग धनी और समृद्ध हैं, वे विवाह के समय अपने बेटों की मुँह माँगी कीमत वसूलते हैं और जो लोग निर्धन हैं वे अपनी लड़कियाँ बेचने पर मजबूर हो जाते हैं। फिर वंश, गोत्र, जाति-पाति और कुलीन-सुकुलीन के इतने झगड़े हैं कि लड़कियों के लिए उपयुक्त वर मिल पाना कठिन हो जाता है। इसी सन्दर्भ पर विचार करते हुए हंसराज रहबर जी लिखते हैं कि--" मनुष्य असुन्दर और कुरूप हो, वह अपनी सुन्दर और सुशील पत्नी से मनमाना व्यवहार कर सकता है, एक से अधिक पत्नियाँ रख सकता है, वेश्यागमन कर सकता है, सन्तान न हो तो वह उस पर सौत लाकर बिठा सकता है। बुढ़ापे में पत्नी मर जाय तो वह उस पर अपनी पुत्री और पोती सदृश नवयौवना कन्या से विवाह रचा सकता है। लड़की बेचारी बे-सींग की गाय है ; बाप उसे जिसके साथ चाहे पकड़ा दे।'' 81 नारी जीवन पर्यन्त समस्याओं से भरा पड़ा है, उनकी समस्याओं का कोई अंत नहीं है। इसी विषय पर विचार करती हुई डॉ. नूरजहाँ लिखती हैं कि--" नारी जीवन आरम्भ से अन्त तक अनेक समस्याओं से आच्छादित है। उसके पग-पग पर समस्या जटिल रूप में खड़ी है। मानो जन्म ही इन समस्याओं के समाधान करने हेतु हुआ हो। कन्या, पत्नी, वधू ,भगिनी एवं विधवा रूपों में समस्याएँ ही समस्याएँ हैं। जहाँ तक सम्भव है यहाँ नारी जीवन से समबन्धित अधिकांश समस्याओं को लिया गया है। यद्यपि भारतीय नारी त्याग, दया, क्षमा, आदि गुणों का अक्षय भंडार है, परन्तु दैवयोग से उसका प्रत्येक पग बिना समस्या का हल ढूंढ़े आगे नहीं बढ़ने पाता। कहानीकार प्रेमचंद ने नारी जीवन को करीब से देखा है। उसकी जटिलताओं को परखा है। तभी तो सवाभाविक रूप में कहानी में ये समस्याएँ उठायी गयी हैं उनकी प्रत्येक कहानी अत्यन्त स्वाभाविक रूप से विकसित होती दिखती है, तभी कहानी का प्रत्येक पात्र आज भी हमारे समाज में विद्यमान दिखता है। नारी जीवन की समस्याओं और जटिलताओं को आज भी विभिन्न दृष्टिकोण से देखा गया है। उन्होंने अनेक समाधानों की ओर सुझाव भी प्रस्तुत कियें हैं।

कुछ भी हो नारी जीवन की जटिलता आज आधुनिक युग में भी कम नहीं है।'' 82 इसी सन्दर्भ में हंसराज रहवर भी लिखतें हैं कि--" प्रेमचंद अपने उपन्यासों और कहानियों में अक्सर दिखाते हैं कि हिन्दूनारी के मन में जाने अनजाने सतीत्व की रक्षा का परम्परागत संस्कार इतना सुदृढ़ है कि विपरीत परिस्थितियों में भी अडिग रहता है। वह जी जान से उसकी रक्षा करती है। प्रेमचंद के नारी पात्रों को समझने के लिए यह बात महत्वपूर्ण है। विवाह प्रथा नारी को गुलाम बनाती है, तो इसका इलाज उनके विचार में यह नहीं कि नारी अपने सतीत्व को अपने शील को छोड़ दे और पुरुषों की तरह विलासिनी और व्यभिचारिणी बन जाए। उससे बुराई कम नहीं होगी, अनाचार फैलेगा। वे डॉ. इन्द्रनाथ मदान के नाम अपने एक पत्र में लिखतें हैं कि--' मेरी नारी का आदर्श है एक ही स्थान पर त्याग, सेवा और पवित्रता। त्याग बिना फल की आशा के हो, सेवा बिना असन्तोष प्रकट किये हुए और पवित्रता शीखर की पत्नी की भॉंति ऐसी हो, जिसके लिए पछताने की आवश्यकता न हो, प्रेमचंद का यह विश्वास था और यह विश्वास उनके साहित्य का प्राण है।'' 83

प्रेमचंद जी अपनी कहानियों के माध्यम से दिखाते हैं कि स्त्रियॉं ही किसी जाति और समाज की नैतिक और चारित्रिक चेतना की प्रतीक होती है। जब स्त्रियॉं अपने सम्मान और गौरव की रक्षा का प्रयत्न त्यागकर किसी भी परिस्थिति से समझौता करने को तैयार हो जाये तो हमें समझ लेना चाहिए कि उस समाज की जीवनी शक्ति नष्ट हो चुकी है। वह कभी भी विनाश के गर्त में गिर सकता है। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी इसी सन्दर्भ पर अपना विचार प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि--" प्रेमचंद के नारी पात्र भी विविध प्रकार के हैं। शहराती, ग्रामीण, उच्चवर्ग, मध्यवर्ग, निम्नवर्ग, सती-असती, पति का त्याग की शिक्षा देने वाली, सब तरह के नारी पात्र प्रेमचंद की कहानियों मिल जाएंगे। प्रेमचंद ने नारी पात्रों का चित्रण बहुत कुछ उनकी वर्गीय स्थिति को ध्यान में रखकर किया है ; वे मानव स्वभाव बहुत कुछ भैतिक स्थितियों के कारण निर्मित होता है। इसे प्रेमचंद जानते हैं। इसलिए प्रेमचंद के निम्न वर्गीय नारी पात्र प्राय: कामचोर नहीं होते। उनके जीवन-मूल्य भी प्राय: विघटित नहीं मिलते। प्रेमचंद की कहानियों की ऐसी नारियॉं स्थितियों से सीधे टक्कर लेती हैं।'' 84

मैंने यहॉं पर प्रेमचंद की नारी विमर्श से सम्बन्धित कहानियों को चार समस्याओं के अन्तर्गत रखा है। I. वैवाहिक समस्या II. विधवा समस्या III. वेश्या समस्या और IV. कुछ अन्य कहानियॉं भी हैं।

I. वैवाहिक समस्या पर आधारित कहानी

प्रस्तुत समस्या पर आधारित कहानियों में हिन्दू नारी की वैवाहिक समस्या अत्यन्त जटिल है। दहेज प्रथा ने इसे और भी जटिल बना दिया है। हमारे समाज में लड़की का विवाह न टलने वाली बला है। यह वह समस्या है जा बड़े-बड़े हेकड़ों के घमंड चूर कर देता है। दहेज के अभाव में कितनी ही अबलाओं का जीवन दुखी दिखता है। जिसके कारण वैवाहिक असंगतियाँ समाज में अनेक विकृतियों को पनपने का अवसर देती हैं। इस समस्या पर आधारित निम्न कहानियाँ हैं।

1. धर्मसंकट

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में ' निगाहे-नाज' शीर्षक से मई 1913 को जमाना में हुआ था। बाद में प्रेमपच्चीसी में इसका संकलन किया गया। हिन्दी में धर्मसंकट नाम से मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-1 में संकलित है।

इस कहानी के पंडित कैलाशनाथ लखनऊ के सुप्रसिद्ध बैरिस्टर हैं, जो पश्चिमी खयालात के आदमी थे। उनकी बहन कामिनी भी इन्हीं ख्यालों से डूबी हुई थी। थियेटर जाना, रंगमंच पर जाना, जलसों में जाना, सरकस में जाना आदि उनका शौक था। उसका पूरा दिन उसमें ही बीतता था। कामिनी का पति गोपाल नारायण भी इन्हीं आदतों का शिकार था । वह अमेरिका पढ़ने के लिए गया था। कामिनी एक बार जलसे में गई थी वहाँ उसकी मुलाकात रूपचंद से हुई। जो एक शिक्षित एवं आचरण वाला इन्सान था। उसकी पत्नी, और दो बच्चों का उसका भरा-पूरा परिवार था। वह कभी दुराचार नहीं करता था, पर वह कामिनी की नजरों से न बच सका। दोनों में प्रेम हो गया। एक दूसरे को पत्र लिखने लगे। कामिनी रूपचंद को अपना सर्वस्व मानने लगी और एक रात को उनको अपने घर पर बुलाया, कैलाशनाथ को रूपचंद के आने की खबर पड़ गई और उसने उसे बहुत मारा। अदालत में केस चला। लेकिन अदालत में कामिनी ने रूपचंद को पहचानने से इन्कार कर दिया। उस समय कामिनी की आँखे नम थी। पहले तो रूपचंद को गुस्सा आया, परंतु उसकी आँखों को पढ़कर रूपचंद को पता चला कि उसकी लाज मेरे हाथों में है। बस क्या था, रूपचंद ने अपना गुनाह कबूल किया और उसे पाँच साल का कारावास हुआ। सारा शहर यह मानने को तैयार न था कि रूपचंद ने यह किया होगा , लेकिन दूसरी तरफ सबको यह यकीन हो रहा था कि यह सब प्यार के कारण किया होगा।

2. विस्मृति

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी-फरवरी 1915 में मरहम शीर्षक से 'जमाना' में हुआ था। बाद में प्रेमपच्चीसी में इसका संकलन किया गया। हिन्दी में विस्मृति नाम से मानसरोवर, भाग-7 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-1 में संकलित है।

इस कहानी में घनगढ़ नामक गॉव में शानसिंह तथा गुमानसिंह नामक दो भाई रहते थे। उनकी एक बहन थी, दूजी। तीनों कुँवारे थे, शादी करनी थी पर बड़ा छोटे के लिए तथा छोटा बड़े के लिए रुका था। जिसमें समय निकल गया। पचास वर्ष हो गए। दूजी के भाइयों ने दूजी का विवाह करने को सोचा। उसी समय लल्लनसिंह नामक करिन्दा गॉव में नियुक्त हुआ। जो दूजी पर फिदा हो गया और उसे पटाने लगा। जिसके चलते लल्लनसिंह ने उसके भाइयों से दोस्ती की। लल्लनसिंह ने दोनों की शादी करवाने का वायदा किया। भाइयों को लल्लनसिंह पर विश्वास की पट्टी बँध गई। जिसके चलते लल्लनसिंह ने दूजी को अपने जाल में फंसा लिया। जब गॉव वालों को पता चला तो उन्होंने दोनों भाइयों को समझाया और क्रोध में आकर लल्लनसिंह को मार डाला। दूजी ये बात जानती थी। केस अदालत में चला जिसके इन्चार्ज कुंवर विनय कृष्ण थे। किसी को पता न था कि खुन किसने किया पर दूजी ने अदालत में आकर सारा सच बता दिया। जिससे दोनों भाइयों 14 साल का सजा हो गई। कुछ पुराने खयालात वालों ने दूजी को कोसा तो नयी खयालात के लोगों ने उसकी सराहना की। 14 साल तक दूजी गॉव में न गई, वह सरयू नदी के किनारे एक गुफा में अपना समय रो-रोकर बिताने लगी। वह पत्थर के ढेर से भाइयों के छूटने का इन्तजार करने लगी। 14 साल के बाद वह कुंवर विनयकृष्ण के माध्यम से दोनों भाइयों को लेने के लिए कलकत्ता पहुॅची। कुंवर विनयकृष्ण को दूजी से उसी दिन से सहानुभूति हो गई थी। वे उसे चाहने लगे थे। दूजी के जरने के बाद उन्होंने उसे बहुत ढूँढ़ा पर वह न मिली। दोनों भाई जहाज से आए वे बहुत कमजोर हो गये थे। दूजी ने उन्हें देखा और वह उनके पैरों पर गिर पड़ी और तीनों एक दूसरे से लिपटकर खूब रोए। वे वहॉ से गंगा स्नान के लिए गए पर जब दूजी को पता चला कि कुंवरसाहब ने उन्हें सब कुछ बता दिया तो वह शायद गंगा में डूब गई और वह न मिली। दोनों भाई गॉव गए और आज भी वे उस गुफा में जाकर दूजी को याद करके बराबर रोते हैं। कुंवरजी अब रिटायर होकर चित्रकूट में रहने लगे।

3. सज्जनता का दंड

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मार्च 1916 में सरस्वती में हुआ था। बाद में मानसरोवर, भाग-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-1 में इसका संकलन भी किया गया। उर्दू में किसी अज्ञात पत्रिका में ' नेकी की सजा' नाम से नवम्बर 1916 में प्रकाशित हुआ था।

कहानी का मुख्य पात्र सरदार शिवसिंह ईमानदार और सच्चाई की राह पर चलने वाला है। जो कि कभी भी रिश्वत, कमीशन आदि नहीं लेते थे। उनके परिवार में दो भाई, विधवा मॉ और एक बहन तथा पत्नी और एक बच्ची थी। उन सबके निर्वाह करने के कारण उनके पास कुछ भी न बचता था। वे खुद कमीशन नहीं खाते थे और न दूसरों को खाने देते थे। जिसके कारण गॉव के ठाकुर और ठेकेदार सब उनसे नाराज रहते थे। यहॉं तक कि उनकी पत्नी रमा भी उनसे नाखुश रहती थी। उनकी पत्नी उन्हें बार-बार समझाती थी पर व अपना विचार न बदलते थे। उस पर भी जब गॉव का रास्ता एक साल में न बना तो उन्होंने सबको डाटा ठेकेदारों ने उन्हें भला बुरा कहा। सरदार शिवसिंह की बेटी का विवाह एक वकील से तय हुआ, पर उनकी ईमानदारी की बात जानकर ससुराल वालों ने उनसे पॉच हजार रूपये मॉगे। यह सुनकर पहले तो सरदार का मन डोला पर बाद में अपनी ईमानदारी पर कायम रहे। इसी बीच बड़े इन्जीनियर साहब आए और उन्होंने एकाउन्ट अस्तव्यस्त काम अधूरा तथा ठाकुरों की फरियाद सुनी। उन्हें पता था कि शिवसिंह एक सच्चा ईमानदार आदमी है, लेकिन इस ईमानदारी से कोई लाभ न मिलने के कारण उन्होंने उनका ट्रान्सफर एक छोटे से गॉव में करवा दिया और उनका ओहदा भी कम कर दिया। जिसके कारण सरदार शिवसिंह बड़े दुखी हुए। उनकी पत्नी रमा ने उन्हें संभाला तथा कहा कि यह तो आपकी सज्जनता का दंड है, जिसे आपको हॅसते-हॅसते स्वीकार करना चाहिए। इसी सन्दर्भ में रामदीन गुप्त कहतें हैं कि " रिश्वत आज के सरकारी विभागों के जीवन का एक अनिवार्य और अविच्छेय अंग बन गई है। उसने अनके रूप धारण कर लिए हैं। कहीं वह दस्तूरी के रूप में प्रचलित है और कहीं कमीशन के रूप में तों कहीं डालियों के रूप में। कहानी के अंत में विचारशील पाठक के मन में उस समाज और शासन-व्यवस्था के प्रति जिसका इस सीमा तक पतन हो गया है कि उसमें एक ईमानदार आदमी को अपनी ईमानदारी की रक्षा के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है बरबस एक आक्रोश की भावना उत्पन्न हुए बिना नहीं रहती। स्पष्ट है कि इस कहानी के द्वारा प्रेमचंद ने तत्कालीन शासन-व्यवस्था पर आधार किया है। 85

4. सौत--1

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में दिसम्बर 1915 में सरस्वती में प्रकाशित हुई तथा बाद में मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-1 में इसका संकलन किया गया। यह प्रेमचंद की प्रथम कहानी है। उर्दू में प्रेमबत्तीसी में इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी में देवदत्त और उनकी पत्नी गोदावरी की बात की गई हैं। काफी समय व्यतीत हो जाने पर भी दोनों को संतान सुख न मिल सका। मां-बाप जीवित थे, उन्होंने देवदत्त को दूसरी शादी करने की सलाह दी। देवदत्त गोदावरी से बहुत प्यार करते थे। बहुत दवा दारू के बाद भी जब उन दोनों के कोई सन्तान न हुई तो गोदावरी ने जबरदस्ती गोमती नाम की लड़की के साथ देवदत्त की दूसरी शादी करवा दी। गोमती के लिए गोदावरी ने गहने कपड़े सब कुछ कुर्बान कर दिया। उसने उसको बहू की तरह रखा वह भूल गई कि वह उसकी सास नहीं है। धीरे-धीरे गोदावरी के स्वभाव में परिवर्तन आने लगा। वह चिड़चिड़ी हो गई थी। गोमती को गालियॉ देती, पंडित देवदत्त भी गोदावरी से परेशान हो गयो, उसकी जिम्मेदारियों से भी उदासीन रहने लगे। वे मजबूर थे इसलिए कुछ कर न पाते थे। गोमती और गोदावरी में ईर्ष्या भाव बढ़ता गया। गोमती भी बहू की तरह गोदावरी को ताने मारती। गोदावरी ने घर की जिम्मेदारियॉं छोड़ दी, जन्माष्टमी को जो निर्जला व्रत करती थी अब वह फलाहार करने लगी। आखिर एक दिन गोदावरी उस घर से ऊब गई और गंगा की गोद में समा गई और जाते समय पत्र लिखकर गई कि वह अपनी जान देवदत्त के नाम न्योछावर करने गई है। यह पढ़कर देवदत्त वहीं मूर्छित हो गये और गोमती रोने लगी।

5. गृहदाह

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जून 1923 को श्री शारदा में हुआ था तथा मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-2 में संकलित किया गया।

इस कहानी में सत्यप्रकाश एक रूपवान, चतुर और गुणवान लड़का था। देवप्रकाश और उसकी पत्नी निर्मला उसका बहुत ख्याल रखते थे। एक बार देवप्रकाश और निर्मला गंगा स्नान करने गए और निर्मला वहॉं डूब कर मर गई। तब से सत्यप्रकाश उदास एवं एकांतवासी बन गया। दो महीने के बाद सत्यप्रकाश के लिए नयी मॉं आई, जिसका नाम देवप्रिया था और उसे सत्यप्रकाश एक ऑंख भी न भाता था। वह उसे मारती, पीटती, गालियॉं देती यहॉं तक कि पुत्र जन्म के बाद तो उसकी पढ़ाई भी छुड़वा दी। उसके खिलाफ देवप्रकाश को भड़काती। जिसके कारण सत्यप्रकाश चोरी आदि करने लगा। और वह सोलह वर्ष की आयु में ही घर छोड़कर कल्कत्ता चला गया और वहॉं डाकखाने के पास खत लिखकर कमाने लगा। सत्यप्रकाश और ज्ञानप्रकाश में गाढ़ी मित्रता थी। सत्यप्रकाश उसे पत्र भेजता

जिसके साथ में उसके लिए उपहार भी भेजता। देवप्रिया ज्ञानप्रकाश की शादी करवाना चाहती थी पर ज्ञानप्रकाश पहले बड़े भाई की शादी करवाना चाहता था, जिस पर सत्यप्रकाश ने मना किया। देवप्रिया उसे कोसने लगी और गालियॉ भरे पत्र लिखने लगी। ज्ञानप्रकाश को शिक्षक की नौकरी मिल गई जिसके कारण वह भाई को पत्र न लिख पाता इसलिए सत्यप्रकाश को लगा कि भाई निष्ठुर हो गया है, जिसमें देवप्रिया के खतों ने आग में घी का काम किया। अब सत्यप्रकाश घर पर ही अपनी मॉं को याद करके रोता रहता। कई दिन बाद ज्ञानप्रकाश उससे मिलने कलकत्ता गया। दोनों भाई एक दूसरे को देखकर रोए तथा ज्ञानप्रकाश ने अपनी मॉं की मौत एवं पिता के अस्पताल में होने की बात बताई और दोनों भाई तीसरे ही दिन कलकत्ता छोड़कर घर चले गये।

6. त्यागी का प्रेम

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1921 को मर्यादा में हुआ था तथा मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-2 में संकलित है। उर्दू में 'फिलसफी की मुहब्बत' शीर्षक से ख्वाबोखयाल में संकलित है।

इस कहानी के लाला गोपीनाथ दार्शनिक विचारधारा के व्यक्ति थे, जिसके कारण पढ़ाई न करके वे जनसेवा करके एक बड़े नेता बने। उन्होंने शादी नहीं की वे औरत को पनौती समझते थे। उनके नाम की कई संस्थाएँ चली और वे अमीरों से पैसा इकट्ठा करते। उन्होंने एक स्कूल खोली जहॉं उन्होंने एक विधवा गुजराती शिक्षिका आन्दीबाई को दिल्ली से बुलवाया। आन्दीबाई के आने के बाद मदरसा खूब चली। जिसमें गोपीनाथ और आनंदीबाई नजदीक आए। जब वे दोनों की बातें शहर में फैलने लगी तो गोपीनाथ रात को मदरसा में आने लगे। गोपीनाथ को आनंदीबाई के साथ स्वगीर्य सुख मिलता था। एक बार आनंदीबाई के बीमार की बदनामी होने पर गोपीनाथ अपनी प्रतिष्ठा को बचाने के लिए आनंदीबाई की बदनामी करने लगे। अब दोनों एक दूसरे के बारे में बुरा बोलते थे। आनंदी को वह जगह छोड़नी थी पर न छोड़ सकी। गोपीनाथ ने उसे मथुरा जाने को कहा पर वह न गई। आनंदीबाई ने वहॉं से जाने का निश्चय किया पर उसी रात उसे प्रसव वेदना उठी और उसने एक बच्चे को जन्म दिया। शहर में बड़ी बदनामी हुई । आनंदी को स्कूल से निकाल दिया गया। गोपीनाथ ने दो महीने तक उसकी खबर न ली। मॉं-बेटे की बड़ी दुर्दशा थी पर गोपीनाथ उन्हें देखने न गया। आखिरकार एक दिन गोपीनाथ ने रात को आनंदी से माफी मॉंगी। आज पंद्रह साल हो गये रोज रात को आनंदी और गोपीनाथ एक साथ बैठते हैं। सारे शहर में सब गोपीनाथ को दुत्कारतें हैं और आनंदी को दया की नजरों से देखते हैं।

7. एक आँच की कसर

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में अगस्त 1924 को चांद में हुइा था तथा बाद में मानसरोवर-3 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-3 में इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी के पात्र यशोदानंद दहेज के खिलाफ थे, इसलिए सारे शहर में उनका नाम मशहूर था। इतना ही नहीं उन्होंने अपने बड़े बेटे की शादी में दहेज न लेने का निर्णय किया। आज उनके बड़े बेटे की शादी थी और सारा शहर उनकी प्रशंसा कर रहा था। तिलक के लिए शाहजहाँपुर से महाशय स्वामीदयाल आने वाले थे। तिलक के समय लोगों ने महाशय यशोदानंद की बड़ी प्रशंसा की। यशोदानन्द ने वहाँ दहेज पर एक भाषण दिया और बाद में छोटे बेठे परमानन्द को भाषण देने के लिए बुलाया गया। परमानन्द ने खत पढ़ना शुरू किया। यह वह खत था जो महाशय यशोदानन्द ने महाशय स्वामीदयाल को लिखा था। इस खत में यह था कि महाशय स्वामीदयाल समाज के सामने यह बताये कि यशोदानन्दन ने दहेज नहीं लिया। पर वे 25 हजार के बदले 20 हजार दहेज लेगें। परमानन्द के मुख से यह सुनकर सब लोग चौंक गये। यशोदानंद बेटे पर गुस्सा हुए क्योंकि उसने मेज के ऊपर के कागज के बदले अन्दर का कागज लेकर पढ़ा था पर तब तक उनका नाम डूब चुका था, समाज में उनकी बदनामी हो गयी थी।

8. उद्धार

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में सितम्बर 1924 को चांद में हुआ था तथा बाद में मानसरोवर-3 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-3 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी के पात्र मुंशी गुलजारी लाल वकील थे। उनकी बड़ी बेटी अम्बा बड़ी हो गई थी। मुंशीजी वकील होने पर भी पैसा न जोड़ सके थे और दहेज न जुटा पाये थे। उस समय दहेज प्रथा बड़ी खराब प्रथा थी। इसी सन्दर्भ में रामदीन गुप्त कहते हैं कि--''नि:सन्देह हिन्दू वैवाहिक प्रथा आज इतनी भ्रष्ट और दूषित हो चुकी है कि साधारण सुधारों से अब उसका जीर्णोद्धार संभव नहीं रह गया है। यह कहना संभवत: उचित होगा कि केवल दहेज की प्रथा ही वह कारण है जिसकी वजह से सात पुत्रों के बाद उत्पन्न होने वाली कन्या का भी सहर्ष स्वागत नहीं किया जाता। इसका मूल कारण वह सामन्ती व्यवस्था है, जिसमें स्त्री का समाज के प्रति एक उपयोगी (आर्थिक दृष्टि से भी) और आवश्यक सदस्य (ईकाई) में कोई महत्व नहीं है। स्पष्ट है कि जब तक स्त्रियों के संबंध में वर्तमान सामन्ती दृष्टिकोण में आमूल परिवर्तन नहीं होता, तब तक कन्या के जन्म को इसी तरह अशुभ और अनिष्टकारी समझा जाता रहेगा।'' 86

मुंशी जी अंबा के लिए बाबू दरबारी लाल के पुत्र हजारीलाल को चुना पर हजारीलाल ने शादी से इन्कार कर दिया क्योंकि वह क्षय रोग का रोगी था। उन्होंने अपने मॉं-बाप और मुन्शी जी को भी यह बात बताई एवं शादी रोकने को कहा, पर उसने यह सब हजारीलाल का बहाना माना और वह शादी की तैयारी करने लगे। हजारीलाल अंबा की जिंदगी बचाने के लिए उसी दिन घर छोड़कर चले गये जिस दिन उसकी बारात निकलने वाली थी। कई हप्तों बाद छावनी रेलवे स्टेशन के पास कुछ हड्डिया मिलीं सब मान गये कि वह हजारीलाल की थी। भादों के महीने की तीज के दिन अंबा नहाकर तुलसी को पानी डाल रही थी, तब उसके पति ने मुंशी दरबारीलाल का खत एक पार्सल आने की सुचना दी। अम्बा ने खत देखा जिसमें हजारीलाल का खत का नाम था। वे और उसका पति दोनों उसे देवता मानने लगे।

9. भूत

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में अगस्त 1924 को 'माधुरी' में हुआ और पुन: जुलाई 1929 को भारतेन्दु में प्रकाशित हुई। बाद में मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-3 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में 1930 को रियासत में प्रकाशित हुई तथा फिरदौसे खयाल में संकलित है।

इस कहानी के पंडित रतिनाथ चौबे , जो पिछले तीस सालों से मुरादाबाद में वकील थे, पर उनका बचपन बड़े कष्टों में गुजरा था। बचपन में ही उनके पिता का देहान्त हो गया था। उनकी मॉं ने उन्हें बड़े कष्टों में पाला था पर कुछ दिन बाद वे भी गुजर गयी। उन्होंने सबसे पहले 15 रूपये मासिक पगार में नौकरी प्रारम्भ की और बाद में एक हजार मासिक हो गयी। पंडित जी की शादी मंगला नामक लड़की से होती है, जो बड़ी कार्यकुशल और पतिव्रत धर्म का पालन करने वाली थी। उन्हें केवल गहनों का शौक था और पंडितजी को गहने पहनाने का व्यसन। दोनों के चार बेटे और हैं और बेटी थी पर वह मर गयी । बेटी की लालसा होने की वजह से मंगला अपनी सौतेली बहन, जो चार साल की है उसे घर लाई। पंडित जी और मंगला ने उसे बड़े लाड-प्यार से पाला। आज बिन्नी बड़ी, खूबसूरत और होशियार हो गई और उसका विवाह भी तय किया गया। बिन्नी के ब्याह के एक हप्ते पहले मंगला मर गई तथा ये वादा भी लेती गई की बिन्नी की शादी इसी साल होगी। मंगला के मरने के बाद बिन्नी पंडितजी का ज्यादा ख्याल रखती और पंडितजी ने उसकी सेवा को कुदृष्टि से देखा। बिन्नी की मॉं ने अपने बेटों को पालने के लिए बिन्नी की शादी पंडितजी से तय की और अपनी मुराद पूरी की। बिन्नी शादी से खुश न थी पर मन मार कर उसने शादी की

लेकिन शादी की रात जब पंडित जी बिन्नी को बुलाते हैं तों उन्हें मंगला नजर आती और वह कहती है कि बिन्नी उसकी बेटी है। पंडित मरदाने कमरे में पहुँचकर बेहोश हो जाते हैं, जबकि बिन्नी ड्योढ़ी पर चौखट से बाहर गिर पड़ती है।

10. स्वर्ग की देवी

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में सितम्बर 1925 को चांद में हुआ । बाद में मानसरोवर-3 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-3 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'जन्न्त की देवी' नाम से प्रेमपच्चीसी में प्रकाशित हुई।

इस कहानी के पात्र बाबू भारतदास की पुत्री लीला पढ़ी लिखी एवं स्वतंत्र लड़की थी। पर उसके योग्य वर ढूँढ़ने वर भी योग्य वर न मिला। बाबू भारतदास ने लीला का ब्याह लाला सन्तसरन के बेटे सीतासरन से करवाया। सीतासरन पुराने ख्यालों के आदमी थे। वह स्त्री को घर की चहरदीवारी में रखना पसंद करते थे। लीला के सास-ससुर उसे डाटते रहते। वह दिन-ब-दिन घुलती जाती थी। पांच साल में उसे एक बेटा और एक बेटी हुई। वे भी सास-ससुर की तरह जिद्दी थे। गर्मियों में आम और खरबूजे खाते और एक वक्त का खाना खाते। लीला रोकना चाहती थी पर सास-ससुर भी बच्चों का पक्ष लेते। एक दिन ससुर जी के पेट में दर्द हुआ और वे मर गये। सुबह सास मर गई, दो दिन बाद बच्चे मर गये। अब पति-पत्नी अकेले बैठे बच्चों का शोक मनाते रहे। पति ने सैर सपाटे में दिल लगाया पर लीला रोती रही, पर जब उसने अपने पति को किसी और के हाथों में देखा तो अपना गम भूलकर पति को रिझाने लगी। तब से सीतासरन अपनी बीबी लीला को ही देखता और किसी को नहीं ।

11. एक्ट्रेस

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में अक्टूबर 1927 को माधुरी में हुआ तथा बाद में मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-3 में भी इसका संकलन किया गया।

कहानी की तारादेवी 15 साल से एक्टिंग कर रही थी और लोग उन पर अपनी जान निछावर करते थे। अब उनकी उम्र भी ज्यादा हो गई थी। उनके आशिकों में एक थे कुँवर निर्मलकांत चौधरी, जो बड़े सेठ थे एवं युवान भी थे उनको देखकर तारा भी मुग्ध हो गई। कुँवर ने दाई के हाथ तारा देवी के लिए एक हार भिजवाया। दूसरे दिन वही हार पहनकर तारा देवी सज-धजकर आयी। दोनों में प्रीति हो गई एक महीने के बाद तारा उनसे विवाह की बात सुनना चाहती थी। कुँवर उस पर सारी दौलत निछावर कर रहे थे। कुँवर के मित्र कुँवर को तारा के चंगुल में से बचाना चाहते थे। आखिर

एक दिन कुंवर ने तारा से शादी की बात की। तारा कुँवर से काफी बड़ी लड़की थी और उनसे शादी करके कतराती थी, इसलिए एक खत लिखा। उस खत में तारा ने कुँवर को कहा कि वह केवल उनका दिया हुआ पहला तोहफा अपने पास रखकर बाकी के तोहफे लौटा रही है, जो वह उनकी नववधू को दे तथा वह उसे ढूँढ़ने की कोशिश न करे वह तब तक वापस नहीं आएगी जब तक कुँवर शादी नहीं कर लेते।

12. विद्रोही

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1928 को माधुरी में हुआ और बाद में मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-4 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में खान-ए-बरबाद नाम से प्रेमचालीसी में संकलित है।

इस कहानी के पात्र कृष्णा की मॉ बचपन में ही मर गयी थी। उसके पिता आगरे में डॉक्टर थे इसलिए चाचा-चाची जिसका कोई वारिस न था, उन्होंने उसे पाल-पोसकर बड़ा किया। कृष्णा को पड़ोस की एक तारा नाम की लड़की से प्यार हो जाता है। दोनो परिवार के लोग भी बचपन में ही रिश्ता तय कर लेते है। पढ़ाई पूरी करने के बाद कृष्णा को फौज में नौकरी मिल जाती है। तभी एक बार शहर के बड़े रईस रायसाहब सीताराम ने कृष्णा के चाचा के को आठ हजार दहेज देकर अपनी बेटी से कृष्णा का रिश्ता तय कर दिया। चाचा ने तारा के पिता विमल बाबू से रिश्ता तोड़ दिया। जब कृष्णा को इस बात का पता चला तो उसने अपने पिता को अपने दिल का हाल सुनाया, पर पिताजी ने चाचा के विरुद्ध जाने से मना किया। कृष्णा वापस देहरादून चला गया। जहॉ उसे एक हप्ते के बाद पता चला कि तारा की शादी हो रही है। वह कमान्डर की मर्जी के खिलाफ लखनऊ गया और तारा की शादी देखी। कृष्णा का कोटमार्शल हो गया था। अब वह दर-दर भटककर अपना पेट पालता था। तीन साल के बाद चह तारा के पति के आग्रह पर उनके घर गया। वह खुश थी। तारा के पति को सब कुछ पता था। कृष्णा अब मारा-मारा फिरता था।

13. अग्नि समाधी

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जनवरी 1928 को विशाल भारत में हुआ और बाद में मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'मजारे आतिश' शीर्षक से 'खाके परवाना' में संकलित की गई।

इस कहानी के प्रमुख पात्र पयाग हैं जो पुलिस स्टेशन में कभी जाकर सफाई करके पैसे कमाता है, वरना कोई काम न करता, साधु लोगों की संगति में आकर चरस आदि की आदी हो गया था।

उसकी पत्नी रुक्मिन काम करती और वह पत्नी की कमाई पर ऐश करता। एक बार रुक्मिन ने प्रयाग को पैसे दिए पर उलाहना भी दी। जिस पर वह घर छोड़कर चला गया और तीन दिन बाद रुक्मिन की सौत सिलिया को लाया। रुक्मिन मरजाद रखने के लिए दो महीने तक उसे काम नहीं करने देती है, पर जब सिलिया ने देखा कि जो कमाता है घर में उसका ही राज है। तो उसने आप काम करना शुरू किया। वह सुबह से जल्दी उठती और लोगों के गेहूँ पीसती, घास छीलती और उपले भी बनाकर बेचती जिससे वह अच्छा कमाती। यह देखकर न केवल रुक्मिन को बल्कि पड़ोसियों को भी उससे जलन होती हैं। एक बार रुक्मिन ने सिलिया की कुछ घास पड़ोस में छिपा दिया, जिस पर उसने बखेड़ा खड़ा कर दिया और रात को पयाग से पिटवाया। रुक्मिन उसी रात घर छोड़कर चली गई । पयाग चैत माह होने के कारण दूसरों के खेतों की रखवाली करने गया। जहॉ उसने देखा कि आग लगी हुई है। उसने आग वाले मड़ैये को अपने सर पर उठा लिया, जिसमें वह खूब जल गया। रुक्मिन ने जब पयाग को आग में झुलसते देखा तो उसने वह आग वाली मड़ैया अपने सिर पर ले ली और पानी में कूद पड़ी जहॉ वह मर गई। कुछ हप्ते बाद पयाग भी मर गया।

14. सोहाग का शव

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जुलाई 1928 को माधुरी में हुआ और बाद में मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-4 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'सुहागन का जनाजा' शीर्षक से प्रेमचालीसी में संकलित की गई।

कहानी के पात्र केशव ने एम.ए. करने के बाद सुभद्रा से शादी की और उसे दिलोजान से चाहने लगे पर जब उसे स्कालरशिप मिली तो सुभद्रा के आग्रह पर वह यूरोप पढ़ने चला गया। छ महीने तक बराबर चिट्ठियॉ आईं पर बाद में चिट्ठी का आना बन्द हो गया। सुभद्रा से न रहा गया तब वह यूरोप केशव बिना को बताए गयी, वहॉ जाकर उसने देखा कि वह एक युवती जो काली है पर मीठा बोलती है, उसने सुभद्रा के बारे में गलत एवं झूठा बोलकर कि वह अनपढ़ है एवं उसने जबरदस्ती शादी की है और उसके लायक न होने का यकीन दिलाकर शादी करने जा रहा था। सुभद्रा वहॉ केशव के घर से थोड़ी दूर एक घर में रहती और कपड़े सिलकर और हिन्दी सिखाकर गुजारा चलाती थी। जब उसे पता चला कि उसकी शादी हो रही है तो शादी के अगले दिन सुभद्रा उस युवती को अपने सारे गहने पहनाकर केशव के पास भेज देती है, पर जब केशव सुभद्रा से मिलने गया तो उसे सिर्फ एक पार्सल मिला। जिसमें सुभद्रा की सुहाग की साड़ी तथा केशव की फोटो मिली, जिसे उसने केशव को नदी में बहाने को कहा था। केशव खूब रोया। इसी सन्दर्भ में रामदीन गुप्त लिखते

हैं कि-- " 'सोहाग का शव' की नायिका सुभद्रा के रूप में प्रेमचंद ने एक साहसी, निर्भीक और विद्रोहिणी नारी की अवतारणा की हैं। पुरुष-प्रधान सामन्ती समाज-व्यवस्था में स्त्री घर की लक्ष्मी अर्थात सम्पत्ति मानी जाती है , अत: उस पर जन्म पर्यन्त और मृत्यु के पश्चाात् भी एक ही व्यक्ति का एक ही परिवार का एकाधिकार रहता है। भारतीय संस्कृति में स्त्री की पवित्रता पर निरन्तर इतना अधिक बल दिया गया है कि हमारे यहॉं यह कल्पना भी नहीं की जा सकती कि स्त्री एक पुरुष को छोड़कर किसी अन्य पुरुष के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित करे। स्त्री की पवित्रता पर इतना अधिक बल दिए जाने के कारण ही संस्कृति में विवाह को एक सामाजिक समझौता जो आवश्यकता पड़ने पर तोड़ा जा सके न मानकर एक धार्मिक गठबंधन-जो किसी भी परिस्थिति और अवस्था में न तोड़ा जा सके-माना जाता है। प्रेमचन्द विवाह को धार्मिक बंधन नहीं मानते थे, किन्तु साथ ही स्त्री की पवित्रता का प्राचीन भारतीय आर्दश भी उन्हें अस्वीकार्य नहीं था। यही कारण है कि विवाह को सामाजिक समझौता मानने के पक्ष में होते हुए भी प्रेमचंद तलाक का अधिकार दिए जाने के पक्ष में नहीं थे।'' 87

15. नया विवाह

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मई 1932 को सरस्वती में हुआ और बाद में मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'नयी बीबी' शीर्षक से वारदात में संकलित की गई।

इस कहानी के लाला डंगामल एक दुकानदार थे, उनकी पहली पत्नी का नाम लीला था, उसकी सारी सन्तानें मर गयी और अब उम्र भी हो गई थी इसलिए लाला दुकान पर ज्यादा रहते थे। लीला बहुत मिन्नतें करती पर वे न आते। एक बार लीला को ज्वर आया और वह मर गई। थोड़े समय के बाद लाला ने दूसरी शादी आशा नाम की लड़की से की, जो उससे उम्र में काफी छोटी थी। आशा उससे मन न जोड़ पाई। आशा रूपवती थी इसलिए लाला उस पर लट्टू था। उसके लिए कई उपहार लाता पर वह लाला से मन न जोड़ पाई। वह बस उसके लिए खाना बनाती। वह सजती-संवरती नहीं। उनके घर में एक पंडित था, जो वहॉं खाना बनाता था। एक बार वह बीमार हो गया और उसने अपने बेटे जुगल को वहॉं खाना बनाने के लिए भेजा। जुगल खाना बनाना नहीं जानता था, इसलिए आशा उसे खाना बनाना सिखाती। आशा को उससे बात करना पसंद आता था। उसके कहने पर वह सजने-सॅवरने लगी, जब उसने कहा कि उसे अगर उनके जैसी लड़की मिलेगी तो वह शादी करेगा तो वह फूली न समायी।

16. मृतक भोज

कहानी का मूल स्रोत अज्ञात है। हिन्दी में 1932 को 'प्रेरणा' तथा अन्य कहानियों के प्रथम संस्करण में संकलित है। मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-5 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'जादे राह' शीर्षक से जादे राह में संकलित की गई।

प्रस्तुत कहानी के सेठ रमानाथ की मृत्यु हो गई और उनकी बीमारी में सारा पैसा चला गया। अब उनकी पत्नी सुशीला और बच्चे मोहन और रेवती उनका अंतिम संस्कार तो करते हैं पर दूसरी विधि वे नहीं करना चाहते हैं, पर गांव के पंच, सेठ धनीराम, कुबेरदास, भीमचन्द दुर्बलदास, चोखेलाल ने सुशीला के आखिरी सहारे उनके घर को बेच दिया और गहने भी बेचकर बीस हजार कुबेरदास को उधार चुकाकर बाकी के पैसों को ब्राह्मणों एवं गॉववालों को भोज करवाकर बाकी की विधि पूर्ण की। सुशीला एवं उसके भाई संतलाल ने उसका विरोध किया पर उनको बिरादरी के बाहर कर देने की धमकी देकर उनको चुप कर दिया जाता है। अब सुशीला, मोहन और रेवती के साथ दस रूपये महीने पर झाबरमल के घर रहने लगी, पर तीन महीने तक भाड़ा न देने पर वह चिल्लाने लगा और आखिर रेवती से शादी का प्रस्ताव रखा। जिस पर सुशीला ने मना किया, क्योंकि उस समय झाबरमल 40 साल का था और रेवती 16 साल की थी। इस पर झाबरमल ने उसे अपने घर में से निकाल दिया। तब वहॉ पर एक वृद्धा जो सब्जी बेचने आती थी, उसने सुशीला को रखा। थोड़े दिन के बाद मोहन को ज्वर हुआ जो उतरने का नाम नहीं लेता था, सुशीला ने मोहन के इर्द-गिर्द सात चक्कर लगाया और ज्वर अपने सर पर ले लिया और वह मर गई। पंचो ने रेवती की शादी झाबरमल से तय कर दी। जिसमें उसके मामा भी कुछ नहीं कर पाये। इस पर रेवती ने गंगा में डूबकर जान दे दी। इधर पंचों पर कोई असर न हुआ, पर वहॉ मोहन तथा वृद्धा रो-रोकर बेहाल हो गये। इसी सन्दर्भ में रामविलास शर्मा कहते हें कि--" मृतक भोज जैसी कहानियों में प्रेमचंद ने समाज में प्रचलित कुरीतियों की धज्जियॉ उड़ाई हैं और दिखलाया है कि इनमें साधारण लोगों को कितना नुकसान होता है। साथ ही धार्मिक अन्ध विश्वासों से पंडे पुरोहित किस तरह लाभ उठाते हैं, यह भी वे अच्छी तरह स्पष्ट कर देते हैं।'' 88

17. कायर

कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जनवरी 1933 को विशाल भारत में हुआ था और बाद में मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-5 में भी इसका संकलन किया गया।

कहानी के सन्दर्भ में डॉ. रामवृक्ष कहते हैं कि--" इस कहानी में प्रेमचंद ने प्रेम संबंधी नये विचारों की कमजोरी का मखौल उड़ाया है। उन्होंने उन विचाारों में निहित विकासमान शक्ति को न पहचान कर, उपलब्ध शक्ति की जॉच की और फलत: नये विचारों के नायक को कायर पाया। पुराने विचारों और संस्कारों के पीछे परंपरा की सुदृढ़ जमीन होती है, अत: उसमें आरंभ में शक्ति ज्यादा होती ही है।'' 89

इस कहानी का पात्र केशव ब्राह्मण का पुत्र था तथा प्रेमा बनिये की लड़की थी। दोनों कालेज में साथ पढ़ते थे और दोनों एक दूसरे को प्यार करते थे। केशव नये खयालातों का आदमी था और प्रेमा पुराने खयालातों की, इसलिए प्रेमा केशव से शादी करने से मना करती थी। केशव नहीं मानता था। उन्हीं दिनों प्रेमा के पिता ने एक लड़के की तस्वीर उसे दिखाई जो आई. एस. आफीसर था, तभी प्रेमा ने अपने पिता को सारी सच्चाई बताई पहले तो प्रेमा के पिता बड़े नाराज़ हुए पर बाद में केशव के पिता से मिलने गये। लेकिन केशव के पिता ने न केवल प्रेमा के पिता की बेइज्जती की पर हिदायत भी दी कि अगर केशव प्रेमा से शादी करेगा तो वह उसे अपनी जायदाद में से निकाल देगा। केशव घबरा जाता है, इसलिए प्रेमा के खत पर भी वह उससे मिलने न गया, और खत लिखकर उसे बताया कि वह उससे शादी नहीं कर पायेगा। प्रेमा खत पढ़कर उस रात खूब रोई तथा प्यानों पर गाते-बजाते वहीं सो गई। सुबह जब देखा गया तो उसकी लाश पड़ी थी। इस कहानी के सन्दर्भ में शिवकुमार मिश्र जी का कहना है कि--" एक भिन्न मिजाज की कहानी है, यह परन्तु इसके केन्द्र में भी एक स्त्री ही है, युवती स्त्री अपने प्राणों की बलि देकर भी जो सच्चे प्रेम की मर्यादा तथा महत्व को कायम रखती है, एक वीर बाला के रूप में सामने आती है।'' 90

18. मिस पद्मा

कहानी का मूल स्रोत अज्ञात है। पर उर्दू में 1936 को 'जादे राह' के प्रथम संस्करण में इसका संकलन मिलता है। हिन्दी में मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-5 में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी की मिस पद्मा एक प्रतिष्ठित वकील थी, उसके पास धन, दौलत, यौवन सब कुछ था। उसने शादी नहीं की थी क्योंकि उसे मन पसंद कोई इन्सान नहीं मिला था। जिसे वह दिल से प्यार करे। उसी समय मि. प्रसाद जो कालेज में प्रोफसर थे, वे उनके आशिक हो गये। एक बार मि. प्रसाद और मिस पद्मा से मुलाकात हो गई जो आगे बढ़ती गई और मिस पद्मा उनके चुंगल में फॅस गई। मिस पद्मा उन्हें अपने पास रखना चाहती थी और उन्हें अपने घर पर रखने के लिए कहती हैं

लेकिन मि. प्रसाद स्वछंद रहना चाहते थे, इसलिए वे मिस पद्मा को मना करते हैं। इस पर मिस. पद्मा अपना सब कुछ उनके नाम कर देती हैं ताकि उन्हें कुछ मॉगना न पड़े। मिस पद्मा और मि. प्रसाद दोनों शादी कर लेते हैं। मि. प्रसाद को मिस पद्मा से नहीं उनकी दौलत से प्यार था। थोड़े समय तक दोनों की जिन्दगी अच्छी चली लेकिन बाद में मि. प्रसाद दिन-दिन गयाब रहने लगे, पैसों को पानी की तरह बहाने लगे। पद्मा से कोई बात भी न करते थे। अब तक एक बच्चा हो चुका था, तब पद्मा ने तय किया कि वे उस बच्चे के लिए कुछ करेंगी, पर तब तक बहुत देर हो चुकी थी। मि. प्रसाद बैंक से सारा पैसा उठाकर भाग चुका था। एक महीने बाद मिस. पद्मा अपने घर के सामने अपने बच्चे को लेकर खड़ी थी। इस कहानी पर अपनी टिप्पणी देते हुए डॉ. जगतनारायण हैकरवाला कहते हैं कि--" मिस. पद्मा एक अनुपम चरित्र है। प्रेमचन्द उसके अवचेतन मस्तिष्क के प्रतीकों का विश्लेषण करने में सफल हैं। कहानी में सर्वत्र उसका व्यक्तित्व पाठक पर यह प्रभाव डालता है कि उसका जीवन सेक्स (काम) जीवन के आन्नदोपभोग की प्रस्तुत बाधाओं के विरुद्ध एक खुला विद्रोह है। किंतु जो अंत उसका हुआ वह बहुत कुछ ऐसी घटना थी जिसका सामना उस कोटि के पात्रों को साधारणतया करना पड़ता है।'' 91 आगे भी वे लिखते हैं कि--" मुंशी प्रेमचंद ने केवल एक ही पक्ष पर विचार किया है और इसलिए उन्होंने यह न अनुभव किया कि यदि फ्रायडवाद का प्रचार हो जाय अथवा सभी लोग अवचेतन मस्तिष्क पर विश्वास करने लगे तो जीवन का आनंद प्राप्त हो सकता है। निस्सन्देह भारतीय समाज में, जहॉ सेक्स एक निषिद्ध वस्तु है, स्त्री पुरुष एक दूसरे से स्वतंत्रता से नहीं मिल सकते और जहॉं नारीत्व की पवित्रता धर्म है, वहॉं का वातावरण किसी भी सेक्स सिद्धान्त, विशेषकर फ्रायडवाद के पनपने के लिए अनुकूल नहीं हैं।'' 92

इसी सन्दर्भ में डॉ. शैलेष जिद्दी कहते हैं कि--" पाश्चात्य शिक्षा की स्वछन्द एवं स्वार्थपूर्ण तथा वासनामय जीवन पद्धति का सपाटपन है। विवाह एक व्यवसाय है और मुक्त भोग देह की भूख-सोचने की यह प्रक्रिया कथ्य को गति प्रदान करती है। किंतु भारतीय नारी व्यवहारिक स्तर पर इस सिद्धान्त पर खड़ी नहीं रह पाती। फलस्वरूप मिस पद्मा को टूटना पड़ता है और अपने निर्णय स्वार्थांधता का भुगतान करना पड़ता है।'' 93

II. विधवा समस्या पर आधारित कहानियॉं

19. धिक्कार- 1

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में फरवरी 1925 को 'चांद' में हुआ था और यही कहानी 30 अक्टूबर 1930 को 'भविष्य' में पुर्नप्रकाशित हुई। तथा बाद में मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-3 में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी की मानी विधवा थी। उसके मॉं-बाप मर गये थे, इसलिए वह अपने चाचा-चाची के साथ रहती थी, वे लोग उसे मारते पीटते थे, घुड़कियॉं देते थे तथा उससे नौकरों जैसा बर्ताव करते थे, केवल वंशीधर का बेटा गोकुल उससे अच्छी तरह से पेश आता पर माता के डर से वह अपनी भावनाओं को दबा देता। वंशीधर की बेटी ललिता का व्याह था और सभी लोगों की तरह मानी भी उसे देखने आई पर चाची ने उसे कड़वी बातें सुनाई और उसे अपने विधवा होने का एहसास करवाया। जिस पर मानी जाकर अपने कमरे मे मरने की कोशिश करने लगी, पर गोकुल के मित्र इन्द्रनाथ ने उसे बचाया और अपने प्यार का इजहार किया। गोकुल को पहले तो गुस्सा आया पर जब इन्द्रनाथ ने उससे शादी करने को कहा तो गोकुल ने अपने माता पिता की परवाह किये बिना इन्द्रनाथ और मानी की शादी करवायी। जब वंशीधर और उसकी पत्नी को मानी की शादी के बारे में पता चला तो उन्होंने गोकुल को खूब डॉंटा और गोकुल घर छोड़कर देहात में चला गया। उधर इन्द्रनाथ ने मुंबई में नया घर लेकर मानी और मॉं को बुलाया पर रेल्वे स्टेशन पर वंशीधर ने मानी को बड़ी जली कटी सुनाई और मानी ने ट्रेन से कूद कर आत्म हत्या कर ली। जब इन्द्रनाथ को यह तार मिला तो उसने मानी का दाह संस्कार करके गोकुल के घर गया और चाची के मानी के बारे में पूॅंछने पर उसके मरने की खबर सुनाई। जिस पर चाची रोने लगी और वंशीधर अपने किये पर पछताने लगा।

20 स्वामिनी

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में सितम्बर 1931 को 'विशाल भारत' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'मालकिन' शीर्षक से वारदात में संकलित की गई।

इस कहानी का शिवदास अपने दोनों बेटों मथुरा और विरजू का व्याह दो बहने राम प्यारी और रामदुलारी के साथ करवाते हैं पर थोड़े समय बाद मथुरा की मृत्यु हो जाती है जिससे रामप्यारी विधवा हो जाती है। शिवदास ने अब घर की जिम्मेदारी रामप्यारी को सौंपकर विरजू के साथ काम करने लगते हैं। रामप्यारी बड़े अच्छे ढंग से घर संभालती और किफायत भी करती, जिससे घर में नई गाय आती है। पर घर के लोग उसकी कार्यकुशलता से ईर्ष्या करते हैं। उसी दौरान शिवदास की मृत्यु

हो जाती है। विरजू जो कि कुछ कम बुद्धि का है उसकी बात उसके नौकर भी नहीं सुनते और फसल अच्छी नहीं होती। इधर राम दुलारी के दो बच्चे हो जाने की वजह से वह घर का काम नहीं कर पाती है। रामप्यारी को घर और खेत दोनों देखना पड़ता है। ऊपर से विरजू घर का मालिक होने के कारण अपनी मनमानी करता था। अब तो दम्पति ने अपने परिवार के साथ शहर जाकर कमाने का निश्चय किया। रामप्यारी कुछ न कर सकी। वे लोग चले गये, तो दो-दिन दिन मायूस रही बाद में खुद घर एवं खेत सँभालने लगी और पहले से ज्यादा बचत करती। जोखू नौकर उसे ज्यादा मदद करता। जब रामप्यारी उसे शादी करने की सलाह देती तो वह कहता, जब आप जैसी कुशल औरत मिलेगी तो शादी करेगे। यह सुनकर रामप्यारी फूली न समाती।

21. प्रेम की होली

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में 23 मार्च 1929 को 'मतवाला' में हुआ था और बाद में कफन और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी की गंगी तीन साल से विधवा थी। घर का सब काम करती थी, लेकिन एक विधवा को जो नहीं करना चाहिए वह कभी नहीं करती थी। किसी प्रकार का मौज-शौक न करती। मॉं-बाप भाई-भावज सबका ख्याल रखती। होली का दिन आया। घर में पकवान बनने लगे, भंग पीसी गई। रात को पड़ोस के कोठर गांव से गरीब सिंह आया और फॉंग गाने लगा। गंगी उसके स्वर में डूब गई। गरीब सिंह भी उसे देखकर गा रहा था। गंगी को उससे प्रीत बंध गई। वह भी जाते समय उसे देखकर गया। कुछ दिनों तक गरीबसिंह न दिखा, फिर एक बार दिखा तो गंगी ने उसे बुलाया पर वह न गया। वह थोड़ा बीमार पतीत हो रहा था। दूसरी बार जब वह दिखा तो गंगी के पिता ने उसे बुलवाया। गरीबसिंह की हालत खराब थी। गंगी ने उसके लिए सरबत बनाया, वह पीकर चला गया। गंगी ने अपने पिता से उसकी हालत जानने का कारण पूछा तो उसके पिता चिल्लाए। अब फिर से होली आई और सब कोठर वालों की राह देख रहे थे, गंगी भी बड़ी उत्सुक थी। उसने मंदिर की छत से देखा की वहॉं आग जल रही है तो उसने अपने पिता से कहा कि कोठर में आज होली मनाई जा रही है। पिता ने देखा और बताया कि वहॉं कोई मर गया और उसकी चिता जल रही है। इसलिए आज वे लोग नहीं आएगें। थोड़ी देर बाद एक आदमी आया और उसने कहा कि गरीबदास की मौत हो गई। गंगी सहम गई।

22. बालक

इस कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अप्रैल 1933 को 'हंस' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'मासूम बच्चा' शीर्षक से फरवरी 1935 में जामिया में प्रकाशित है।

कहानी के विषय में डॉ. कुमारी नूरजहॉं लिखती हैं कि--" प्रेमचन्द ने विधवा जीवन को अनेक दृष्टियों से देखा है। उसकी वैयक्तिक तथा आन्तरिक समस्या को भी परखा है। उन्होंने विधवा समस्या के समाधान के लिए दो मार्ग निर्दिष्ट कराये हैं। विधवा विवाह और वनिता भवनों की स्थापना। प्रेमचन्द ने स्वयं विधवा विवाह किया था वह इस समाधान में उनकी आस्था सजीव प्रमाण है। बालक कहानी की मुख्य पात्र गोमती इस समाधान को पाठक के समक्ष प्रस्तुत करने का सफल प्रयास करती है।'' 94

प्रस्तुत कहानी में प्रेमचंद जी स्वयं के अनुभव को व्यक्त करना चाहते हैं। वे कहानी के माध्यम से कहते हैं कि मेरे यहॉं एक नौकर था, जिसका नाम गंगू था। मैं भी उसे कभी कुछ काम न देता। गॉंव वाले भी उसे ब्राह्मण समझते थे। एक दिन उसने कहा कि वह नौकरी नहीं आएगा। क्योंकि वह गोमती, जिसकी तीन बार शादी हुई थी और वह अपने पति के घर से वापस लौटकर आ जाती है। सब लोग उसे बदचलन कहते हैं। उससे गंगू शादी कर रहा था। मैं नैनीताल कुछ काम से गया था, वहॉं से लौटने पर पता चला कि गोमती गंगू को छोड़कर चली गई। मैं गंगू से मिला तो वह अब भी गोमती के गुण गा रहा था और उसके चले जाने में अपना ही दोष मान रहा था। एक महीने के बाद गंगू अपने हाथों में एक बालक को लेकर आया जो एक महीने का था और उसकी शादी को अभी सात महीने ही हुए थे। वह गोमती के पहले पति का बच्चा था। गोमती को लगा कि गंगू को बुरा लगेगा इसलिए वह लखनऊ मेटरनिटी होम में गई थी और पड़ोसी को बताया था कि अगर गंगू ज्यादा पूँछताछ करे तो उसका पता बताए। गंगू एसे अपना बालक बताता था। में दंग रह गया और गंगू के प्रेम को नतमस्तक प्रणाम करने लगा।

23. तथ्य

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में फरवरी 1937 को 'हंस' में हुआ था तथा 'नारी जीवन की कहानियॉं प्रकाशक-हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर, बम्बई, प्रथम संस्करण 1938 में जो सरस्वती प्रेस बनारस से भी प्रकाशित है। बाद में प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'हकीकत' शीर्षक से जादे राह में संकलित है।

इस कहानी की पूर्णिमा के पिता बचपन में ही मर गये थे। इसलिए पूर्णिमा को घर का सारा काम करना पड़ता था। उसकी मां की लिहाज की वजह से बाहर नहीं निकल पाती थी। अमृत उस गॉव का ही लड़का था। जो पूर्णिमा की मदद करता था, जो एक प्रकार से बिना पैसे का नौकर था। वैसे अमृत पूर्णिमा को प्यार भी करता था। लेकिन एक ही गॉव के लड़के-लड़कियॉ भाई-बहन माने जाते थे। पूर्णिमा की शादी एक अधेड़ वय के उम्र के साथ हुई। इधर अमृत की भी शादी हुई। उसके एक बच्चा भी हुआ। कुछ दिन बाद पूर्णिमा अपनी मॉ के यहॉ रहने आई। अब वह सेठानी लग रही थी, कली से फूल बन गई थी। अमृत उसे अब भी प्यार करता था। उसके बच्चे को वह खिलाता था। छ महीने के बाद पूर्णिमा फिर चली गई, तो वह बच्चा अमृत से छूटता न था। थोड़े समय बाद पूर्णिमा की मॉ मर गई, पर वह न आई। अमृत ने उसका सारा क्रिया-करम किया। अब अमृत चालीस साल का हुआ और उसके दो बेटे बड़े होकर घर संभालने लगे। तभी पूर्णिमा के पति का देहान्त हो गया और उसे दो और बच्चे भी थे। पूर्णिमा अपनी मौसी को मिलने आई तो अमृत ने देखा वह दंग रह गया। वह सूख कर कॉटा हो गई थी। पूर्णिमा ने अमृत से सिर्फ इतना ही कहा कि यही मेरा वैधव्य है और उसका बेटा अब भी उसे याद करता है।

24. बेटों वाली विधवा

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1932 को 'चांद' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'बदनसीब मॉ' शीर्षक से 'वारदात' में संकलित है।

कहानी के विषय में डॉ. कुमारी नूरजहॉ लिखती हैं कि-- नारी जीवन की समस्या का एक पहलू वैधव्य की समस्या है। नारी के लिए सबसे बड़ा दुख है वैधव्य का दु:ख और विधवा का दयनीय जीवन मध्यवर्गीय समाज में अत्यन्त करुण है। प्रेमचन्द ने विधवा समस्या के विभिन्न पक्षों का निरूपण मध्यवर्गीय समाज की आधारभूमि पर किया है। वैधव्य का अभिशाप आ पड़ने पर नारी पूर्ण असहाय हो जाती है। यदि वह सन्तान रहित हो तथा जीवन निर्वाह का कोई साधन उसे सुलभ न हो तो उसका जीवन एक जटिल समस्या बन जाता है। उदाहरण स्वरूप हम प्रेमचन्द की कहानी 'बेटों वाली विधवा' ले सकते है।''95 इसी सन्दर्भ में शिवकुमार मिश्र का भी मानना है कि--'' स्त्री क्रेन्दित कहानी है जिसमें प्रेमचन्द ने भारतीय संयुक्त परिवार की अपनी विसंगतियों का, उसके भीतर की अभद्रताओं का स्वार्थ और लाभ लोभ वश चले आ रहे पारिवारिक सम्बन्धों यहॉ तक की रक्त-सम्बन्धों तक को ठुकरा कर उजागर होने वाली क्रूरता, टुच्चेपन और गलाजत का बड़ा विशद किन्तु एकदम

यर्थाथ चित्र प्रस्तुत किया है। संयुक्त परिवार के तथाकथित सुरक्षा कवच के भीतर पति वियुक्ता स्त्री ही, गृहस्वामिनी की, माँ की क्या दुर्गति होती है, या हो सकती है, इसे संयुक्त परिवार की व्यवस्था के यर्थाथ के भीतर से पहचानने वाले प्रेमचन्द ने अपनी सारी मानवीय संवेदना और आदमियत के बुनियादी तकाजे के तहत उजागर किया है।'' 96

इस कहानी में पं. अयोध्यानाथ की मृत्यु के बाद फूलमती जो उनकी पत्नी है उनकी कोई कीमत नहीं रहती। पंडितजी के चार बेटे एवं बहुएँ थी लेकिन उनकी घर में कोई कीमत नही थी। पंडितजी की तेरवी पर फूलमती ने जो सामान मंगवाया था, उससे कम आया था। फूलमती के पूँछने पर बेटों ने उसे डाटा तथा उसकी बात अनसुनी कर दी। यही नहीं तेरवीं में सब्जी में से मरी हुई चुहिया भी निकली। सारे गाँव वाले उठकर चले गये। सारे गाँव में उसकी थू-थू होने लगी। फूलमती के डाटने पर वे एक दूसरे पर दोष थोपने लगे। यह तो कुछ न था। एक साल बीता बेटों ने कुमुदनी जो उनकी इकलौती बहन थी, उसका विवाह पिता ने जहाँ तय किया था, उसके बजाय एक अधेड़ उम्र के लड़के के साथ कर दिया। इसका कारण यह था कि वे पिता के रखे हुए बीस हजार रूपये अपने उपयोग में लेना चाहते थे। इसी पर डॉ. नूरजहाँ कहती हैं कि--'' स्त्री वर्ग की हिन्दू समाज में अत्यन्त सोचनीय दशा है। उसके परिणाम स्वरूप ही अनमेल विवाह हिन्दू समाज में बहुतायत से देखे जाते है। वैवाहिक असंगतियाँ समाज में अनेक विकृतियों को पनपने का अवसर देती है। वैवाहिक समस्या को अधिक जटिल बनाने में दहेज प्रथा सहायक है। बेटोंवाली विधवा में कुमुद का विवाह इसी कारण अच्छे घर में नहीं हुआ।'' 97

शादी से पहले बेट ने माँ के गहने भी फर्जी मुकदमें में फँसने पर ले लिए, जिनका मूल्य दस हजार था। फूलमती ने न चाहते हुए भी कुमुदनी को विदा किया, उसे कुछ उपहार भी न दे पायी। अब फूलमी सारे घर का काम करती और कुछ न बोलती। एक बार बारिश में वह अपने बेटों के लिए पानी लेने गई और वहीं नदी में डूब कर मर गई। इसी सन्दर्भ में डॉ. नूरजहाँ कहती हैं कि--'' हमारे समाज में विधवाओं की भी अपनी समस्याएँ हैं। वैधव्य का अभिशाप आ पड़ने पर नारी निस्सम्बल हो जाती है। प्रेमचन्द ने 'बेटोंवाली विधवा' कहानी इसी दृष्टिकोण से लिखी है। इसमें विधवा का जीवन सामाजिक दृष्टि से कितना उपेक्षणीय है इसे प्रेमचन्द ने अनुभव किया है। कैसा विचित्र विधान है, कि स्त्री का पति के पश्चात घर में कुछ नहीं है सब कुछ उसके बेटों का है।'' 98

24. ज्योति

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मई 1933 को 'चांद' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-1 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'अक्सीरं' शीर्षक से 1933 को 'इस्मत' में प्रकाशित हुआ था।

इस कहानी की बड़ी बेटी छोटी उम्र में विधवा हो गई थी। उसके दो बेटे-मोहन और सोहन थे। एक लड़की मैना थी। बूटी छोटी उम्र में विधवा हो जाने के कारण सुहागिनों से खूब जलती है और कोई औरत उसके जैसी यानी विधवा हो जाती तो वह बहुत खुश होती। वह मुँह की कड़वी थी। सबको जली-कटी सुनाती थी। अपने बच्चों तक को भी। फिर भी उसी से उसका घर चलता था। मोहन बड़ा हो गया था, अब वह रुपिया से प्यार करता था। रूपये के लिए बूटी के अच्छे विचार न थे। वह उसे जल्ली समझती। इसलिए जब मोहन ने बूटी को रुपिया से वायदा करने की बात बताई तो दोनों में बड़ा झगड़ा हुआ। बूटी ने मोहन को आँगन में अकेले न सोने दिया। उस रात मोहन रुपिया से मिलने जाना था पर न जा पाया। इस पर रुपिया खुद आंगन में आई और उसे जगाया। तब रुपिया ने न केवल माँ की कही हुई सारी बात उसे बताई और कहा कि माँ ने उसे उससे दूर रहने की हिदायत भी दी है। पर रुपिया ने मोहन को यह एहसास दिलाया कि वह उससे प्रीत न छोड़ेगी। उसी समय आहट हुई और वह चली गई। दूसरे दिन मोहन ने न केवल सोहन और मैना को प्यार किया बल्कि मां का सारा काम भी किया। इस पर बूटी प्रसन्न हो गई। उसी समय पड़ोस की धनिया रस्सी माँगने आई वैसे तो बूटी रस्सी नहीं देती पर आज दी। उसके बेटे की तबियत खराब है यह सुनकर वह उसके घर चली गई। धनिया के बताने पर बूटी को पता चला कि रुपिया रूपवान एवं सुशील है और उसने धनिया के घर में उसकी अच्छाई माप ली। बूटी को रुपिया पसंद आने लगी, इसलिए एक रात उसने मोहन से कहा कि वह और पैसा कमाये ताकि वह उसकी शादी रुपिया से कर सके।

III. वेश्या समस्या पर आधारित कहानियाँ

26. दो कब्रे

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जून 1930 को 'माया' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-4 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'मजारे उल्फत' शीर्षक से 'प्रेमचलीसी' में संकलित हुई।

इस कहानी की जुहारा एक वेश्या थी। जिसका कुंवर रनवीरसिंह के साथ सच्चे प्यार का संबंध था। जिसका फल सुलोचना थी। जुहारा मर गई तो कुंवर रोज उसकी कब्र पर फूल चढ़ाने अपनी

बेटी सुलोचना के साथ जाते। कुंवर ने सुलोचना को बड़े लाड-प्यार से पाला था। वह स्वच्छन्द विचारधारा की थी। साथ वह सुन्दर और सुशील लड़की भी थी। वह जहॉ पढ़ती थी वहॉ प्रो. रामेन्द्र थे। वे उससे प्यार करते थे। दोनों ने शादी की। शादी के रामेन्द्र के कई मित्र रात को बैठने को आते हैं और सुलोचना की मीठी वाणी की वजह से उससे बातें करते। रामेन्द्र को पता था कि इसमें सुलोचना का दोष नहीं है पर वह लोगों को यह बात न सह पाता कि वह सुलोचना अपनी मॉ की जगह लेगी। इसी बीच उनकी एक बेटी शोभा हुई जिसको खिलाने सुलोचना की चचेरी बहन गुलनार जो एक वेश्या थी वह आई। पति के डर से सुलोचना ने उसे रात को बुलाया। रामेन्द्र को जब यह पता चला तो तीनों में काफी झगड़ा हुआ। रामेन्द्र ने सुलोचना से कहा कि उसमें उसके मॉ के गुण आ गये हैं। यह सुलोचना न सह पाई और उसने आत्महत्या कर ली। अब रामेन्द्र और शोभा दोनो मा की मजार पर फूल चढ़ाने जाते। शोभा को पता है कि मां एक दिन इसी मजार से बाहर निकलेगी।

27. आगा-पीछा

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में दिसम्बर 1928 को 'माधुरी' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-4 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'कशमकश' शीर्षक से 'प्रेमचालीसी' में संकलित हुई। और कुछ संग्रहों में 'हुस्नो सबाब' शीर्षक से छपी है।

प्रेमचंद इस कहानी में जन्म पर आधारित कुलीनता की कल्पना को झकझोर देते हैं। प्रस्तुत कहानी की कोकिला जों एक रंडी है। उसकी श्रद्धा नाम की एक लड़की है। उसने उसे बड़ी अच्छी तरह से पाल पोसकर बड़ा किया। वह पढ़ने में होशियार थी पर उसका कोई दोस्त न बनाता था, कारण कि वह रंडी थी। सब उसको चिढ़ाते थे पर फिर भी उस पर कोई असर न पड़ता था। एक बार श्रद्धा ने वकृतत्व स्पर्धा में भाग लिया और उसने उसमें महिला के विषय पर भाषण दिया, उसको सुनकर सब दंग रह गये। उसी समय जो उसे रंडी कहकर चिढ़ाते थे उसमें से भगतराम जो एक निम्न कुल के पुलिस का बेटा था उसने श्रद्धा का पक्ष लिया। दोनों में प्रीति हो गई। कोकिला ने दोनों के रिश्ते को अपनाया। साल गुजरा तो कोकिला ने शादी की बात की। भगतराम के माता-पिता पुराने खयालात के आदमी थे, इसलिए उन्होंने शादी करने से मना कर दिया। लेकिन जब श्रद्धा ने उनके घर जाकर उनकी सेवा की तो वे मान गये। इसी सन्दर्भ में कांतिमोहन कहते हैं कि--" कहानीकार ने इस समस्या को सिर्फ पेश ही नही किया बल्कि इसका समाधान भी दिया है। सदियों पुरानी जातिगत कटट्रता और संकीर्णता को परास्त करना मुमकिन नहीं। निकट संपर्क और सेवा से

इन बेड़ियों को काटा जा सकता है। भगतराम के मां बाप के प्रतिरोध की कड़ी दीवार को तोड़ने के लिए श्रद्धा यही मार्ग अपनाती है, और अपने प्रयत्न में सफल होती है।'' 99

भगतराम के माता पिता दोनों की शादी करवाने की बात करते हैं, इसी पर अपना विचार व्यक्त करते हुए डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" समाज में हिन्दू जहॉं दलितों को अस्पृश्य समझते हैं, वहॉं दलित भी जाति, कुल, वंश, बिरादरी की दृष्टि से अपने से निम्न लोगों को तुच्छ मानते हैं। ऊँच-नीच की कल्पना यह भाव समाज व्यवस्था के मूल में इतनी गहराई तक जा घुसा है कि उसे उखाड़ कर फेंकना टेढ़ी खीर है। ऐसे परम्परागत रिवाजों के समर्थक चौधरी-चौधराइन के विचारों ने जो परिवर्तन दर्शाया है वह सुधारवादी है।''100 पर न जाने भगतराम को किस चिंता ने घेर लिया था और वह घुलता जा रहा था। शादी के तीन दिन पहले उसे लगा कि श्रद्धा नागिन है, वह उसे डस लेगी, वह मूर्छित हो गया। श्रद्धा को बलाया गया तब भगतराम ने बताया कि उसे डर है कि श्रद्धा अपने खून के संस्कारों का नाश कर सकेगी। इसी पर साधु यादव अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि--" शिक्षा विचार परिवर्तन का साधन है, जिसकी उपलब्धि से लोगों को नयी दृष्टि का लाभ होता है। इससे प्रभावित युवकों में परिवर्तन के लिए प्रौढ़ विचार और निर्भयता का होना आवश्यक हैं, नहीं तो इसका अभाव उन्हें लूला बना देगा। एम. ए. में पढ़ने वाले नवयुवक भगतराम पर आधुनिक विचारों का प्रभाव है, पर वैचारिक दुविधा उसे निस्तेज बनाती है।'' 101

भगतराम की बात सुनकर श्रद्धा वहॉं से चली गई। उसे पहली बार रंडी की बेटी होने पर अफसोस हो रहा था। गुस्सा शांत होने पर वह वापस आई, तभी भगतराम ने माफी मॉंगी और हमेशा के लिए आंखे बन्द कर दी। श्रद्धा ने उससे वायदा किया कि हमेशा उसकी रहेगी। डॉ. कुमारी नूरजहॉं कहती है कि--" हिन्दू समाज में भी सम्प्रदायगत विभिन्न भाग है, जो परस्पर स्पर्श भी पाप-तुल्य समझते हैं। वैचारिक दृष्टि से ऊँचा उठा व्यक्ति भी अपने जातिगत संस्कारों के कारण समाज की दृष्टि से नीचा है। यद्यपि प्रेमचन्द इसे हटाने का प्रयत्न करते है, परन्तु उनकी हिन्दू धर्म से आक्रान्त आत्मा यह नहीं करने देती। ऐसी कहानियों के अन्त में कोई न कोई दुर्व्यहार कराकर पात्र की संस्कारगत नीचता की ओर उंगली उठा देते है।'आगा-पीछा' कहानी इन विचारों की पुष्टि करती हैं।'' 102

28. वेश्या

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में फरवरी 1933 को 'चांद' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-2 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-5 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी के दयाकृष्ण और सिगारसिंह दोनों मित्र थे। सिगारसिंह बड़े बाप का बेटा था, वो भी बिना मां-बाप का था इसलिए पिता ने उसे बड़े लाड-प्यार से पाला था। दयाकृष्ण अपना बिजनेस जमाने के लिए कलकत्ता गया, तब पता चला कि सिगारसिंह के पिता मर गये लेकिन दयाकृष्ण काम की वजह से न गया। पर दो महीने के बाद जब सिगारसिंह की पत्नी लीला का तार आया तो उसे तुरंत जाना पड़ा। वहाँ जाकर भाभी से पता चला कि सिगारसिंह किसी वेश्या के चक्कर में पड़ा है। मैंने जब उसे देखा तो मुंडन नहीं करवाया था पर छैला बनकर घूम रहा पाया। मेरे समझाने पर वह कहता हैं कि पिता ने इतनी दौलत कमाने पर क्या सुख पाया । मैंने भाभी से वायदा किया कि वह सिंगार को सही राह पर लाएगा। दयाकृष्ण वही वेश्या के घर गया जहाँ सिंगार जाता था। उसका नाम माधुरी था और वह खूब सूरत थी। पता नहीं क्यों पर दयाकृष्ण और माधुरी के बीच खिचाव बढ़ा और माधुरी सिंगारसिंह से अपना ध्यान हटाने लगी। जिसके कारण सिंगारसिंह ने दयाकृष्ण को मारने के लिए अपने आदमी भेजे। पर इससे यह फायदा हुआ कि वह अपने घर काम पर ध्यान देने लगा। इस तरफ माधुरी के शादी के प्रस्ताव को दयाकृष्ण ने ठुकराया और सारी सच्चाई बताई। सिंगारसिंह ने दयाकृष्ण और माधुरी के रिश्ते के बारे में लीला से बात की। तभी दयाकृष्ण ने आकर बताया कि माधुरी मर गई और वह जोर से चिल्लाकर रोने लगा।

IV. नारी विमर्श से सम्बन्धित अन्य कहानियाँ

29. शोक का पुरस्कार

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'सिल-ए-मातम' शीर्षक से हुआ तथा जुलाई 1908 को सोजेवतन में संकलित की गई। हिन्दी में शोक का पुरस्कार शीर्षक से 'गुप्तधन'-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-1 में संकलित की गई।

इस कहानी के पात्र स्वयं लेखक प्रतीत होते हैं। इस कहानी में लेखक ने एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर दी थी। जिसकी वजह से सारे दोस्त उसे बधाइयाँ दे रहे थे। घर जाने के बाद लीलावती, जो रूपवान थी और लेखक उसे पसंद करते थे और उससे शादी भी करना चाहते थे। लेकिन दो साल बाद लेखक की शादी कुमुदनी से हो गई थी जिसका चेहरा भी उन्होंने नहीं देखा था। लेखक लीलावती से मिलने गये। गये। लीलावती के पिता दर्शन शास्त्र के प्रोफेसर थे। लेखक कुमुदनी को तलाक देकर लीलावती से शादी करना चाहते थे। यही बात अपनी डायरी में लिखी जो निरंजन लेखक का मित्र एवं कुमुदनी का भाई था उसने डायरी पढ़ ली। मैंने देखा कि निरंजन डायरी पढ़कर जा रहा है पर में कुछ न कर पाया। बाद में लीलावती के घर जाने पर पता चला कि उसकी तबियत

खराब होने के कारण आबोहवा बदलने के लिए नैनीताल गई है। कुछ दिन बाद तार आया और पता चला कि वह प्लेग से मर गई। मेरी हालत खराब होने लगी, में उदास रहने लगा। दोस्तों की सलाह के कारण मैं घूमने गया, दो महीने के बाद तार आया कि मुझे युनिवर्सिटी में प्रोफेसर की नौकरी मिल गई है। मैं वापस आया। आने के बाद मैंने पड़ोस में से गाने की आवाज सुनी वह महेन्द्रसिंह था। वह रोज गाता था और अंग्रेजी सिखाता था, उसकी और मेरी गाढ़ी मित्रता हो गई। हम दोनों साथ में शिमला गये जहॉ मुझे चेचक हो गया। डॉक्टर ने मेरी हालत बड़ी नाजुक बताई। मेहरसिंह ने बड़ी सेवा की और वहॉ सं पंजाब चला गया। मैं वहॉ से वापस आया तो देखा कि लीलावती गाड़ी से उतर रही है। मैंने उसे उसके धोखे पर नाराजगी व्यक्त की पर उसने मेरे ही धोखे को याद करवाया तथा मोटर में बैठी ण्क भारतीय नारी से मिलवाय, जिसकी शक्ल-सूरत मेहरसिंह से मिलती थी वही मेरी बीबी कुमुदनी थी और यह मेरे शोक का पुरस्कार था।

30. विक्रमादित्य का तेगा

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1911 को 'जमाना' में हुआ तथा 'प्रेमपच्चीसी' में संकलित हुई। हिन्दी में 'गुप्तधन', भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में संकलित की गई।

एक रात को माहनगर में चर्चा फैली कि एक वृक्ष के नीचे एक अलौकिक प्रकाश है, कोई उसे भूतों की मीटिग, तो कोई मणी कहता था। उस गांव का प्रेमसिंह जो एक बड़ा बहादुर सिपाही था, पूरी जिन्दगी लड़ाई में निकल गई, पर बुढ़ापे का कोई सहारा नहीं था, तभी एक दिन एक विधवा स्त्री वृन्दा के घर में आग लगी और उसका बेटा श्यामा अन्दर फॅस गया था जिसको प्रेमसिंह ने निकालकर दोनों को अपने घर में शरण दी। प्रेमसिंह उस प्रकाश वाली जगह पर जाकर तलाश करने लगा। उसे लगा कि कुछ अच्छा होगा तो श्यामा उससे खेलेगा। तभी वहॉ से विक्रमादित्य का तेगा निकला जो मनुष्य के हाथ में आते ही उसका प्रकाश चला जाता है। उसी समय महाराजा रणजीतसिंह जो शेरे पंजाब के राजा थे, उन्होंने उसी मुसलमानों पर विजय प्राप्त की थी इसलिए जस्न मनाया जा रहा था। प्रेमसिंह ने यह तेगा राजा को भेंट देने के लिए सोचा। तभी एक मुसाफिर ने वह तेगा देखने को मॉगा और प्रेमसिंह ने दिखाया भी। मुसाफिर वापस लौटने लगा तो रास्ते में वृन्दा दिखाई दी। उसी समय राजा ने सेना को कूच करने का आदेश दिया। दरअसल वह कोई मुसाफिर नहीं था बल्कि वह राजा था। वृन्दा जिसका पति बड़ा गायक था और उसने अपनी सारी संपत्ति गायन-वादन में खर्च कर दी और वृन्दा को भी गाना सिखाया। वृन्दा अपने पति के मरने के बाद जब भी उसकी याद आती तो वह गाना गाती। आज उसे गाना गाते हुए सुनकर कुछ सैनिक रुके और जश्न मनाने की

जिद करने लगे। प्रेमसिंह की जब जान पर बन पड़ी तब वृन्दा उसके साथ जाने को तैयार हुई, पर प्रेमसिंह ने वापस आने को मना किया। वृन्दा लाहौर की मशहूर गाने वाली बन गई और उसने अपना नाम बदलकर श्यामा रखा। तीन महीने तक राजा ने कोई जश्न न करवाया पर लोगों की फरमाइश पर जश्न का एलान किया। घर, बाजार सजने लगे। राजा ने सब गाने वालों को न्योता भेजा, जिसमें श्यामा भी शामिल थी। सभा श्यामा का गीत सुनकर राजा चकित हो गये और उसे दुबारा बृहस्पतिवार को बुलाया। श्यामा ने एक दिन प्रेमसिंह से विक्रमादित्य का तेगा ले लिया। दूसरी बार जब वह राजा के पास गई तो सादे कपड़े पहनकर गई। श्यामा ने गीत सुनाया जिस पर राजा ने कुछ मॉंगने के लिए कहा, श्यामा ने इन्साफ का खून मॉंगा। राजा चकित हो गये, पर वादा किया कि वे इन्साफ का खून देगा, पर वह कहॉं मिलेगा। तब श्यामा ने अपनी पूरी कहानी बताई। राजा ने उससे विक्रमादित्य का तेगा मांगा ताकि वह अपना खून दे सके पर श्यामा ने उनको रोक लिया, क्योंकि तेगा दूज के चांद की तरह चमक रहा था।

31. शिकार

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1910 को 'जमाना' में हुआ तथा अक्टूबर 1931 को चन्दन में पुनः प्रकाशित हुई । हिन्दी में जुलाई अगस्त 1931 को हंस में प्रकाशित हुई तथा मानसरोवर, भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में संकलित की गई।

इस कहानी की वसुधा एक सामान्य घर की लड़की थी, पर उसकी शादी कुंवर गजराजसिंह से हुई। वसुधा भोग विलास पर अपने भाग्य पर इतराने लगी। उसे पति के प्यार से ज्यादा पैसों से प्यार हो गया। दो साल के बाद उसे दो पुत्र पैदा हुए तो उसे पति के प्यार की जरूरत पड़ने लगी कुंवर साहब दो-तीन महीने तक लगातार शिकार पर रहते थे। वसुधा को पति से मिलना था । उसको बुखार था पर वह बुखार में भी ऊबड़-खाबड़ रास्ते को पार करती हुई जंगल में गई और वहॉं जाकर मुर्छित हो गई। कुॅंवर ने ड्राइबर को डाटा। कुंवर ने देखा कि उसके चेहरे पर अब पैसे का घमंड नहीं है। कुॅंवर ने बच्चों और नौकर को बुला लिया। वसुधा के ज्वर ठीक होने पर उसने कुॅंवर को न केवल पुरस्कार देखे पर निशानबाजी भी सीखी। बाद में वह एक दिन शिकार पर गई। वह जिस शेर का शिकार करने आई थी वह काफी चालाक था। वह कुॅंवर के हाथों घायल हुआ तो कुॅंवर के मुंडेर से गिरा दिया। अब कुॅंवर की जिन्दगी वसुधा के हाथ में थी। वसुधा ने तीन गोलियॉं मारी और वह मुंडेर से गिरकर मुर्छित हो गई। जब उसे होश आया तो पता चला कि उसने शेर को मारकर पति की जिन्दगी बचाई।

32. शाप

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'सैरे-दरवेश'शीर्षक से अप्रैल-जून 1910 को 'जमाना' में हुआ था तथा सोजेवतन के द्वितीय संस्करण में संकलित है। हिन्दी में 'शाप' शीर्षक से तथा मानसरोवर-6, 1924 को प्रेम-प्रसून में और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-1 में संकलित की गई।

इस कहानी में युरोप का एक मुसाफिर पूरी दुनिया को अपने पैरों से नापने चला था। वह भारत के हिमालय के तट पर ज्ञानसरोवर के समीप एक शेर को देखकर उसे मारने चला। तभी एक रूपवान स्त्री जिसका नाम प्रियंवदा था वह उसे रोकती है और बताती है कि वह उसका पति है। प्रियवंदा कहती है कि एक बार उनके पति ने विद्यापति जो पंडित श्रीधर की पत्नी थी जो मंदिर का पुजारी था और विद्यापति एक पतिव्रत पत्नी थी, के हाथों को छुआ था। उसे ऊपर चढ़ाया था तभी उसका मन डोला और विद्यापति ने उसे शाप दिया और वह शेर बन गया। प्रियंवदा ने चारों धाम की यात्रा कि पर उसे शाप से मुक्ति न मिली। तभी गंगाघाट पर एक आदमी गिर पड़ा जिसकी जान प्रियंवदा ने बचाई वह आदमी श्रीधर पंडित था और विद्याधरी ने कहा कि उसे इसका फल जरूर मिलेगा। जब प्रियंवदा वापस लौटी तो उसे नौकरों ने शेरसिंह को बाँध दिया था और महल लूटकर चले गये थे। बाद में प्रियंवदा शेरसिंह को लेकर लौटी तो रास्ते में एक मंदिर में रुकी, तभी रात में कुछ डाकू एक आदमी को मार रहे थे। वह श्रीधर था औरे मैंने और शेरसिंह ने उन दोनों को बचाया तथा उसकी सेवा की। बाद में हम दोनो ज्ञानसरोवर आ गये। एक दिन एक कुंवर शेरसिंह को मारने आया और घायल हो गया। उसे प्रियंवदा गुफा में ले गयी और उसकी मरहम पट्टी किया। कुछ सामान लेने के लिए वह गांव में गई। जहाँ सब बंद था और सबने काले कपड़े पहने रखे थे। मैंने काले कपड़े नहीं पहने थे, इसलिए मुझे बंदी बनाकर रानी के पास ले जाया गया। जहॉ बातों-बातों में पता चला कि वह घायल युवान राजकुमार है। मैंने जब उसके बारे में बताया तो रानी बहुत खुश हुई और मुझे अर्जुन नगर भेंट में दिया। मैंने वहाँ सफाई करवाई, बाग-बगीचे लगवाये। यह सुनकर मुसाफिर चकित हो गया। मुसाफिर अपने देश वापस लौटा और उसका सम्मान हुआ। एक हजार दिन के बाद जब वह वापस लौटा तो उसने देखा कि उस जगह पर एक महल है। वहॉ एक रूपवान पुरुष बैठा है। वहॉ का नक्शा बदल गया था। नौकर-चाकर थे। अन्दर जाकर मुझे पता चला कि वह आदमी शेरसिंह है। प्रियंवदा उसके बाजू में थी, उसने अधूरी कहानी फिर से सुनाई। श्रीधर पंडित तथा राजा की दोस्ती हो गई। श्रीधर पंडित अर्जुन नगर को सँभालते हैं उनकी मित्रता रणधीर

सिंह से हुई। रणधीर सिंह विद्याधरी को चाहने लगा। इसलिए उसे फँसाने का चक्रव्यूह रचा और विद्याधरी फँस गई। श्रीधर पंडित को प्रियंवदा ने दौरे पर भेजा था।

एक दिन रणधीर सिंह के जन्मदिन पर विद्याधरी ने रणधीरसिंह को फूलों का हार बनाकर दिया, जिस पर रणधीरसिंह ने उसे कंगन दिया पर विद्याधरी ने अपने पति को बताया कि कंगन रानी ने दिए हैं। झूठ बोलकर विद्याधरी दुखी हो रही थी, इसलिए उसने श्रीधर को सच बताया और श्रीधर घर छोड़कर चला गया। विद्याधरी श्रीधर की याद में सूखकर काटा हो गई। विद्याधरी ने प्रियंवदा को बताया कि झूँठ बोलने के लिए रानी ने कहा था। प्रियंवदा ने अयोध्या जाकर पंडित को सच बताया और दोनों का मिलाप हो गया। तब मैंने पंडितजी और विद्याधरी को तीसरी बार मिलाया था। विद्याधरी ने ऊपर देखकर कहा कि ईश्वर इसका फल देगा और यहाँ सिंहराज मेरे पति मनुष्य बन गये।

33. नागपूजा

जिसका प्रकाशन और संकलन केवल हिन्दी में प्रेमपच्चीसी, प्रेमचन्द विश्वकोश, भाग-1 (प्रथम संस्करण : विक्रमी संवत 1980 यानी दिसम्बर 1923) में हुआ और मानसरोवर, भाग-7 तथा प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-2 में इसका संकलन किया गया

इस कहानी की तिलोतमा के घर के पास एक काला नाग था। वह उसके जन्म के समय ही था। उसकी पहली शादी हुई तो उसके पति को उसने डस लिया और वह वहीं मर गया। यही उसने उसके दूसरे पति के साथ भी किया और वह भी मर गया। लेकिन तीसरे पति दयाराम के साथ कुछ विचित्र हुआ। दयाराम सारे विषों का अंत जानता था, दोनों पति-पत्नी समाज के सामने अच्छे लगते पर रात को दयाराम को तिलोतमा नागिन जैसी लगती। एक रात दयाराम ने तिलोतमा को एक साँप के पास पाया। उसने दवाई खाई और पिस्तौल लेकर सो गया। दयाराम ने देखा कि साँप पर तिलोतमा का भूत सवार था। उसने दयाराम का गला पकड़ा और साप की तरह उसे डसने लगी। दयाराम ने दो बार पिस्तौल चलाई और तिलोतमा गिर गई। दयाराम ने देखा कि बेड के नीचे एक काला सांप घायल पड़ा है। दयाराम ने वह सांप लिया और काचली उतारी, उसमें भूसा रखा, और कमरे में गया, तब तिलोतमा बदलकर उसकी पत्नी बन गई थी।

34. विमाता

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'सौतेली माँ'शीर्षक से जून 1919 को 'कहकशा' में हुआ था। हिन्दी में 'विमाता' नाम से अप्रैल 1921 में श्री शारदा में प्रकाशित हुई। तथा मानसरोवर-8, और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-2 में संकलित की गई।

इस कहानी के प्रमुख पात्र लेखक स्वयं हैं। लेखक ने दूसरी शादी अंबा से की। उन्होंने अंबा से कहा कि वह उसके पुत्र मुन्नू को इतना प्रेम दे कि वह अपनी मॉ को भूल जाय। कुछ दिन बाद लेखक मुन्नू को अपने मित्र ज्वालासिंह के पास ले गये। ज्वालासिंह ने मुन्नू से यह प्रश्न किया कि तुम्हें नई माता कितना प्रेम करती हैं। जिस पर वह रोने लगा। लेखक को लगा कि अंबा उसे उसके न रहने पर मारती-पीटती होगी। उन्होंने अंबा के साथ झगड़ा करने के सोचा लेकिन जब उसने घर जाकर देखा तो अंबा उसे खूब प्यार कर रही थी। लेखक ने अंबा को मुन्नू की सारी बात बताई। इसके बाद लेखक का अंबा ख्याल न रखती पर मुन्नू का ख्याल रखती थी। एक बार जब लेखक दफ्तर से आये तो मुन्नू दरवाजे पर बैठकर रो रहा था। लेखक को पॅूछने पर उसने बताया कि मॉ जो उसे इतना प्यार करती थी वह चली गई, क्या अम्मा भी चली जाएगी ? में रो पड़ा अंबा को बताया तो अंबा ने उसे गोद में उठा लिया। लेकिन किसको पता था कि बच्चे ने भविष्य देख रखा है। छ महीने बाद एन्फलुएंजा की बीमारी में अंबा मर गई। अब मुन्नू कभी नहीं रोता क्योंकि अब उसे कोई भय नही है। जो उसे प्यार करता था वह चला गया, अब वह निराश बैठा रहता है।

35. बूढ़ी काकी

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जुलाई 1920 को 'कहकशा' में हुआ था। तथा प्रेमबत्तीसी में संकलित है। हिन्दी में इसी नाम से जनवरी 1921 में 'श्री शारदा' में प्रकाशित हुई। तथा मानसरोवर-8, और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-2 में संकलित की गई।

कहानी के विषय में कुमारी नूरजहॉ का मानना है कि--" विधवा जीवन की वैयक्तिक एवं आन्तरिक समस्याएं भी हैं। यदि कोई विधवा की दीनहीन अवस्था का लाभ उठाकर उसके पति संवेदना प्रकट कर अपनी कुत्सित भावनाओं की परिपुष्टि का उपादान बनावे तो उस स्थिति में विधवा की दशा कितनी समस्या पूर्ण हो जाएगी इसे आपने अनुभव किया है। इस प्रकार नारी जीवन सर्वाधिक अन्धकार पूर्ण और कटुतापूर्ण इसी वैधव्य जीवन में समाहित है। प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी' हमारे भारतीय समाज की विधवा वृद्धा का चित्र उपस्थित करती है।'' 103 इसी पर अपना विचार प्रस्तुत करते हुए शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" यह विशुद्ध भारतीय जीवन की एक मार्मिक कहानी है, जिसमें खाते-पीते, एक सामान्य ग्रामीण घर परिवार के जीवन-व्यवहार के बीच से प्रेमचंद ने कहानी की केन्द्रिय संवेदना के रूप में एक ऐसे पहलू को उजागर किया है, जो उस घर परिवार से आगे , नगर और गांवों की परिधि के लाखों घर-परिवारों की मानसिकता को अपनी लपेट में ले लेता है। प्रेमचन्द ने केन्द्रिय संवेदना के रूप में इस कहानी में वृद्धत्व को रेखांकित किया है।'' 104

इस कहानी की बूढ़ी काकी के पति मर गये तथा पुत्र भी मर गये थे। उनके पास दौलत थी, पर वे ऑख, हाथ, पैर से अपाहिज थे। लेकिन उनके जीभ में अभी भी बहुत खाने का स्वाद था। उन्हें भूख बहुत लगती थी तथा खाना भी स्वादिष्ट चाहिए था। बूढ़ी काकी अपने भतीजे बुद्धिराम और उसकी पत्नी रूपा के साथ रहती थी और वह उसकी देखभाल करता था। उनकी जायदाद से साल में दो-तीन सौ रूपये की आवक हो जाती थी। रूपा स्वभाव की तीव्र पर धर्मभीरू थी। उसके दो बेटे एव एक बेटी लाडली थी। जो बूढ़ी काकी की भी लाडली थी। लाडली काकी को खाना छुपाकर देती थी। जब भी काकी को खाना न मिला तब वह चीख-चीख कर रोती और रूपा भगवान के डर से खाना दे देती। एक दिन बुद्धिराम के बेटे का तिलक था। सारा गॉव आया था। खाना भी मसालेदार बनाया गया था। रह-रह कर काकी को उसकी सुगंध आ रही थी। पहली बार जब वह बाहर गई तो रूपा ने उसे अपमानित किया और उसे अन्दर जाने के लिए कहा और कुछ देर बाद जब वह दूसरी बार गई तो बुद्धिराम ने उसे घसीटकर अन्दर कर दिया। जहॉ काकी मुर्छित हो गई। किसी ने उसे खाने के लिए भी न पूछा। लाडली ने जब यह देखा तो उसने अपने हिस्सें की पूड़ियॉ गुड्डे के डिब्बे में बंद करके रख दिया और रात को जब सब सो गये तो वह काकी के पास गई, काकी ने पूड़ियॉ खा ली पर उसकी भूख न मिटी, तब वह लाडली का हाथ पकड़ कर वहॉ गई जहॉ सब जूठे बरतन रखे थे। उसी समय रूपा की ऑख खुली और उसे अपनी गलती का एहसास हुआ। उसने काकी को खाना दिया और भगवान तथा काकी दोनों से माफी मॉगी। इसी सन्दर्भ में शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" बुद्धिराम और रूपा जैसे लोग और काकी जैसी नि:सहाय जिंदगियों की त्रासदी, महज एक गांव या घर परिवार की वास्तविकता ही नहीं, वह आज के आदमी की गिरती हुई मूल्य-चेतना की एक ऐसी शिनाख्त है, जो महानगरों, कस्बो, गांवो, कहीं पर भी की जा सकती है।'' 105 इसी सन्दर्भ में डॉ. कुमारी नूरजहॉ आगे भी कहती हैं कि--" कहानीकार प्रेमचन्द एक वृद्धा हृदय के अन्तस्तल में बैठकर उसके उदगार उसकी भावनाओं को कितनी भली प्रकार से आंका है। वृद्धावस्था में समस्त इन्द्रियॉ शिथिल हो चली हैं। जहॉ स्वादेन्द्रिय अपने प्रबल रूप में सामने आई हैं, जो अतीत के स्वादोन्भव से सम्बन्धित है। स्पष्टतया ही वृद्ध जीवन के मनोविज्ञान से पूर्ण परिचित थे।'' 106

36. रूहे-हयात (जीवन की प्राण शक्ति)

जिसका प्रथम प्रकाशन जनवरी 1921 को 'जमाना' में हुआ था। तथा हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य खण्ड-1 प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-2 में संकलित की गई है।

यह कहानी गुजराती की है जहाँ लेखक भी खुद एक स्त्री पात्र के रूप में है। गुजराती परिवार की एक अनाथ लड़की थी। गाँव वालों के सहारे पली। जहाँ खाना-पीना मिलता, सोने को मिला सो लेती। जब वह बड़ी हो गई तो उसकी शादी रामरतन के साथ हुई जो रेलवे स्टेशन पर पानी बेचता था। वह थोड़ा शंकालु था और गुजराती को घर में ही रखता था। पांच साल बाद उसका पति प्लेग की बीमारी में मर गया और शीतला माता ने उसके बेटे की आँखें ले लीं। अब वह गुजराती गाँव में रहने लगी। दस साल के बाद उसके नये मकान बनाने की खुशी में न्यौता आया और मैं वहाँ गयी। अब वह प्रफुल्लित थी यह मकान गांव वालों के सहारे तथा अपने बेटे के भविष्य के लिए बनाया था। उसका बेटा सत्यदेव होशियार था इसलिए वह अपने बेटे को शास्त्री जी के घर पर संस्कृत पढ़ने भेजती थी। गुजराती को यह घर रास न आया वहाँ रोज साधुओं का ताता लगा रहता था। एक दिन उसका बेटा साधुओं के साथ चला गया। वह एक साल तक सारे तीरथ घूमी पर उसे उसका लड़का न मिला। मैंने देखा कि गुजराती ने उसके घर को भेड़ बकरी और पशु-पक्षियों का घर बना दिया। वहाँ पर गाय, बकरी, हिरन आदि सभी रहने लगे। वह उन सबको दाना देती और बच्चों को दूध पिलाती। गुजराती अब वहाँ एक धर्मशाला बनवाना चाहती थी और उसने अपने गाँव में दो मंजिला धर्मशाला बनवा दी। कुछ दिन बाद उसको फलिस का हमला होने के कारण उसकी दोनों आँखे, हाथ पैर चले गये। मैंने सोचा उसे अपने साथ लेते चलूँ पर आज भी बहुएँ उनसे रामायण सुनती, बच्चे पढ़ने आते और बीमार दवा लेने आते और उसका समय निकल जाता। तब मुझे पता चला शायद इस जिन्दगी को ही जीवन जीने की प्राणशक्ति कहाँ से आती है।

37. निर्वासन

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जून 1934 को 'चांद' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-3 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू रूप 'अभागन' शीर्षक से प्रेमचालीसी में संकलित है।

कहानी के विषय में रामदीन का कहना है कि--" 'निर्वासन' प्रेमचन्द की कतिपय श्रेष्ठ यथार्थवादी कहानियों में से है। इस कहानी में हमें शुद्ध यर्थाथवादी प्रेमचन्द के दर्शन होते हैं। कहानीकार ने अपनी तरफ से कुछ नहीं कहा है, केवल परिस्थितयों के चित्रण के माध्यम से वह वर्तमान संस्कृति के प्रति हमारे मन में तीव्र घृणा के भाव जागृत करने में समर्थ हो सका है।'' 107

इस कहानी की मर्यादा मेले में खो गई और सात दिन बाद वापस आई, तब उसके पति परशुराम ने उस पर शक किय। उसने मर्यादा से सारी बात पूछी। मर्यादा ने बताया कि वह मेले में

खो गई थी , तभी कुछ स्वयंसेवक मुझे भेजने का प्रबन्ध करने लगे तभी एक आदमी ने बताया कि आप मेरा इन्तजार कर रहे हैं। मैं उनके साथ गई तब मुझे पता चला कि वे लोग नीच थे और दलाल थे। इसके आगे का वृतान्त परशुराम ने नहीं सुना। मर्यादा ने अपने पुत्र की कसम भी खाई पर परशुराम ने उसे अपने घर से निकाल दिया। इसी पर रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" इस कहानी में प्रेमचन्द ने उस संस्कृति पर एक तीखा व्यंग्य किया है जो स्त्री की पवित्रता और पतिव्रत पर आवश्यकता से अधिक बल देती है, जो संस्कृति स्त्री पर पुरुष की दृष्टि पड़ते ही अपवित्र और अशुचि की संज्ञा देकर उसे घर से, परिवार से, और समाज से बहिष्कृत कर देती है।'' 108

38. तेंतर

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में दिसम्बर 1934 को 'चांद' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-3 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -3 में इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी के दामोदर दास को तीन लड़कों के बाद एक लड़की पैदा हुई इसलिए सब उसे मनहूस कहते। सब उसे तेंतर कह कर बुलाते। वह देखने में बहुत सुन्दर थी, लेकिन मॉं, सास, ससुर कोई उसे नहीं छूता था और यदि बच्चे उसके पास आते तो उन्हें भी वहॉं से निकाल दिया जाता। मॉं उसे अफीम और बाहरी दूध देती पर अपना दूध न पिलाती। तीन महीने में वह सूखकर कॉंटा हो गई। एक रात पंडित जी जागे तो देखा कि तेंतर जग रही है। उन्होंने उसे गोद में उठाया जबकि पत्नी मना कर रही थी। वे उसे बाहर ले गये। एक बकरी जो हमेशा वहॉं भूसा खाने आती थी, उसके पास गये और लड़को की मदद से तेतर को दूध पिलाया। अब उनकी यह दिनचर्या हो गई। एक महीने के बाद सास को लगा कि बहू तेंतर को अपना दूध पिलाती है, जिसके कारण वह तंदुरुस्त हो रही है। बहू ने मना किया पर सास ने कहा कि वह किसी न किसी के जान जरूर लेगाी। एक साल तक कुछ न हुआ तो बुढ़िया ने अपनी बीमारी का नाटक किया। पंडित जी को लगा कि तेंतर की वजह से यह हो रहा है इसलिए वह भी लोगों की तरह उसे कोसने लगे। बूढ़ी सास को खाने के समय के अलवा हमेशा दिल में दर्द रहता। एक हप्ते के बाद जब दिल में दर्द कम हुआ तब घर में दुर्गा पाठ और गोदान किया गयाा।

39. नैराश्य

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जून 1934 को 'चांद' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-3 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू रूप 'अभागन' शीर्षक से प्रेमचालीसी में संकलित है।

इस कहानी के घमंडीलाल पढ़े-लिखे होते हुए भी अपनी पत्नी से इसलिए नफरत करते थे क्योंकि उसने तीन लड़कियों को जन्म दिया था। डॉ. नूरजहॉ इसी सन्दर्भ में कहती हैं कि--" हम पुरुष वर्ग की निरंकुशता को इस कहानी में देखते हैं । समाज में कन्या का जन्म ही अशुभ और दु:खदायी है। यह केवल हमारे समाज की मान्यताओं ने बना रखा है। पत्नी-पति की एक मृदु मुस्कान के लिए एक मीठी बात के लिए ललकती एवं तड़पती हैं।'' 109

सास-ससुर भी बहू को दुतकारते। वैसे पुत्र रत्न न होने के लिए केवल स्त्री ही जबाबदार नहीं होती यह बात घमंडीलाल को पता होते हुए भी निरुपमा को ही दोष देते। निरुपमा ने अपनी भावज से बात की। भावज ने बताया कि एक बाबा ने आशीर्वाद दिया है कि तुम पुत्रवती हो जाओगी। निरूपमा वहॉं गई और भावज को समझाया कि जब तुम गर्भवती हो जाना तो बाद में बताना कि बाबा ने आशीर्वाद दिया था। निरुपमा की अब अच्छी तरह से खातिरदारी होने लगी, पर दुबारा पुत्री ने जन्म लिया तो वही हालत हो गई। उसकी भावज उसके घर आयी और उसने बताया कि उसने मंगलवार तो किये पर ब्राह्मणों को भोजन नही करवाया इसलिए ऐसा हुआ। अब घरवालों ने दुबारा से निरूपमा की देखरेख करना शुरू किया। निरूपमा दुबारा गर्भवती हुई और उसने पुत्री को जन्म दिया और वह निराश हुई तथा मर गई। इसी पर डॉ. कुमारी नूरजहॉं कहती हैं--" समाज का पुरुष वर्ग अपनी स्त्री से इसलिए भी रुष्ट रहता है कि उसकी पत्नी कन्या को जन्मती है। इतना ही नहीं वे उसे अभागिनी कहते हैं। साथ ही वे उसका दिल भी बराबर दुखाया करते हैं। 'नैराश्य' कहानी की निरूपमा ऐसी ही अभागिनी स्त्री है।'' 110

40. स्त्री और पुरुष

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मई-जून 1925 को 'चांद' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-3 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू रूप 'देवी' र्शीर्षक से प्रेम चालीसी में संकलित है।

इस कहानी के बिपिन बाबू एक कवि थे, वे अपनी पत्नी खूबसूरत चाहते थे और यह बात उसने अपने मामू को बताई। मामू ने उसकी शादी गोरी लड़की से करवाई। उस लड़की का नाम आशा था। लड़की तो गोरी थी पर बेढंगी थी इसलिए वह मामू को कोसता रहता और रात दिन बाहर ऐयाशियॉं करता। जिसके कारण आशा उसकी चिन्ता करती जिससे वह बीमार रहती पर विपिन उसके पास न जाता। ऐयाशियों के कारण विपिन को गुप्तरोग की बीमारी हो गई और उसे लकवा मार गया। उसका मुँह टेढ़ा हो गया और उसका हाथ पैर जम गया। आशा ने अपनी बीमारी छोड़कर विपिन की

देखभाल शुरू की। एक महीने बाद विपिन ठीक हो गया पर उसका मुंह जैसा का तैसा रहा। आशा ने उसके लिए पूजा करवायी। विपिन के दोस्तों ने उसकी पत्नी को नहीं देखा, इसलिए उन लोगों ने औरतों में सबसे सुन्दर कौन है पूछा जिस पर विपिन ने अपनी पत्नी की ओर इशारा किया।

41. माता का हृदय

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जलाई 1925 को 'चांद' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-3 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -3 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी की माधवी का पति बाईस साल पहले मर गया था और उसका बेटा आत्मानंद जो देशभक्त था, उसे पुलिस ने पकड़ लिया और झूठे केस में फॅसा दिया। मि. बागची ने उन्हें आठ साल कारावास की सजा दी। माधवी ने इसका बदला मि. बागची से लेने का तय किया। माधवी मि. बागची के घर केस की जीत पार्टी में गई और उसके बेटे की सेवा करने के बहाने वहॉं रुक गई। पर माधवी ने देखा कि महीने के अंत तक उसके पास कुछ न बचता था। उनको तीन सौतेली बेटियॉं थीं और दो बेटे जो मर गये थे। अब उन्हें एक बेटा था। माधवी उसे अच्छी तरह पालती थी। बच्चा भी उसे मॉं की तरह ही मानता था। माधवी उसे मारने आई थी पर उसकी पालनहार बन गई। एक बार वह घर गई तो नौकर ने उसे बारिश में भीगने दिया जिससे वह तीन दिन तक बीमार रहा। माधवी को उससे लगाव हो गया । मि. बागची से कहकर वह बच्चा मोल लेना चाहती थी ताकि वह पहले के बच्चों की तरह मर न जाय पर जब वह दूध देने गई तो वह मर गया था। मि. बागची और उसकी पत्नी खूब रोये। माधवी जो आंसू देने आई थी वह आंसू लेकर जा रही थी। इसी पर रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" राजनीतिक कायकर्ताओं को चोरी-डाके के झूठे अपराधों में फॉसकर लंबी-लंबी सजाएॅं दिलाना साम्राज्यवाद की पुरानी नीति रही है। अपने समय के अन्य सैकडों-हजारों देशभक्त नवयुवकों की तरह प्रस्तुत कहानी की आत्मानन्द भी साम्राज्य की इसी नीति का शिकार बनाता है।'' 111

42. प्रेमसूत्र

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में अप्रैल 1926 को 'सरस्वती' में हुआ था और गुप्तधन-2 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -3 में इसका संकलन किया गया।

कहानी के पात्र पशुपतिनाथ की पत्नी प्रभा थी जो सुंदर थी। पशुपतिनाथ को यह पसंद थाा कि उनकी पत्नी सुंदर है तो उसकी सुंदरता की सभी तारीफ करें। पर पशुपतिनाथ कृष्णा के प्रेम में मस्त था, इसलिए उसने एक दिन तैयार होकर उसके साथ कृष्ण के यहॉं आने को कहा पर इसकी

भनक प्रभा को पड़ गई थी पशुपति और कृष्णा के बीच कोई रिश्ता है, इसलिए वह पशुपति के साथ न जाकर अम्मा के साथ कृष्णा के यहाँ गई। कृष्णा और प्रभा एक दूसरे से मिले। प्रभा को इतना पता चल गया कि कृष्णा सुन्दर है, पर वह इतनी मार्डन है जो उसके पति के लिए ठीक नहीं। प्रभा को फिर भी पति के कोड में से कृष्णा के प्यार भरे पत्र मिलते रहे। नौबत यहाँ तक आ गई कि एक दिन पशुपति ने प्रभा को सामने से कृष्णा से अपनी शादी करने की याचना की, क्योंकि वह उसे और कृष्णा दोनों को चाहता था। यही बात कृष्णा से भी पशुपति ने की पर कृष्णा ने प्रभा के प्यार को ध्यान में रखते हुए उसे मना किया। प्रभा मायके चली गई और पशुपति विलायत गया तथा गोरी मेम से शादी करके बारह साल बाद लौटा। तब पशुपति और प्रभा की बेटी शांति चौदह साल की हो गई थी उसकी शादी में प्रशुपति और प्रभा एक हुए।

43. लांछन

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अगस्त 1926 को 'माधुरी' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-1 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू रूप 'इल्जाम' शीर्षक से प्रेम चालीसी में संकलित है।

कहानी की जुगनूबाई बड़ी चतुर, मुँहफट एवं बड़ी तीखी थीं। हर व्यक्ति का राज वे जान लेती थी और उसको वे नुकसान पहुँचाती थी इसलिए लोग उनसे डरते थे। उस गांव के स्कूल में एक नई हेडमिस्ट्रेस आई जिसका नाम मिस खुरशेद था जो एक्टिंग में माहिर थी। उन्हें जुगनू के बारे में पता चला तो उसे सबक सिखाने का तय किया। उन्होंने उनकी डॉक्टर मित्र मिस लीला का सहारा लेकर एक नाटक रचा। जब जुगनू मिस खुरशेद के घर उनके खानदान से पूँछताछ कर रही थी तो मिस लीला लड़के के भेष में आकर मिस खुरशेद से दो प्रेमी की तरह मिली दूसरे दिन यह बात पूरे शहर में फैल गई। दूसरे दिन जब जुगनू वापस वहाँ गई तो तो मिस लीला नशा चढ़ा कर आई थी और वे अश्लील बातें कर रही थी। दूसरे दिन स्कूलवालों ने तय किया कि मिस खुरशेद को निकाल दिया जाय। जुगनू वहीं पर थी, मिस खुरशेद गाड़ी लेकर पहुँची। गाड़ी में मिस लीला थी वह भी आदमी के वेष में। सबने उन्हें निकालने की बात की तो वे गाड़ी से बाहर निकली और लोगों को सारी हकीकत बताई। जुगनू शर्म के मारे वहाँ से चली गई।

44. सती - 1

जिसका प्रकाशन हिन्दी में मार्च 1927 को 'माधुरी' में हुआ था और बाद में नारी जीवन की कहानियाँ, मानसरोवर-5 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू रूप 'ख्वाबो ख्याल' में संकलित है।

इस कहानी की चिंतादेवी की माँ बचपन में ही मर गई थी। पिता हमेशा रणभूमि में रहते और चिंतादेवी भी पिता के साथ रहती थी। जब चिंता बारह वर्ष की हुई तभी पिता की भी मृत्यु हो गई। तब से एक घोड़ा लेकर और हथियार लेकर अपने भूमि की रक्षा करती रहती थी। सब उससे डरते थे। चिंता आजीवन बह्मचर्य की रक्षा करना चाहती थी पर उसके काफिले में रतनसिंह नामक एक युवक था, वह उसे पसंद करने लगा क्योंकि रतनसिंह कितना बड़ा भी काम क्यों न करता पर बड़ाई कभी नहीं करता था। एक बार शत्रुओं ने उसके काफले के एक आदमी की मदद से उस पर हमला कर दिया, उस समय सब सो रहे थे। तीन लोग थे जो चिंता को मारने आये थे पर रतनसिंह से उनकी मुठभेड़ हुई। जिसमें चिंता तो बच गई पर रतनसिंह बुरी तरह से घायल हो गया। तीन दिन तक उसे होश न रहा। जब उसे होश आया तो उसने चिंता को एक स्त्री हृदय रूप में देखा। अब चिंता को राज-पाट की नहीं अपने पति यानी रतनसिंह की चिन्ता थी। उसी दौरान दुश्मनों ने उस पर आक्रमण किया और सब लोग मारे गये। जब यह बात चिंता को पता चली तो उसने सती बनने का तय किया। चिता जली और उसमें चिंता भी बैठी तभी रतनसिंह आया और चिंता से कहा कि वह भाग आया है। तभीं चिंता की आंखे खुली और उसने चिता में बैठे-बैठे उसकी कायरता पर लज्जित किया और सती हो गई। रतनसिंह भी शर्म के मारे उसी चिता में कूद पड़ा।

45. दो सखियाँ

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में फरवरी-मार्च-अप्रैल-मई 1928 को 'माधुरी' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-4 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में प्रेम चालीसी में संकलित है।

दो साखियाँ पद्मा और चन्दा की शादी के बाद की कहानी है। वे अपने सांसारिक अनुभवों को तथा दुखों को पत्रों के माध्यम से एक दूसरे को कहती हैं। मैं यहाँ पर पहले पद्मा और बाद में चन्दा की कहानी को दर्शने का प्रयत्न करना चाहती हूँ।

पद्मा :-- पद्मा नये खयालातों की आजाद औरत थी। जिसने विनोद के अनोखे रूप एवं ऐशो आराम से घायल होकर उससे शादी करती है। पहले तो पद्मा अपने रूप पर इतराती थी और विनोद के साथ ऐश करती थी, पर विनोद की कमाई तीन सौ रूपये थी, इसलिए उसने गृहस्थी चलाने के लिए

अपने हाथ को बॉधा। वह पद्मा को रूपये देता पर उन रूपयों से पद्मा को घर चलाना था और विनोद उसमें दखल न देता था। उनके पड़ोस में कुसुम रहती थी। पद्मा को यह गवारा न होता कि विनोद कुसुम से बोले। इसलिए उसने विनोद को जलाने के लिए भुवन मोहनदास गुप्त जो एक बंगाली बाबू थे उनसे गाढ़ी मित्रता की। उन्हें घर पर खाने के लिए बुलाया तथा उनकी वजह से पद्मा और विनादे में झगड़ा हुआ। नौबत यहॉं तक आ गई कि विनोद का घर छोड़कर चले गये। विनोद दो-तीन दिन कुसुम के पास रहा। वहॉं से बम्बई गया और जहर खा लिया। उसने कुसुम को पत्र लिखकर सब बताया। कुसुम फौरन बम्बई गई और दो तीन दिन तक उसका इलाज करवाया तब जाकर वह ठीक हुआ।

इधर पद्मा को कुसुम के द्वारा पता चला कि विनोद विलायत जा रहा है, उसने विनोद के पते पर दो बार तार भेजा। दिन रात उसकी राह देखती रही पर जब कुसुम विनोद को लेकर आई और उसके द्वारा उसके जहर खाने का पता चला तो वह दंग रह गई। पद्मा ने अपने और भुवन के रिस्ते को दिल्लगी बताया पर कुसुम ने उसे एहसास दिलाया कि विनोद की यह हालत इसी दिल्लगी के कारण से हुई। पद्मा को कुसुम की पवित्रता एवं महानता पर यकीन आ गया। वह उससे माफी मॉंगी। इसी पर डॉ. कुमारी नूरजहॉं कहती हैं कि--" प्रेमचन्द ने आर्थिक स्वार्थ की भावना का कारण पाश्चात्य सभ्यता माना है। उन्होंने दो 'सखियॉं' कहानी में बताया है कि जरा-जरा सी बातों को पेट में न डालने से घर बिगड़ते हैं तथा कितनी युवतियॉं इसी अधिकार गर्व में अपने को भूल जाती हैं। इसी के सुझाव स्वरूप मुंशी प्रेमचंद ने बताया कि पति-पत्नी स्वतंत्र रूप से रहकर अनके कठिनाईया अवश्य झेल सकते हैं, परन्तु संयुक्त परिवार विश्रृंखल हो जाने की पूर्ण सम्भावना है।'' 112

चन्दा :-- चन्दा का व्याह विनोद बनारसी के साथ हुआ जो पेशे से एक वकील थे। चन्दा पुराने खयालातों की औरत थी। शादी में कुछ कमी आ जाने के कारण ससुराल वालों ने उसे विदा न करवाया था पर विनोद ने कुछ दिन बाद उसे विदा करा लिया। चन्दा ने संयुक्त परिवार में रहती थी। जहॉं सास-ससुर और ननद साथ में रहती थी। वह उन सबकी बड़ी सेवा करती थी पर वे लोग उसे कोसते रहते थे। इतने पर भी वह आज्ञांकित बहू बनी रहती है, लेकिन परिवारवालों की नजरों में वह उपर नही उठ पाती है। एक बार किताब के मामले में ननद से झगड़ा हो गया, जिस पर पति ने चंदा का साथ दिया। पर क्या था सास ने उसे बहुत सुनाया और घर से चले जाने को कहा। विनोद भी घर छोड़ने पर उतारू हो गये, और छ दिन तक घर न आये पर जब नौकर से पता चला कि मैंने भी छ दिन से खाना नहीं खाया तो वे घर लौटकर आये। ननद ने भाई को

घर के अन्दर बुलाया मॉ-बेटे में बहुत बातचीत हुई मुझसे मिलने आये और मुझसे माफी मांगी और हम दोनों ने साथ में बैठकर खाना खाया। इसी पर कुमारी नूरजहॉ का कहना है कि--" पारिवारिक जीवन के मध्य हम नारी को वधू के रूप में पाते हैं उसके परिवार में सास, ननद, देवर आदि हैं वास्तव में उसका जीवन यहॉ भी सुखी नहीं है। क्षण-क्षण पर उसकी परीक्षा होती है और उसका समाधान करना सरल समस्या नही है। 'दो सखियॉ' में पत्रात्मक शैली में चन्दा के पत्रों में इसका विस्तृत विवेचन हम पाते हैं। 113

इस कहानी के बारे में रामदीन गुप्त का भी मानना है कि--" पत्रात्मक शैली में लिखित 'दो सखियॉ' कहानी को 'कहानी' कहने की अपेक्षा लघु उपन्यास कहना अधिक युक्तियुक्त होगा। इसमें प्रेमचन्द ने क्रमश: प्राचीन और नवीन आदर्शों की भक्त दो सखियों के माध्यम से वैवाहिक प्रथा, नारी की स्वाधीनता, स्त्री और पुरुष के समानाधिकार आदि प्रश्नों पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। प्रस्तुत कहानी से स्पष्ट हो जाता है कि प्रेमचन्द विवाह को एक सामाजिक समझौता ही मानते थे, धार्मिक गठबंधन नहीं। वैवाहिक प्रथा 'दो सखियों' के विनोद के विचार प्रेमचन्द के ही विचार हैं।'' 114

46. अभिलाषा

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में अक्टूबर 1928 को 'माधुरी' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-4 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ -4 में इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी में लेखक अपने आप को स्वयं स्त्री पात्र बताते हैं। कहानी का कथानक इस प्रकार है। आज मेरे घर के समाने रहने वाले पानवाले ने अपनी स्त्री, जिसे वे जान से भी ज्यादा चाहते थे, उसे मार -मारकर घर से निकाल दिया। मैं खड़ी रही, क्योंकि मैं यह सोच रही थी कि पानवाले की स्त्री वापस आ जाए और पानवाला उसे मना ले पर ऐसा न हुआ। रात हुई तो मेरे पति बगल में सो रहे थे। मुझे पहले की कितनी सुखमय यादें मेंरे ऑखों के समाने घूमने लगी। तभी एक दु:खी गीत सुनाई दिया। मुझे ऐसा एहसास हुआ कि मेरा पति मुझसे प्यार नहीं करता , क्योंकि वह मेरे लिए कभी भी रोया नही था। मैं वह गीत सुनकर जोर से चिल्लाई और चीख पड़ी। तभी मेरा पति जगा और मैंने उससे कहा कि आप मुझसे प्यार नहीं करते तो वे मुसकराये, मुझे दु:ख हुआ पर जब वे गीत सुने तो वे भी रोने लगे और में अपने पति के वक्षस्थल पर सो गई तब मुझे लगा कि मेरा पति मुझे प्यार करता है।

47. खुदी

जिसका प्रकाशन उर्दू में हुआ था पर तिथि अज्ञात है और ख्वाबोखयाल (प्रथम संस्करण 1928) एवं खाके परवाना में संकलित है। हिन्दी में गुप्तधन, भाग-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -4 में इसका संकलन किया गया।

यह कहानी दिलदारनगर की एक अनाथ लड़की मुन्नी की है। गॉववालों को यह पता नहीं था कि यह लड़की कहॉ से आई पर उन्होंने उसे पाल पोसकर बड़ा किया था। बड़ी हुई तो बड़ी रसीली बनी। गांव के लड़के उस पर मरते थे। पर मुन्नी को किसी पर भी सच्चा प्यार न दिखा। एक बार वह आ रही थी तो उसे एक मुसाफिर मिला जो दिल से चोट खाया हुआ था। मुन्नी को उसकी ऑखों में सच्चा प्यार दिखा। इसलिए उसने उस मुसफिर को उसी गॉव में रुकने के लिए कहा। वह समझती थी कि उसे यहॉ सच्चा प्यार मिलेगा। मुसाफिर मुन्नी की बात सुनकर वहॉ रुका, झोपड़ा बनाया। अब मुन्नी और वह दोनों साथ रहने लगे पर एक दिन अचानक उसे लगा कि मुन्नी उसे दगा देगी तो वह चला गया। लेकिन मुन्नी ने अपनी पूरी जिन्दगी उसकी राह देखते हुए उसी झोपड़े में अपने सारे जीवन को बिता दिया।

48. मॉ

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जुलाई 1929 को 'माधुरी' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-1 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में प्रेम चालीसी में संकलित है।

प्रस्तुत कहानी करुणा और उसके बेटे प्रकाश की है। करुणा के पति सत्याग्रह में जेल में गये थे और तीन साल बाद जब वे जेल से लौटे तो बहुत दुबले हो चुके थे एवं शील के रोग से पीड़ित थे। जिसकी वजह से वह बहुत ज्यादा न जी पाये। करुणा ने अपने बेटे प्रकाश को मेहनत मजदूरी करके पढ़ाया। वह चाहती थी कि प्रकाश देश और अपनी जाति की सेवा करे, पर प्रकाश भौतिक सुख के पीछे पागल था। उसे स्कूल से जब भी किसी कैम्प में सेवा करने जाना हो तो वह वहॉ न जाता । करुणा को बहुत दुख होता। अब प्रकाश अपनी मॉ से मिलने कभी -कभी नही जाता। इस बार जब विद्यालय खुला तो उसके पास एक रजिस्ट्री पत्र आया जिसमें लिखा था कि उसे स्कूल की तरफ से विदेश पढ़ने के लिए भेजा जा रहा है पर करुणा ने इस बात से इनकार कर दिया। जिस पर मॉ बेटे में काफी बहस हुई। प्रकाश हप्ते भर में काफी दुबला-पतला हो गया, तो करुणा मान गई और रजिस्ट्रार के पास जाकर लेटर ले आई। प्रकाश खुश था पर करुणा दुखी थी। प्रकाश जब गया तो वह खूब रोई फिर भी काम करती। प्रकाश की चिट्ठी आई तो उसने फाड़ दिया और फिर उसे तीन

दिन तक जोड़ती रही, जिसमें लिखा था कि वह यूरोप जा रहा है जिससे वह तीन दिन न सोई, पर जब वह सोई तो फिर कभी न उठी। इसी पर शिवकुमार मिश्र कहते हैं कि--" कारुणिक संदर्भों की कहानी है यह। पुरानी और नई पीढ़ी की मानसिकता का फर्क बड़े साफ तौर पर कहानी में उजागर हुआ है। आदर्श सेवा, त्याग, नई पीढ़ी के लिए बेकार शब्द हे। 'मॉ' कहानी में नई पीढ़ी की व्यावहारिक बुद्धि को बड़े यथार्थ संदर्भों में उजागर किया गया है।'' 115

49. देवी-1

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में हुआ था। तथा प्रेमचालीसी (संस्करण 1930) में संकलित है। (संस्करण 1930) हिन्दी में गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-4 में संकलित की गई।

इस कहानी में लेखक अपने अनुभव को दर्शाते हैं। मैं अपने बरामदे में खड़ा था तब अमीनुद्दीला पार्क की बाहर सड़क पर एक अन्धा फकीर भीख के लिए चिल्ला रहा था। पार्क में एक औरत बेन्च पर बैठी थी, वह उठी और फकीर को एक कागज का टुकड़ा दिया। फकीर उसे हाथ में टटोलने लगा। मैं भी कुतुहल वश नीचे जाकर फकीर के सामने खड़ा रहा और फकीर ने मुझे उस कागज के बारे में पूछा। मैंने उसे बताया कि वह दस रूपये का नोट था। मैं उस औरत के पीछे उसे मिलने गया। तब वह औरत एक झोपड़पट्टी मैं अपनी झोपड़ी का ताला खोल रही थी। मैंने रात में जाना ठीक न समझा और सुबह तड़के उसके घर गया। तब मुझे पता चला कि वह एक विधवा है। मैंने उस रात की बात बताई तो उसने सहजता से कहा, वह रूपये उसके काम के नहीं थे। मैं उस देवी के पैरों पर गिर पड़ा।

50. उन्माद

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जनवरी 1931 को 'माधुरी' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-2 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -4 में इसका संकलन किया गया।

कहानी के बारे में रामदीन गुप्त लिखते हैं कि--" प्रेमचन्द ने प्राचीन भारतीय संस्कृति के मुकाबले में जहॉं आधुनिक पश्चिमी सभ्यता का विरोध किया है, वहीं वस्तुत: उन्होंने आधुनिक पूंजीवादी समाज-व्यवस्था का ही विरोध किया है। यह बात दूसरी है कि ऐसा करते हुए प्रेमचन्द अनजाने ही प्राचीन भारतीय संस्कृति की पुन: स्थापना का स्वप्न देखने लगे हैं।'' 116

इस कहानी का पात्र मनहर विलायत जासूसी पढ़ाई के लिए सरकार की तरफ से जाता है, तब वह अपनी पत्नी बगेश्वरी को बड़े प्यार से चूमकर जाता है। वहॉं जाने के बाद उसके चर्चे हर जगह होने लगते हैं। इग्लैन्ड में अच्छी पोस्ट पाने के लिए वह वहॉं की अंग्रेजी लड़की जेनी का सहारा लेता

है। तथा उससे शादी भी करता है। जेनी अंग्रेज होने की वजह से वैसे तौर तरीके अपनाती है। अब जब मनहर की पोस्टिंग इन्डिया में हुई तब उसने जेनी अपनी पहली पत्नी को मृत बताया। जेनी अंग्रेजी होने के कारण अंग्रेजों से ही मिलती जो मनहर को पसंद न आता। दोनों में दूरियॉं बढ़ीं और यह दूरी इतनी बढ़ी कि मनहर मानसिक रोगी हो गया। उसे पिछले तीन साल का कुछ याद न रहा। वह वहॉं से निकल कर अपने घर पहुॅंचा। इधर बागेश्वरी को पता चला कि मनहर ने दूसरी शादी कर ली है। सास, ससुर ने उसे दूसरी शादी करने को कहा पर उसने सास-ससुर की सेवा की। अब तो सास भी विधवा हो गई थी और एक दिन जब सास पानी भरने बाहर गई तो मनहर को बीमार पाया। वह उसे घर लेकर आई पर बागेश्वरी की सौत न थी। छ महीने बाद जब जेनी के पैसे खतम हुए तब वह मनहर को ढूॅंढ़ते हुए उसके घर पहुॅंची पर उसकी पत्नी को जिन्दा पाया तो मनहर को गाली देती हुई चली गई। इसी सन्दर्भ में रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" उन्माद में वे दिखाते हैं कि पश्चिमी सभ्यता में स्त्री का केवल व्यावसायिक महत्व रह गया है। पूंजीवादी समाज-व्यवस्था ने सामन्वादी, पितृ-सत्तावादी भावुकतापूर्ण पारिवारिक संबंधों का अंत कर उन्हें रूपये-आने-पाई के हृदयहीन और नग्न स्वार्थपूर्ण संबंधों में परिणत कर दिया है।'' 117

51. फातिहा

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में मार्च 1929 को 'विशाल भारत' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-7 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -4 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी का असदखॉं बचपन से पलटन के अनाथालय में पला बड़ा , और बाद में सिपाही बना। उसके चर्चे हर जगह होने लगे। वह बड़ा दिलेर और हिम्मतवान आदमी था। एक बार उसने देखा की एक अफरीदी ने उसके एक साथी को चाकू से घायल कर दिया और भागा। असदखॉ उसके पीछे गया और उसने उसको मार दिया। दूसरे दिन उसके चर्चे सभी जगह फैल गये। पर न जाने क्यों असदखॉं के हाथ पैर कॉंप रहे थे और उसे उस आदमी को मार कर चैन भी न था। सुबह असदखॉं अपने बड़े साहब सरदार हिम्म्तसिंह को मिला, जिन्होंने उसकी न केवल पीठ थपथपाई पर अपने घर भी ले गये। तभी एक भयानक दिखने वाली औरत उनके घर के पास आई और मेरी तरफ ऑखें निकालकर और थूककर गई। हिम्मतसिंह भी उसे देखकर डर गये तभी मेंने उस औरत एवं उसके डरने का कारण पूॅछा। सरदार ने बताया कि वह औरत तूरया है। पॉच साल पहले वह भी जोशीले थे, उनके चर्चे थे। तभी एक रात अफरीदी ने मेरे हाथ पैर बांध दिये और मुझे मारने लगे पर जब मैंने उन्हें बताया कि सरकार मुझे छुड़ाने के उन्हें दो हजार देंगे तो वह मेरे ऑख पर

पट्टी बांधकर पथरीले पहाड़ियों के बीच ले गये और एक खत लिखाया और गुफा में बंद कर दिया। रोज चार रोटी और एक ग्लास पानी देते। एक महीना गुजरने पर भी पैसे न आए तो मुझे मारने की ठानी और सरदार ने उसी रात मैंने पश्तों में गीत गाया। यह सुनकर सरदार की बेटी ने उसकी मदद की और पंद्रह दिन की मोहलत बढ़ाई। मैंने उसे बताया कि उसके बच्चे अकेले हैं और उसकी पत्नी मर गई है। उसने मुझे वहॉ से छोड़ा और जाने का रास्ता बताया तथा यह भी कहा कि जाकर वह पैसे भिजवाये। मैंने वैसा किया। मैंने तुरिया के डर से अपनी पत्नी को मायके भेज दिया। तीन साल बाद मैंने उसे मायके से बुलाया।

एक रात वे दोनो बालकनी मे बैठे थे और एक औरत कुछ बेचने आई। बीबी ने कहा पश्तो नहीं आती थी इसलिए मैं भी नीचे गया। उस औरत ने मुझसे पूछा तुम्हारी पत्नी है तो मैंने कहा कि हॉ। पर जब उसने कहा कि दूसरी पत्नी है तो मैं झल्ला गया और कहा कि क्यों वह मेरी पत्नी को मार रही है। इस पर उसने मेरी पत्नी को छूरे से मार दिया , वह तुरिया थी। तुरिया मेरे बच्चें को मॉ की तरह चाहती है और कुछ न कुछ दे जाती है। उस रात असदखॉ को नींद न आई उसे लगा कि तुरिया उसे मारने आई है और जब ऑख खुली तो ऐसा हुआ भी। तुरिया छूरी लेकर सामने खड़ी थी। मेंने उससे छूरी छीन ली तो वह विस्मित होकर मेरी तरफ देखती रही और बोली कि मैं उसका भाई हूँ क्योंकि उसके हाथ में सॉप जैसा निशान था। वैसा हूबहू तुरिया के हाथ में था। वह बोली कि जब वह छोटा था तब मॉ-बाप दोनों लड़ते थे। एक बार लड़ाई में मॉ घायल हो गई और असदखॉ उसके पीछे था। पिता ने मॉ को बचाया था पर उसे न पाया। उसका असली नाम नाजिर था और उसने जिसको मारा था वह उसका पिता हैदर था। दूसरे दिन सुबह असदखॉ ने हिम्मतसिंह को सारी हकीकत बयान किया और अपने पिता की लाश को विधिवत दफन किया और असदखॉ और तुरिया ने फतिहा पढ़ा। हिम्मतसिंह ने तुरिया से शादी करना चाहा पर तुरिया ने मना किया उनके बच्चों की मॉ जरूर बनी।

52. घासवाली

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में दिसम्बर 1929 को 'माधुरी' में हुआ था और बाद में मानसरोवर-1 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ -4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में प्रेम चालीसी में संकलित है।

कहानी के बारे में डॉ. कल्पना गवली का कहना है कि--" ग्रामीण परिवेश में प्राय: देखा गया है कि कुछ जाति के लोग निम्नजाति की स्त्रियों की इज्जत से खेलते हैं, बल्कि वे उनकी इज्जत को

इज्जत नहीं समझते। उनके साथ यौन-खिलवाड़ करना वे अपना जन्म सिद्ध अधिकार समझते हैं। प्रस्तुत कहानी में प्रेमचंदजी ने ग्रामीण जीवन के इस आयाम के एक दूसरे पहलू को प्रस्तुत किया है।'' 118

कांति मोहन ने भी कहानी के बारे में कहा है कि--" इस कहानी से प्रेमचंद यह साबित करना चाहतें हैं कि सदियों से शोषित, प्रताड़ित और पशुवत जीवन व्यतीत करने वाली अछूत तबकों में भी आत्म सम्मान की ज्योति है और इसके प्रकाश में सवर्ण भी अपनी भूल सुधार सकते हैं।'' 119

इस कहानी की मुलिया चमारिन थी। उस पर सारे गांव के लोग मरते थे। इस पर शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" प्रेमचंद अपने सहज-स्वाभाविक अंदाजे बर्या से हटते हुए इस तरह मुलिया के रूप और सौंदर्य को उजागर करते हैं। सरलता और सादगी की अनलंकृत गरिमा को उभारने वाले यथार्थ के आग्रही रचनाकार न होकर मानो तरल संवेदनाओं और अतिशय सर्जनात्मक कल्पना छवियों के चितेरे कोई छायावादी कवि है। प्रेमचन्द की यह शैली इस बात को सामने लाती है कि भाषा और शिल्पकी अपनी बुनियादी सहजता के बावजूद उसके हर रूप पर कैसी महारत और कैसा अधिकार था। संक्षेप में ही सही प्रेमचन्द के कवि रूप की यह बानगी प्रीतिकर तो है ही, कलम और कथन की भंगिमाओं पर उनके अधिकार को भी दर्शाती हैं।'' 120 महावीर मुलिया का पति था जो तॉंगा चलाता था, पर मोटरकार आने पर तॉंगे से आमदनी कम होने लगी इसलिए मुलिया घोड़े के लिए घास छिलती और बाकी बेचती। डॉ. बलवन्त साधू जाधव इसी सन्दर्भ में कहते हैं कि--" परिस्थिति मनुष्य को गुलाम बनाती है और इस हालत में से बचने का कोई उपाय उसे ज्ञात नहीं रहता है। इससे उसका बेबस और लाचार मन कठिनाइयों से टकराने के अलावा प्रवाह पतित होता है। महावीर का जीवन इस प्रकार है।'' 121

गांव के लोग जब मुलिया जाती तो उसे छोड़ते। एक बार चैनसिंह जो गांव का अमीर था उसने मुलिया का हाथ पकड़कर अपना दिल का हाल सुनाया पर मुलिया ने ऐसा करारा जबाब दिया कि उस दिन से चैनसिंह सीधी राह पर आ गया। इसी पर शिवकुमार मिश्र कहते हैं कि--" प्रेमचन्द इस कहानी में दलित के आत्मसम्मान को तो उजागर करते हुए उसी रक्षा कर सके हैं, भद्र लोक की कलई खोलते हुए भी उसके प्रतिनिधि को चरित्र में आने वाले बदलाव का चित्रित कर अपनी मान्यता की रक्षा भी कर सके कि स्थितियॉं आदमी को बदलती हैं- बदल सकती हैं, उसके लिए सही संदर्भ और सही अवसर यदि मिले। आदमी के भीतर का देवता जाग भी सकता है। आदमी कोई भी हो,

बुनियादी तौर पर खुदा नहीं हैं- स्थितियॉ ही उसे भला-बुरा बनाती हैं और वही उसके चरित्र -सोच और आचरण को बदल भी सकती हैं।'' 122

मुलिया घास छीलने नहीं जाना चाहती थी पर सास के दुत्कारने पर वह गई। मुलिया ने एक खेत में घास अच्छी देखी तो वहॉ घास छीलने लगी पर वह खेत चेतनसिंह का था। चेतनसिंह ने वहॉ पहुॅचकर मुलिया से माफी मांगी पर मुलिया ने उसको खूब गालियॉ दी एवं खरी-खोटी सुनाई। कुछ समय बाद चैनसिंह को शहर जाना पड़ा तो उसने महावीर को बुलाया। शहर में उसने अपना काम पूरा किया और बाहर निकला तो देखा कि कुछ लोग मुलिया को छेड़ रहे थे। चैनसिंह से यह न देखा गया तो उसने महावीर से कहा कि वह रोज उससे एक रूपया ले जाय पर उसकी पत्नी मुलिया को घास बेचने न भेजे और ऐसा होने भी लगा। कुछ दिन बाद महावीर ने मुलिया को सब सच बताया और मुलिया ने भी चैनसिंह को मिलकर उसका शुक्रिया अदा किया। इसी पर शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" दलित जीवन संदर्भों को एक नये दृष्टिकोण से देखन और उभारने वाली यह प्रेमचन्द की एक ऐसी कहानी है जो उनकी इस सोच को सामने लाती है कि तथाकथित भद्रलोक जिनके जीवन को जिनकी अस्मत-आबरू को अपने हाथ का खिलौना समझता है, उनमें सब अपनी मजबूरियों के चलते बिक जाने वाले ही नहीं हुआ करते, उनमें ऐसे भी होते हैं जो भद्रलोक के चेहरे की असलियत को भी उजागर करने की सामर्थ्य रखते हैं, उनके धन बल और बाहुबल तथा उनके ऊॅचे होने के भ्रम को तोड़ने और निरस्त करते हुए उन्हें नितान्त दयनीय और निरीह रूप में अपनी तथाकथित मर्यादा को दुनिया की नजरों में बचाये और बनाये रखने के लिए उन्हें इस हद तक लाचार कर देते हैं कि वे उनकी कृपा के आकांक्षी बनकर सामने आये, जिन पर, जिनके जीवन और अस्मत-आबरू पर जो कभी अपना एकाधिकार समझते थे। बड़ी व्यंजक कहानी है यह दलित जाति की एक घासवाली के चरित्र को उसके समूची ऊर्जा और उन्मेष में उजागर करने वाली। यह कहानी यह भी बताती है कि भद्रता, इज्जत-आबरू भद्र लोंगों की बपौती ही नहीं, वे उन लोगों के जीवन की भी अपनी न्यामते हैं, जिन्हें सदियों से समाज और उसके भद्र लोक ने नरक की नियति लेकर जीने और जिन्दा रहने को विवश किया है।'' 123

53. सौत

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में दिसम्बर 1931 को 'विशाल भारत' में हुआ था और गुप्तधन , भाग-2 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ -4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में जनवरी 1932 में चन्दन प्रकाशित हुई।

इस कहानी के रजिया और रामू पति-पत्नी हैं। जिनके तीन बच्चे पहले मर चुके थे। असी कारण रामू रजिया से उदासीन रहने लगा और अब रजिया पहले की तरह खूबसूरत भी नहीं थी। रामू अब रजिया से रोज झगड़ा करता, एक दिन तो उसने रजिया की सौतन को ही घर पर ला दिया। जिसके कारण दो महीने तक घर में झगड़े होते रहे और अंत में नौबत यहाँ तक आ गई कि रजिया को घर छोड़ना पड़ा। वह दिन दहाड़े गांव वालों के सामने पहने हुए कपड़ों के साथ घर से निकलकर पड़ोस के गांव में चली गई। रामू जानता था कि उसकी तरह अच्छे से कोई घर नही सँभाल सकता था। रजिया ने जी तोड़ मेहनत की, और दो जोड़ी बैल तथा खुद का मकान बनवा लिया। इधर रामू का दासी पर से मोह कम हुआ। वैसे भी दासी कामचोर थी और बेटा होने के बाद तो वह कुछ न करती। उपज कम होने लगी। खर्च बढ़ने लगे। जिसके कारण रामू पिसता गया और वह बहुत बीमार हो गया। रजिया को पता चला तो वह उससे मिलने गई। रामू ने माफी माँगी और हमेशा के लिए आंखे बंद कर ली। रजिया ने रामू का क्रिया-क्रम से लेकर भोज तक का सारा खर्च उठाया एवं जोखू की जिम्मेदारियाँ भी ली और सात साल जोखू का रिस्ता भी अच्छी जगह करवाया। दासी ने न केवल अपनी सारी गलती मानी पर अब रजिया की दासी बनकर रहने लगी और रजिया उसे अपनी बेटी की तरह रखती।

54. सती - 2

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में मई में 1932 को 'चन्दन' में हुआ था तथा आखिरी तोहफा में संकलित है। हिन्दी में मानसरोवर, भाग-4 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -5 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में मुलिया कल्लू पति-पत्नी हैं। मुलिया अत्यंत रूपवान न थी पर कल्लू रूपवान न था। कल्लू नहीं चाहता था कि उसकी पत्नी को कोई देखे, इसलिए वह खुद बहुत काम करता था। लेकिन कल्लू का चचेरा भाई राजा खूब रूपवान था, जो मुलिया पर मरता था और कल्लू उसे घर में आने से रोक नहीं सकता था। एक बार तीज के दिन कल्लू ने मुलिया के लिए साड़ी ली, पैसे के अभाव की वजह से वह मँहगी साड़ी न ले पाया पर राजा अपने भाग्य को अन्दाजने के लिए मुलिया के लिए एक अच्छी सी चूनर ले आया और अपनी कसम देकर चूनर मुलिया को दे दिया। यह बात कल्लू को पता चला तो वह अन्दर ही अन्दर घुलने लगा और व्यसनी हो गया। इससे कल्लू बीमार पड़ा और खूब ज्वर आ गया तब एक दिन उसने राजा की चूनर की चर्चा की तभी उसको पता चला कि मुलिया कसम की वजह से चूनर तो ली पर उसे उसने जला दिया। पर तब तक काफी देर हो

गई थी। थोड़े दिनों में कल्लू मर गया। छ महीने बाद राजा कल्लू के घर गया तब तक उसकी पत्नी मर गई थी इसलिए उसने मुलिया से शादी का प्रस्ताव रखा पर मुलिया ने साफ कह दिया कि उसके लिए उसका भाई मर गया होगा पर मुलिया के लिए वह अभी भी जिन्दा है।

55 नेउर

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जनवरी 1933 को 'हंस' में हुआ था और मानसरोवर, भाग--2 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'जादे-राह' में संकलित है।

कहानी के बारे डॉ. कुमारी नूरजहॉं कहती हैं कि--" हमारा ग्रामीण समाज देवत्व की ही प्रति मूर्ति है। सदभावनाओं और सद्इच्छाओं से पूर्ण है। उसमें छल-कपट तनिक भी स्पर्श नहीं करने पाया है। किसान अथवा ग्रामों से सम्बन्धित प्रत्येक स्थान पर इस तथ्य के दर्शन होते हैं। इन भोले-भाले किसानों को चतुर जनता अनेक प्रयत्नों से छलती एवं ठगती है। प्रेमचन्द की 'नेउर' कहानी ऐसी ही है। इसमें ग्रामीणों की सादगी, निश्चलता, निष्कपटता की ओर संकेत है।''124

इस कहानी का नेउर चालीस साल का है। पर वह अब भी ऐसा काम करता जो युवान को सरमा दे। वह खेत में काम करता और घर जाकर अपनी पत्नी बुधिया को खाना बनाकर खिलाता। बुधिया जब शादी करके आई तब नौकर-चाकर थे पर अब दिन बदले गये थे। एक बार चूल्हें पर खाना बनाने गई तो उसकी आंखे लाल हो गई तब से नेउर ही खाना बनाता। एक बार गांव में एक बाबा आए। सब उन्हें कुछ न कुछ देते। नेउर ने उनकी बड़ी सेवा की। बाबा ने उससे कहा कि वह जितनी चांदी लाएगा, उसको वे डबल कर देगें। नेउर ने अपनी पत्नी के सारे गहने, पैसे तथा कुछ उधार लेकर बाबा को सब दिया और दूसरे दिन उसका डबल लेने गया तो बाबा गायब हो गया था। उसकी पत्नी रोने लगी। नेउर बाबा को ढूंढ़ने गया तो तीन महीने बाद वह भी एक साधू बन गया। उस पर एक स्त्री की श्रद्धा बैठी और वह अपने पति को सास के चंगुल से निकालने के लिए नेउर को अपने सोने के गहने दिये पर नेउर वह न ले पाया और अपने गांव वापस लौटा। तब उसे पता चला कि उसकी पत्नी मर गई है। अब वह उसी घर में रहता, एक वृक्ष के नीचे बैठा रहता। लोग जो कुछ भी देते उससे उसका गुजारा चलता।

56. कातिल की मॉं

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'वारदात' में (पांडलिपि तैयार: मार्च 1935, प्रथम संस्करण:1938) में संकलित है। हिन्दी में सोलह अप्राप्य कहानियॉं, प्रेमचन्द का अप्राप्य साहित्य, खण्ड-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -5 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी की रामेश्वरी को एक रात बहुत बुरा स्वप्ना आता है। वह देखती है कि उसके बेटे विनोद ने एक पुलिस अफसर का खून कर दिया और जिसमें कुछ बेगुनाहों को सजा मिली। दूसरे दिन वह इस स्वप्न का कारण जानने की चिन्ता में थी। यह देखकर विनोद ने अपनी मां से उसकी चिन्ता का कारण पूँछा। मां रात के स्वप्न के बारे मे बताया। पर विनोद ने कहा कि इसमें क्या हर्ज है। विनोद एक कांग्रेस का क्रान्तिकारी था। विनोद की सोच से अहिंसा से कोई फायदा नहीं होने वाला है। अगर वे लोग हिंसा न करेगे तो आजादी न पा सकेंगे। रामेश्वरी अहिंसावादी थी क्योंकि उसका पति भी अहिंसा के मार्ग पर कुर्बान हो गया था। रामेश्वरी अपने बेटे को समझाती है पर विनोद की सोच नहीं बदलती है। उस दिन विनोद शाम तक न लौटा। रामेश्वरी घबराने लगी। रात हुई पर वह जब न आया तो कांग्रेस कमीटी के कार्यालय गई पर वहाँ विनोद न था। आखिर आधी रात को विनोद कम्बल ओढ़े आया और मां को बताया कि उसने एक पुलिस अफसर का खून कर दिया है। रामेश्वरी ने विनोद को भला-बुरा कहा, जिस पर विनोद मां को कोसता हुआ घर से चला गया इधर पुलिस वालों ने बेगुनाहों को खून के सिलसिले में पकड़ लिया था। अदालत में केस चला। रामेश्वरी ने देखा कि कितनी ही माताएँ रो रही हैं और खूनी को बददुआ दे रही थी। रामेश्वरी ने तय किया कि वह अपने बेटे की सजा बेगुनाहों को नहीं देगी, इसलिए उसने जज से सारी सच्चाई कह दिया। सारी औरते उसके पैर छूने लगी। तभी एक आदमी ने उसके जिगर में खन्जर भोंक दिया। वह और कोई नहीं उसका बेटा विनोद था।

57. देवी-2

जिसका प्रकाशन केवल हन्दी में अप्रैल 1935 को 'चांद' में हुआ था और गुप्तधन, भाग-2 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -5 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में तुलिया की उम्र सौ साल से ऊपर की है। उसका गाँव में बड़ा मान था। जब तुलिया पाँच साल की थी तब उसकी शादी पंद्रह साल के आदमी से की थी। तीन साल बाद तुलिया का पति बाहर कमाई करने के लिए गया जो अब तक न लौटा। पचास साल तक हर तीन महीने के बाद एक चिट्ठी एव तीस रूपये आते। इधर तुलिया के जवान हो जाने पर गाँव वाले उसे पर लट्टू हो गये थे। जिसमें एक थे गाँव के ठाकुर बंसीसिंह जो उसके लिए नये-नये उपहार ले आते। एक दिन उसने तुलिया से अपने प्यार का इजहार किया, जिस पर तुलिया चिल्लाई और उसे मर जाने को कहा और ऐसा हुआ भी। दूसरे दिन बंसीसिंह मर गया। अब बंसीसिंह की पत्नी तथा बच्चों पर उसका देवर बड़ा जुल्म करते। एक बार तो बंसीसिंह की पत्नी अपने बच्चों को लेकर घर छोड़कर चली

गई। तब तुलिया ने उसको आसरा दिया और उसकी सेवा भी की। तुलिया ने उसको उसका हक वापस दिलाने के लिए गिरधर से झूठा प्यार का नाटक किया और गिरधर उसके प्यार में इतना पागल हो गया कि वह उसे दुखी नहीं देख सकता। एक दिन तुलिया ने कहा कि उसमें बंसीसिंह की आत्मा है। जो अपनी पत्नी को दु:खी नहीं देख सकता और अपने पति का हक माँग रहा है। गिरधर ने रातोरात अपनी आधी जायदाद अपनी भाभी के नाम कर दी। तब तुलिया ने गिरधर से कहा कि वंसीसिंह चाहता है कि मेरा पति वहाँ अकेला है तो मुझे सतीत्व का पालन करना चाहिए। यह सुनकर गिरधर समझ गया और तुलिया को प्रणाम करके निकल गया।

58.जुरमाना

जिसका प्रथम प्रकाशन अज्ञात है। लेकिन हिन्दी में कफन एवं प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -5 में इसका संकलन किया गया।

कहानी के अल्लासरखी मु. खैरातअली जो दारोगा थे, उनके यहाँ काम करती थी। वैसे तो दारोगा किसी का वेतन न काटता था पर अल्लारखी ऐसा करती की उसकी आधी पगार काट ली जाती थी। कभी नहीं आती तो उसका पति हुसैन झाड़ू लगाता। फिर भी कुछ न कुछ काम रह जाता। एक बार दारोगा जी ने उसे निकाल दिया, पर जब दो दिन बाद मु. खैरात बाजार में अल्लारखी को मिला तो उसका नाम वापस लिख दिया तथा उसे काम पर आने की ताकीद दी। उसी दौरान उसे एक बच्चा हुआ। उसकी वजह से उसने छुट्टियाँ लीं। बाद में बच्चा उससे छूटता न था, वह उसके पीछ-पीछे आता और कुछ काम न हो पाता था। जब अल्लारखी उसे रोता छोड़ देती और डराती कि खैरातअली आ जाएगा तो उसे डाँटेगा। उसी समय एक बार खैरातअली वहाँ आ पहुँचा और उसकी बात सुन ली। अल्लारखी को लगा कि अब उसकी नौकरी चली जाएगी, पर खैरातअली ने उस बच्चे को लेकर उसे घर जाने को कहा, ताकि वह बच्चे को दूध पिला सके और बच्चा धूप से बच जाय। अब जब पगार का दिन आया तो अल्लारखी को लगा कि इस बार उसे पगार नहीं मिलेगी और आखिरी तक उसका नाम नहीं लिया गया तो उसे यकीन भी हो गया तभी दारोगा जी ने उसका नाम लिया एवं पूरे पैसे भी दिये तो वह चकित रह गई और बहुत खुश हुई। इसी पर डॉ. शैलेष जैदी कहते हैं कि--" यहाँ जुरमाना शब्द शोषण के सारे हथकंडो को बे-आबरू कर देता है और कहानी में जो कुछ नहीं कहा गया है वह सब कुछ अचानक मूर्त हो उठता है।'' 125

59. कातिल

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'आखिरी तोहफा' , (प्रथम संस्करण मार्च 1934) टमें हुआ। और हिन्दी में गुप्तधन, भाग-2 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -5 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी की बूढ़ी बेवा अहिंसावादी थी, वह दस साल से मोर्चो में जाती और इसी राह पर आजादी पाना चाहती थी। लेकिन उसका पुत्र धर्मवीर अहिंसा में न मानता था। तथा कांग्रेस पार्टी की बड़ाई करता तथा कहता कि वही आजादी दिलवायेगी। बूढ़ी बेवा ने बेटे की यह नीति जानने के लिए न केवल कांग्रेस पार्टी का हिस्सा बनी और पिस्तौल चलाना भी सीखी। बूढ़ी काकी का निशाना अचूक था यह देखकर सब दंग रह जाते थे। एक दिन कांग्रेसवालों धर्मवीर को एक अफसर को खून करने का काम दिया। मॉं डरी पर बेटा मक्कम था। रात को 9-11 के बीच अफसर को मारना था। मॉ-बेटे ने खाना खाया, गले मिले, खूब रोए और अपने काम के लिए निकले। पहले जब गाड़ी गई तो अफसर के साथ एक मेम थी, इसलिए बूढ़ी बेवा ने धर्मवीर को गोली न चलाने दी। बूढ़ी बेवा नहीं चाहती थी कि उसका बेटा खूनी बने इसलिए जब दुबारा गाड़ी आई तो बूढ़ी बेवा ने धर्मवीर का हाथ रोका, लेकिन उसने गोली चलाई पर अंधेरे में गोली कहॉ लगी पता न चला। गाड़ी निकल गई उसने देखा कि वह गोली उसकी मॉं को लगी। मॉं ने कहा कि तेरे हाथों से मुझे मौत मिलने पर मैं पवित्र हो गई। धर्मवीर मॉ की लाश लेकर चला गया।

60. मनोवृति

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मार्च 1934 को 'हंस' में हुआ था और मानसरोवर-1 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -5 इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी के बारे में डॉ कुमारी नूरजहॉ का कहना है कि--" प्रेमचन्द की यह कहानी आधुनिक मनोवैज्ञानिक कहानियों से स्पर्धा करने वाली कहानी है। यह इलाचन्द जोशी की कहानियों के सदृश किसी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित नहीं है? और न ही मस्तिष्क के भोगोलिक प्रदेशों के पुथक निवासियों के संघर्ष की कथा है। एक साधारण सी घटना अनेक मनुष्यों के मस्तिष्क में किस प्रकार चित्र विचित्र प्रक्रिया की लहरों को तरंगित कराती है उसकी कथा है।'' 126

इस कहानी में एक औरत बगीचे के बेंच पर सो रही है। उसे सोता देखकर कई लोग परिहास करते तो कई लोग मुॅह नीचा करके चले जाते। वैसे उस समय कोई स्त्री सोए तो बड़ा बुरा एवं शरम जनक माना जाता था। इसलिए सुबह जो भी लोग टहलने आते थे वे उसे वेश्या कहते, तो कुछ उसे किसी के घर की बहू कहते, जो घर से तंग आकर निकल गई है। उन लोगों में बसंत, हाशिम, वकील डॉक्टर, वृद्धा एवं नवयौवना मीनू आदि शामिल थे। मीनू ने उस औरत को जगाया तथा पूॅछा

कि वह यहाँ कैसे आई। तब उस औरत ने बताया कि वह मि. जयरातदास की बेटी, डॉ. श्यामनाथ की बहू तथा वसन्त की पत्नी है। वह बीमार थी इसलिए टहलने आई थी बाद में थकावट के कारण वहाँ सो गई । मीनू ने उसे उसके घर पहुँचाया। डॉ. कुमारी नूरजहॉ इसी पर कहती हैं कि--" मनोवृत्ति 'शीर्षक ही ऐसा है कि पाठक को यहि किसी महत्वपूर्ण घटना का सामना करने के लिए या किसी आदर्श की उपलब्धि के लिए प्रस्तुत नहीं करता, परन्तु मानव मनोवृत्ति के चमत्कार का दृश्य दिखलाने का ही उपक्रम करता है। शीर्षक की ध्वनि स्पष्ट कह रही है कि अन्य कहानियों से भिन्न है। यह कहानी स्थूल जगत के ऊँचे-ऊँचे टीलों का परित्याग कर सूक्ष्म जगत के सारे अन्तर्तम प्रदेश की झॉंकी देने लगी है जो हमारे सारे वाह्य क्रिया कलाप का प्रेरणा स्त्रोत है। ये मुख्य कहानी की विशेषताएं हैं यह आधुनिक अमेरिकन तथा अंग्रेजी मनोवैज्ञानिक कहानियों से टक्कर लेने वाली कहानी है।'' 127

61. जादू

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अप्रैल-मई 1934 को 'हंस' में हुआ था और मानसरोवर, भाग-4 तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -5 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में नीला और मीना दोनों एक दूसरे की पक्की मित्र थी। मीना किसी से प्यार करती थी जिसके बारे नीला उससे पूँछती थी। मीना नीला को सच्चाई नहीं बताती थी। जिससे दोनों की काफी बहस हुई। गुस्से में आकर मीना सच बताती है कि वे दोनों एक दूसरे के प्यार में हैं वह उससे मिलती भी है। उसने उसे घड़ी भी दी हैं। मीना नीला को यह भी कहती है कि वह उसके प्यार से जलती है। पर अंत में जब नीला मीना को सच्चाई बताते हुए कहती है कि उसने नीला के साथ कसम खाई है, उपहार भी दिये हैं, उसके पैर पर सिर रखकर रोया भी था। लेकिन अंत में उसने पूरे मुहल्ले में उसकी बदनामी की। यह सुनकर मीना ने सर पर हाथ रख दिया।

62. दो बहनें

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अगस्त 1936 को 'माधुरी' में हुआ था और कफन तथा प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -5 में संकलिन है।

इस कहानी में रूपकुमारी तथा राजदुलारी दों बहनें हैं। वे दोनों शहर में रहती है पर आज दो साल हो बाद किसी समधी के घर मिली। रूपकुमारी बड़ी बहन है, जिसके पति उमानाथ हैं। जो एक लेखक हैं और 75 रूपयें महीने कमाते हैं। इसलिए रूपकुमारी सादे कपड़ों में जीती है। दूसरी तरफ रामदुलारी का पति रूपकुमारी के पति से कम पढ़ा लिखा था , पर किसी कंपनी में एजेंट था

और वह महीने का पांच सौ रूपये कमाता था। रूपकुमारी रामकुमारी को देखकर जल जाती। रूपकुमारी को रामकुमारी का पति गाड़ी में छोड़ देता जिससे वह और चिढ़ जाती। वह अपने पति और बच्चों से गुस्से से बात करती। रूपकुमारी अपने पति को गुरूसेवक की तरह एजेंट बनने को कहती। एक बार उमानाथ गुरूसेवक को लेकर घर आता है और उसकी बातों से रूपकुमारी को पता चलता है कि वह अफीम का नाजायज धंधा करता है और वह धहता है कि उमानाथ उसके साथ धंधा करे। उस समय रूपकुमारी कुछ नहीं बोलती पर बाद में पछताती है। वह अपने पति से कहती है कि हम तो बच गये पर अब मुझे रामदुलारी को भी बचाना होगा।

63. रहस्य

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में सितम्बर 1936 को 'हंस' में हुआ था तथा कफन और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -5 में इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी के विमल प्रकाश ने नारियों के उद्धार के लिए सेवाश्रम की स्थापना की। जिसमें वे गांव की लड़कियों को मामूली सा शुल्क लेकर पढ़ाते थे। उसमें उनकी सारी सम्पत्ति भी खत्म हो गई और कर्ज भी हो गया। साथ ही वहॉं की मेडमों की तकलीफें, आदि के अलावा दूध वाले का न आना, धोबीवाले का न आना, बाई का न आना, किसी का न मिलना, इसके अलावा ऐसी कोई लड़की भी नहीं मिलती थी जो वहॉं कम पैसे में पढ़ाये। तभी एक देवी मंजू पसंद आई, जो स्वच्छंद विचारों वाली थी और उनको विमल प्रकाश प्रस्ताव पसंद आया। उसका पति लखनऊ की किसी बैंक में नौरी करता था पर वह उन्हें बंधन में रखता था। इसके कारण वे अपने पति को छोड़कर वहॉं आई थी। सेवाश्रम अच्छे से चलने लगा। मंजू को एक बार विमल प्रकाश ने वार्षिक महोत्सव का भार सौंपा और वह सफल हुआ। जिससे उन्हें काफी लाभ हुआ। इसी बीच मंजुला बीमार पड़ी और विमल प्रकाश उससे मिलने गया तो उसे पता चला कि वह उससे प्यार करती है। वह उनके काबिल अपने आप को न समझता था इसलिए काफी दिनों तक उससे न मिला । एक बार मंजुला ने विमल प्रकाश को बीच में ही पकड़ लिया और जीवनभर का प्रस्ताव दिया पर विमलप्रकाश ने उसे मना कर दिया। जिसके कारण वह सेवाश्रम छोड़कर चली गई। एक साल के बाद मंजुला विमल प्रकाश को मंसूरी में किसी आदमी के साथ मिलती है। मंजुला बताती है वह मि. खन्ना हैं जो अमेरिका से आए है। उसका पति तो मर गया है। मंजुला विमल प्रकाश को अपने शब्दो से के जाल में ऐसे उलझाती है कि वह चाह कर भी उसके बारे में बुरा नहीं सोच पाता है।

3. दलित विमर्श और छुआछूत से संबंधित कहानियॉं

प्रेमचन्द की रचनाओं में दलित विमर्श के संदर्भ में मूल्यांकन करने से पूर्व उस दौर (1920-1936) की दलित समस्याओं पर राजनीतिज्ञों की सोच, सामाजिक मान्यताओं, दृष्टिकोण, विद्वानों, लेखकों की धारणाओं, विचारों आदि को जानना अत्यंत आवश्यक है। इसी दौर में स्वतंत्रता आन्दोलन, नवजागरण, आर्य समाज, ब्रह्मसमाज, कांग्रेसी विचारधारा, हिन्दू महासभा, गांधीजी, डॉ. भीमराव अंबेडकर आदि के आन्दोलन अपने शिखर पर थे। प्रेमचन्द का रचनाकर्म इसी दौर का है। डॉ. अंबेडकर ने दलितों की मूक वाणी को आवाज प्रदान की। दूसरी और गांधीजी ने भी अछूतोद्धार की घोषणा की। सन् 1931 की गोलमेज कांफ्रेस में डॉ अंबेडकर ने दलितों के लिए पृथक निर्वाचन की माँग की तो गांधीजी ने उसका विरोध किया। 17 अगस्त 1932 को रैमजे मैकडॉनल्ड ने अपना निर्णय दिया, जिसमें न केवल मुसलमानों के लिए पृथक चुनाव क्षेत्रों तथा अन्य सुरक्षाओं का समर्थन किया, बल्कि दलितों को एक ईकाई के रूप में मान्यता दी गई थी। गांधीजी दलितों को हिन्दू धर्म से अलग नहीं करना चाहते थे, वे चाहते थे कि उनके साथ अमानुषी व्यवहार न हो पर उन्हें पृथक करके उन्हें हिन्दू से अलग नहीं करना चाहते थे। इसी के विरोध में गांधीजी ने यरवदा जेल में 20 सितम्बर 1932 को आमरण अनशन शुरू किया। गांधीजी की हालत बिगड़ने लगी डॉ. अंबेडकर पीछे हटे एवं हिन्दू नेताओं के बीच समझौता हुआ जिसे 'पूना एक्ट' कहा जाता है। जिसके तहत दलितों को सामान्य चुनाव क्षेत्र के अंग, विधान सभाओं में अधिक सीटें, एवं हिन्दू सीटों के कोटे से अपने लिए आरक्षित सीटों के लिए निर्वाचन मंडलों द्वारा सदस्य चुन सकते हैं। प्रेमचंद गांधीवादी थे, उन्होंने अपने लेखें के द्वारा गांधीजी को न केवल सहयोग दिया पर अंग्रेजों की नीति पर कटाक्ष भी किया। "डॉ. अंबेडकर की पृथक निर्वाचन की माँग पर 22 अगस्त 1932 जागरण में उनकी संपादकीय टिप्पणी में लिखा है कि " सांप्रदायिक भेद की नीति ही आपत्तिजनक है, गवर्नमेंट भारत को राष्ट्र नहीं समझती है, हम अपने व्यवहार में ऐसा समझने का अवसर ही नहीं देते हैं। वह तो भारत को सम्प्रदायों की दृष्टि से देखती है। अतएव साम्प्रदायिक मताधिकार के लिए हम इतने इच्छुक हों, यह तो गवर्नमेंट की दृष्टि का समर्थन है।'' 128

छुआछूत हिन्दू समाज की एक भयंकर बीमारी है। धार्मिक अंध-विश्वासें द्वारा पोषित छुआ-छूत की भावनाएं हिन्दू-समाज के अधिकांश जनों में व्याप्त है। ये लोग चाहे अनपढ़ ग्रामीण स्त्री-पुरुष हों या पढ़े लिखें नागरिक हों। दोनों अपने को इस सामाजिक कुरीति से मुक्त नहीं कर सकते हैं। प्रेमचंद छुआछूत के विरुद्ध थे। मनुष्य-मनुष्य के बीच यह अन्तर अमानवीय हैं। प्रेमचंद ने हिन्दू समाज में पाये जाने वाले इस अमानवीय भाव को दूर करने का भरसक प्रयत्न किया है। कांति मोहन इसी

सन्दर्भ में कहते हैं कि--" प्रेमचन्द अछूत जातियों की बात अपेक्षाकृत व्यापक अर्थ में ही करते थे। संकीर्ण अर्थ में तो अछूतों में भंगी, चमार आदि वही जातियॉ आती हैं, जिनके सदस्यों को मंदिर और धार्मिक स्थानों आदि में जाने देने की अनुमति की तो बात ही क्या उन्हें हाथ लगाना और उनका छुआ पानी पीना भी वर्जित है और यदि उच्च जातियों के लोगों से ऐसा पाप हो जाय तो हिन्दू धर्म में उसके प्रायश्चित का विधान है। व्यापक अर्थ में इन जातियों में वे लोग भी शामिल हो जाते हैं, जिन्हें आजकल 'पिछड़ी जातियों' से सम्बद्ध माना जाता है। जैसे धोबी, पासी, गड़रिया, कुरमी, अहीर आदि। शायद उसकी वजह यह हो कि पारिभाषिक अर्थ में अछूत न होते हुए भी और खुद को उनसे ऊँचा मानते हुए भी इन जातियों के सदस्य ज्यदातर या तो छोटे किसान है या फिर खेत मजदूरी करतें हैं और गॉव की श्रेणी सारणी में इनका स्थान काफी नीचे होता है। प्रेमचंद भीलों, कंजरों और अन्य उपेक्षित जन जातियों को भी इसी वर्ग में शामिल कर लिया है। शायद इस व्यापक दृष्टिकोण के कारण ही प्रेमचन्द अपनी कहानियों में अक्सर पात्रों की जातियों का उल्लेख तक नहीं करते। ऐसे में अनेक रीति -रीवाज या आचार-व्यवहार से ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उनका संबंध तथाकथित -दलित' या निम्न जातियों से है।''129

अछूत समस्या के अनेक पहलू हैं। कुछ लोग इसे मात्र धार्मिक दृष्टिकोण से देखते हैं।" 26 दिसम्बर 1932 को संपादक प्रेमचंद ने अपने साप्ताहिक 'जागरण' में लिखा था कि हरिजनों की समस्या केवल मंदिर प्रवेश से हल होने वाली नहीं है। उस समस्या की आर्थिक बाधाएं धार्मिक बाधाओं से कहीं कठोर है। -- असल समस्या तो आर्थिक है। यदि हम अपने हरिजन भाइयों को उठाना चाहते हैं तो हमें ऐसे साधन पैदा करने होगे जो उन्हें उठने में मदद दें। विद्यालयों में उनके वजीफे करने चाहिए, नौकरियॉं देने में उनके साथ थोड़ी सी रियायत करनी चाहिए। हमारे जमींदारों के हाथ में उनकी दशा सुधारने के बड़े-कड़े उपादान हैं। उन्हें घर बसाने के लिए काफी जमीन देकर उनसे सज्जनता और भलमनसी का बरताव करके हरिजनों की बहुत कुछ कठिनाइयॉं दूर कर सकतें हैं।'' 130

प्रेमचंद ने किसानों को भी दलितों के अन्तर्गत रखा है। जिस पर डॉ. रामवृक्ष कहतें हैं कि--" ब्राह्मण भारतीय किसान का परम्परागत शोषक है। सैकड़ों वर्षों से भारतीय समाज में ऐसी परंपराएं चल रहीं हैं, जिसके कारण ब्राह्मण का शोषण वैद्य बन गया है। किसान इस शोषण को नहीं समझता और न पंडितजी इसे शोषण समझतें हैं। प्रेमचंद ने इस परम्परागत शोषण को शोषण के रूप में दिखाया है। पंडे-पुजारियों का यह शोषण 'दान' के रूप में होता है। इसमें देने वाला लेने वाले पर कोई उपकार नहीं करता, बल्कि उल्टे लेने वाला दान लेकर देने वाले पर उपकार करता है।'' 131

इसी सन्दर्भ में डॉ. कुमारी नूरजहॉ कटाक्ष करती हुई कहती हैं कि--" वास्तव में किसानों का कल्याण दबे रहने में ही है। यदि हम इसका विरोध करते हुए किसानों को देखते हैं तो इसके परिणाम स्वरूप अनर्थ ही घटित होता पातें है। स्वयं प्रेमचन्द के शब्दों में :- केले को काटना इतना भी आसान नहीं, जितना किसान से बदला लेना। उसकी सारी कमाई खेतों में रहती है या खलिहानों में। कितनी ही दैविक और भौतिक आपदाओं के बाद कहीं अनाज घर में आता है। और जो कहीं इन आपदाओं के साथ विद्रोह ने भी सन्धि कर ली तो बेचारा किसान कहीं का नहीं रहता।'' 132 किसानों के इतने भयंकर शोषण के बावजूद जमींदारें का कर्जदार रहना यह बताता है कि यह शोषण का स्वायत सामन्ती तरीका नहीं है, बल्कि उप-निवेशवाद का तरीका है। मैंने यहॉ प्रेमचंद की दलित-विमर्श एवं छुआछूत से संबंधित कहानियों को लिया है एवं उनकी संक्षिप्त चर्चा भी की है।

1.गरीब की हाय

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'आहे बेकस' में अक्टूबर 1911 को जमाना में हुआ था। हिन्दी में 'गरीब की हाय' नाम से मानसरोवर, भाग-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ -1 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी के मुंशी रामसेवक एक वकील थे, लेकिन उनका घर वकालात से नहीं बल्कि गॉव के लोग उनके घर पर पैसे रखते थे, उससे उनका घर चलता था। राम सेवक पैसे लेता पर वापस न करता, जिसके कारण वह कितनी बार बदनाम भी हुआ। मूँगी नाम की एक विधवा जिसका पति पुलिस में था और वह शहीद हो गया था। जिसके कारण सरकार ने मूँगी को पॉच सौ रूपये दिये थे। मूँगी ने पैसे रामसेवक को दिए और हर महीने उससे खर्च के लिए रूपये लेती। पर कुछ समय बाद भी जब मूँगी न मरी तो रामसेवक ने उससे पूँछा कि वह कब मरने वाली है। मूँगी समझ गई और अपने पैसे वापस मॉगने लगी, पर रामसेवक ने एक भी पैसा वापस न दिया। जिस पर मूँगी ने अदालत और पंचायत में केस किया। लेकिन उसका कुछ परिणाम न निकला। मूँगी पागल हो गई। ऑखे लाल, बिखरे बाल, दिन-ब-दिन पतली होने लगी। अब वह अपने घर में न रहकर तालाब के पास रहने लगी। मूँगी जानती थी कि अगर वह रामसेवक के घर के सामने मर जाए तो कोई भी व्यक्ति रामसेवक से रिश्ता नही रखेगा। एक गाय की मृत्यु पर भी लोगों को कई दिनों तक भीख मॉग कर खाना पड़ता है तो एक वृद्धा के मरने के बाद कितना प्रायश्चित करना पड़ेगा। मूँगी तीन दिन तक भूखी प्यासी रामसेवक के घर के सामने पड़ी रही और मर गई । अब मूँगी स्वप्न में रामसेवक और उसकी पत्नी नागिन तथा बेटे रामगुलाब को दिखने लगी। कोई चमार उनके यहॉ काम

करने न आता। दस दिन बाद उसकी पत्नी नागिन मर गई। कुछ दिन बाद वह अदालत गया तो कोई उससे बात न करता। बहुत दिन तक यह चला वह बद्रीनाथ चला गया। काफी दिनों के बाद एक साधू आया जो बिल्कुल वैसा दिखता था जैसा रामसेवक दिखता था। रामसेवक का पुत्र मामा के घर गया। लेकिन उसके रंग-ढंग की वजह से वह वहॉं न रह पाया। एक बार लड़ाई में उसने सारा खलिहान जला दिया और पुलिस ने उसे पकड़ लिया तथा उसे रिफामेटरी स्कूल में रख दिया। इधर रामसेवक का घर जल कर खाक हो गया।

2. खून सफेद

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जुलाई 1914 को 'जमाना' में हुआ था। तथा प्रेमपच्चीसी में संकलित है। हिन्दी में मानसरोवर, भाग-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -1 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में गॉव में बारिश न होने की वजह से लोगों ने पेट के खाड़े को पूरने के लिए कपड़े, गहने, बरतन गिरवी रखे तथा बाद में बेच दिये। अब तो नौबत यहॉं तक आ गई कि महाजन किसान और किसान मजदूर बन गये। लोग मजदूरी करने बाहर जाने लगे। जिसमें जादोराय का परिवार यानी उसकी पत्नी देवकी और चार साल का बेटा साधो शामिल था। एक दिन वे लोग आम के बगीचे में बैठे थे। साधो को सुबह से बुखार था। शाम को जब वह उठा तो उसे भूख लगी और देवकी ने उसे पिता के पानी लाने तक इंतजार करने को कहा। उसी समय मोहनदास जो एक पादरी था वह अपना डेरा लिए वहॉं आया और साधों को बिस्किट और केले दिये। तीन दिन तक साधो वहॉं ही रहा और चौथे दिन वह डेरे के साथ चला गया। जादोराय और देवकी ने उसे खूब ढूँढ़ा पर वह न मिला। चौदह साल बीत गये। मेघ राजा ने खूब मेहर की। जिसमें मजूर किसान और किसान महाजन बन गये। जादोराय भी अब अमीर बना, उसे एक पुत्र माधोसिंह और एक पुत्री शिवगौरी थी। गॉंव में उसकी काफी धौंस थी। कोई भी धार्मिक काम उससे बिना पूँछे नहीं होता है। घर में पक्की छत, बैलों की जोड़ी आ गई थी। एक दिन अचानक एक नौजवान बायसिकिल लेकर आया। वह साधों था। उसने अपने माता-पिता को बताया कि वह खाने की लालच में वहॉं से निकल गया, पर वहॉं से उसे मिशनरी में भेजा गया। आज जब वह अपने माता-पिता को बगैर नहीं रह सकता था तो वह वापस आ गया। यह बात सुनकर गॉंव वाले धर्मसंकट में आ गये क्योंकि वह पादरी हो गया था। उसे धर्म शुद्धि के लिए एक घर में रहकर भी अलग खाना-पीना पड़ेगा। जगतसिंह ने जादोराय को यह सलाह दी वरना वे जादोराय के परिवार को बिरादरी से निकाल देगें। जादोराय ने

जब जगतसिंह की बात कबूल की तो साधो से न रहा गया। वह अपनी माँ एवं भाई-बहन से बेगाना होकर नहीं रह सकता था इसलिए वह वहाँ से न चाहते हुए भी चला गया।

3. बलिदान

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मई 1918 को 'सरस्वती' में हुआ था तथा मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ -2 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'कुरबानी' शीर्षक से जनवरी 1919 को 'जमाना' में प्रकाशित हुआ तथा 'प्रेमबत्तीसी' एवं 'देहात के अफसाने' में संकलित है।

इस कहानी मंगरू कान्सटिबिल बनकर मंगलसिंह हो गया, कल्लू अहीर ने जब से हलके के थानेदार से मित्रता की तब से गाँव का मुखिया बनकर कालिकादीन बन गया और हरखचंद कुरमी हरखू जो एक शक्कर मिल का मालिक था वह मशीन की शक्कर आ जाने के कारण गरीब किसान बन गया। हरखू कभी भी बीमार होता तो दवाई न लेता, दो चार दिन में वह अपने आप ठीक हो जाता, पर एक बार उसे मलेरिया हो गया और उसने सामान्य बीमारी समझकर दवाई न खाई तो तीन महीने के बाद मर गया। गांव में उसका बड़ा मान था इसलिए उसके बेटे गिरधारी ने उसका क्रिया-क्रम बड़े धूमधाम से किया और ब्राह्मणों को भी खिलाया। हरखू के मरने के बाद सबकी नजर उसकी जमीन पर थी। ओमकारनाथ जो हरखू की जमीन का मालिक था उसे सब पेशगी तथा दस रूप्ये बीघे पर जमीन को जोतने के लिए कहने लगे। जिसमें सबसे ऊपर कालिकादीन थे। ओमकारनाथ ने दस रूपये बजाय आठ रूपये बीघे में जमीन जोतने को कहा। पर पेशगी तो उसे देनी ही पड़गी ऐसा उसने कहा। गिरधारी के पैसे न होने की वजह से वह जमीन कालिकादीन के हाथ में गई। गिरधारी शर्म के मारे मजदूरी भी न कर पाया। मंगरू ने उससे बैल माँगे क्योंकि उसको अब बैलों का कोई काम न था, उसी समय तुलसी उधार माँगने गई और मजबूरन उसे अस्सी रूपये के बैल साठ में ही बेचेने पड़े। दूसरे दिन गिरधारी गायब हो गया उसकी पत्नी ने उसे बहुत ढूँढ़ा पर वह न मिली। रात हुई तो वह बैलों के पास दो मिनिट रुककर चला गया। पत्नी ने उसे पुकारा पर वह चला गया। दूसरे दिन कालिकादीन जब खेत पर गया तब मंगरू वहाँ था, लेकिन कालिकादीन को देखकर वह कुँए में कूद पड़ा। अब उस खेत में कोई नही जाता। गिरधारी का बेटा एक ईंट के भट्टे पर 20 रूपये में काम करके कमाता और घर चलाता। पर गाँव में उसका कोई मान न था। इसी पर डा. शैलेष जैदी कहते हैं कि--" यहाँ पर कहानीकार पूँजीवाद के हाथों होनवाले गंभीर मानवीय अध: पतन को अपूर्व साहस एवं निर्दय सच्चााई के साथ व्यक्त किया है और महाजनी व्यवस्था से ग्रस्त किसान की शोचनीय स्थिति को नित्य घटित प्रमाणों से रेखांकित करता है।'' 133 इसी विषय

पर टिप्पणी करते हुए रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" अंग्रेजों ने यहॉ भी इंग्लैंण्ड के ढंग की जमीदारी व्यवस्था लागू करने का सफल प्रयास किया। जमींदार यहॉ पहले भी थे, पर वे जमीन के स्वामी नहीं थे ; उनका काम मालगुजारी वसूल करना मात्र था। अंग्रेजों ने उन्हें जमीन का स्थायी स्वामी बनाकर किसानों को बेदखल करने का अधिकार दे दिया। इस प्रकार किसान अब जमींदार का किराएदार मात्र रह गया। दूसरी ओर जमीन को रेहन रखने और बेचने की अंग्रेजी पूॅजीवादी कानून-व्यवस्था भी यहॉ लागू कर दी गई। इस तरह अब एक ओर जमीदार को और दूसरी ओर साहूकार को किसान की जमीन पर घात लगाने का मौका मिल गया। इस व्यवस्था को लागू करने पर अंग्रेजो का लक्ष्य भारत में एक ऐसे वर्ग का निर्माण था, जिसके हित साम्राज्य के हितों के साथ अविच्छेद्य रूप से सम्बद्ध हो और जो समय आने पर साम्राज्य का मुख्य रक्षा स्तम्भ बन सके। पुलिस और अदालत रूपी बैसाखियों के सहारे चलने वाले इस वर्ग ने अपने आकाओं की इस आशा को राष्ट्रीय आंदोलन के दिनों में अक्षरश: पूरा कर दिखाया था, इसमें सन्देह नहीं।'' 134

4. विध्वंस

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में 25 जुलाई 1921 को केवल 'आल' में हुआ था तथा मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ -2 में इसका संकलन किया गया।

कहानी के विषय में शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" कहानी यूॅ तो साधारण है परन्तु ' भुनगी प्रेमचंद के एक एक अविस्मरणीय चरित्र के रूप में कहानी के भीतर से उभरती है। उसकी असहायता और निरीहता के भीतर छिपी उसकी तेजस्वी छवि, उसके स्वाभिमान और उसके हृदय में सुलगती विद्रोह की उस आग से भी प्रेमचंद अपने पाठकों को परिचित कराते हैं, जो प्रेमचंद जैसे रचनाकार की कलम से ही सामने आ सकती थी। ग्रामीण जीवन का जितना भरा पूरा चित्रण हमें प्रेमचंद में मिलता है, हम कह चुके हैं कि वह अन्यत्र विरल है। मुख्य धारा के किसानों की प्रधानता के बावजूद ग्राम जीवन के हाशिए में जी रहे दलित, खेत-मजदूर, कंजड़ सब उनकी निगाह के दायरे में अपने ताप-त्रास के साथ आए हैं। इस कहानी में ऐसा ही हाशिए का चरित्र भुनगी का चरित्र है।'' 135

इस कहानी की भुनगी बेसहारा अकेली विधवा बूढ़ी स्त्री थी। उसके पास कुछ न था, सिवाय एक भाड़ के। जहॉ वह अनाज भूनती और उससे जो मिलता उसी से अपना गुजारा करती। सारा गांव वहीं अनाज भुनवाने जाता था। वह पंडित उदयभान पांडे का गांव था। मकरसंक्रान्ति के दिन नया अनाज भूनना था। उसके भाड़ पर भीड़ थी। वह आज खूब पैसा कमाना चाहती थी पर उसमें

जमींदार साहब ने दो मन अनाज दिया। वह शाम तक वह अनाज न भून पाई। वैसे भी जमींदार बेगार में उससे धान भुनवाना चाहते थे। धान न भूनने के कारण उन्होंने भाड़ तोड़ दिया। थोड़े दिन भुनगी वहीं रही। लोगों ने उसे किसी और गांव में जाने की सलाह दी पर वह न गई। दो महीने बाद भुनगी ने लोगों के कहने पर फिर से भाड़ बनाया, पर जब उदयभान ने देखा तो उसे अपने आदमियों सें तुड़वा दिया और उसकी पत्तियों को जला दिया। भुनगी उसी आग में कूद पड़ी। सारा गांव देखने लगा। देखते ही देखते आग बढ़ी और आग पंडित के घर तक पहुॅच गई। पंडित का घर जलकर खाक हो गया। डॉ. कुमारी नूरजहॉ इसी सन्दर्भ में कहती हैं कि--" ये जमीदार अपने अधीनस्थ समस्त व्यक्तियों को बहुत कष्ट देते थे। सम्पूर्ण ग्रामीण समाज, किसान क्या नौकर सभी इस शोषित समाज से त्रस्त थे, दुखी थे। उनकी हार्दिक व्यथा को सुनने का कोई प्रयास ही न करता था। इस प्रकार अहंकारी लोग गरीबों को किस तरह सताते हैं, इसका भी नग्न चित्र इसमें विद्यमान है। ग्रामीण जन अपने जीवन यापन की समस्या को ही सुलझाने का प्रयत्न नहीं कर पाता है। वह बहुत दुखी है।'' 136

इसी पर बलवन्त साधू जादव कहतें हैं कि--" स्वतन्त्रता काल में जमींदारों, महाजनों, पूॅंजीपतियों, महन्तो की सख्तियों से बेगार-प्रथा, जाति-प्रथा के आधार पर मजदूरों का मनमाना शोषण किया जाता था और इससे उन्हें अपार कष्ट उठाना पड़ता था। इस आतंकमय हालत में ऐसा माना जाता है कि जिसका कोई नहीं है उसका भगवान होता है, लेकिन विनाश के समय भुनगी की सहायता करने के लिए न भगवान दौड़ता है और न दूसरा कोई। मृत्यु ही उसे यातनाओं से मुक्ति दिलाती है।'' 137

5. सवा सेर गेहूॅं

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1924 को 'चांद' में हुआ था तथा मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'फिरदौसे ख्याल' में संकलित है।

कहानी के विषय में शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" यद्यपि प्रेमचन्द ने इस कहानी की कथा कहने की नितांत परम्परागत तथा जानी-बूझी शैली में लिखा है, कहानी के अंत में पाठकों को संबोधित करते हुए और उन्हें अपने विश्वास के दायरे में लेते हुए कि यह कहानी नहीं , एक सत्य घटना है, परंतु बावजूद इस परिचित और पुराने शिल्प के अपनी समाजिक निहितार्थता में यह कहानी नितांत बोधक और रोमांचक अनुभव देने वाली कहानी है। कदाचित इसीलिए यह प्रेमचन्द की बहुचर्चित

कहानियों में से एक है। कहानी में जो कथ्य हैं, वह प्रेमचन्द जी का स्वानुभूत भी है और सामंती व्यूहरचना में घिरे बेबस भारतीय गाँवों की अपनी सच्चाई भी। इस कथ्य को अलग-अलग तेवरों और तरीकों में प्रेमचन्द ने अपनी कुछ दूसरी कहानियों में भी उठाया है। उनके उपन्यासों में ग्रामीण जीवन या किसान जीवन की यह वास्तविकता उजागर हुई है।'' 138 इसी पर कांतिमोहन का भी कहना है कि--'' 'सवासेर गेहूँ' में दिखाया गया है कि महाजनी शोषण और भारत के जन मानस में व्याप्त धर्म तथा जन्मांतर सिद्धान्त का किस तरह चोली दामन का संबंध है और कहीं महाजन खुद ब्राह्मण हो तब तो और भी सोने में सुहागा हो जाता है।'' 139

इस कहानी का शंकर सीधा-सादा था, खुद चबेना खाता पर साधू संतो को खिलाता। एक बार एक साधु आया तो उसने विप्रमहाजन के यहॉं से सवा सेर गेहूँ लेकर बीबी से पिसवाकर साधु को खिलवाया। साधू सुबह आशीर्वाद देकर चला गया। साधू ने सवासेर गेहूँ के बदले विप्र महाजन के यहॉं ज्यादा खलिहानी दी। शंकर को लगा कि विप्र महाजन समझ गये होगें। सात साल के बाद विप्रमहाजन बने और शंकर किसान से मजदूर बना क्योंकि उसका भाई मंगल उससे अलग हो गया तो खेत भी कम हो गया और एक ही बैल भी रहा जिससे बाकी खेती भी सही ढंग से नही हो पाती थी। तभी एक दिन महाजन ने शंकर से पॉंच मन गेहूँ मॉंगे। शंकर के पूँछने पर विप्रमहाजन ने बताया कि सात साल पहले शंकर उसके घर से सवा सेर गेहूँ ले गया था। शंकर ने ज्यादा खलिहान देने की बात की दलील की पर महाजन न माना और ब्राह्मण के पैसे खाने के पाप को उसके सर पर मढ़ने लगा। आखिर तय हुआ कि शंकर साठ रूपये तथा ब्याज के पंद्रह रूपये साल भर में विप्रमहाजन को देगा। शंकर ने खूब मेहनत करके साल भर में साठ रूपये इक्ट्ठा किया पर ब्याज के पंद्रह रूपये न जमा कर पाया। जिसके कारण विप्रमहाजन ने सैकड़े पर तीन रूपये के दर से ब्याज लगाया। तीन साल तक विप्र कुछ न बोला पर जब रूपये एक सौ बीस हुए तब वह शंकर से फिर बोला। शंकर अब देने की स्थिति में न था। इसलिए उसे आजीवन महाजन के खेत का गुलाम बना दिया। शंकर की बीबी और उसका बेटा मंगल काम करके पैसे कमाते जिससे उनका परिवार चलता। बीस साल हो गये अब भी शंकर विप्र महाजन के घर काम करता है और उसे वह सवा सेर गेहूँ कष्ट दायक लगता। अब तो उनका बेटा मंगल भी वहॉं काम करने लगा। इसी सन्दर्भ में कुमारी नूरजहॉं कहती हैं कि--'' किसानों की निश्चलता के साथ ही पुनर्जन्म में विश्वासी होने के कारण उन्हें इतने कष्ट सहने पड़े। यह संसार ऐसे शंकरों और ऐसे विप्रो से दुनिया खाली नहीं है। इस कहानी का शंकर यह

विचार कर संतोष करता है कि हमारे भाग्य में ये ही था। पूर्वजन्म में जैसा किया है उसी को भोगते हैं। यह है हमारे सशक्त वर्ग का अत्याचार। फिर भी ये सभ्य है।'' 140

इसी सन्दर्भ में ड़ा कांतिमोहन भी अपने विचार प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि--" आज जबकि 20 सूत्री कार्यक्रम के अंतर्गत बंधुआ मजदूरों (जनमें अधिकांश अछूत हैं) को ऋणमुक्त करके उन्हें नई जिंदगी देने के लिए एक ओर तो कागजी योजनाएं तैयार की जा रही है। और दूसरी ओर इन्हें तैयार करने वाले ही कर्म का सिद्धान्त प्रतिपादित करते घूम रहें हैं, प्रेमचन्द की यह कहानी बहुत प्रासंगिक है। यह हमें बताती है कि आर्थिक कदम उठाने के साथ-साथ अछूतों की समस्या के इस पहलू से निपटने के लिए कर्म और जन्मांतर की विचारधारा पर भी प्रहार करना होगा।'' 141

7. शूद्रा

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'नीच जात की लड़की' शीर्षक से दिसम्बर 1925 को चांद में हुआ था। हिन्दी में 'शूद्रा' नाम से जनवरी 1926 को चांद में हुआ था। तथा मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-3 में जिसका संकलन भी किया गया।

कहानी के प्रारम्भ में ही डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" अपने पति को भगवान समझने वाली भारतीय भोली-भली नारी पति का भला चाहती है और भले ही वह परायी जाति का ही क्यों न हो ? उसके संबंध में किसी अनैतिक विचार को मन में उपज ने नहीं देती है, जो उसके गहरे विश्वास का परिणाम है। परन्तु जाति व्यवस्था के बन्धनों के प्रभाव में आने वाला पति जब उसे धोखा देता है तब उसकी दशा आधार रहित लता की तरह होती है। फलत: शक्तिशाली और सम्पन्न लोग उसे विलास का खिलौना बनाते हैं। दलित गौरा का जीवन इसी तरह की ट्रेजडी है।'' 142

इस कहानी की गंगा और गौरा मॉं बेटी हैं। वे लोग अछूत थे। गौरा के पिता के न होन से उसकी मॉं पत्तियॉं इकट्ठा करके भाड़ झोंककर कमाती और अपने परिवार का गुजारा करती। अब गौरा बड़ी हो गई इसलिए उसकी मॉं गंगा को उसकी शादी की चिंता लगी रहती थी। एक मंगरू नाम का एक युवक नौकरी की तलाश में कलकत्ता जा रहा था। रात होने पर वह गंगा के गांव में ही कहार का घर ढूँढ़ते हुए उसके घर जा पहुॅंचा। गंगा ने उसकी बड़ी आवभगत की। बाद में गौरा की सगाई की बात की। मंगरू को गौरा पसंद आ गई, इसलिए उसने सगाई के लिए हॉं बोल दिया। उसने अपनी बहन के दो चार गहने उधार लाकर अपने दोस्तों के साथ आकर सगाई की रश्म पूरी की और अपनी ससुराल में ही रहने लगा।

कुछ दिन के बाद पता चला कि लोग उसके बारे में तरह-तरह की बातें कर रहे हैं क्योंकि उसने नीची जाति में शादी की थी। अब वह पछताने लगा। आग में घी तब पड़ा जब वह अपनी बहन के गहने लौटाने गया और उसका बहनोई उसके साथ खाने न बैठा। बहनोई ने पंचायत के निर्णय के बाद ही उसके साथ खाने पीने और संबंध रखने की बात की। यह बात मंगरू को लग गई वह गौरा के पास लौट कर तो गया पर रातो रात वहॉ से भाग गया। गौरा कई साल तक अकेली रही पर मंगरू की याद में खुश रही। एक बार कलकत्ता से एक बूढ़ा ब्राह्मण उसे लिवाने के लिए आया। ब्राह्मण ने उसे बताया कि उसे मंगरू ने भेजा है, पर दरअसल वह ब्राह्मण एक दलाल था जो औरतों को कलकत्ता ले जाकर बेंच देता था। गौरा के साथ भी वही हुआ। उसे कलकत्ता ले जाया गया और वहॉ से उसे मिरचि देश में जहाज से भेज दिया गया वहॉ उसे एक विधवा औरत मिली उसने उससे सारी हकीकत बताई वहॉ उसे मंगरू भी मिल गया। लेकिन एक अंग्रेज की नजर गौरा और उस विधवा औरत दोनों पर थी। वह दोनों को अपनी हवश का शिकार बनाना चाहता था। मंगरू के विरोध करने पर अंग्रेज ने उसे काफी बेंत मारी। जिससे वह बेहोश हो गया। गौरा ने पति की जान बचाने कि लिए कहा कि वह उसके घर आएगी। गौरा ने उसके घर जाकर उसकी मॉ एवं उसकी दुखती रंग पर शब्दों का करारा वार किया और वहॉ से वापस आयी , तीन दिन बाद मंगरू को होश आया तो गौरा ने उसे सारी सच्चाई बताई पर पुरुषोचित पति ने पत्नी के चरित्र पर लांछन लगाया जो गौरा न सह सकी और नदी में कूदने गई। मंगरू ने उसे पुकारा पर वह नदी में कूद पड़ी। सुबह दोनो की लाश नदी में तैरती हुई मिली।

इसी पर कांतिमोहन कहते हैं कि--" इस लंबी कहानी का नायिका गौरा एक कहानी है। कहानीकार ने उसकी कहानी से यह साबित करने की कोशिश की है कि आमतौर पर कुछ विशिष्ट गुणों या चारित्रिक विशेषताओं को कुछ खास जातियों के साथ जोड़ने का जो रूझान पाया जाता है, वह गलत और बेबुनियाद है। सतीत्व या पतिव्रत भी ऐसा ही एक गुण है। आमतौर पर ऊँची जाति-बिरादरी की नारियों में ही इस गुण की खोज की जाती है। शायद इसका कारण यह हो कि एक तो इन जातियों में विधवाओं के पुनर्विवाह की व्यवस्था नहीं और दूसरी रोजी-रोटी के लिए इन्हें इतना संघर्ष नहीं करना पड़ता। नीची जातियों की स्त्रियों की तुलना में इन स्त्रियों को काफी मात्रा में सामाजिक सुरक्षा प्राप्त है। लेकिन प्रेमचंद ने अपनी कई कहानियों में निचली और अछूत जातियों की महिलाओं में यह गूण प्रभूत मात्रा में प्रदर्शित किया है।''143 वे आगे भी लिखते हें कि--" शूद्रा का उद्देश्य भी इसी तथ्य को रेखांकित करता नजर आता है कि गुणों पर किसी जाति या किन्हीं जातियों

की इजारेदारी नहीं है इसलिए निचली समझी जाने वाली जातियों को भी उनसे वंचित नहीं समझना चाहिए।'' 144

7. बाबाजी का भोग

जिसका प्रथम प्रकाशन अज्ञात है। हिन्दी में इसका प्रकाशन एवं संकलन 'प्रेमप्रतिमा' (प्रथम संस्करण: 1926) मानसरोवर, भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ -3 में भी इसका संकलन किया गया है।

कहानी के विषय में कल्पना गवली का मानना है कि --''यह बड़ी ही सार्थक सटीक और व्यंग्य कहानी है। गरीबों और दिलतों का शोषण जमीदार, महाजन और सरकार के अमले ही नहीं करते, बल्कि धर्म के धुरंधरों द्वारा भी उनका शोषण होता है। प्रस्तुत कहानी इस तथ्य को सशक्त ढंग से उकेरती है।'' 145

प्रस्तुत कहानी का रामधन एक अहीर एवं बड़ा गरीब इन्सान था। उसका अनाज खलिहान में आया तो महाजन और रायसाहब ने ले लिया। एक मन अनाज रामधन को मिला था वह भी खतम हो गया। उसी पर एक बार कोई साधू भिक्षा माँगने आया, रामधन धार्मिक प्रवृत्ति का आदमी था। उसने घर में देखा तो थोड़ा सा आटा मिला उसने वह बाबाजी को दे दिया। पर साधु ने वहीं भोग लगाने का फैसला लिया, जिसके कारण रामधन को दाल घी का भी प्रबन्ध करना पड़ा। रामधन की पत्नी उसके ऊपर झल्लाई। साधू खा-पीकर जब चला गया तो रामधन ने अपनी पत्नी से कहा कि उसका जीवन कितना अच्छा है। इसी पर रामदीन गुप्त कहते हैं कि--'' दो पृष्ठों की यह लघु कथा प्रेमचन्द की कतिपय श्रेष्ठतम यर्थाथवादी कहानियों में से है। कहानी में प्रेमचन्द ने एक परिश्रमी किन्तु, भूखे, किसान-परिवार और एक मुफ्तखोर बाबाजी के 'कन्ट्रास्ट' को पूरी यथार्थवादिता के साथ प्रस्तुत भरकर दिया है। कहानीकार अपनी तरफ से कुछ नहीं कहता, सब कुछ पाठक को सोचना पड़ता है। कहानी में किसी आदर्श की स्थापना नहीं की गई है , न कोई सुधारवादी समाधन कहानीकार की ओर से सुझाया गया हे। कहानी के अंत में पाठक सोचने पर विवश हो जाता है कि बाबाजी जैसे अकर्मण्य, आलसी मुफ्तखोर और दूसरों के श्रम पर जिंदा रहने वाले आदमी दाल बाटी उड़ाएं ? पाठक सोचने पर मजबूर हो जाता है कि आखिर इस उपजीवी वर्ग की सामाजिक उपयोगिता क्या है ?'' 146

8. मंदिर

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मई 1927 को चांद में हुआ था तथा मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-3 में संकलन किया गया। उर्दू में 'प्रेमचालीसी' में भी इसका संकलन किया गया है।

कहानी के बारे कांतिमोहन कहते हैं कि--" मंदिर दलित और शोषित चमार जाति की सदस्य सुखिया के विद्रोह की कहानी है। यह उस हृदयहीन व्यवस्था के प्रति दुखांत विद्रोह की कहानी है जो भूमिहीन, निर्धन और निर्बल तबको के आर्थिक शोषण और सामाजिक उत्पीड़न में धर्म से भरपूर सहायता लेती है। उस दौर में पूँजीपति वर्ग और पाश्चात्य शिक्षा संपन्न मध्यवर्ग के व्यक्तियों की रहनुमाई में अछूतोद्धार का समाज सुधार चल रहा था।'' 147

इस कहानी की पात्र सुखिया एक नीच कुल की विधवा थी। आज तीन दिन से उसका बेटा जियावन मूर्छित था। बेटे की चिंता में वह भी कुछ न खा पाई थी। तभी रात को उसके सपने में उसका पति आया और उसने सुखिया से कहा कि वह कल ठाकुरजी की पूजा करेगी तब लल्ला यानी जियावन ठीक हो जाएगा। तभी अचानक जियावन जगा और खाना मॉंगने लगा। दूसरे दिन सुखिया ने सोचा कि आज सारा काम करके पैसे जमा कर ले और कल पूजा का सामान खरीदकर ठाकुरजी की पूजा करने मंदिर जाएगी। लेकिन रात को जियावन फिर से मूर्छित हो गया तो उसने अपना चॉंदी का कंगन गिरवी रखकर पूजा का समाना खरीदकर मंदिर गई। इसी पर कांतिमोहन जी कहते हैं कि--" सजग पाठक का ध्यान इस कहानी के आर्थिक पक्ष पर अवश्य जाता है, हालॉंकि पूरी कहानी के ढंचे में यह पहलू अलग से और बहुत साफ तौर पर नहीं उभरता। अंधविश्वास की शिकार गरीब सुखिया बच्चे को किसी वैद्य-हकीम के पास ले जाने के बजाय अपनी मनौती पूरी करने के लिए उधार मांगने जाती है, लेकिन उसे उधार नहीं मिलता अंत में हारकर वह अपने चॉंदी के कड़े दो रूप्ये पर गिरवी रखती है।'' 148

ठंड की रात में वह जियावन को कम्बल से ढॅंककर ले गई। मंदिर में गॉंव के बहुत सारे लोग थे इसलिए वह वापस लौट आई। जब मध्य रात्रि का समय आया तब जियावन की तबियत और बिगड़ी जिससे वह दुबारा कंबल डाले जियावन को मंदिर में ले गई। सुखिया ने मंदिर के पुजारी से प्रार्थना की पर वह न माना। इस पर मंदिर के पुजारी के सो जाने के बाद वह मंदिर का ताला तोड़कर पूजा करने लगी। उसी समय पुजारी की नींद खुल गई और वह गांव वालों को बुलाने लगा। गांव वाले आए तब तक सुखिया पूजा भी न कर पायी थी, गांव वालों ने सुखिया को खूब गालियां दी और उसे मारा-पीटा भी। तब तक जियवान भी मर गया। सुखिया ने गॉंववालों को खूब गालियॉं दी

और वह जियावन के पास जाकर मूर्छित हो गई। इसी पर कुमारी नूरजहॉ कहती हैं कि--"इस सम्पूर्ण कहानी में हम केवल चमार कुल में उत्पन्न होने के दोष पाते है। हृदय में सद्भावनाओं का सामाजिक धरातल पर कोई मूल्य नहीं। यह तो जन्म से ही निश्चित हो चुका है। इस प्रकार छुआछूत हिन्दू समाज की भयंकर बिमारी दिखती है। धार्मिक अन्धविश्वासों द्वारा पोषित छुआछूत की भावनाएं हिन्दू समाज के अधिकांश जनों में व्याप्त है। इसके अनेक पहलू हैं। प्रथम दृष्टिकोण मन्दिरों से सम्बन्धित धर्मिक दृष्टिकोण हैं। द्वितीय मुख्य समस्या अभाव निहित है। समाज में जब तक शिक्षा का प्रसार नहीं होगा, तब तक उसके सामाजिक स्तर को ऊँचा नहीं उठाया जा सकता , अशिक्षित दशा में पाये जाने वाले दोष भी नहीं मिट सकते एवं उनकी आर्थिक स्थिति भी नहीं सुधर सकती है।'' 149

9. सौभाग्य के कोड़े

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जून 1924 को प्रभा में हुआ था तथा मानसरोवर-3 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-3 में संकलन किया गया। उर्दू में 'नेकबख्ती के ताजियाने' शीर्षक से 'फिरदौसे ख्याल' में संकलित है।

कहानी के बारे में कांतिमोहन का कहना है कि--" 1924 में अछूत जातियों का उद्धार करनेवाला समाजसुधार आंदोलन तो जोरों पर था लेकिन अछूत समस्या राजनीतिक समस्या नहीं बनी थी। अभी तक उच्च जातियों के लोग अछूतों के प्रति पाश्विक व्यवहार कर रहे थे और इसका फायदा उठाकर ईसाई मिशनरियों ने उन्हें हिन्दू धर्म की परिधि से बाहर ले जाने का काम तेज कर दिया था। इस कहानी का बल इस बात पर है कि अछूतों में प्रतिभा की कमी नहीं, कमी इस बात कह है कि उन्हें विकसित और प्रदर्शित करने का सुअवसर नहीं मिलते। यदि उन्हें ये अवसर प्रदान किये जाएं तो अछूत बालक भी सवर्ण बालकों की तरह ही समाज में स्थान पा सकें।'' 150

इस कहानी का नथुवा एक निम्नकुल का अनाथ बालक था। जिसे राय भोलानाथ ने मशीनरी में न जाने दिया और खुद के घर में जूठन पर उसे पालने लगे। क्योंकि वे उनके समाज में बट्टा नहीं लगाना चाहते थे। राय साहब की एक लड़की थी जिसका नाम रत्ना था। वह बड़ी कोमल और सुशील थी। रायसाहब उसे बड़े नाजों से पालते थे। एक बार नथुवा रत्ना के कमरे की सफाई करने गया तो उसके बिस्तर पर सोने व कूदने लगा। रायसाहब ने उसे देख लिया और उन्होंने नथुवा को खूब पीटा। रत्ना ने उसे बचाने की कोशिश की पर राय साहब उसे मारते रहे। नथुवा वहॉ से भाग गया। मेम ने उसे मिशनरी आने को कहा पर वह भंगी मोहल्ले में भग गया। जहॉ सब लोग गा बजा रहे थे। नथुवा ने भी गाया। किसी को उसकी कला पता न चली पर उसका उस्ताद घूरे ने उसके

हुनर को पहचान लिया। तीन साल तक नथुवा ने उसके पास गाना-बजाना सीखा और वह शहर में मशहूर हो गया। ग्वालियर का संगीत महोत्सव वह जीता और सोने का तमगा मिला। वहीं उसने संगीत के अलावा और सभी ज्ञान प्राप्त किया। जिसमें उसे आचार्य की पदवी प्राप्त हुई। देश-विदेश में घूमकर उसने खूब नाम और पैसा कमाया। ग्वालियर लौटा तो मदन कंपनी ने नथुवा जो अब ना.रा. आचार्य हो गया था, उन्हें तीन हजार मासिक पर अपनी कंपनी का निरीक्षण सौंपा। ना.रा. आचार्य लखनऊ में रहना चाहते थे इसलिए उनका रहने का इंतजाम भी वहीं किया गया। लखनऊ लौटने पर रत्ना ने ना.रा. आचार्य का स्वागत किया, वह थोड़ा शरमाया एवं डरा। उसे यह भी पता चला कि उसे रहने के लिए राय साहब का बंगला मिला है। रायसाहब वह घर सट्टे मे हार गये थे। रायसाहब ने विनती की कि वे कभी-कभी रत्ना के साथ मिलने आते रहेगें। तीन साल बीत गये जब रायसाहब को पता चला कि वे शादी शुदा नहीं है तो वे रत्ना का प्रस्ताव लेकर ना.रा आचार्य के पास गये। वह मान तो गया पर अपनी असलियत न बता पाया। शादी हो गई पर वह एक महीने तक रत्ना को सच्चाई न बता पाया आखिर एक रात रत्ना को उसने सच बताया। रत्ना ने तभी बताया कि वह उसे पहचान गई थी पर रायसाहब को सच्चाई नहीं पता और न ही पता चलने पाए। तभी नथुवा ने कहा कि सौभाग्य के कोड़े शायद न पड़े होते तो आज वह इस जगह पर न होता। इसी पर बलवन्त साधु जाधव कहते हैं कि--" दिन कभी एक से नहीं रहते और परिवर्तन तो सृष्टि का नियम है। समय का चक्र सतत घूमता रहता है। जिसके साथ मनुष्य अपने प्रयत्नों से अपने नसीब को बना देता है। भले ही वह अर्धसत्य क्यों न हो ? फिर भी कोशिश करने वाले कभी हारते नहीं, उनके हाथ कुछ लगता है। दलित नथुवा सत्प्रयासों से अपने चरित्र को उजागर करता है।'' 151 वे आगे भी कहते हैं कि--" प्रेमचन्द ने इस कहानी में सोचते हैं कि जाति-व्यवस्था जन्म पर नहीं कर्म पर टिकी हुई होनी चाहिए। समाज में पद और प्रतिष्ठा व्यक्ति को ऊँचा बना देते हैं, जिसका साक्षी है दलित नथुवा। अत: दलितों को नथुवा की भॉंति ऊपर उठना होगा।'' 152

10. मोटेराम जी का नैराश्य

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में मार्च-अप्रैल 1928 को 'समालोचना' में हुआ था तथा प्रेमचन्द का अप्राप्य साहित्य और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में इसका संकलन भी किया गया।

वैसे तो यह कहानी बहुत सामान्य है पर प्रेमचन्द इस कहानी के माध्यम से दर्शाना चाहते हैं कि ऐसा जरूरी नहीं कि सवर्ण निम्न जाति का ही शोषण करता है, बल्कि सवर्ण भी अपनी से नीची सवर्ण जाति का शोषण भी करता है। इस कहानी में लेखक यह बताना चाहता है कि एक ब्राह्मण

किस प्रकार से शोषण करता है। कहानी का घसीटा जो एक बनिया है, वह अपने बेटे को पढ़ाना चाहता है इसलिए वह माटेराम शास्त्री की पाठशाला में गया। मोटेराम शास्त्री तीस रूपये के अध्यापक तथा महाजनी करके अच्छा कमाता। जब घसीटा मोटेराम शास्त्री के यहाँ गया तो मोटेराम शास्त्री ने चिंतामणि शास्त्री के साथ मिलकर घसीटे को उसके पुत्र की पढ़ाई यानी पाटी पूजन के लिए पंद्रह लोगों के खाने के लिए पकवानों की लम्बी रसीद देकर कहा कि वे शाम को खाने के लिए आएंगें। घसीटा वहाँ से गया तो सर पर हाथ रखकर बैठ गया। जब सारे पंडित शाम को घसीटा के घर पर गये तो घर बंद था। एक घंटे तक वे लोग वहीं बैठे रहे फिर भी कोई न आया तो वे रोते हुए चले गये।

11. पूस की रात

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मई 1930 को माधुरी में हुआ था तथा मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-4 में संकलन किया गया। उर्दू में प्रेमचालीसी' में भी इसका संकलन है।

"कहानी सम्राट प्रेमचंद की कहानियाँ आम आदमी के दु:ख-दर्द की क्रूर कहानियाँ हैं। विकट परिस्थितियों में फंसे पात्र निरन्तर शोषण की चक्की में पिसते हैं। बीच में विद्रोह की चिन्गारियाँ भी भड़कती हैं। कभी ये चिंगारियाँ चरित्रों के अस्फुट स्वर के रूप उभरती हैं, तो कभी लेखक का स्वर ही मुखर हो उठता है। किसान-मजदूरों की अभिशप्त नियति को दर्शाती अनेक कहानियाँ प्रेमचंद ने लिखी हैं परन्तु 'पूस की रात' आर्थिकता की दृष्टि से श्रेष्ठ कहानियों में परिगणित की जाएगी।'' 153

प्रस्तुत कहानी घोर दरिद्रता और भूमिहीन मजदूरों तथा उनका लगान अदा करने की असमर्थता से संबंध रखने वाली कहानी है। इस कहानी में ठंडी के मौसम का जिक्र किया गया है। कहानी का पात्र हल्कू अपने को ठंडी से बचाने के लिए एक कंबल खरीदना चाहता है। जिसके लिए उसने तीन रूपये इकट्ठे कर रखे है। लेकिन उसी समय सहना उसका लेनदार वहाँ आ गया और वह उससे पैसे माँगने लगा। हल्कू की पत्नी मुन्नी ने उसे पैसे देने से मना किया पर वह सहना की गालियाँ नहीं सुनना चाहता था। इसलिए उसने सहना को कंबल के लिए रखे हुए तीन रूपये उसे लाकर दे दिए। पूस की रात में हल्कू और उसका कुत्ता झबरा खेत की रखवाली करने गये। लेकिन जब ठंडी का प्रमाण बढ़ने लगा तो हल्कू ने पास के खेत से पत्तियों के ढेर को जलाकर ठंड से अपनी रक्षा करने लगा। थोड़ी देर तक तो अच्छा लगा पर उसके बाद तेज ठंड हवाएँ बढ़ने लगी। हल्कू ने आकाश की ओर देखकर तारों से पता लगा लिया कि अभी रात काफी बाकी है। ठंडी के बढ़ने पर हल्कू और जबरा एक दूसरे से चिपककर सो गये। तभी नीलगायों का एक झुंड आया खेत को तबाह करके चला

गया। जबरा भूक रहा था और हल्कू उठना चाहता था पर ठंड के मारे उठ न पाया। सुबह हुई तो मुन्नी आई। उसने देखा सारा खेत तबाह हो गया है। मुन्नी ने हल्कू को जगाया और खेत की हालत बताते हुए चिन्ता व्यक्त की पर हल्कू खुश हुआ और बोला कि अब ठंडी रात में खेत में तो नहीं सोना पड़ेगा। इसी पर अपना विचार व्यक्त करते हुए शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" किसान जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी किसान का मजदूर बनना है। हल्कू भी अपनी अकर्मण्यता चलते किसान से मजदूर होने की नियति पाता है। परंतु हल्कू जैसा चरित्र कहानी में है, वह किसान जीवन की त्रासदी नहीं लगता है। कारण हल्कू एक 'टाइप' किसान चरित्र है ही नहीं। उसकी त्रासदी व्यक्तिगत त्रासदी है, उसकी अकर्मण्यता और पराएपन के कारण।'' 154 इसी संबध में कुमारी नूरजहॉ का भी कहना है कि--" आर्थिक विपन्नता के कारण ही वे ॠण लेते हैं और यह ॠण वह मेहमान है जो कभी जाने का नाम नहीं लेता है। भारतीय किसानों की सबसे ज्वलंत समस्या ॠण से मुक्त होने की है। आज भी अधिकांश किसान महाजनी सभ्यता के पाट के नीचे बुरी तरह पिस रहें हैं। इससे सम्पूर्ण किसान जीवन नष्ट-भ्रष्ट सा दिखता है।'' 155

इसी समस्या पर अपना विचार व्यक्त करते हुए इन्द्रनाथ मदान का भी मानना है कि--" इस कहानी में लेखक ने गठन और तत्कालिक प्रभाव की दृष्टि से ऐसी सफलता प्राप्त की है, जो विश्व के कहानी लेखकों में मुश्किल से ही मिल सकती है।'' 156

12. राष्ट्र का सेवक

जिसका प्रथम प्रकाशन एवं संकलन उर्दू में 'कौम का खादिम' नाम से में प्रेमचालीसी (संस्करण: 1930) में हुआ था। हिन्दी में 'राष्ट्र का सेवक'शीर्षक से गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-4 में संकलन किया गया।

इस कहानी का राष्ट्र का सेवक नीच जाति के उद्धार पर भाषण दे रहा था। राष्ट्र का सेवक नीची जाति के एक नौजवान को न सिर्फ गले लगाता है बल्कि मंदिर में भी ले जाता है। इन्दिरा राष्ट्र के सेवक के भाषण से खूब खुश एवं प्रभावित होता है। इसलिए वह राष्ट्र के सेवक से कहती है कि वह नीच जाति के मोहन, जिसे राष्ट्र के सेवक न केवल गले लगाया था पर मंदिर में प्रवेश भी करवाया था, उससे वह शादी करना चाहती है। यह सुनकर राष्ट्र का सेवक आग बबूला हो गया और मुॅह फेर लिया।

13. मंत्र-2

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'मन्तर' शीर्षक से फरवरी को 1928 में जमाना मे हुआ था। हिन्दी रूप 'मन्त्र' का प्रकाशन मार्च 1928 को 'विशाल भारत' में हुआ था। तथा मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-4 में संकलन किया गया।

इस कहानी के डॉ. चड्ढा शहर के सबसे मशहूर डॉक्टर थे। बूढ़ा भगत अपने सातवें बेटे पन्ना को जो किसी असाध्य रोग से पीड़ित हो रहा था। उसे वह डॉ. चड्ढा के पास दिखाने गया पर उस मसय डॉ. साहब खेलने जा रहे थे, इसलिए उन्होंने पन्ना का इलाज न किया। परिणाम यह हुआ कि उसी रात भगत का बेटा मर गया। डॉ. चड्ढा को एक बेटा और एक बेटी थी। लड़की की शादी तो हो गई थी, पर बेटा अभी पढ़ रहा था। बेटे का नाम कैलासनाथ था और आज उसकी सालगिरह की पार्टी थी। कैलाशनाथ को सांपों का बहुत बड़ा शौक था। इसलिए उसने अपने मित्रों के कहने पर बीन बजाकर सांपों को दिखाने का प्रयत्न किया। जिससे सांप ने उसे डंक मार दिया। डॉ. चड्ढा शहर के मशहूर डॉक्टरों में से था इसलिए उन्होंने सारे डाक्टरों को बुलवाया लेकिन कोई उसका इलाज न कर पाया। उसकी हालत और बिगड़ गई। सभी जानते थे कि बूढ़ा भगत ही उसका जहर उतार सकता है। पर बूढ़ा भगत उसके घर न गया। वह उससे बदला लेना चाहता था बाद में उसने अपने आप को अन्दर ही अन्दर टटोलने लगा और आखिकार वह डॉ. चड्ढा के घर जाने का तय किया। इसी पर रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" प्रतिहिंसा उसे अपनी दबोच में ले लेती है। परंतु उसका दूसरा मन उसे प्रेरित करता है, उसकी नैतिकता को उभारता है, उसे ठेलता है कि आपसी वार्तालाप के जरिए, और भगत के मानसिक ऊहापोह के स्वतंत्र चित्रण के जरिए इस द्वन्द्व को इतने सजीव रूप से उभारा है कि सारी कहानी उसी के आलोक से दीप्त हो उठी है।'' 157

डॉ. चड्ढा के घर जाकर बूढ़ा भगत उसके बेटे का जहर निकालता है लेकिन डॉ. चड्ढा उसे मिल पाए उससे पहले वह वहाँ से चला जाता है। डॉ. चड्ढा उसे बहुत ढूँढ़ते हैं पर देर हो चुकी होती है। इसी पर रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" मन्त्र का डॉ. चड्ढा आज की घोर व्यक्तिवादी एवं स्वार्थी नागरिक सभ्यता और बुड्ढा भगत सरल, निश्चल, निस्वार्थ तथा दूसरे की भलाई में प्रसन्न होन वाली ग्रामीण संस्कृति का प्रतिनिधि है। नागरिक और ग्रामीण सभ्यता के पारस्परिक अन्तर को अपनी पूरी नग्नता से उभार कर सामने रखने में प्रेमचंद को इस कहानी में अपूर्व सफलता मिली है।'' 158

14. सद्गति

जिसका प्रथम प्रकाशन एवं संकलन हिन्दी में 'प्रेमकुंज' (प्रथम संस्करण: 1930) में हुआ था और बाद में अक्टूबर 1931 को 'विशालभारत' में तथा अक्टूबर 1931 को मानसरोवर में प्रकाशित

हुई। बाद में मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-4 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'नजात' शीर्षक से 'आखिरी तोहफा' में संकलित की गई।

कहानी के विषय में शिवकुमार मिश्र का कहना है कि--" बहुत प्रसिद्ध और चर्चित कहानी है। 'सद्गति' जिस पर फिल्मकार सत्यजीत ने फिल्म भी बनाई है। दलित जीवन संदर्भों पर लिखी गई प्रेमचंद की कहानियों में 'सद्गति' अपनी अंतर्वस्तु के चलते कदाचित सबसे अधिक बेधक और रोमांचक है। समाज व्यवस्था में दलितों के लिए रचे गये, जिस नरक की चर्चा हमने की है,उस नरक को रचने वालों-वे पुरोहित हों, ठाकुर हों या साहु हों का इससे अधिक क्रूर और भयावह चेहरा शायद अन्यत्र इतना एकाग्र होकर इतने पाशव रूप में वे नहीं उजागर कर सके हैं, जितना इस कहानी में।'' 159

यह प्रेमचंदजी की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से एक है। इस कहानी का दुखी एक चमार था। जिसकी बेटी की शादी के लिए वह पंडित घासीराम के यहॉं साइत निकलवाने जाना था। जाने से पहले वह घर में झाड़ू लगाते हुए अपनी पत्नी झुरिया से घर की साफ सफाई एवं पंडित जी को दक्षिणा देने वाले सामान को गोड़ की लड़की से मंगवाकर सही रूप से रखने के लिए कहता है। बाद में पंडित घासीराम के घर जाता है उस समय पंडित जी भांग और चंदन घिस रहे थे। पंडित जी ने दुखी से झाड़ू लेकर आंगन साफ करने के लिए, लकड़ी चीरने के लिए, भूसा रखने के लिए तथा बैठक लीपने के लिए कहा। उसने सब काम तो किया पर लकड़ी न चीर पाया। उसने खाना न खाया था और खाने का समय होने पर भी पंडित जी ने उसे खाना न दिया। ऊपर से जब दु:खी चिलम पीने के लिए आग मांगने आया तो पंडिताइन ने गुस्सा किया और आग को ऐसा फेंका कि आग उसके सर पर पड़ी। दुखी इसे अपने पापो का फल समझने लगा। चिलम पीकर वह फिर से लकड़ी को चीरना चाहा पर लकड़ी का गांठ इतनी मजबूत थी कि वह न तोड़ पाया। वह सो गया। पंडित जी जब सोकर उठे तो उसे सोते देखकर धमकाया तथा लकड़ी न तोड़ने पर साइत न देखने को कहा। दुखी में उस समय जोश आ गया और वह लकड़ी पर लगातार प्रहार करने लगा। लकड़ी तो टूट गई और उसके साथ ही दुखी भी मूर्छित होकर गिर गया। पंडित जी ने दुखी से लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़े करने को कहा लेकिन तब तक वह मर गया था।

पूरे गॉव में यह बात फैल गई। गौड़ ने गॉववालों को लाश न उठाने की हिदायत दी। देर रात तक पंडित के घर रोना धोना चला। लाश में से बदबू आने लगी। अंत में पंडित ने लाश पर रस्सी डालकर घसीटते हुए खेतों में जाकर रख दिया और उसे चील कौए खाने लगे और इधर पंडित

जी ने आकर गंगाजल छिड़का। इसी सन्दर्भ में डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते है कि--" 'सदगति' में दलित गोंड़ दुखी के मुर्दे उठा कर ले जाने के संदर्भ में जो कहता है उससे यह विदित होता है कि दलितों की कुचली आवाज द्रोह का भयावह रूप धारण कर रही है।'' 160 वे आगे भी लिखते हैं कि--" अन्ध विश्वास अज्ञात की एक देन है। जिससे तर्कवृद्धि और सोचने की प्रवृत्ति नहीं होती, वह बड़े अन्ध विश्वास के साथ हर प्रथा को प्रमाण समझता है। अज्ञानवश उस बात को पलट कर देखने की जरूरत उसे कभी महसूस नहीं होती। इससे वह धोखा खाता है। दुखी झुरिया में इस तरह के ढोंगी ब्राह्मण देवता के सन्दर्भ में होने वाले अन्ध विश्वास से उनका जीवन दुखपूर्ण बनता है।'' 161

कहानी के बारे में कांतिमोहन का मानना है कि--" 'सद्गति' सड़ते हुए सामंतवाद की गिरफ्त में तड़पते भारतीय ग्राम्य जीवन का यथार्थवादी दर्दनाक दस्तावेज है। सौ वर्षों से पूँजीवादी और उच्च शिक्षा प्राप्त मध्यवर्गीय नेतृत्व में चल रहे अछूतोद्धार आंदोलन का भारत के ग्रामों को क्या नकद लाभ मिला था- 'सद्गति' उसे बेपर्दा करने की एक ईमानदार लेखकीय कोशिश है।'' 162

15. ठाकुर का कुँआ

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में हिन्दी में अगस्त 1932 को 'जागरण' में हुआ था तथा बाद में मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-5 में भी इसका संकलन किया गया।

कहानी के बारे में कांतिमोहन का मानना है कि--" यह भी एक ऐसी कहानी है जिसमें अछूतों की ठोस जीवन-स्थितियों उनके दमन और शोषण के साथ-साथ उनकी विद्रोही भावनाओं का भी चित्रण है और चित्रण के पीछे इरादा यह है कि पाठक न सिर्फ इस दमघोंटु और जनघाती व्यवस्था का स्वरूप पहचाने बल्कि उसके खिलाफ घृणा से भर उठे।'' 163

कहानी का प्रमुख पात्र जोखू बीमार है। जोखू एक नीची जाति का व्यक्ति था। जोखू पानी पीना चाहता था। लेकिन जोखू की पत्नी गंगी उसके लिए जिस पानी को ले आई थी उसमें से गंध आ रही थी। गंगी को लगा कि शायद कुँए में कोई जानवर गिरकर मर गया है। । गंगी जोखू को बीमारी की हालत में गंदा पानी नहीं पिलाना चाहती थी। वह रात के समय में जोखू के मना करने पर भी ठाकुर के कुँए से पानी भरने जाती है। वहॉ जाकर वह देखती है कि कई लोग कुँए के पास खड़े हैं इसलिए वह डरकर झाड़ियों में छिप गई। जब सब लोग चले गये और ठाकुर का दरवाजा बंद हो गया तो वह चुपके से कुँए में से पानी भरने के लिए कुँए के पास गई और पानी भरने लगी तभी अचानक ठाकुर का दरवाजा खुला और वह चिल्लाया कौन है ? तब गंगी ने मटका छोड़ दिया और वहॉ से भागी। मटका टूट गया, वह जब लौटी तो देखा कि जोखू वही गंदा पानी पी रहा था।

इसी सन्दर्भ में बलवन्त साधू कहते हैं कि--" असमर्थनीय प्रथा कभी-कभी मनुष्य के मन में क्रोध को जन्म देती है। इससे उसके विरोध में उसमें हिम्मत पैदा होती है, लेकिन प्रबल शक्ति से अपनी रक्षा का कोई मार्ग नजर न आने से उसकी हिम्मत भय में परिवर्तित होती है। अपने को ऊँचे और बड़े समझने वाले लोगों के निन्दनीय काम से गंगी का विद्रोही दिल भड़कता है और वह रिवाजों के विरोध में कुएँ पर पानी भरने का धैर्य दिखाती है। इससे उसमें एक और हिम्मत है, तो दूसरी ओर भय और आाखिर भय के प्रभाव से उसकी हिम्मत टूट जाती है।'' 164 इसी सन्दर्भ में शिवकुमार का भी मानना है कि--" रचनाशील के धरातल पर सामान्य, किंतु संवेदना के धरातल पर विशिष्ट और महत्वपूर्ण भारतीय समाज व्यवस्था के नियामकों द्वारा उसी समाज के एक अहम हिस्से के लिए रचे गए उस नरक को उसकी सम्पूर्ण विद्रूपता के साथ उजागर करने के नाते, जो सभ्यता तथा समाज-विकास के इतने लंबे दौरों के उपरांत आज भी हमारे समय और समाज की एक भयावह वास्तविकता है।'' 165

16. कफन

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में दिसम्बर 1935 को 'जामिया' में हुआ था। हिन्दी में अपैल 1936 को 'चांद' में प्रकाशित हुई थी तथा कफन और शेष रचनाएं (संकलन-श्रीपतराय प्रकाशक-सरस्वती प्रेस बनारस प्रथम संस्करण-मार्च, 1937) में बाद में हंस प्रकाशन इलाहाबाद से 'कफन' शीर्षक से पुस्तक प्रकाशित हुई और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-5 में भी इसका संकलन किया गया।

कहानी के विषय में शिवकुमार मिश्र जी कहते हैं कि--" कफन वस्तुत: परजीवियों पर केन्द्रित कहानी है और जरूरी नहीं कि उनका सम्बन्ध दलित वर्ग से हो। ये परजीवी किसी भी वर्ग के हो सकते है। बहुत साफ तरीके से प्रेमचन्द कहानी में बताते हैं कि ये परजीवी आसमान से नहीं टपकते, व्यवस्था और सामाजिक स्थितियों की उपज होतें है।'' 166 कांतिमोहन का मानना है कि--" असलियत यह है कि प्रेमचंद इस कहानी में 1936 के भारत की एक नई सच्चाई पेश करना चाहते हैं। घीसू और माधव अपने पूर्वज खेत मजदूरों से गुणात्मक रूप से भिन्न हैं वे ग्रामीण सर्वहारा के उस तबके के प्रतिनिधि हैं, जिसे लुंपन सर्वहारा कहा जाता है और जो भारत पर 1929 की भीषण विश्व मंदी के प्रभाव के फलस्वरूप हमारे देश में जन्म ले रहा था।'' 167 डॉ. जगतनारायण हैकरवाल का भी मानना है कि --" यह एक शक्तिशाली कहानी है। यह उन वर्गो के दु:ख का चित्रण करती है, जो सामन्ती एवं औद्योगिक युग के परिणाम थे। शोषित मजदूर वर्ग किस प्रकार भाग्य के व्यंग्य का शिकार

हो जाता है, इसका सफल चित्रण प्रेमचन्द ने किया हे। यह एक अमर रचना है। यह आख्यायिका संसार की सर्वोत्त्म आख्यायिकाओं में सरलता से स्थान प्राप्त कर सकती है।'' 168

कहानी का पात्र घीसू और माधव दोनों बाप बेटे हें। ये दोनों कामचोर और एक नंबर के आलसी हैं। बाप से ज्यादा आलसी बेटा हे। माधव एक घंटे काम करे तो तीन घंटे आराम करता, इसलिए गॉव का कोई भी आदमी उसे काम पर न रखता था। इसी सन्दर्भ में डॉ. जगतनारायण हैकरवाल का कहना है कि--''दोनों समाज के सताये वर्ग के हैं, जहॉ निराशा या हीन भाव के कारण लोग दुख-सुख के प्रति बिल्कुल उदासीन भाग्यवादी और कठोर हो जाते हैं, जहॉ पराजयवाद लोगों को भाग्यवादी कठोर तथा दुख-सुख के प्रति पूर्ण उदासीन बना देता हे। घीसू और माधव जानते थे कि किस प्रकार परिश्रम किया जाय किन्तु अनुभव ने उन्हें एक नया पाठ सिखा दिया था। वे लोग, जो दूसरों का शोषण करना जानते हैं, दौलत से भरपूर रहते हैं। वे जो ईमानदार और सच्चे हैं अपनी नित्यप्रति की आवश्यताओं की भी पूर्ति नहीं कर पाते। अतएव घीसू और माधव काहिल हो गये। मजदूरों के शोषित वर्ग की यही दशा है।'' 169

आज ठंडी में घीसू और माधव घर के बाहर ऑगन में आलू भून रहे हैं, और अन्दर माधव की पत्नी बुधिया प्रसूति वेदना में चिल्ला रही है। तभी घीसू माधव को अपनी पत्नी बुधिया के पास बैठने को कहता है। पर वह अन्दर नहीं जाता है क्योंकि उसको डर है कि कहीं उसके अन्दर जाने के बाद घीसू उसके आलू न खा जाए। इसी पर अपने विचार प्रकट करती हुई डॉ. कुमारी नूरजहॉ कहती हैं कि--'' सम्पूर्ण नारी का जीवन समस्यामूलक है और उनमें मध्यवर्गीय स्त्री का जीवन मुख्य रूप से। स्त्री सधवा हो या विधवा। उसके समक्ष विभिन्न प्रकार की समस्याएॅ हैं। उनका उचित समाधान खोजना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। समाज का सबसे अधिक भय इसी मध्यमवर्गीय नारी को है। पुरुष वर्ग की उदासीनता सदैव से स्त्री वर्ग के प्रति रही है, इसे हम प्रेमचन्द की कफन कहानी में भली प्रकार देखते हैं।'' 170

दोनों गरम-गरम आलू खाने लगते हैं, उसी समय घीसू माधव को ठाकुर के भोज की बातें बड़े मजे से सुनाता है और माधव बड़े चाव से उसे सुनकर ललचाता है। वहीं दोनों आलू खाकर सो जाते हैं। अन्दर बुधिया के चिल्लाने की आवाज कब बन्द हो जाती है यह उन दोनों को पता भी नहीं चलता है। सुबह जब माधव अन्दर जाता है उसे पता चलता है कि बुधिया मर गई है। वह चिल्लाकर रोने लगता है। उसकी रोने की आवाज सुनकर घीसू अन्दर जाता है और बहू के मरने पर वह भी रोने लगता है। दोनों की चिल्लाने की आवाजें सुनकर पड़ोस की औरते भी आकर बुधिया के पास

आकर बैठकर रोने लगती हैं। जब तक बुधिया थी तब तक उन दोनों को काम करने की जरूरत न थी लेकिन उसके मरने के बाद उन दोनों का उसके कफन की व्यवस्था करनी पड़ी। घीसू और माधव गॉव के जमींदार के घर जाकर रो-गाकर दो रूपये लेकर आते हैं। गॉव के जमीदार के पैसे देने पर गॉव वालों ने भी कुछ न कुछ दे दिया जिससे उनके पास पॉच रूपये इकट्ठे हो गये। उन पैसों से वे दोनो कफन खरीदने क लिए जाते हैं तो वहॉ पर किसी होटल में जाकर पूरियॉ और सब्जी खाते हैं तथा शराब पीते हैं, जिससे वे मस्त होकर नाचने लगते हैं इसी सन्दर्भ में डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी कहते हैं कि--" पूड़ी-तरकारी खाने की महत्वाकांक्षा एक ऐसा व्यंग्य उत्पन्न होता है। औचित्य से सुषमा आती है और अनौचित्य से विषमता। यह विरूपता शारीरिक स्थूल भी होती है और सामाजिक नैतिक भी। जो होना चाहिए, जो तर्क संगत है, उचित है, नैतिक है वह नहीं होता तो विरूपता आती है। यह विरूपता हास्य और पीड़ा से साथ-साथ जुड़ी होती है। जिसे व्यंग्य कहते हैं। वह विरूपता जनक हास्य और पीड़ा दोनो से युक्त होती है। कम समझ असंस्कृत और हृदयहीन व्यक्ति उसमें हॅसी ही पाते हैं। जबकि सहृदय संस्कृत लोगों के लिए हॅसी पीड़ा को कहीं अधिक तीव्र बना देती है। प्रेमचन्द इस कला में माहिर हैं। डॉ. रामविलास शर्मा ने ठीक ही लिखा है कि ' वे कबीर के बाद हिन्दी के सबसे बड़े व्यंग्यकार हैं।'' 171

घीसू और माधव निश्चिंत होकर नाच गा रहे हैं। उन्हें पता है कि गॉव वाले बुधिया को कफन देकर दफना देंगें। वे दोनों नाचते गाते वहीं गिर पड़ते हैं और बेहोश हो जाते हैं। इसी सन्दर्भ में डॉ. रत्नाकर पाण्डेय का मानना है कि--" एक मौलिक और सत्य तथ्य को कहानी के जीवन में इतनी गहराई से उतरकर प्रेमचन्द ने कई नई मान्यताऍ स्थिर की है। उनकी समस्त यथार्थ उपलब्धियॉ 'कफन' के तीन शब्दों में बॅध गई है। हिन्दी के एक मात्र राष्ट्रीय कवि तुलसी ने लिखा था कि दरिद्र के समान दुनिया में कोई और दु:ख नहीं होता है--'नहि दरिद्र सम दुख जग माहीं।' प्रेमचन्द ने 'कफन' कहानी में इसी मूल भावना की व्यवस्था की है। क्षुधातुर जीवन मौत के नर्तन की परवाह किए बिना अपनी पशु प्रवृत्तियों की अबौद्धिक सीमा और दुराग्रह की जय बोल रहा है। देखा जाय तो 'कफन' जैसी सफल कहानियॉ हिन्दी में आज तक नहीं लिखी गई और न भविष्य में लिखी जाएगी क्योंकि इस प्रकार के स्वाभाविक अनुभव के लिए जिस दरिद्र संसार में पैदा होते ही श्वास लेनी पड़ती है वह संसार ही आज के लेखकों के सामने नहीं हैं। कथाकार प्रेमचन्द के साथ ही ऐसी नयी भवनाओं का अवसान हो गया।'' 172

17. दूध का दाम

जिसका जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जुलाई 1934 को 'हंस' में हुआ था तथा बाद में मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-5 में भी इसका संकलन किया गया। उर्दू में यह कहानी 'दूध का दाम' शीर्षक से प्रकाशित हुई थी।

कहानी के विषय में रत्नाकर पाण्डेय का कहना है कि--" प्रेमचन्द की विद्रोही आत्मा अन्याय पूर्ण असामाजिक व्यवस्था से क्रांति करके गरीब और अछूतों की आवाज बुलंद लहजे में उद्घोषित करने के पक्ष में 'दूध का दाम' कहानी में सामाजिक चेतना का जन्म है। कथाकार ने विद्रोही दिल की पाबंदियों पर जमकर चोट की है। कुछ लोग नीच हैं और कुछ ऊॅंचे। कुछ लोग गले में ताला लटका लेते हैं। उन्हें डॉट सहने का अधिकार है। सभी छंटे हुए हैं। जालसाज, झूठे मुकदमें आदि कुकृत्यों को करने वाले लोगों के घर में खुलेआम जुआ चोरी हो रही थी। गॉंव का बनिया घी में तेल मिलाकर बेच रहा था। कस्बे के आदमी जब गॉंव में जाते हैं तो अपनी आनंद लूटने वाली ऑंखों से घृणा का प्रचार करते हैं। उन्हीं बातें को लेकर प्रेमचन्द ने 'दूध का दाम' नामक कहानी में अछूतों के कई पक्षों पर जमकर परतंत्र युग के न्यायालय में अपना व्यक्तिगत मसौदा पेश किया है।'' 173

कहानी के पात्र बाबू महेशनाथ को तीन लड़कियों के बाद बेटा होने की आशा थी। वे गॉंव में एक हास्पिटल बनवाना चाहते थे क्योंकि उनके गॉंव में डिल्वरी के समय एक नर्स के अलावा और कोई भी नही था। नर्स भी ऐसे गांव में न आना चाहती थी। इस बार भी भुंगी ने महेशनाथ की पत्नी की डिल्वरी करवाई और बेटा हुआ। पर इस बार बहू जी को दूध न आया। इसलिए भुनगी उनके बेटे सुरेश को अपना दूध पिलाती इसलिए अब भुनगी का उनके घर में बड़ा मान-सम्मान था। वह जो कहती वही होता, एक बार महेशनाथ ने कहा कि भंगी को आदमी नहीं बनाया जा सकता। इस पर भुनगी ने उन्हें करारा जबाब दिया, उसने कहा कि भंगी आदमी को बनाते हैं तो आप उन्हें क्या बनाओगे। इसी पर डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" प्रेचन्दजी ने भुनगी के विचार के रूप में मार्के की यह बात बतायी कि जो भंगी जाति से निम्न है और जिनमे इन्सानियत है, उनकी साफ सफाई की सेवा सभी को आदमी बनाती है। अतएव उन्हें किसी के द्वारा आदमी बनाने की आवश्यकता ही क्या ? इसलिए जात-पॉंत के वाह्य भेद के आधार पर भंगियों को नीच समझना अनुचित होगा।'' 174

सुरेश भुनगी का सारा दूध पीता इसलिए वह अपने बेटे को दूध न पिला पाती। सुरेश हृष्ट-पुष्ट होने लगा और मंगल बीमार। उसी दौरान ज्वर के कारण भुनगी का पति गूदड़ मर गया। अब जब सुरेश ने दूध छोड़ा तो मोटेराम शास्त्री ने उसका शुद्धि करण करवाने को कहा पर

महेशनाथ ने ब्राह्मणों को खिलाने के अलावा और कुछ भी न किया। अब भुनगी का मान पहले जैसा न रह गया। एक बार तो वह सॉप के काटने से मर भी गई। अब उसका बेटा मंगल महेशनाथ के घर के सामने एक पेड़ के नीचे अपने कुत्ते जबरे के साथ रहने लगा। उसके पास एक फटा पुराना कपड़ा था। टाट का टुकड़ा, दो कसरो और एक फटी धोती के अलावा उसके पास कुछ भी नहीं था। जो उसे ठंडी गरमी और बरसात से बचाती थी। उसे महेशनाथ के घर से जूठा खाना मिलता वही खाकर वह अपना गुजारा करता। मंगल को सुरेश को छूने और उसके साथ खेलने की मनाई थी। एक बार सुरेश मंगल को अपना घोड़ा बनाने की जिद करने लगा । मंगल ने भी उसे अपना घोड़ा बनाने की बात की, पर सवर्ण कभी अपने ऊपर नीच जाति को नहीं बिठाते। सुरेश ने जबरदस्ती मंगल को अपना घोड़ा बनाया और उसके ऊपर बैठा। ताक देखकर मंगल खिसक गया और सुरेश जोर-जोर से रोने लगा। इस पर कांतिमोहन कहते हैं कि--"स्पष्ट है कि खेल-खेल की बातचीत नहीं है, बल्कि उसके माध्यम से कहानीकार भारतीय समाज की विडंबना ही दुहरा रहा है। 'दूध' अछूत जातियों की उस सेवा का प्रतीक है जो वे शताब्दियों से करती आई हैं। मंगल का 'सवार' बनने का सवाल अछूतों की अपने अधिकारों की मॉग है। यह एक आक्रामक रवैया सामाजिक यथार्थ में आये उस बदलाव से जुड़ा हुआ है जिसके चलते प्रेमचन्द गांधीवादी भूल-भुलैया से निकल आये हैं और खुल्लमखुल्ला सवर्णों के अन्याय के विरुद्ध अछूतों के पक्षधर के रूप में सामने आ रहें है।'' 175 सुरेश की मॉ ने सुरेश के रोने की आवाज सुनकर उससे रोने का कारण पूछा। इस पर सुरेश ने झूठ बोला कि मंगल ने जबरदस्ती उसे छुआ। इस पर बहूजी ने मंगल को खूब डॉटा और दुबारा उसे उसे घर में न आने की हिदायत दी। गुस्से में मंगल अपना सामान लेकर चला तो गया पर जब रात में उसे भूख लगी तो वापस अपनी जगह पर आ गया और सुरेश के जूठन का इन्तजार करने लगा। और जब महराज ने उसे जूठन दिया तो वह खना खाते-खाते अपनी मॉ के दूध के इस मूल्य को समझने की कोशिश करने लगा। इसी सन्दर्भ पर अपना विचार व्यक्त करते हुए डॉ. बल्वन्त साधू कहते हैं कि--" दलितों के उत्पीड़न से प्रेमचन्द की आत्मा तड़पती थी और उनके दैन्य के प्रति उन्हें असंतुष्ट बनाती थी। 'दूध का दाम' कहानी का मंगल ऐसे अभागे दलित समाज का प्रतिनिधि है।'' 176

18. गुल्ली डंडा

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में फरवरी 1933 को 'हंस' में हुआ था तथा मानसरोवर, भाग-1 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'वारदात' में संकलित है।

कहानी के बारे में शिवकुमार मिश्र का मानना है कि--" वर्ग-वर्ण-विभाजित, सामाजिक विषमता वाली हमारी सामाजिक संरचना में आदमी और आदमी के बीच के संबंध तथा रिश्ते, वर्ग,वर्ण, सामाजिक हैसियत, पद और प्रतिष्ठा के तहत बनते हैं न कि इंसानी वास्तविकता के तहत इस कहानी में प्रेमचन्द इसी तथ्य को रेखांकित करते है और प्रेमचन्द के इस रेखांकन में विषमता तथा वर्ग-वर्ण भेद वाली हमारी समाज व्यवस्था पर, उसके अनुरूप निर्मित हमारी मानसिकता और आचरण पर एक व्यंग्य भी है।'' 177

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने स्वयं को एक पात्र बताया है। मेरे पिता जी थानेदार थे। हम सब गॉव में रहते थे। उस गॉव में मेरा एक दोस्त था , जिसका नाम गया था, जो गुल्ली में बड़ा होशियार था। वह निम्न जाति का था लेकिन गुल्ली -डंडा बड़े अच्छे से खेलता था। वह जिसकी टीम में होता था जीत उसी की होती थी। उसे देखकर सब उसकी खुशामात करते और उसे अपनी टीम में रखते। एक बार मेरा और उसका खेल हुआ तो उसने मुझे खूब पदाया, शाम हो गई। मैं जाना चाहता था पर उसने न जाने दिया क्योंकि उसका दॉव बाकी था। उस पर गुल्ली तालाब में गिर गई। हम दोनों में झगड़ा हुआ। उसने मुझे गुल्ली लाने को कहा पर मैं न गया।। मैंने अपना ऊँचा पद और जाति का रोब झाड़ा पर वह न माना, अमरूद खिलाया तो भी न माना। इसी पर अपना विचार व्यक्त करते हुए डॉ. बल्वन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" गुल्ली डंडा कहानी का वर्षों से दबा हुआ दलित अपने अधिकार की मॉग करता है। इसमें गया विद्रोही है। वह डंडा तानकर अपने अधिकार की मॉग करता है। यह गया थानेदार के बेटे के सम्वाद से जाहिर होता है।'' 178

बाद में कुछ न होने पर मेरे और गया के बीच झगड़ा हुआ, जिसमें गया ने मुझे मारा। मैं जोर-जोर से रोने लगा तो वह भाग गया। वैसे मुझे कुछ न लगा था पर मैं बचने के लिए नाटक कर रहा था। तभी मुझे पता चला कि पिताजी का तबादला हो गया है। मैं खुश था क्योंकि मेरे नये दोस्त बनेगें पर मॉ यह जगह नहीं छोड़ना चाहती थी क्योंकि उन्हें यहॉ बहुत कुछ मुफ्त में मिल जाता था। शहर में जाकर मैं इन्जीनियर बना। बाद में डिप्टी क्लेक्टर बन गया। मुझे उसी इलाके में दौरे पर जाना था मैं वहॉ जाकर गया से मिला। अब वह पहले जैसा न था। दुबला-पतला झुककर सलाम करता, खुद को मेरा दास समझता। मेरे काफी जोर देने पर वह मेरे साथ गुल्ली-डंडा खेलने

आया। मेंने उसे खूब पदाया, मैंने दो-तीन बार चीटिंग भी की पर वह कुछ न बोला। मुझे उसे पदाने में मजा आ रहा था। आज मैं खुश था। दूसरे दिन गॉव वालों की गुल्ली की मैच थी। मैं वहॉं गया तो तो अवाक रह गया। आज मुझे पता चला कि गया मुझे गुल्ली खिला रहा था क्योंकि उसकी गुल्ली पहले से ज्यादा पक्की हो गई थी। इसी सन्दर्भ में डॉ. बलवन्त साधू जाधव का मानना है कि--" प्रेमचन्द की दृष्टि में दलित तिरस्कृत और असमर्थ नहीं है। विविध परिस्थितयों ने उन्हें उस तरह गढ़ा है। इनमें भी कार्य-कुशलता और समर्थता होती है।, जो अवसर मिलने पर प्रकट होती है। गया आखिर एक दिन के खेल में अपनी कुशलता का खरा रंग दिखाकर थानेदार के बेटे को अपने बड़प्पन का परिचय दे देता है।'' 179

4. ऐतिहासिक कहानियॉं

प्रेमचन्द जी ने अपनी प्रारम्भिक कहानियॉं इतिहास एवं ऐतिहासिक घटनाओं को लेकर लिखी हैं। उन्होंने अपनी इन ऐतिहासिक कहानियों में न केवल हमारे इतिहास के पन्नों को पलट कर पाठकों के सामने सच को दर्शाया है बल्कि उन कहानियों के माध्यम से हमारे सामने भरतीय मूल्यों को, राजा का प्रजा के प्रति कर्तव्य परायणता को, नारी शक्ति एवं उसके पतिव्रत को, राजा की विलासिता से हो रहे नुकसान को, और प्यादों की कुशलता का गलत इस्तेमाल करने से हो रहे नुकसान को, एवं ये चीजें किस तरह से देश की बर्बादी का कारण बनते है, यह भी दर्शाने का प्रयत्न किया है। प्रेमचंद अपनी इन कहानियों में यह भी दर्शाते हैं कि पहले से लेकर आज तक लोग सत्ता के लिए अपने भाई को मारने से भी नहीं डरते। प्रेमचंद की ऐसी ही ऐतिहासिक कहानियों को लिया गया है, जिसका संबंध किसी न किसी तरह इतिहास से है।

1. राजहठ

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में सितम्बर 1912 को 'जमाना' में हुआ था तथा 'प्रेमपच्चीसी' में संकलित है। हिन्दी में गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में संकलित है।

इस कहानी में प्रेमचंद ने पिता के कर्तव्य पलायनता पर पुत्र के विरोध को दर्शाया है। अचलगढ़ के राजा देवमल अचलगढ़ में धूम-धाम से दशहरे का त्यौहार मनाना चाहते थे, जिसकी वे तैयारी कर रहे थे। यह वह समय था जब अंग्रेजों ने पूरे राष्ट्र को अपने चंगुल में ले लिया था। राजा देवमल पर काफी ऋण था, जो उन्हें चुकाना था। अचलगढ़ के कितने ही परिवारों में आज भी चूल्हे नहीं जल रहें हैं। इस पर राजा का यह फिजूल खर्च राजा देवमल के पुत्र कुँवर इन्द्रमल, जिसे

न ही पूजापाठ में दिलचस्पी थी और न ही वह कभी मजदूरों पर हाथ, तलवार उठाता था। वह काफी पढ़ा लिखा था। उसने पिता के इस खर्च का विरोध किया। कुँवर का कहना था कि दुर्गा पूजा की परम्परा को न तोड़कर सादे ढंग से त्यौहार मना लिया जाय पर राजा इस बात को मानने के लिए तैयार न थे। इस पर राजा और उनके पुत्र में बहस हो गई जिससे राजा ने अपने पुत्र को घर से निकाल दिया। रानी को इस बात का पता चला तो वह भी राजा से जबाब-तलब करने लगी जिससे राजा ने उन्हें भी निकाल दिया। तीन दिन तक कुँवर भूखा-प्यासा घूम रहा था और एक पेड़ के नीचे आराम करने बैठा तो उसने सपने में अपनी माँ को देखा और जब उसने आँख खोली तो उसकी माँ उसके सामने खड़ी थी। कुँवर ने अपनी माँ को बताया कि उसने पोलिटिकल एजेन्डे को सब बता दिया है। जिस पर रानी नाराज हुई। कुँवर ने माफी मांगी। तभी नाचने-गाने वाले उदास होकर जा रहे थे। जिससे कुँवर को पता चल गया कि पोलिटिकल एजेन्डे ने तार भेज दिया है। रानी बोली शायद यही राजहठ है।

2. राजा हरदौल

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में अप्रैल 1911 को 'जमाना' में हुआ था तथा 'प्रेमपच्चीसी' में संकलित है। हिन्दी में मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-1 में संकलित है।

'राजा हरदौल' कहानी में जहाँ एक ओर सामन्तीयुग के त्याग और बलिदान, उत्सर्ग और उसके आदर्श को प्रस्तुत किया है। वहीं दूसरी ओर उस ह्रासोन्मुख युग के ईर्ष्या, द्वेष एवं अविश्वासमय वातावरण का यथार्थ चित्र दिखाया है। यह कहानी सामन्ती युग के विषाक्त वातावरण के यथार्थ के चित्र को प्रस्तुत करती हुई दिखाई देती है। बुन्देलखंड में ओरछा पुराना राज्य था, जिनके राजा बुन्देले थे। इस समय ओरछे के राजा जुझारसिंह थे, जो बड़े साहसी और बुद्धिमान थे, इसीलिए लोदी जब लूटते-पाटते ओरछा में आया तो राजा ने उसे बड़ी कुशलता के साथ हराया। जिसके कारण दिल्ली के राजा शाहजहाँ उन पर काफी प्रसन्न हुए और दक्खिन का कार्य भार उन्हें सौंप दिया। जुझारसिंह ने अपने भाई हरदौल को ओरछे का कार्य दिया तथा अपनी पत्नी कुलिना को समय-समय पर हरदौल का साथ देने की सूचना देकर दक्खिन चला गया। बाद में हरदौल ने बड़ी कुशलता और चतुरता के साथ राज्य चलाने लगा। हर एक छोटे बड़े निर्णय वह अपनी भाभी से पूँछकर ही लेता और कुलीना भी अपने देवर को बेटा समझकर उसका साथ देने लगी। हरदौल के हसमुख स्वभाव के कारण उसका कोई दुश्मन न था। जुझारसिंह के दुश्मन भी हरदौल के दोस्त बन गये। होली के अवसर पर दिल्ली का कारिन्दा खाँ ओरछे में आया और ओरछे के शूरवीरों को चुनौती दे डाली। इस चुनौती में बुंदेले

के वीर योद्धा नाक कालदेव, औरा भालदेव बुरी तरह से घायल हो गये। हरदौल अपने भाई की तलवार लेकर खुद अखाड़े में उतरा। और पूरे दिन वह युद्ध करता रहा और कादिरखाँ हार गया, लोग हरदौल की जय-जय करने लगे। इसी पर विचार करते हुए डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" राजा हरदौल कहानी ऐतिहासिक है। संघर्ष शील जनता में स्वतंत्रता के लिए जातीय गौरव और वीरता की भावनाएं भर देने के लिए प्रेमचंद की कहानियाँ सोद्देश्य है। इस संदर्भ में 'राजा हरदौल' कहानी में अखाड़े के आए चित्र लोगों में क्रान्ति का जोश भर देने में उपयुक्त है।'' 180

कादिरखाँ जैसे योद्धा को पछाड़ने के बाद हरदौल को थोड़ा अभिमान हो गया। हरदौल अपने साथियों के साथ जंगल शिकार खेलने गया और इधर जुझारसिंह दक्खिन के राज्यों में दबदबा बनाकर ओरछा पहुँचे। थकावट की वजह से वह पेड़ के नीचे विश्राम कर रहे थे। उन्होंने हरदौल और उनके सैनिकों को देखा। सैनिको ने जुझारसिंह को देखकर अनदेखा किया और हरदौल भाई को न पहचान पाया। लेकिन जब उसके पास आया तो उसने घोड़े को पहचाना और घोड़े से उतरकर उसे गले लगाया, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी क्योंकि हरदौल चाहता था कि वह नंगे पैर दौड़कर उनका स्वागत करेगा। कुलीना को जब राजा के आने की खबर मिली तो उसने महल को सजाया, खुद खाना पकाया लेकिन उनसे एक बहुत बड़ी भूल हो गई। एक वर्ष के अन्तराल के कारण उन्होंने सोने का थाल हरदौल को चॉदी का थाल जुझारसिंह को दे दिया। हरदौल निर्दोष भाव से खाने लगा पर जुझारसिंह गुस्से से तिलमिला उठा। रानी राजा का क्रोध देखकर अपनी गल्ती पर पछताने लगी पर अब पासा पलट गया था। जुझारसिंह को कुलीना और हरदौल के रिश्ते पर शंका हो गई और इस शंका के निवारण के लिए उन्होंने कुलीना को जहरीला पान का बीड़ा हरदौल को खिलाने के लिए कहा, इस पर कुलीना दंग रह गई। वह अपने बेटे एवं भाई जैसे देवर को कैसे मार सकती थी। वह इसी असमंजस में थी कि उधर एक दासी ने यह बात सुनी और उसने हरदौल से कहा।

दूसरे दिन हरदौल बड़े सबेरे स्नान करके भाई के कमरे में जाकर प्रणाम किया तथा विजय की खुशी में हरदौल ने पाने का बीड़ा अपने हाथों खाया। वह विजय बीड़ा कुछ और नहीं बल्कि जहरीला पान ही था। जुझारसिंह ने अभिमानवश अपने भाई को विजय बीड़ा खिलाया क्षण भर में हरदौल जुझारसिंह के पैरों में गिर कर मर गया।

3. परीक्षा-1

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में दिसम्बर 1914 को 'अलअस्न' में हुस्न-इन्तिखाब शीर्षक से प्रकाशित हुआ था तथा हिन्दी में 'परीक्षा' शीर्षक से जनवरी 1923 को चांद में प्रकाशित हुई। और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 तथा मानसरोवर-3 में संकलित की गई।

नादिरशाह ने दिल्ली सल्तनत में खून की नदियॉं बहा दीं। सब लोग अपनी जान बचाकर भाग रहे थे। नादिरशाह दिल्ली के महल को देखकर दंग रह गया। उसने इतना सुख सामग्री के साधन कभी नहीं देखे थे। वह गरीब खानदान का था तथा उसका पूरा बचपन रणभूमि में ही बीता था। जब वह दीवानखाने में गया तो उसने अपने लोगों को विश्राम करने को कहा तथा एक दरोगा को बुलाया और कहा कि सभी रानियों को सजाकर यहॉं बुलाया जाय। हम उनका नृत्य देखेंगें। यह रानियों का अपमान था। जो कभी सूर्यप्रकाश में न गई थी, वे आज सजधज कर दीवान खाने में गई। इनमें से कई रानियॉं राजपूतानी थी, पर किसी ने इस पैगाम को नामंजूर न किया और न ही कटार लेकर आगे बढ़ीं। नादिरशाह ने इन परियों को देखा और आधा घण्टा सो गया जगने पर नादिरशाह ने रानियों को कहा कि आप में किसी ने मेरा पैगाम न ठुकराया और न ही मेरे सोने पर मुझे मारा। अब आप किसी में गैरत नहीं बची है। अब इस सल्तनत को कोई नही बचा सकता। नादिरशाह मात्र उन रानियों की परीक्षा ले रहे थे। नादिरशाह ने तुरंत उन रानियों को वापस भेज दिया।

4. शिकारी राजकुमार

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में अगस्त 1914 को 'जमाना' में हुआ तथा 'प्रेमपच्चीसी' में संकलित हुई है। हिन्दी में 18 अगस्त 1919 को स्वदेश' में प्रकाशित हुई थी और मानसरोवर-8 एवं प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -1 में संकलित की गई।

इस कहानी में एक राजकुमार हिरन का शिकार करने के लिए घंटो से हिरन के पीछे दौड़ रहे थे। घोड़ा और राजा दोनों पसीने से तरबतर हो गये थे। दौड़ते-दौड़ते राजा ने हिरन को वहॉं मार गिराया जहॉं वह नदी नहीं पार कर सकता था। वह हिरन बहुत बड़ा था। राजकुमार ने चैन की सांस ली। तभी नदी में से एक सन्यासी आया और उसने राजा की आवभगत करने तथा थोड़ा विश्राम करने के लिए उन्हें अपने आश्रम में ले गया। वहॉं बड़ी ठंड़क थी राजा का मन प्रसन्न हो गया। थोड़ी देर बैठने के बाद राजा का मन घर की ओर गया और उन्हें चिन्ता होने लगी कि काफी देर हो गई है कहीं घर के लोग मुझे ढूॅंढ़ने निकल न गए हों। तभी राजा ने सन्यासी के मीठे गाने की आवाज सुनी राजा का मन प्रसन्न हो गया। राजा ने सन्यासी से जाने की आज्ञा मॉंगी तो सन्यासी ने रात को शिकार करने की प्रतिज्ञा देकर उन्हें रोका। रात को राजा और सन्यासी दोनो शिकार पर

निकले। पहले उन लोगों को डाकू मिले इस पर सन्यासी ने कहा कि आपको इनका शिकार करना चाहिए क्योंकि ये लोग लोगो को मारते पीटते हैं। बाद में राजा और सन्यासी आगे गए जहॉ नाच-गाने का जश्न चल रहा था । सन्यासी ने बताया कि यह वह पंडित है जो खुद को सन्यासी बताता है और भोग विलास करता है तथा लोगों को बुद्धू बनाकर उनसे खिलवाड़ करता है। आपको इनका शिकार करना चाहिए। राजा कि जिद पर वे लोग कचहरी पहुॅचे जहॉ का सुबेदार दिन रात कचहरी चालू रखता था। कारण कि वह धन का पुजारी था। वह लोगों की जमीने और धन लूटता था। राजा ने खुद एक विधवा स्त्री की जमीन हड़पने की चर्चा सुनी तो उनका खून खौल गया। सबेरा होने पर सन्यासी राजा को आश्रम पर ले गया। दूसरे दिन सन्यासी ने राजा को कहा कि उन्हें ऐसे लोगों का शिकार करना चाहिए जो उनकी प्रजा को पीड़ा देते हैं। इन मृग पशुओं के शिकार से उन्हें यशकीर्ति नहीं प्राप्त हो सकती है। इसी पर रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" कथावस्तु, चरित्र चित्रण और कलात्मक दृष्टि से यह एक साधारण कहानी है किन्तु इसकी विशेषता इस बात में है कि इसमें हमें प्रेमचंद के उस मानवतावादी रूप का दर्शन होता है जो अन्याय प्रतिकार में सदैव तत्पर रहता है। 'शिकारी-राजकुमार' में प्रेमचंद ने मनुष्यरूपी कतिपय ऐसे हिंस्र जीवों एवं डाकू महंत और अन्यायी राज्य-कर्मचारी का परिचय दिया है जो इंसानों के रक्त और मांस पर जीवित रहते हैं। प्रेमचन्द शिकारी राजकुमार को भोले-भाले और निरीह जानवरों को मारने के बजाए इन मनुष्यरूपी हिंस्र जीवों का शिकार करने के लिए प्ररित करतें है। कलात्मक दृष्टि से यह एक असफल कहानी है क्योंकि उद्देश्य मूलकता सूक्ष्म और सांकेतिक न रहकर स्थूल और उपदेशात्मक बन गई है।'' 181

5. धोखा

कहानी का प्रथम प्रकाशन उर्दू में नवम्बर 1916 को 'जमाना' में हुआ तथा 'प्रेमबत्तीसी' में संकलित हुई है। हिन्दी में मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानयॉं-1 में संकलित की गई।

इस कहानी की राजकुमारी प्रभा नौगद की रानी और देवचंद की इकलौती कन्या थी। प्रभा संगीत प्रेमी थी। वे बाग-बगीचे और पशुओं के बीच में संगीत सुनना पसंद करती थी। राव देवचंद भी एक प्रखर संगीतज्ञ थे। उमा राजकुमारी प्रभा की सहेली थी। एक दिन प्रभा अपने बाग में बैठी हुई अपनी सखी उमा से पंखी बनने की कामना करती है। तभी रानी को एक ऐसा गाना सुनाई देता है जो उन्हें मन्त्र मुग्ध कर देता है। प्रभा उमा से कहकर उस व्यक्ति को अन्दर बुलवाती है। वह व्यक्ति एक साधारण साधु था। लेकिन उसका मुखारविंदु और कद-काठी बहुत सुन्दर था। अब प्रभा को उसकी मूर्ति और उसके गाने चारों तरफ सुनाई देने लगे। रानी का ब्याह नये खयालातों वाले राजा

हरिश्चन्द्र से कुछ ही दिनों में होने वाला था। प्रभा मुर्झाने लगी, उमा को इसका कारण पता था लेकिन वह किसी से कुछ न कह सकी। ब्याह के बाद राजा प्रभा को पाकर खुश थे, वे प्रभा को अपने चित्र दिखाते हैं। प्रभा एकान्त में साधू को याद करती। राजा के साथ वह खुश रहने लगी तभी राजा ने प्रभा को एक साधु का चित्र दिखाया तो वह दंग रह गई, क्योंकि यह चित्र उसी साधु का था। राजा ने उसके गाने की तारीफ की और उसे लेने गए। प्रभा घबराने लगी पर उसने देखा कि वह साधु और कोई नहीं वे राजा हरिश्चन्द्र ही थे। वे संगीत प्रेमी थे और शादी से पहले प्रभा को मिलना चाहते थे, इसलिए वे साधु बने थे। प्रभा ने खुश होकर उन्हें गले लगाया तथा उनसे कहने लगी कि वही उसके प्रियतम तथा पति है। साथ ही प्रभा ने यह भी कहा कि तुमने हमें धोखा दिया है।

6.जुगनू की चमक

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में अक्टूबर 1916 को 'जमाना' में हुआ तथा 'प्रेमबत्तीसी' में संकलित है। हिन्दी में मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में भी इसका संकलन किया गया।

पंजाब के राजा रणजीत के मर जाने के बाद रानी चंद्र कुंवरि के पुत्र कुंवर दिलीप सिंह इंगलैंड चले गये। अब रानी महल में अकेली रहती थी। एक रात रानी कटार व गहनो का संदूक लेकर महल से निकल गई। वह एक भिखारिनी के वेश में थी ताकि उनको कोई पहचान न सके। वे अयोध्या बनारस कई जगह गई पर उन्हें रहने का ठिकाने न मिला। अयोध्या से लौटते समय वह एक वृक्ष के नीचे आराम कर रही थी, उसी समय एक बूढ़ा सिपाही आया और उनके विषय में पूँछने लगा। रानी ने अपनी कटार छिपा दी तो सिपाही ने उसका मित्र होने को प्रमाण देकर कटार देखी और रानी को पहचान गया। उसने रानी को शांत जगह पर रहने के लिए नेपाल जाने को कहा पर रानी ने बताया कि नेपाल के राजा रानी के दुश्मन हैं भिखारिनी के नहीं। काफी परेशानियों के बाद रानी और सिपाही नेपाल पहुँचे। नेपाल में राजा जंगबहादुर के स्वागत की तैयारियाँ चल रही थी वह सिपाही कोई और नहीं बल्कि राजा जंगबहादुर ही था। राज जंगबहादुर ने अपनी सभा में जाकर रानी को आसरा देने की बात कही। इस पर सभापतियों ने विरोध किया पर राजा ने बताया कि अतिथि सत्कार राजपूतों का धर्म है सभी राजा की बात से सहमत हो गए। रानी चन्द्रकुंवरि के लिए राजा ने न केवल एक महल बनवा दिया बल्कि दस हजार मासिक देने का तय किया। राजा ने रानी के

आगमन के लिए पूरा नेपाल सजाया और उन्हें लेने गए। तभी रानी कुंवरिचंद्र को पता चला कि वह बूढ़ा सिपाही और कोई नहीं बल्कि राजा जंगबहादुर ही है।

प्रेमचन्द यह बात इसलिए कहते हैं कि इस घटना को भरतीय इतिहास की अंधेरी रात में 'जुगनू की चमक' कहना चाहिए।

7. पाप का अग्निकुण्ड

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में मार्च 1910 को 'जमाना' में गुनाह का अगिनकुंड शीर्षक से हुआ तथा 'प्रेमपच्चीसी' में संकलित हुई । हिन्दी में पाप का अग्निकुंड शीर्षक से मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-1 में संकलित की गई।

इस कहानी में प्रेमचंद दो शूरवीर राजाओं के पतन को दिखाना चाहते है। कुंवर पृथ्वीसिंह महाराज यशवंतसिंह का पुत्र, रूप गुण सम्पन्न अपनी बहन राजनंदिनी की शादी कुंवर धर्मसिंह जो महाराजा यशवंतसिंह की सेना में उच्चाधिकारी एवं उसका परम मित्र था उससे करवाई। पृथ्वीसिंह का ब्याह दुर्गा कुंवरि से हुआ। दोनों कुंवर युद्ध पर गए। दोनों रानियों को संस्कृत से अगाध प्रेम था। उनके यहॉ आज विलासिनी आई जो संस्कृत के पंडित की बेटी थी। तीनों में गाढ़ी मित्रता हो गई। एक बार ब्रजविलासिनी को रोते हुए देखकर राजनंदिनी ने उसके रोने का कारण पूँछा, तब ब्रजविलासिनी ने बताया कि एक बार एक राजपूत घोड़े पर सवार होकर जा रहा था। तभी उसने मेरी गाय बीच में आ जाने के कारण उसे मार डाला। मेरे पिता को वह गाय बहुत प्यारी थी, इसलिए मेरे पिताजी ने उसके साथ युद्ध किया और बुरी तरह घायल हो गए और उन्होंने मुझसे वचन लिया कि जब तक वह उसको नहीं मार देगी तब तक वह संसार का सुख नहीं भोगेगी। एक बार वह युवक ब्रजविलासिनी को मिला तो उसने उसको मारने की कोशिश की पर लोगों के आ जाने के कारण वह बच गया। तब से में उसे ढूॅंढ़ रही हूॅं। अब रानियों ने ब्रजविनासिनी से सोच समझकर मजाक करना शुरू किया। लेकिन एक बार ब्रजविलासिनी को राजनंदिनी की पुस्तक में उस कुॅंवर की तस्वीर मिली और उसकी ऑंखे लाल हो गई। उसे यह पता चल गया कि वह युवक उसकी सखी का पति है। उसे लगा कि उसे अपनी प्रतिज्ञा तोड़नी पड़ेगी। दोनों राजकुमार युद्ध से वापस लौटे, दुर्गा कुमारी ने राजा पृथ्वीसिंह की आरती उतारी और उनका स्वागत किया। राजनंदिनी की थाली गिर गई और धर्मसिंह की दाहिनी ऑंख फड़कने लगी। रात को दोनों कुॅंवर शयन कक्ष में आराम कर रहे थे। ब्रजविलासिनी ने पृथ्वीसिंह को एक पंक्ति लिखकर दी तो उन्होंने उसे मोतियों का हार भेंट किया। पर जब वह धर्मसिंह के कमरे में गई तो धर्मसिंह ने अपना मुॅंह छिपा लिया। राजनन्दिनी को लगा कि वह युवक ही

धर्मसिंह है और उसका शक हकीकत में तब बदल गया जब धर्मसिंह ने रात को ब्रजविलासिनी से माफी मॉगी। दूसरे दिन दोनों कुँवर शिकार पर गए जहॉ धर्मसिंह ने पृथ्वीसिंह को ब्रजविलासिनी की कहानी सुनाकर उसका मत पूँछा। जिस पर पृथ्वीसिंह ने दुर्गा की कसम खाकर कहा कि वह उस इन्सान को मारकर ब्रजविलासिनी की प्रतिज्ञा पूरी करता है। धर्मसिंह ने अपना सर सामने रखकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने को कहा और पृथ्वीसिंह को प्रतिज्ञा पूरी करनी पड़ी। राजनंदिनी सती हो गई और राजनंदिनी ने पृथ्वीसिंह के माफी मॉगने पर उसके जल्दी मरने की बात की। वैसे भी राजनंदिनी ने सती होने के पहले खुद सती बनने का निश्चय करके सुबह ही धर्मसिंह से ब्रजविलासिनी के गुन्हेगार का सर मॉगा था। सात हप्तों के बाद धर्मसिंह के बाद पृथ्वीसिंह का भी कतल हो गया और दुर्गा भी सती हो गई। इस पाप के अग्नि कुड में दोनों वीर शहीद हो गए और हॅसता-खेलता परिवार बिखर गया।

8. रानी सारन्धा

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में सितम्बर 1910 को 'जमाना' में हुआ था तथा 'प्रेमपच्चीसी' में संकलित की गई। हिन्दी में अगस्त 1917 को 'जैन-हितैषी में प्रकाशित हुई और मानसरोवर-6 तथा प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में संकलित की गई।

प्रस्तुत कहानी एक विरांगना की कहानी है। अनिरुद्ध सिंह बुन्देलखण्ड का एक वीर पुरुष था। जो हमेशा युद्ध की तैयारी में ही लगा रहता था। पत्नी शीलदेवी के साम, दाम, दंड, भेद से भी वह न रुकने वाला था। रानी सारन्धा का भाई एक बार युद्ध से हारकर वापस लौटा। जिस पर सारन्धा ने उसे अपनी आन का वासता बताकर तथा शब्दों के कठोर घात से उसे दुबारा युद्ध में भेजा। पर शीतलादेवी रोने लगी और अपनी ननद को ताने देने लगी तथा उन्हें कोसने लगी। शीतलादेवी ने रानी सारन्धा से कहा कि उनके पति जब आए तो वह अपने पति को पल्लू से बांधकर रखे, इस पर रानी सारन्धा ने उत्तर दिया ऐसा होगा तो वह अपने पति को छूरा चुभो देगी। तीन महीने के बाद अनिरुद्ध सिंह विजयी होकर वापस लौटा और रानी का ब्याह ओरछा के राजा चम्पतराय से करावाया। राजा चम्पतराय से सभी मुस्लिम राजा डरते थे। लेकिन कुछ समय बाद राजा चम्पतराय को शाहजादा दारा का आसरा लेना पड़ा, जो शिहोर के राजा थे और चम्पतराय की विरता जानते थे। चम्पतराय ने ओरछा को अपने भाई पहाड़सिंह को सौपकर शिहोर चले गए जहॉ वे भोग विलास में तल्लीन रहने लगे। रानी सारन्धा को यह पसंद न आया और उन्होने राजा को सही राह दिखाई और वापस ओरछा

लेकर आई। उसी समय शाहजादा दारा बिमार हुए और शहजादे मुरादे और मुहीउदीन ने शिहोर पर आक्रमण किया और चम्पतराय से मदद माँगी।

रानी सारन्धा के कहने पर चम्पतराय ने न केवल उन लोगों की मदद की पर रानी सारन्धा के कहने पर युद्ध भी जीत गए। इसमे काफी लोगों की जान हानी हुई। वहॉ बादशाही सेना के सेनापति वलीबहादुर घायल पड़े थे और उनका घोड़ा जो एक अच्छी नसल का था वह खड़ा था। सब लोगो ने उसे पकड़ना चाहा पर वह किसी की गीरफ्त में न आया लेकिन रानी सारन्धा ने उसे बड़े प्यार से वश कर लिया। अब चम्पतराय की वाह वाह हो गई। औरगंजेब ने सबको माफ किया और सब अपने राज्य में खुश रहने लगे लेकिन एक बार वलिबहादुर ने रानी सारन्धा के पुत्र से घोड़ा छल से ले लिया तो रानी सारन्धा ने अपनी आन बचाने के लिए अपनी सारी दौलत देकर उस घोड़े को वापस ले आई। अब वे निर्धन हो गए। सभी चम्पतराय को हराने के पीछे पड़े जिसमें चम्पतराय बिमार हुआ इसीलिए छिपने लगा। अब सभी राजाओं ने उनके किले को घेर लिया और लोगो को मारना शुरु किया। रानी सारन्धा ने लोगो की जान बचाने के लिए अपने पुत्र छत्रपाल को प्रतिज्ञा पत्र लेने भेजा, प्रतिज्ञा पत्र तो आ गया पर छत्रपाल वापस न आया।

राजा और रानी कुछ सैनिको के साथ गुप्त रस्ते से किले से बहार निकल गए पर थोड़ी दूर पर ही दुश्मनो ने उनके सारे सैनिको को मार गिराया। राजा चम्पतराय ने रानी सारन्धा को दुश्मनों से बचने के लिए खुद को मारने को कहा और रानी सारन्धा ने पति को और कष्ट न देते हुए और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करते हूए राजा चम्पतराय के सीने मे छूरा चुभा दिया और खुद भी मर गई। ड़ॉ जगतनारायण हैकरवाल कहते हैं कि, ''यह कहानी उतनी महत्वपूर्ण नहीं है जितनी कि उसकी प्रेरक शक्ति जिसने प्रेमचंद को 'रानी सारन्धा' कहानी लिखने को प्रेरित किया। सारन्धा ने ऐसा व्यवहार किया जो प्राचीनकाल की राजपूत स्त्रियों के गौरव के अनुकूल था।''182

9 मर्यादा की बेटी (राजपूत की बेटी)

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'राजपूत की बेटी' शीर्षक से जनवरी 1917 को 'जमाना' में हुआ था। हिन्दी में 'मर्यादा की बेटी' शीर्षक से मानसरोवर-6 और प्रेमचंद सम्पूर्ण कहानियॉं-2 में संकलित हैं।

इस कहानी में प्रेमचंद ने दिखाया हैं कि एक स्त्री अपनी मर्यादा को किस तरह से मरते दम तक बचाती है। मीरा चितौड़ के मन्दिर में कृष्णोपासना करती थी। एक दिन झालावाड़ के राजा रावसाहब तथा उनकी पुत्री प्रभा और मंदार राज्य के राजकुमार मंदिर आए। वहीं प्रभा और राजकुमार

में प्रीति बंध गई जो बड़ी तीव्र थी। मीरा ने दोनो की प्रीति को समझ कर रावसाहब से दोंनो की शादी की बात की, जो रावसाहब ने मान ली। उसी समय चितौड़ के राजा भोजराज वहाँ आए और प्रभा के रुप से घायल हो गए। अब वे किसी भी हालत में प्रभा को पाना चाहते थे। जिस दिन प्रभा और राजकुमार की शादी थी उसी दिन राणा भोजराज प्रभा को उठाने आए। प्रभा ने जब राणा भोजराज के आक्रमण की बात सुनी तो अपने भाई बन्धुओं की जान बचाने के लिए राणा के साथ चली गई। यह सुनकर मंदार की बारात वापस लौट गई। प्रभा वहॉ उदास थी, राणा ने अपनी गलती मानी पर प्रभा एक शब्द न बोली। इस तरफ मीरा ने एक दिन भोज रखा था और बहुत से साधुओ को बुलाया था। उसमें एक साधू खाना नहीं खा रहा था, मीरा ने उससे विनती की तो साधू ने एक बचन मॉगा। मीरा ने वचन दे भी दिया। वह साधू और कोई नही मंदार का राजकुमार था, जिसने मीरा से रात को महल का दरवाजा खुला रखने का वचन मॉगा। मीरा वचन में बॅध गई। मीरा ने अपने पति भोजराज से सारा वृतान्त कहा। भोजराज ने न केवल आज्ञा दी पर यह भी कहा कि मीरा उसके साथ आएगी और अगर प्रभा राजकुमार के साथ जाना चाहे तो उसे जाने दे। प्रभा खुद को मारने की कोशिश कर रही थी कि अचानक राजकुमार को देखकर डर गई। उसने राजकुमार को जाने को कहा पर राजकुमार उसे साथ ले जाना चाहता था।

प्रभा के मना करने पर दोनों में बड़ी बहस हुई और राजकुमार ने तलवार निकाल ली। तभी राजा भोजराज आए और दोनों में तलवार बाजी हुई। राणा का वार खाली नहीं जा रहा था तभी प्रभा राजकुमार के बीच में आ गई और वह मर गई। राजकुमार ने भी खुद के सीने में कटार मार ली और वह भी मर गया। इसी पर विचार करते हुए डॉ. कुमारी नूरजहॉ लिखती हैं कि--" मध्यवर्ग में विधवा व दहेज समस्या ही नारी की समस्या नहीं वरन सधवा होते हुए भी पुरुष के तीक्ष्ण अंकुश से वह दबी हुई है। सधवा होते भी उसका जीवन समस्यापूर्ण है। 'मर्यादा की बेटी (वेदी)' की प्रभा की मर्यादा स्त्रियों की परम्परागत दीवार है, जहॉ चरित्र अपनी पिछली मान्यताओं और लोकनिन्दा से सहमे पीछे खड़े हैं।'' 183

10. वासना की कड़िया

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'जंजीरे हवस' शीर्षक से सितम्बर-अक्टूबर 1918 को 'कहकशा' में हुआ था तथा 'प्रेमबत्तीसी' में संकलित है। हिन्दी में 'वासना की कड़िया' शीर्षक से गुप्तधन, भाग-1 और प्रेमचंद सम्पूर्ण कहानियॉ-2 में संकलित हैं।

प्रस्तुत कहानी में कासिम मुल्तान को हराकर उनकी रानियों, शहजादियों और धन आदि को लेकर दिल्ली आ रहा था, उसे दिल्ली पहुँचना था क्योंकि वह राजा के द्वारा की गई तैयारी को देखना चाहता था। इसलिए रात होने पर भी वह न रुका। लेकिन अचानक उसकी नजर पालकी के अन्दर से देख रही दो नजरों पर गई। वह मुल्तान की शहजादी थी। जिसको पाने के लिए यह युद्ध हुआ था। उन नजरों ने कासिम को मन्त्र मुग्ध कर दिया और उसने वहीं डेरा डाल दिया। रानी के डेरे के सामने कासिम ने अपना डेरा डलवाया और आधी रात को डेरे के पॉच सिपाही जो तलवार और मशाल लेकर सुरक्षा कर रहे थे उन्हें बाकी सेना को देखने को भेजा तथा मशाल बुझवा दिया। बाद में कासिम डेरे पर गया और आधे घंटे तक देखते रहा फिर गुलाब जल छिड़ककर रानी को जगाया। रानी सहम गई लेकिन कासिम ने उससे अपने प्यार का इजहार किया । शाहजादी ने भी अपना प्यार जताया, पर उसने कासिम को एहसास दिलाया कि वह दिल्ली के साथ दगा नहीं करेगी। उनकी प्यार भरी बातों मे सुबह हो गई। कासिम सबसे बचते हुए अपने डेरे की ओर रवाना हुआ। दिल्ली पहुँचने पर वह सुल्तान के पैर पड़ा तो सुल्तान ने उसका गला धड़ से अलग कर दिया, क्योंकि मसरूर जो कासिम एवं सुल्तान का नौकर था उसने कासिम और शाहजादी की बातें सुन ली थी और सुल्तान को सब बता दिया था।

11. वज्रपात

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मार्च 1924 को माधुरी में हुआ था तथा मानसरोवर,भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-3 में संकलित है। उर्दू में 'नुजूले बर्क' शीर्षक से 'फिरदौसे ख्याल' में संकलित है।

प्रस्तुत कहानी में प्रेमचंद ने इतिहास सम्बन्ति घटना को लिया है। नादिरशाह ने दिल्ली में कुहराम मचा रखा था। नादिरशाह का गुस्सा बहुत खराब था। उनका खजाना भर गया था पर मुगल आजम नामक हीरा चाहते थे। जिसके पहनने से इन्सान अमर हो जाता है। इसलिए इतना धन आने पर भी वे खुश नहीं थे। उन्होंने वजीर से उस हीरे के बारे पूँछा तो उसने बताया कि वह हीरा नहीं दे सकता है क्योंकि वह हीरा राजा का सबसे प्रिय है और जो उसे जो पहनता है वह अमर हो जाता है। वजीर के कहने पर दिल्ली के बादशाह मुहम्मद शाह ने उस हीरे को अपने तख्त में छिपा दिया। थोड़े समय बाद मुहम्मद शाह और नादिर शाह के बीच संधि हो गई। दोनों एक ही सिंहासन पर बैठने लगे। नादिर शाह धन लेकर वापस जाने लगा पर उससे पहले उसने संधि का नियम बताकर तख्त बदलवाए, जिससे हीरा नादिरशाह के पास चला गया। लेकिन यह हीरा उन्हें रास न

आया। क्योंकि नादिर शाह ने वह तख्त अपने बेटे का पहनाया और कुछ दिन बाद उनके पुत्र का कत्ल हो गया और नादिर शाह ने हीरे को मनहूस मानकर तख्त के साथ बेटे के कवर में दफना दिया।

12. क्षमा

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जून 1924 को माधुरी में हुआ था तथा मानसरोवर,भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-3 में संकलित है। उर्दू में 'अफ्व' शीर्षक से मई 1924 को 'जमाना' में प्रकाशित हुई।

प्रस्तुत कहानी एक सत्य घटना पर आधारित है। स्पेन देश में मुसलमानों ने अपना आधिपत्य जमा रखा था, लेकिन ऐसे कई ईसाई थे जो अभी भी मुसलमान धर्म को अंगीकार नहीं करते थे। मुस्लिम उन पर अत्याचार करते पर वे मुस्लिम धर्म न अपनाते। उनमें एक पीटर का बेटा था दाऊद। कई ईसाई उसकी शरण लेते थे। एक दिन मुसलमानों ने उसे चारों ओर से घेर लिया और वे लोग अपनी जान बचाकर भागे। कई महीनों तक दाऊद गायब रहा और मुसलमान उसे ढूँढ़ते रहे। एक दिन दाउद परेशान होकर एक बाग में बैठा जहॉ जमाल नामक मुसलमान एवं उसके साथियों ने उसे घेर लिया। दाऊद ने जमाल को इस्लामी न होने का दावा किया तो दोनों में हाथापाई हो गई और उसमें जमाल मारा गया। दाऊद भागता-भागता एक बूढ़े अरबी के पास पहॅुचा। जो कुरान पढ़ रहा था। वहॉ जाकर बूढ़े अरबी को उसने सारी सच्चाई बताई, जमाल के मौत की बात भी बताई। बूढ़े अरबी ने शरण लेने वाले की जान तो बचाई पर जमाल उसका बेटा था और वह अपने बेटे के खूनी को माफ नहीं करना चाहता था। दाउद ने अपना नाम और धर्म बताया। बूढ़ा शेख हसन जान गया कि यह मुसलमानों के घमंड का परिणाम है। उसने दाऊद से सिर्फ इतना कहा कि इस्लाम लोगों को गलत राह नहीं दिखाता लेकिन मुसलमान अपनी वीरता के घमंड में गलत काम कर बैठते हैं। बूढ़े हसन ने अपनी घोड़ी देकर दाऊद को जितना दूर हो सके उतनी दूर भाग जाने को कहा।

13. लैला

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में जनवरी 1926 को 'सरस्वती' में हुआ था तथा मानसरोवर,भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-3 में संकलित कह गई। उर्दू में 'फिरदौसे खयाल' तथा प्रेमचालीसी में संकलित है।

इस कहानी की लैला एक दिन गाती-बजाती तेहरान में आई, वह एक भक्तिन थी। उसके गीतों में करुणा थी इसलिए सारा गॉव उसके गीतों में डूब गया। एक बार तेहरान का शहजादा नादिर

वहॉ से गुजरा तो वह भी लैला के गीतों में डूब गया। अब वह लैला के पास रहता और सादा खाता-पीता और उसकी सेवा करता। नादिर लैला के प्यार में मग्न हो गया था। कुछ समय के बाद दोनों ने शादी कर ली जो गांव वालों को पसंद न आई। राजा लैला के अनुसार हर कार्य करता इसलिए गॉववालों ने राजा से लैला को छोड़ देने की बात कही। यह सुनकर लैला वहॉ से चली गई और उसके पीछे राजा भी। एक साल तक राज्य बिना राजा के चलता रहा पर जब राज्य पर आफत आई तो लोगों ने राजा को ढूॅढ़ा। गॉव वाले राज्य के संकट को बताकर राजा को वापस ले आए। जिसके साथ लैला भी आई। अब राज्य फिर से अच्छी तरह से चलने लगा। लेकिन अब लोग लैला पर लांछन लगाने लगे क्योंकि वे लैला को नादिर से अलग करना चाहते थे। नादिर यह सब सुनकर रोने लगा और एक हप्ते तक ठीक से बात न कर पाया। लैला यह सह न सकी और उसके कर्तव्य में बाधा न आए इसलिए वह वहॉ से चली गई। अब उसकी भक्ति में वही करुणता है।

14. कामना तरु

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अप्रैल 1927 को 'माधुरी' में हुआ था तथा मानसरोवर,भाग-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ, भाग-3 में संकलित है। उर्दू में 'नखले उम्मीद' शीर्षक से 'ख्वाबो खयाल' में संकलित की गई।

राजा इन्द्रनाथ की मृत्यु हुई, उसके बाद उनके पुत्र कुॅवर राजनाथ अपनी रक्षा के लिए कुॅवरसिंह जो एक जागीरदार थे, उनके पास गए। कुॅवरसिंह की एक पुत्री थी जिसका नाम चंदा था। जिससे राजकुंवरसिंह की प्रीति बंध गई, पर चंदा का रिश्ता कहीं और तय था। एक दिन दोपहर में चंदा अपने पौधे को पानी देने के लिए पानी का घड़ा भरकर आ रही थी, उस समय कुंवर ने उसका घड़ा ले लिया। पेड़ को चंदा ने लगाया था पर उसकी देखभाल कुॅवर कर रहे थे। अब पेड़ धीरे-धीरे बढ़ने लगा। एक बार दुश्मनों ने कुॅवरसिंह को मारकर कुंवर राजनाथ सिंह को अपने साथ ले लिया। बीस साल तक कुॅवर को बन्दी बनाकर रखा। कुॅवर सिर्फ कामना तरु को देखना चाहते थे इसलिए वहॉ से भाग कर कई महीनों बाद उसी जगह पहॅुचे। वृक्ष अभी भी पुलकित था पर सारा घर तबाह हो गया था। कुॅवर वृक्ष पर चढ़ा पर चंदा न मिली। रात को वहीं एक खाट डालकर सो रहा था तो एक चिड़ियॉ की करुण आवाज सुनाई दी। दूसरे दिन उसने घर साफ किया, वृक्ष को पानी पिलाया और खाट डालकर सोने लगा। तभी उसे लगा कि वह चिड़ियॉ और कोई नही चंदा है। उस रात चिड़ियॉ पुलकित थी इसलिए मधुर गीत गाने लगी। कुॅवर को विश्वास हो गया कि वह चिड़ियॉ और कोई नही चंदा है। दूसरे दिन कुॅवर मर गया और अब उस वृक्ष पर एक जोड़ा बैठता है।

15. शतरंज के खिलाड़ी

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अक्टूबर 1924 को माधुरी में हुआ था तथा मानसरोवर,भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-3 में संकलित है। उर्दू में 'शतरंज की बाजी' शीर्षक से दिसम्बर 1924 को 'जमाना' में प्रकाशित हुई तथा ख्वाबो खयाल में संकलित की गई।

कहानी के बारे मे रामदीन गुप्त का मानना है कि--" हिन्दुस्तान आज स्वतंत्र हो चुका है, किन्तु दुर्भाग्य हमारे देश में आज भी अनेक मिर्जा सज्जादअली और रोशनअली विद्यमान हैं। जो 'कोउ नृप होउ हमहिं का हानी' के अस्वस्थ एवं घोर असामाजिक जीवन दर्शन में विश्वास रखते हैं। मिर्जा और मीर जैसे व्यक्तियों के कारण ही हिन्दुस्तान को गुलामी का तौक पहनना पड़ा था। 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी को ऐतिहासिक पृष्ठभूमि केवल इस अर्थ में कहा जा सकता है कि उसमें कहानीकार ने अपनी बात ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में कही है, वर्ना वह एक शुद्ध राजनीतिक और सामाजिक व्यंग्य है- इसमे सन्देह नहीं। प्रस्तुत कहानी में व्यंग्यकार प्रेमचंद को अपने उत्कृष्टतम रूप में देखा जा सकता है।'' 184

वाजिदअली शाह के समय में लखनऊ में शासन चरमरा गया था। लोग नशे, मौज- मस्ती और विलासिता में डूबे हुए थे। चरस-अफीम, गाँजा, शतरंज के दांवपेंच चल रहे थे। कंपनी पर सरकार का बहुत बड़ा ऋण चढ़ गया था। इसमें मिरजा सज्जाद अली और मीर रोशन जो बादशाही नौकर थे उन्हें भी शतरंज का शौक चढ़ गया था। मिरजा के घर कोई बूढ़ा न होने की वजह से सुबह से शाम तक और रातों में भी शतरंज की महफिल जमती रहती। मिरजा की पत्नी इससे काफी परेशान थी। एक बार उनके सिर में दर्द हो रहा था, उन्होंने मिरजा को बुलाया पर वे हारने के चक्कर से पत्नी के पास न गए। मिरजा की बीबी की तबियत ज्यादा बिगड़ने पर मीर ने उसे बेगम के पास भेजकर मोहरे बदल दिए और बाहर टहलने लगे। मिरजा ने अन्दर जाकर सारा इल्जाम मीर पर लगा दिया। तभी मिरजा की बीबी गुस्से मे आकर मीर को घर से निकालना चाहा। पर मीर को कमरे मे न पाकर उन्होंने शतरंज बाहर फेंक दी। मीर समझ गया और घर चला गया। मिरजा दवा लेने के बहाने मीर के घर गया और कल से उनके घर शतरंज खेलने का तय हुआ। लेकिन मीर की पत्नी ने अपनी आजादी छिन जाने के डर से अपने एक आशिक को राजा का नौकर बनाकर मिरजा और मीर के पास राजा का यह पैगाम लेकर भेजा कि युद्ध की तैयारी करनी है और राजा ने उन्हें फौरन बुलाया है। यह सुनकर मीर और मिरजा राजा के पास न जाकर शहर से दूर एक टूटी हुई मस्जिद

में जाकर अपना खेल खेलना शुरू किया। वे दोनों वहीं खा पी लेते और वही शतरंज खेलते। एक बार मिरजा लगातार जीत रहे थे और मीर हार रहे थे, तभी कंपनी सरकार के सैनिक लखनऊ की तरफ बढ़ रहे थे।

मीर ने मिरजा को यह नज़ारा देखने को कहा पर मिरजा ने अपनी बाजी संभालने को कहा। शाम को मिरजा पीट रहे थे और मीर लगातार जीत रहा था। इधर कंपनी सरकार सैनिक वजीर को ले जा रहे थे। मीर ने मिरजा को बचाने की सलाह दी। मिरजा लगातार हारने के कारण चिढ़ गया था, इसलिए उन्हें छोटी सी बात भी बुरी लगती थी। दोनों में बातों-बातों में तकरार होने लगी, जो बाद में द्वन्द्व युद्ध में तबदील हो गया। फिर क्या था शतरंज के वजीर को बचाने के लिए दोनों ने तलवार उठाई और लड़ने लगे जिसमें दोनों मारे गए। इसी सन्दर्भ में विचार करते हुए डॉ. सुशील कुमार फुल्ल कहते हें कि--" देशकाल और वातावरण की दृष्टि से भले ही हमें यह लगे कि आज इस कहानी की प्रासंगिकता कम हो गयी है क्योंकि आज न राजा-रजवाड़े हैं, न ही विलासिता का वह दौर है। परन्तु इतना तो निश्चित है कि जो मानसिकता मिर्जा और मीर के माध्यम से चित्रित की गई है, उसकी झलक आज भी समाज में मिल जाती है। समाज हित को त्याग स्वार्थ-साधना एवं मानव कल्याण की उपेक्षा आज भी परिलक्षित होती है। अस्तु, प्रस्तुत कहानी में मनुष्य की शाश्वत स्वार्थपरता, अहंकार एवं व्यर्थ के मामलों में भिड़ जाने की बर्बर प्रवृत्ति का चित्रण मिलता है, जो परिणाम को न देख दम्भ की परितृप्ति में ही अपना त्राण समझता है।'' 185

इसी पर अपना विचार व्यक्त करते हुए शिवकुमार मिश्र का भी कहना है कि--" कहानी अपने संवादों में, भाषा कर रवानी में और कहने के अंदाज में नवाबी मानसिकता के साथ उर्दू-फारसी की सारी ताकत के साथ सामने आई है। यह त्रासद अनुभवों की कहानी है। भारतीय इतिहास के क्लेशदार पहलू करने वाली कहानी है, ह्रास शील सामंतवाद की असलियत को उजागर करने वाले कहानी है। शतरंज अंग्रेजों ने भी खेली और हमारे अधः पतित सामंती शासकों ने भी। अंग्रेज जीते, हिन्दुस्तान की जर्जर बादशाहत द्वारा यह सच्चाई भी कहानी में पूरी तल्खी के साथ उभरी है।'' 186

16. धिक्कार

कहानी का प्रकाशन केवल हिन्दी में फरवरी 1930 को माधुरी में हुआ था, तथा मानसरोवर,भाग-3 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-4 में संकलित है।

इस कहानी में ईरान और यूनान के युद्ध को दिखाया गया है। ईरान यूनान को हर तरह से हराना चाहता था। यूनान की हर चाल बेकार जा रही थी। अंत में यूनान के लोगों ने जाकर माता

के मंदिर में विनती की। मंदिर की पुजारिन ने बताया कि यूनान का कोई व्यक्ति गद्दार है। लोगों ने उस व्यक्ति का नाम पूंछा तो उसने कहा कि रात को जिसके घर में संगीत बजे तथा सुगंध आए वह व्यक्ति गद्दार है। लोगों ने उस व्यक्ति को ढूंढ़ना शुरू किया काफी दिन बीतने के बाद भी वह व्यक्ति न मिला क्योंकि वहॉं काफी औरते विधवा हो चुकी थी इसलिए संगीत बजने का सवाल ही नहीं पैदा होता था। तभी एक रात को एक बूढ़ा मंदिर की तरफ गया तो उसने वहॉं गाने की आवाज सुनी तथा वहॉं से कुछ खुशबू आ रही थी। वह पुजारिन का बेटा पासोनियम था, जो कुछ पैसों की वजह से ईरान को यूनान की हर हरकत के बारे बताता था। सब लोग वहॉं इकट्ठे हो गए। पुजारिन ने भी अपने बटे को गद्दार करार दिया। पासोनियम बचने के लिए मंदिर में घुस गया। लोगों ने छत तोड़ दी। पासानियम पूरा दिन घूप में तपता रहा, खाना-पीना भी न मिला। दूसरी रात को लोगों ने उसे मारना चाहा पर तब पासोनियम ने बताया कि वह ईरान के सब राज जानता है, वह यूनान को युद्ध में मदद करेगा तो लोगों ने उसे छोड़ दिया।

17. दिल की रानी

कहानी का प्रकाशन केवल हिन्दी में नवम्बर 1933 को 'चांद' में हुआ था तथा मानसरोवर,भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में संकलित है।

प्रस्तुत कहानी में प्रेमचंद ने इतिहास की सत्य घटना को लिया है। तुर्को ने कुस्तानियॉ पर अपनी हुकूमत जमा दी। तुर्को के राजा तैमूर ने कुस्तानियॉं के सेनापति यजदानी को पूँछा कि वह उन्हें मार दे या जिला दे । तब यजदानी ने बताया कि अगर वह जिलाना चाहता तो वह जिलाए वरना मार डाले। उसकी हाजिरजबाबी से निडरता, से तैमूर को गुस्सा आया और उसने अपनी सेना को उसको मारने भेजा। कई लोग मर गए तभी यजदानी के पीछे से एक खूबसूरत लड़का बाहर आया, जो युवान था। उसने तैमूर को सही और गलत का अंतर एवं सभी मुस्लिम एक जैसे होते है, उसका उपदेश दिया। तैमूर को उस लड़के का उपदेश अच्छा लगा। तैमूर ने यजमानी को उसका राज वापस दिया तथा उस नौजवान को जिसका नाम हबीब था उसे अपने दरबार में उसके खास आदमी की जगह दी। वह लड़का दरअसल यजदानी की पुत्री उम्मतुल हबीब थी। जिसे यजदानी से लड़के जैसी तालीम मिली थी। तथा यजदानी और उसकी पत्नी ने ईसाई से मुस्लिम धर्म अपनाया, तब भी उसकी बेटी उममतुल हबीब ने दो साल तक दोनों धर्म का सही रूप से अध्ययन किया। बाद में मुस्लिम धर्म अपनाया। उम्मतुल हबीब के माता-पिता दोनों ने उसे दरबार में रहने की परवानगी न दी पर उसने मां-बाप को समझाया कि अगर उसकी वजह से उसके लोगों का भला हो सकता है तो वह दरबार में

रहेगी। अब तैमूर हर काम उम्मतुल से पूंछकर करता तथा अब वह उससे मुहब्बत भी करने लगा था। ईसाइयों के इलाके में मुस्लिमों ने कई बन्धन लगाए जैसे जजीया देना, गिरजाघरों में घंटा न बजाना, मदिरा सेवन न करना। इसलिए वहॉ पर इन कोमों में जंग छिड़ी थी। यह मामला राजा के पास गया तो हबीब को पता चला। राजा को वहॉं न भेजकर हबीब खुद गई और उसने सारे कर माफ कर दिये। इस पर मुस्लिमों ने हबीब को एवं ईसाईयों को एक किले में घेर लिया। राजा को जब इस बारे में पता चला तो वे वहॉ गए और मुस्लिमों को समझाया कि जो हुआ वह सही हुआ। क्योंकि हमें किसी को बन्दगी करने से नही रोकना चाहिए। राजा के फैसले से ईसाई खुश हुए और दोनों कोम के लोग एक दूसरे के साथ शांतिपूर्वक रहने लगे। उसी रात को तैमूर ने हबीब से शादी करने का प्रस्ताव रखकर बताया कि उसे काफी समय से पता था कि वह लड़की है और तैमूर की बीबी बेगम हमीदा कहलाई।

5. राजनीतिक कहानियॉ

प्रेमचंद जी ने अपने समय की राजनैतिक परिस्थिति को भी ध्यान में रखकर, उसे अपनी कहानियों के माध्यम से लोगों के सामने प्रस्तुत किया है। कुछ कहानियॉ ऐतिहासिक है, जिसमें राजनीति को मुख्य रुप से दर्शाया गया है, ऐसी कहानियों को भी यहॉ लिया गया है। प्रेमचंद इन कहानियों के माध्यम से लोगो के सामने आदर्श राजा, नेता एंव आदर्श समाज की नीव रखते हुए लोगो को सही एंव गलत का फर्क दिखाते हैं। ड़ॉ रामबक्ष कहते है कि, " वास्तव में प्रेमचंद ने राजनीतिक विषयों पर कहानियॉ लिखना अब कम कर दिया इसका एक कारण यह था कि प्रेमचंद के कांग्रेस से मतभेद बढ़ते जा रहे थे, फिर भी वे उस संस्था के हमदर्द थे क्योंकि वही संस्था समर्थ ढ़ंग से साम्राज्यवादियों से संघर्ष कर रही थी ऐसी संस्था का विरोध करके वे अप्रत्यक्ष रुप से ब्रिटिश साम्राज्यवाद का समर्थन नहीं करना चाहते थे। फिर भी उन्होंने कुछ कहानियॉं लिखी है।'' 187

1.शेख मखमूर

जिसका प्रथम प्रकाशन एवं संकलन उर्दू में जुलाई 1908 को सोजेवतन में हुआ था। हिन्दी रुप गुप्तधन-1 और प्रेमचंद संपूर्ण कहानियॉ-1 में संकलित है।

जन्नतनिशॉ एक मुल्क था, जिसके राजा शाह बामुराद थे। शाह किशवर ने इस मुल्क को जीत लिया। राजा बामुराद, अपनी हार को न सह सका और एक चोटी पर योग की अवस्था में बैठ गया। लोग उसे फकीर समझकर बहुत मानने लगे। समय बितने पर राजा को महसूस हुआ की

वह बूढ़ा हो रहा है इसलिए उसने गॉव के पंचो से उसकी शादी करवाने की मॉग की। पंच उनकी इज्जत करते थ इसलिए उनकी शादी पंचो ने रिन्दा से करवाई, जिनसे उन्हे एक बेटा हुआ जिसका नाम मसऊद था। मसऊद बड़ा तेज, होशियार, शेर के शिकार में माहिर, बाकि बच्चों से अलग था। उस समय राज पर किशवर का बेटा किशवरकुशा दोयम था। उसने सभी पूराने मुनीमो तथा लोगों को राज्य से निकाल कर, नए लोगो को शामिल किया। उसके समय जुल्म एवं अत्याचार बढ़ने लगे जिसकी वजह से लोग बगावत पर उतर गए। मसऊद की मुलाकात मलिका शेर अफगन से शेर शिकार में हुई जहॉ दोनों में बड़ी तलवार बाजी हुई, जिसमें मसऊद बुरी तरह से घायल हुआ। दो हप्ते बाद जब वह ठीक हुआ तो मलिका ने उससे उसकी तलवार मॉगी। जिसके कारण दोनों फिर से युद्ध करने लगे पर मसऊद ने मलिका को बताया कि यह तलवार उसके पिता की है और उन्होंने तलवार और ताज देकर वचन लिया है कि वह राज वापस लेगा। लोगों ने राजा के खिलाफ एक सेना तैयार किया और एक हप्ते के बाद युद्ध करके राज्य एवं वहॉ का माल लूटते गये । इन सभी सैनिकों में मसऊद बड़ा चतुर था और वहीं वह सैनिको का हौसला बढ़ाता एवं युद्ध भी सिखाता था। इस सेना का मुखिया नमकखोर था। इन लोगों ने मीर सुजा जैसे योद्धा को भी हरा दिया लेकिन मीर राजा के हराने के बाद मलिका शेर अफगन की वजह से लोगों में मसऊद के लिए गलत फहमी हो गई।

वे लोग उसे गद्दार कहने लगे इसलिए मसऊद को अपना राज्य जीतने के लिए निर्दोष होते हुए भी अपनी तलवार वापस देनी पड़ी और वह वहॉ से चला गया। बाद में मसऊद ही शेख मखमूर बनकर वापस सेना में शमिल हो गया और अपने हौंसले से राज्य को जितवाया। राज्य जीतने के बाद मलिका सिंहासन पर बैठती है। मलिका को शेख मखमूर की असलियत का पता चलता है इसलिए वह उससे शादी कर लेती है। वह चाहती है कि मखमूर राज करे लेकिन मखमूर मना करता है तभी वहॉ राज दरबार में रिन्दा जो बूढ़ी हो गई है वह आती है और मुकुट मलिका के माथे पर देखकर उसके बेटे का पता न होने की खबर देती है। मखमूर यह सुनकर आकर रिन्दा का पैर छूता है। सबको पता चलता है कि मखमूर ही मसऊद है और इस राज्य का राजा। सब उसको बधाई देते हें और उसे राजा बनाते हैं। उसी समय रिन्दा का लक्ष्य पूरा होते ही उसके प्राण पखेरू उड़ जाते हैं।

2. आल्हा

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1912 को 'जमाना' में हुआ था तथा प्रेमपच्चीसी में संकलित है। हिन्दी में गुप्तधन-1 और प्रेमचंद संपूर्ण कहानियॉ-1 में संकलित है।

आल्हा नाम का एक वीर था, जो पुराने जमाने में चन्देल राजपूतों में वीरता और जान खेलकर स्वामी की सेवा करने के लिए मशहूर था। किसी राजा-महाराजा को उतनी अमरकीर्ति नहीं मिली थी उतनी आल्हा को मिली थी। आल्हा-ऊदल दो भाई थे। जिनके वीरता के किस्से लोग बड़ी चाव से 'आल्हाड़ी' के नाम से जानते थे। राजा परमालदेव चन्देल खानदान का आखिरी वारिश था। महोबा उनकी राजधानी थी, लेकिन आल्हा-ऊदल ने मिलकर महोबा को दिल्ली-कन्नौज की तरह बना दिया था। आल्हा-ऊदल पिता जसराज वीर थे, जो एक लड़ाई में मर गए थे। राजा परमालदेव ने इन दोनो को रानी मलिनहा की गोद में डाल दिया। रानी उन्हें अपने बेटों की तरह पालती थी और सारी शिक्षा प्रदान की।

आल्हा-ऊदल ने चन्देल की सीमाओं को बढ़ा दिया और सभी जगह उनकी वीरता के किस्से मशहूर हुए। यह बात आल्हा-ऊदल के मामा माहिल को चुभती थी इसलिए उसने राजा को अपनी मीठी वाणी के जादू में फँसाया और कहा कि आल्हा अपनी जीत पर गुमान करता है और खुद को वह राजा समझता है। राजा इस बात को नहीं मानते थे लेकिन माहिल ने ऐसा कुछ कहा जिससे राजा ने आल्हा को बुलाया। उस समय आल्हा खेल का अभ्यास कर रहा था। उसे आशंका हुई कि राजा ने बेवक्त क्यों बुलाया पर मामा को देखकर वह समझ गया कि दाल में कुछ काला है। राजा ने आल्हा से उसकी वफादरी का प्रमाण के रूप में उसके घोड़े नाहर पर सवारी माँगी पर आल्हा अपना राजपूत धर्म न छोड़ पाया। जिस पर आल्हा और ऊदल को महोबा छोड़कर जाना पड़ा जैसे ही सभी राज्यों को यह पता चला कि आल्हा और ऊदल राज्य छोड़कर जा चुके है वैसे ही सभी ने उन्हें अपने साथ मिलाने की बात की। जिसमें राजा जयचंद अपने बेटे लाखन के द्वारा दोनों को अपनी सेना में शामिल करने में कामयाब हो गये। इधर महोबा की हालत बिगड़ने लगी। पृथ्वीराज चौहान की सेना युद्ध से वापस आने पर महोबा में विश्राम कर रही थी और महोबा की सेना ने उन पर हमला किया यह अपमान पृथ्वीराज चौहान बरदास्त न कर पाया और महोबा के खिलाफ युद्ध का एलान किया। महोबा के राजा ने तैयारी के लिए एक महीने की मुद्दत माँगी और पृथ्वीराज चौहान ने युद्धनीति के अनुसार उन्हें समय दिया। लोगों ने राजा को कई सलाह दिए जैसे ऊँची दीवार बनाने का, महोबा की पश्चिम की ओर पलायन करना आदि पर रानी ने राजा को कहा कि आल्हा-ऊदल को वापस लाने पर ही इस समस्या का समाधान हो सकता है। महोबा के कवीश्वर जगना भाट आल्हा-ऊदल को बुलाने गए पर उन्हेंाने कहा कि मामा उनकी रक्षा करेगें। वे आने को तैयार न थे वे अपनी माता देवलदेवी के कथन को न ठुकरा सकें उनके आने पर उन्होंने सारी सेना का मनोबल

बढ़ा गया। अठारह दिन तक युद्ध चला। केवल तीन लोग पृथ्वीराज चौहान, चन्दा भाट, आल्हा ही बचे। पृथ्वीराज चौहान के अनुभवी सिपाही शहीद हो गए और शहाब्बुदीन से जब मुकाबला हुआ तो नौसिखिए, अनुभवहीन सिपाही उतारे गए जिसका परिणाम बहुत खराब हुआ। आल्हा का कोई पता नहीं सब कहते हैं साधु बन गया या अमर हो गया।

3. प्रतिज्ञा (रूहे स्याह / कलुषित आत्मा)

जिसका प्रकाशन हिन्दी में मार्च 1920 को 'श्री शारदा' में हुआ था तथा प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य भाग-1 और प्रेमचंद संपूर्ण कहानियाँ-2 में संकलित है। यह कहानी दूसरे शीर्षक 'रुहे-स्याह (कलुषित आत्मा) से फिर से उर्दू मे पहली बार नवम्बर 1920 को 'सुबहे-उम्मीद' मे प्रकाशित हुई थी। हिन्दी मे इसी शीर्षक से 'सोलह-अप्राप्य कहानियॉ', प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य खण्ड़-1 और प्रेमचंद सपूर्ण कहानियॉ-2 मे संकलित है।

इस कहानी में प्रेमचंद ने ऐतिहासिक तौर पर राजा के कर्तव्य को दिखाया हैं। इस कहानी की शुरुआत ही सारे राज्य में हाहाकार से होती है। पिछले एक साल से राज्य में बारिश की एक बूँद भी न गीरने पर राज्य में हाहाकार मचा हुआ था। सब लोगो ने भगवान का नाम लिया, मिन्नतें की, कुर्बानीयॉ दी, यज्ञ किए, पर बारिश न हुई। राज्य के महान गुरु बाबा दुलर्भदास, तथा मोलवी मोलाना शेख आबिद से लोगो ने इस मसले का हल मॉगा। पूरे देश से सभी महान गुरुओं तथा मोलाना को बुलाया गया तथा एक पहाड़ पर सबने तीन घण्टे तक धूप मे भगवान की हर क्षमता से पूजा की। किसी ने समाधी ली, राम नाम का जाप किया, योग, कथा सुनना आदि फिर भी कोई बादल न दिखाई दिए। बाबा दुर्लभदास ने लोगो को कहा कि अब उन्हें राजा को ही इस मसले के बारे में बताना पड़ेगा। राजा ही बारिश ला सकते है। लेकिन राजा आमोद-प्रमोद और भोग-विलास मे लिप्त थे राजा के मुनीम तथा सेनापति राजा को कोई भी बात बताकर अपना नुकसान करना नहीं चाहते थे।

एक दिन जब पूरा राज्य राजा के दरबार के सामने कोलाहल करने लगा तब राजा पृथ्वीपाल सिँह अपने कक्ष से बाहर आए और उन्हें राज्य की हालत का सही ज्ञान हुआ। दूसरे दिन सुबह राजा महल से बाहर निकले पर काला मुँह किए, खुले बाल एवं एक लंगोट पहने, नंगे पैर और एक पैर पर खड़े रहकर प्रतिज्ञा ली की वे अपना मुँह भगवान की बारीश से धोएगे। राजा पृथ्वीपाल सिंह पसीने से तरबतर हो गए। गॉव के सारे लोग उनसे विनती करने लगे कि वे अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर महल मे चले जाए पर राजा पृथ्वीपाल सिंह ने अपनी प्रतिज्ञा न तोड़ी। आखिर तीन बजे के बाद

बादल घिरने लगे और बारिश हुई राजा की प्रतिज्ञा पूरी हुई और सब लोग राजा का जयजयकार करते उनके पैरो पर गिर पड़े।

4. आदर्श विरोध

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी मे 6 जुलाई 1921 को 'श्री शारदा' मे हुआ था तथा मानसरोवर-8 और प्रेमचंद सपूर्ण कहानियॉं-2 में संकलित है।

इस कहानी के महाशय दयाकृष्ण लखनऊ के बेरिस्टर थे जिसे आज वायसराय ने अपनी कार्यकरणी मे शामिल किया। जिसकी वजह से पूरे भारतीयों को गर्व महसूस हो रहा था। समाचार पत्रों में उनकी चर्चा होने लगी। दयाकृष्ण जी अब अंग्रेजो के सभी फैंसलो में शामिल होते तथा देशवासियो को वे फैसले बताते। जब लोगों ने सरकार से मॉंग की कि वे उन्हें व्यवसाय मे सहायता करे तो दयाकृष्णजी ने सरकार का फैसला सुनाते हुए कहा कि वे सरकार से सहायता न मॉंग कर खूद के बलबूते पर काम करे। दूसरे दिन उनकी स्पीच की कई टीका हुई। चैत महीने मे दयाकृष्ण जी आय व्यय का मसविदा जो पेश किया गया था उसमे अपनी असहमती दिखाई क्योंकि उस मसविदे मे सरकार ने कर्मचारियो के पगार जो पहले से बढ़े हुए थे वे और बढ़ा दिए और सैनिक जो बाहर के देश मे रहते थे, उनके पगार नहीं बढ़ाए। दयाकृष्णजी के इस विरोध ने उन्हे प्रजा मे निंदनीय बनाया। दयाकृष्णजी ने अपना उल्लू सीधा करने के लिए अपने भाषण मे सैनिको का महत्व दिखाते हुए देहात के लोगो मे वीरता की कमी तथा शैक्षणिक वर्ग को आलसी बताया। पर इससे उनकी और बदनामी हुई, उनके पुत्र बालकृष्ण ने उन्हें जातिद्रोही, शत्रु तथा अन्य कई गालियॉं दी, जिससे खिन्न होकर दयाकृष्णजी ने प्रहारघात करता हुआ पत्र अपने बेटे बालकृष्ण को लिखा। दो हफ्ते तक उनको बेटे का कोई पत्र मिलने पर लगा कि पुत्र को अक्ल आ गई पर 'लंदन-टाइम्स' की चीट्ठी जब पढ़ी तो उनके होश उड़ गए क्योंकि लंदन मे हिन्दुस्तानियों की एक सभा मे जब वहॉ के सभापति ने दयाकृष्णजी के बारे मे कटुवचन बोले तो उनका बेटा बालकृष्ण न सह सका उसने विरोध किया परन्तु वह यह अपमान सह न सका और आत्महत्या कर ली। यही था बालकृष्ण का आर्दश विरोध।

5. सत्याग्रह

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी मे दिसम्बर 1923 को 'माधुरी' मे हुआ था तथा मानसरोवर, भाग-3 एवं प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-2 मे भी संकलित है। उर्दू में 'खाक-ए-परवाना' में संकलित है।

इस कहानी में दिखाया है कि हिज एक्सेलेसी जो वाइसराव हैं वह बनारस आने वाले थे इसलिए कांग्रेस के नेता हड़ताल करने वाले थे। बाजार भी बन्द रखवाने वाले थे। रायसाहब और राजासाहब इस समस्या को दूर करने के लिए मोटेराम शास्त्री को अनसन पर उतर कर धर्म के नाम पर लोगों को रोकने को कहा। रायसाहब और राजासाहब चाहते थे कि धर्म नाम से डरकर लोग बाजार खुला रखे। इसके लिए मोटेराम शास्त्री को काफी धन प्राप्त हुआ। दो दिन तक तो उनका अनुष्ठान चला पर रात में मंत्री जी की चाल में फॅसकर मिठाई और पानी पी लिया और उनका अनशन टूट गया। सारे समाज को इस बात का पता चल गया इसी पर अपना विचार प्रकट करते हुए जगतनारायण हैकरवाल लिखते हैं कि--" यह लघु कथा नगर के धनी मानी व्यक्तियों तथा बनारस के प्रसिद्ध पंडितों पर व्यंग्य है। पं. मोटेराम शास्त्री उस नैतिक पतन का प्रतिनिधि करते हैं, जिसके जाल में उनका वर्ग फॅसा हुआ था क्योकि उन्होंने अपनी अन्तरात्मा को चॉदी के कुछ सिक्कों के लिए बेंच दिया था। पंडित मोटेराम का चरित्र काल्पनिक नहीं हें। उनके नाम का व्यक्ति वास्तव में बनारस में रहता था, इस बात का उल्लेख श्रीमती शिवरानी देवी ने अपनी पुस्तक प्रेमचंद घर में' किया भी है।'' 188

6. विश्वास

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में अप्रैल 1925 को 'चांद' मे हुआ था तथा 13 नवम्बर 1930 को 'भविष्य' में फिर से प्रकाशित हुई और मानसरोवर, भाग-3 एवं प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-3 मे भी संकलित है।

कहानी की मिस जोशी बम्बई की सभ्य समाज की एक राधिका है। वह मिस्टर जौहरी बम्बई के गवर्नर जो शादी शुदा हैं उनकी प्रेमिका थी। उस समय उनकी ही सल्तनत चलती थी। वे जनता पर अपने मुताबिक कर एवं लगान लगाते। हाल में यही हुआ। उन्होंने अनाज पर कर लगाया, जिस पर आम जनता भड़की। एक सभा में उस सभा के अध्यक्ष मिस्टर आपटे ने मिस जोशी, मिस्टर जौहरी एवं उनके साथियों को चाय, बिस्कुट और गुलछरे उड़ाते देखा तो वे क्रोधित होकर उन पर बड़ा करारा व्यंग्य करते हुए भाषण दिया। इसी सन्दर्भ पर अपना विचार प्रकट करते हुए डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" विश्वास को आपटे का व्यक्तित्व अहिंसात्मक विद्रोही है। राज्य कर्मचारियों की विलास पूर्णता और जनता का भूखों मरना उनके लिए असह्य है। इसलिए जनता के सामने मेघ की भॉति गरज कर अपनी विद्रोहात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं--' इधर तो हमारे भाई दाने-दाने को मोहताज हो रहें हैं, उधर अनाज पर कर लगाया जा रहा है। केवल इसलिए कि राज्य कर्मचारियों के

हलुवे-पूरी में कमी न हो। आज हम उच्च स्वर में कह देना चाहते हैं कि हम यह क्रूर और कुटिल व्यवहार नहीं सह सकते। अन्याय और दमन के प्रति होने वाला आपटे का यह द्रोह मिस जोशी में अन्तर्बोध क्रान्तिकारी बदल कर देता है।'' 189

लेकिन पुलिस ने उन्हें ही पकड़ लिया। जिस पर लोग क्रोधित हुए लेकिन आपटे के कहने पर लोगों ने अहिंसा धारण किया। आपटे के भाषण ने इतना असर किया कि समाचार पत्रों में उसकी ही बातें छपी थी। इस पर मिस जोशी एवं मिस्टर जौहरी की बड़ी बेइज्जती हुई। इस बेइज्जती का बदला लेने के लिए मिस जोशी और मिस्टर जौहरी ने प्लान बनाया कि मिस जोशी अपने यौवन के जादू से आपटे को फॅसा कर अपने प्रेम में पागल बनाएंगी और बाद में वह उसे अपने रंग में रंग देंगी। दूसरे दिन मिस जोशी सादे कपड़े मिस्टर आपटे के घर गई। आपटे का घर सादा था तथा वह एकदम सीधा-सादा और सच्चा एव कृतज्ञतापूर्ण इन्सान था। मिस जोशी को वहॉ आकर आपटे की सच्चाई का पता चला कि वह पहले चोरी के अपराध में जेल जा चुका है और वहॉ से असह्य मार के कारण भाग निकला था। पुलिस ने अब तक उसके ऊपर पॉच सौ रूपये का ईनाम रखा है। आपटे का असली नाम दामोदर मोदी है लेकिन पुलिस से बचने के लिए अपना नाम आपटे रख लिया है। मिस जोशी आपटे की सच्चाई और सहनशीलता से प्रभावित हुई। दूसरे दिन उसने अपने घर की पार्टी में आपटे को न केवल बुलाया बल्कि खुद सादे कपड़ों में आई और उसकी अच्छाइयों को सबके सामने रखा। जिस पर मिस्टर जौहरी अवाक रह गए। एक हफ्ते बाद मिस्टर जौहरी ने आपटे पर गलत आरोप लगाकर उसको गिरफ्तार करवाया, जिससे वे मिस जोशी को दुबारा पा सकें। पर मिस जोशी ने अपने प्यार की सीमा को देखते हुए मिस्टर जौहरी को बता दिया कि मिस्टर आपटे जेल में रहें या बाहर हमें कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है। उसके लिए बस उसका प्यार ही काफी है और अगर मिस्टर जौहरी आपटे को मारने की कोशिश करेंगे तो मिस जोशी पहले मिस्टर जौहरी और बाद में खुद को गोली मार लेगी। मिस्टर जौहरी ने उसके प्यार की गहराई को देखकर उसको उसका आपटे वापस लौटा दिया।

7. रियासत का दीवान

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अप्रैल-मई 1934 को 'हंस' मे हुआ था तथा मानसरोवर, भाग-2 एवं प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-5 मे संकलित है। उर्दू में 'दूध की कीमत' में संकलित है।

यह कहानी महाशय मेहता की है जो बड़ी मेहनत एवं लोगों का कई काम करके इस इलाके के राजा साहब सतिया की नजरों में एक जगह बनाकर उस रियासत का दीवान बनता है। जिससे मिस्टर मेहता की पगार पॉच सौ रूपये हो जाती है। उन्हीं दिनो मेहता का बेटा जयकृष्ण गर्मियों की छुट्‌टी में घर रहने आता है। जयकृष्ण और राजा के बीच काफी मित्रता है क्योंकि दोनों साम्यवादी हैं। पर इस बार उसी दौरान पोलिटिकल एजेन्डे का दौरा आया जिसकी वजह से हर एक आदमी से मार कर चंदा लिया जाता था। जयकृष्ण ने राजा साहब की इस नीति का विरोध किया तो दोनों में अनबन हुई और राजा साहब ने उसे रियासत से निकल जाने को कहा। मेहताजी ने नौकरी तथा पद बचाने के लिए जयकृष्ण को वहॉ से निकाल दिया। पर मॉ का दिल न माना। इसलिए मेहता की बीबी सुनीता ने रानी से बात की कि वह राजा साहब से बात करे कि वह जो कर रहे है वह गलत है। राजा साहब ने जब यह बात सुनी तो उन्होंने सुनीता से भी रियासत छोड़ने के लिए कहा। मेहता ने सुनीता को घर आकर खूब डॉटा। अब सुनीता भी चली गई। मेहता ने कुल तीन लाख रूपये इकट्‌ठा किए थे इसलिए सब लोग उससे खुश थे। राजा साहब मेहता को एक काम देना चाहते थे, पर उन्हें पता था कि अगर उन्हें सीधे-सादे तरीके से कहेगें तो मेहता वह काम नहीं करेगा इसलिए राजा साहब ने पहले मेहता की खूब तारीफ की और बाद में कहा कि लगनपुर के साहूकार की बेटी से शादी करना चाहते हैं पर साहूकार मना कर रहा है, तो मेहता वहॉ जाकर लड़की को ले आए। मेहता समझ गए कि राजा साहब लड़की को किडनेप करने को कह रहे हें इसलिए वह राजा साहब को खरी-खोटी सुनाकर अपना घर छोड़कर रातों-रात चले जाते है।

6. साम्प्रदायिक कहानियॉ

प्रेमचंद का समय साम्प्रदायिक उथल-पुथल का समय था। एक तरफ भारतीय प्रजा आजादी के लिए लड़ रहा था तो दूसरी तरफ अंग्रेज **'Divide and Rule'** की नीति के माध्यम से लोगों के बीच फूट डालकर राज्य करना चाहते है। गांधीजी, जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल आदि एक तरफ प्रजा को अपने जातीय एवं धार्मिक भेदभाव भूलकर लोगों को एक साथ रहने का पाठ पढ़ा रहे थे, दूसरी तरफ मुहम्मद अली जिन्ना जो अंग्रेजों के पिछलग्गू थे, वे हिन्दू-मुस्लिम को अलग करना चाहते थे। जिसके लिए उन्होंने मुसलमानों में जिहाद जैसी बातों का गलत मतलब समझकर हिन्दू-मुस्लिम के बीच में कट्‌टर दुश्मनावट पैदा कर दी थी। अंग्रेजो की लगाई हुई आग अभी तक नहीं शान्त हुई है जिसका ज्वलन्त उदाहरण 'कश्मीर' है। प्रेमचंद जी ने भी अपने साहित्यीक दायित्व

को समझते हुए अपनी कहानियों में अपने समय की धार्मिक पृष्ठभूमि को अपनी कहानियों के माध्यम से दर्शाया है। जो इस प्रकार है-

1. मुक्तिधन

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी मे मई 1924 को 'माधुरी' में हुआ था तथा मानसरोवर-3 और प्रेमचंद सपूर्ण कहानियॉं-3 में संकलित है।

इस कहानी के लालादाऊदयाल एक महाजन थे, वे पैसे ब्याज पर देते पर जिस दिन पैसा लौटाने का वायदा किया हो उसी दिन पैसा वापस लेते। एक दिन वे आ रहे थे तब उन्होंने देखा की एक मुसलमान था वह एक बछड़ा बेच रहा था। रहमान ने पॉंच रुपये नुकसान पर अपनी बछिया लालादाऊदयाल को दे दिया क्योंकि लाला एक पंड़ित था और बाकी सब कसाई थे। वह अपनी बछिया से बेहत प्यार करता था पर मुश्किल में आने की वजह से वह बछिया बेच रहा था। कुछ दिन बाद रहमान की मॉं ने हज की जिद की तो उसने लाला से दौ सौ रुपये दो साल के बाद लौटाने के वायदे पर लिया। दो साल बितने पर लाला का नौकर रहमान के घर गया तब रहमान ने लाला से अपनी मॉं की बिमारी की वजह से एक साल की और मोहलत मॉंग ली जिसमे उसके सात सौ रुपये हो रहे थे। लाला के घर से लौटने पर रहमान को पता चला कि उसकी मॉं मर गई है। लोगो से उधार लेकर उसने अपनी मॉं का क्रियाकर्म किया पर अभी सबको खिलाना बाकी था इसीलिए वो लाला के पास दौ सौ रुपये लेने गया, उसे पता था कि इसके बाद उसे लाला को एक हजार रुपये देने पड़ेगे। फिर भी वह लाला के पास जाकर पैसे मॉंगता है। लाला पहले उसे खरी खोटी सुनाता है पर बाद मे उसे पैसे दे देता है। वह भी एक साल के वायदे पर। उस बार रहमान को गन्ने के खेत में फसल काफी अच्छी होती है पर ठंड़ी के मौसम की वजह से वह रात को रखवाली के समय आग जलाता है पर आग का एक तनखला खेत मे जाने से पूरा खेत जल जाता है और वह बरबाद हो जाता है। जिसकी वजह से साल पूरा हाने पर वह लाला के पैसे नहीं चुका पाता। लाला का नौकर रहमान को बुलाने गया रहमान लाला के घर जाकर लाला के पैर पड़ गया और उधार न चुका पाने की वजह से मॉंफी मॉंगने लगा पर लाला ने कहा की उसका कोई उधार नहीं है क्योंकि उसकी बछिया ने लाला को आठ सौ रुपये का फायदा करवाया था। लाला ने रहमान से कहा कि अगर तुम धर्म के नाम पर पॉंच रुपये का नुकसान भोग सकते हो तो मैने भी धर्म के नाम पर तुम्हे पैसे दिए थे। आज के बाद तुम्हारा कोई उधार नहीं है और तुम मेरे दोस्त हो।

2. शुद्धि

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में हुआ था पर तिथि अज्ञात है और 'ख्वाबोख्याल' (प्रथम संस्करण:1928) में संकलित है। हिन्दी मे सोलह अप्राप्य कहानियां, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य खण्ड़-1 और प्रेमचंद सपूर्ण कहानियॉं-4 में संकलित है।

वैसे यह कहानी पारिवारिक है पर इस कहानी के अन्त में हमें धार्मिक असमानता साफ रुप से दिखाई देती है। लाला प्रेमनाथ खूब पैसा कमाता था। उसका एक छोटा सा परिवार था मॉं, पत्नी गोमती और बच्चे। प्रेमनाथ कभी कहीं न जाता था पर एक बार दास्तो की जिद की वजह से वह हुस्ना के कोठे पर गया लेकिन वह जाकर प्रेमनाथ हुस्ना के हुस्न का घायल और कायल हो गया। अब प्रेमनाथ रोज वहॉं जाने लगा। मॉं एवं पत्नी ने बुहत समझाया पर वह न समझा। आखिर मां बेटे को बचाने यात्रा पर गई और गोमती बच्चो को लेकर मायके चली गई। अब प्रेमनाथ मस्जिद मे ही रहने लगा।

उसका पूरा घर-बार उजड़ गया और अब हुस्ना भी उसके सामने नहीं देखती थी। मस्जिद के मौलवी ताहिरअली से प्रेमनाथ की यह हालत नहीं देखी गई तब उन्होंने प्रेमनाथ की पत्नी को उसे बिना बताए खत लिखा। जिस पर प्रेमनाथ की पत्नी गोमती उसे लेने आ गई। गोमती को प्रेमनाथ कई महीनो के बिमार लगे। प्रेमनाथ गोमती के साथ जाने को तैयार था पर तभी गोमती ने कहा की वे तभी उसके साथ आ सकेगे जब वह अपनी शुद्धि करवाएगे। गोमती को पता था कि प्रेमनाथ ऐसी बातो को नहीं मानते पर प्रेमनाथ ने गोमती की खुशी के लिए शुद्धि के लिए हॉं कहा।

3. जिहाद

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी मे हुआ पर मूलस्त्रोत एवं प्रकाशन तिथि अज्ञात है और 'पॉच फूल' (प्रथम संस्करण:नवम्बर 1929) तथा प्रेमचंद सपूर्ण कहानियॉं-4 मे संकलित है। उर्दू में प्रेमचालीसी में संकलित है।

इस कहानी में प्रेमचंद ने उस समय का जिक्र किया है जब हिन्दु-मुस्लिम में काफी झगड़े हो रहे थे और मुस्लिम हिन्दुओं को मार पीटकर भी मुस्लिम बनाते थे। मुस्लिम किसी एक मुल्ला की बातो में आकर हिन्दुओं को हर एक तरह से मार काट कर, समझा कर मुस्लिम बना रहे थे। इसी दौरान दो मित्र धर्मदास जो धन से संपन्न नथा पर बड़ा बहादुर था और दूसरा खजॉचन्द जो धन से संपन्न था पर उसमे बहादुरी कम थी। वह दोनो मुस्लिमों से भागते-भागते एक जगह कुएं के पास रुके। जहॉं उन्हे श्यामा मिली, जो धर्मदास को चाहती थी पर उसकी मॉं श्यामा की शादी खजॉचन्द से करवाना चाहती थी। धर्मदास श्यामा के पास से पानी मॉंगने गया तभी अचानक मुसलमान आ गये।

जो धर्मदास को उठा ले गए। वे पाँच लोग थे। धर्मदास को मुसलमानों ने धर्म परिवर्तन करने को कहा। धर्मदास ने उनका सामना करने के बजाए उनसे हाथ मिला लिया। इधर श्यामा ने खजॉचन्द को बन्दूक से मुस्लिमों को मारकर धर्मदास को बचाने को कहा पर जब उसने देखा की धर्मदास ने उनसे हाथ मिला लिया है तो वह दंग रह गई। धर्मदास उन मुसलमानो को लेकर कुएं के पास आया और खजॉचन्द को मुस्लिम बनने को कहा पर उसके मना करने पर उसे मार डाला। श्यामा ने धर्मदास की इस करतूत पर न केवल उसे कटुवचन कहे पर उससे रिश्ता भी तोड़ दिया और वहॉ से चली गई। बहुत साल बाद एक बुढ़ा भिखारी श्यामा से भीख मॉगने आया, वह धर्मदास था। उसने श्यामा से मॉफी मॉगी पर उसने धर्मदास को कटु वचन कह कर वहॉ से निकल दिया तथा माफ भी नहीं किया। दूसरे दिन जब श्यामा पानी भरने गई तो उसने देखा की धर्मदास की लाश को गीद खॉ रहे थे।

7. राष्ट्रप्रेम से संबंधित कहानियॉ

प्रेमचन्द उस समय के लेखक थे जब हमारे देश में राष्ट्रीय क्रान्ति का दौर था। देश के नेता आजादी के लिए क्रान्तिकारी आन्दोलन चला रहे थे। प्रेमचंद इन आन्दोलनों में प्रत्यक्ष रूप से नहीं पर अपनी कहानियों के माध्यम से शरीक होते थे। इसी सन्दर्भ पर विचार करते हुए डॉ. बलवन्त साधू कहते हैं कि--" भले ही प्रेमचन्द क्रान्तिकारी आन्दोलन में शरीक न हुए हो परन्तु उनका झुकाव उन दिनों विवेकानंद, मैजिनी और गोरिबाल्डी की साहस भरी जिन्दगी की तरफ नजर आता है। जिसके माध्यम से उन्होंने नौजवानों को विद्रोह और विप्लव का रास्ता दिखाया था। उनकी 'सोजेवतन' नामक पुस्तक से तो अंग्रेजी राज्य शासकों में एक हलचल सी मच गई थी। इसकी कहानियों में 'सिडीशन' भरा हुआ है, यह सोचकर जिलाधीश ने प्रेमचंद को बुलाया और बतलाया कि ये कहानियॉ एकांगी हैं इनमें अंग्रेज सरकार की तौहीन की गई है। आखिर फैसला यह हुआ कि 'सोजेवतन' की सारी प्रतियॉ सरकार के हवाले कर दी जाय। इस तरह सारी प्रतियॉ जब्त होने पर भी यह मामला सुपरिटेंडेंट पुलिस, डिप्टी कलक्टर, डिप्टी इन्सेपेक्टर के सामने चर्चित होने लगा और पुलिस देवता की इसमें मत बना कि ऐसे खतरनाक आदमी को सख्त सजा देनी चाहिए। क्योंकि प्रेमचन्द बागी किताब के लेखक थे। लेकिन क्रान्तिकारी प्रेमचंद के मन पर इस घटना का कुछ परिणाम नहीं हुआ था।'' 190 वे आगे भी कहते हैं कि--" प्रेमचंद की देशप्रेम से ओतप्रोत कृतियों के पीछे क्रान्तिकारी पंजाबी केशोराम सब्बरवाल के विचार भी प्रेरणादायक थे। सन् 1929 ई. में जापान से लिखे एक पत्र में उन्होंने प्रेमचंद

को लिखा था-' मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप उस संघर्ष से प्रेरणा लेकर जो हमारे युवक-युवतियॉं अपनी पददलित मातृभूमि की मुक्ति के लिए कर रहें हैं, कुछ कहानियॉं देशप्रेम विषय को लेकर लिखें और प्रेमचंद ने सारी जिन्दगी भर यही किया। वे राष्ट्रीय आन्दोलन के पुराने बागी सैनिक होने से हर महीने लेख और एक दो कहानियॉं लिखते रहे। जुलूस, समरयात्रा, पत्नी से पति, शराब की दुकान, मैकू ऐसी ही कहानियॉं हैं।'' 191

प्रेमचंद जी की ऐसी ही राष्ट्रप्रेम व देशप्रेम से संबंधित कहानियॉं मैंने यहॉं पर प्रस्तुत करने की कोशिश की जिसमें कहीं न कहीं राष्ट्र प्रेम की बात किसी न किसी रूप में व्यक्त हुई है।

1. दुनिया का सबसे अनमोल रत्न

कहानी का प्रथम प्रकाशन एवं संकलन जुलाई 1908 को 'सोजेवतन' में हुआ था। हिन्दी में गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-1 में भी इसका संकलन है। अमृतराय के अनुसार यह कहानी 'जमाना' के 1907 में छपी थी लेकिन यह तिथि गलत है। 'जमाना' के 1907 के अंको में इस शीर्षक की कोई कहानी नहीं छपी है।

प्रेमचंद इसे अपनी पहली कहानी मानते हैं एवं अन्य शोधकर्ताओं ने भी यही कहा है पर निश्चित प्रकाशन तिथि के हिसाब से प्रेमचंद की पहली कहानी 'संसारिक प्रेम और देश प्रेम' ठहरती है। इस कहानी के बारे में डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" प्रेमचन्द ने सन् 1907 ई. में कहानियॉं लिखना प्रारम्भ किया था। उनकी 'दुनिया का सबसे अनमोल रत्न' कहानी सन् 1907 ई. में 'जमाना' उर्दू में प्रसिद्ध हुई थी। कोई भी लेखक अपने समय का साथ देता है और प्रेमचंद ने अपने समय की इस कहानी में देश प्रेम की भावना को प्रोत्साहन दिया है। क्योंकि आजादी हमेशा लड़कर प्राप्त होती है, भीख मॉंगने से नहीं।'' 192

इस कहानी के दिलफिगार दिलफरेब का सच्चा प्रेमी था, इसलिए दिलफरेब को पाने के लिए वह दिलफरेब की शर्त पर दुनिया का सबसे अनमोल रत्न ढूँढ़ने गया ताकि दिलफरेब को न केवल पा सके पर उसकी गुलामी भी कर सके। उसे यह भी डर था कि अगर वह दुनिया की सबसे कीमती वस्तु नहीं लाएगा तो दिलफरेब उसे मृत्यु दंड देगी। दिलफिगार सबसे कीमती चीज की तलाश में एक दिन भूला-भटका एक मैदान पर पहुँचा। जहॉं कई लोग नंगी तलवार लिए एक कैदी को मृत्यु दंड देने के लिए खड़े थे। मृत्यु से पहले वह आदमी उस टोली के एक लड़के को गले लगाना चाहता था क्योंकि जब वह कैदी छोटा था, नादान था तब अपनी मस्ती में रहता था क्योंकि वह कैदी छोटा था, नादान था तब वह अपनी मस्ती में रहता था उसमें कोई बुराईया नहीं थी। कैदी को उस बच्चे में

अपना बचपन नजर आता था इसलिए जब वह उस बच्चे को गले लगाता है तो वह फूट-फूटकर रोता है। जो इन्सान किसी का खून करते समय भी न रोया वह अब रो रहा है। इसलिए दिलफिगार ने उसके आँसू की बूंद को लेकर दिलफरेब के पास जाकर सारा वृतांन्त कहा। दिलफरेब ने कहा कि बेशक यह सबसे कीमती चीज है। पर इससे भी अनमोल चीज इस दुनिया में है तुम उसे ढूँढ़ लाओ। दिलफिगार इस बार कई मैदान पार करके आगे बढ़ा। इस बार वह बहुत सूख गया था। एक दिन उसने देखा कि एक इंसान की लाश पड़ी है और उसकी पत्नी सुहाग का जोड़ा पहनकर, सोलह श्रृंगार किए अपने पति की लाश को लिए चन्दन की लकड़ियों की चिता पर बैठी है। लोग उस पर फूल बरसा रहे हैं तभी अचानक चिता जलती है और फूल जैसी सुहागन का शरीर जल जाता है। दिलफिगार उस चिता की राख को लिए दिलफरेब के पास जाता है और सारा वृतान्त कहता है। थोड़ी देर के बाद दिलफरेब कहती है कि बेशक यह दुनिया की सबसे कीमती चीज है पर इससे भी अनमोल चीज इस दुनिया में है जो तुम ढूँढ़ सकते हो ये मेरा यकीन है।

इस बार दिलफिगार हिम्मत हार जाता है और एक पहाड़ पर चढकर मर जाने की कोशिश करता है तभी हजरते खिज्र एक बूढा दिलफिगार को दुनिया का सबसे अनमोल रत्न ढूंढने के लिए हिन्दुस्तान जाने की सलाह देता है। दिलफिगार हिन्दुस्तान पहुँचता है और देखता है कि काफी लाशे पड़ी हुई है और सभी जगह से रोने की आवाज़े आ रही हैं। वह युद्ध का मैदान था। वहाँ एक व्यक्ति जो काफी जख्मी है और उसके सीने से खून के फवॉरे निकल रहे है, दिलफिगार को दिखाई पड़ता है। दिलफिगार उसके जख्म पर कपड़ा रखता है। वह सैनिक रौद्र रुप से दिलफिगार के बारे मे पूछता है, तब दिलफिगार खुद को मुसाफिर बताता है। सैनिक उसका अतिथि सत्कार न कर पाने के लिए दुख व्यक्त करता है। ज्यादा घायल होने की वजह से वह आखिरी सॉसो में 'भारत माता की जय कहकर मर जाता है तभी उसके सीने से खून का आखिरी कतरा निकलता है। दिलफिगार उस खून के कतरे को अपने रुमाल मे लेकर वापस लौटता है और सारा वृतांत दिलफरेब को सुनाता है। यह सुनकर दिलफरेब उसे अपना मालिक बनाती है तथा खूद को दिलफिगार का गुलाम बनाती है। बाद मे वह एक मधुशाला मगवाती है और एक तख्ती निकलती है। जिस पर सुनहरे अक्षरों में लिखा है- " खून की वह आखिरी बूँद जो वतन की हिफाजत में गिरे दुनिया की सबसे अनमोल चीज है।'' 193

2. यह मेरी मातृभूमि हैं

जिसका प्रथम प्रकाशन एवं संकलन उर्दू मे 'यही मेरा वतन है' शीर्षक से जुलाई 1908 मे 'सोजे वतन' मे हुआ था। हिन्दी में 'यही मेरी मातृभूमि है' शीर्षक से मानसरोवर-6 और प्रेमचंद संपूर्ण कहानियॉं-1 मे संकलित है।

इस कहानी में लेखक खूद कहानी का पात्र बनकर अपनी आप बीती कहते हुए नजर आते हैं। लेखक कहते है कि वे साठ वर्ष पहले अपनी मातृभूमि को छोड़कर पैसे कमाने विदेश गए थे। वहॉं वे बहुत समृद्ध हो गए। पत्नी एवं संतान अच्छे मिले किन्तु लेखक की इच्छा थी कि उनका देह अपनी आत्मा को उनकी मातृभूमि में छोड़े इसलिए वह अपने गॉंव जहॉं उन्होने धर्मशाला बनवाई थी, जहॉं उनका बचपन गुजरा था वहॉं जाते है। लेखक को अपने देश पर बड़ा नाज था लेकिन जब वे खुद अपनी मातृभूमि पहुॅंचते है, तब वह देखते है कि वह अब पहले जैसा आदर सत्कार नहीं होता है, तो उनको बहुत दुख होता है। उनकी बनवाई हुई धर्मशाला मे अब जुआ खेला जाता है, गरीबो को मारा पीटा जाता है, यह देखकर लेखक को बहुत दुख होता है। वह एक कोने मे जाकर खूब रोते है तथा वापस चले जाने का सोचते है। तभी एक टोली भगवान के गीत गाती हुई आती है, यह देखकर लेखक को लगता है की यही उनका देश है। लेखक उस टोली के साथ जाते है और गंगा किनारे पहुॅंचते है, जो उनके गॉंव से छ-सात मील पर है। लेखक वहॉं जाते है, गंगा मे डुबकी लगाते है तथा गंगा के किनारे ही झोपड़ी बनाकर रहते है। लेखक की पत्नी और पुत्र उन्हे वापस बुलाने आते है पर वह नहीं जाते। लेखक की इच्छा वहीं अपने प्राण त्याग ने की है।

3. सांसारिक प्रेम और देश प्रेम

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'इश्के दुनिया व हुब्बे वतन' शीर्षक से अप्रैल 1908 मे 'जमाना' मे हुआ था तथा जुलाई 1908 को 'सोजेवतन' मे संग्रहित हुई। यह प्रेमचंद की पहली उर्दू कहानी है। हिन्दी रुप ' सांसारिक प्रेम और देश प्रेम' शीर्षक से गुप्तधन -1 और प्रेमचंद संपूर्ण कहानियॉं-1 मे संकलित है।

इस कहानी का जोजेफ मैज़िनी जो इटली का क्रांतिकारी था जिसका सपना इटली को आजादी देना था। एक समय था की पूरा शहर, पूरी दूनिया जोजेफ मैजिनी की एक आवाज पर खून बहाने को तैयार था, उसकी पूरी दुनिया मे वाह-वाह थी और आज ऐसा समय है कि वह लन्दन की गलियों की खॉक छान रहा है। उसके पास न पैसा है न ढ़ंग के कपड़े, कई महीनो से दाढ़ी भी नहीं बनाई है। मैजिनी का दोस्त रफैती उसके लिए बिस्कुट लेकर आता है, वह भी अपना कोट गीरवी रखकर।

तभी एक डाकिया मौडलिन की चिट्ठी लेकर आता है, जिसे पढ़कर मैजिनी की ऑखों में ऑसू आ जाते हैं। मौडलीन स्विटरजरलैण्ड के एक समृद्ध व्यापारी की बेटी है जो मुजिनी को चाहती है।

मौडलीन अत्यन्त रूपवती है। मैजिनी खुद को आन्तरिक और बाह्य दोनों रूपों में मौडलीन के काबिल नहीं समझता है। इसलिए वह दूसरे लड़के से शादी करने और उसको भूलने की विनती करता है। जब मैजिनी इटली पहुॅचा तो रोम ने पहली बार जनता के राज्य का एलान किया जहॉ राज्य व्यवस्था के लिए तीन व्यक्ति निर्वाचित किए गए थे। जिनमें जोसेफ मैजिनी भी था। लेकिन फ्रांस की ज्यादातियों और पीडमाण्ट के बादशाह की दगा बाजियों के बदौलत इस जनता के राज का खात्मा हो गया।

अब मैजिनी एक बार फिर टूट गया और रोम की गलियों में मारा-मारा फिरने लगा। वहॉ एक दिन जब वह वृक्ष के नीचे बैठा था तो एक तीस वर्षीय लेडी उससे मिलने आई और उसे गले लगाकर रोने लगी वह मौडलीन थी जो उसे ढूॅढ़ते हुए आई थी। मौडलीन ने मैजिनी को बताया कि उसके दोस्त उसकी बुराइयॉ करते हैं, वे उसके दुश्मन हैं, पर मैजिनी ने सच्चाई बताते हुए कहा कि उसके दोस्त उसके कहने पर ऐसा कर रहें हैं ताकि मौडलीन उसके बारे में सोचना छोड़कर दूसरे से शादी कर ले। मैजिनी रोम से इंगिलस्तान पहुॅचा जहॉ वह कई अरसे तक रहा। सन 1870 में उसे यह खबर मिली कि सिसली की रिआया बगावत पर अमादा है और उन्हें मैदाने जंग में लाने के लिए एक उभारने वाले की जरूरत है। मैजिनी जहाज में बैठकर सिसली जाता है लेकिन शाही फौज बागियों को दबा देती है और मैजिनी जैसे ही जहाज से उतरता है वैसे ही सिपाही उसे गिरफ्तार कर लेते हैं पर उसे बुढ़ापे की वजह से उसे छोड़ देती है। अब मैजिनी परास्त हो जाता है और अपनी मॉ के कब्र पर अपनी जन्मभूमि जिनेवा जाता है। बाद में स्विटरजरलैण्ड जाकर अपने दोस्तों की मदद से अखबार निकालता है। पर साल भर के बाद चिन्ता एवं कमजोरी के कारण वह बीमार पड़ जाता है और इंगलिस्तान आते समय एक दिन उसे निमोनिया हो जाता है और अंतिम घड़ी तक इटली का नाम लेते-लेते मर जाता है। मैजिनी का जनाजा बड़ी धूम-धाम से निकलता है। कब्र में सोये हुए जब तीन होते हैं तभी मौडलीन सुहाग का जोड़ा पहनकर आती है और फूल अर्पित करती है। अब मौडलीन अपने घर को अनाथालय बनाकर गरीबों की सेवा करने लगी। तीन साल बाद वह भी मर गई और उसकी वसीयत के अनुसार उसे अनाथालय में दफनाया जाता है। मैजिनी और मौडलीन का प्रेम मामूली नहीं था। आज भी वहॉ गरीब और साधु-सन्त मैजिनी का पवित्र नाम लेकर हर सुख पाते हैं।

4. वियोग और मिलाप

कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में विजयदशमी 1974 विक्रमी सम्वत् अर्थात सितम्बर 1917 को 'प्रताप' वर्ष-4, संख्या-49 में तथा पुर्नप्रकाशन 7 अक्टूबर 1979 को 'दैनिक हिन्दुस्तान' में हुआ था। बाद में सोलह अप्राप्य कहानियाँ, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य-2 एवं प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ में इसका संकलन किया गया।

प्रस्तुत कहानी के बाबू दयानाथ एक राष्ट्रभक्त थे। वे राष्ट्र के काम करना चाहते थे पर पिता लाला जानकीनाथ के डर से राष्ट्र का काम नहीं कर पाता था। दयानाथ एक वकील थे लेकिन उन्होंने होमरूल के एक सेक्रेटरी पद को स्वीकार किया। एक दिन उनके यहाँ पुलिस आई तब जानकीनाथ को पता चला कि दयानाथ होमरूल के सेक्रेटरी भी हैं। दोनों में बहस हुई और जानकीनाथ ने दयानाथ को घर से निकाल दिया, दयानाथ की पत्नी श्यामा उनके साथ न आई तो उन्हें बहुत दुख हुआ। दयानाथ अब अलग घर में रहने लगे। अपने पिता के साथ हुए झगड़े ने उन्हें देश के प्रति काम करने के लिए ज्यादा उत्साहित किया। जिसके कारण वे ज्यादा से ज्यादा सभाएं करने लगे और उन्हें खूब प्रसिद्धि मिली। अब जानकीनाथ अपनी बातों से खेद होने लगा, जिसके कारण एक दिन वे घर से निकल गए। दयानाथ तथा श्यामा ने उन्हें खूब ढूँढ़ा पर उनका पता न चला। अब दयानाथ देश के कामों में ज्यादा ध्यान न देते तो भी उनका काम चल जाता था क्योंकि एक 'भारतदास' नामक व्यक्ति हर महीने दो सौ रूपये अलग-अलग जगह से पैसे भेजता था। उन्होंने हर मुश्किल को आसान कर दिया था। एक बार लोकमान्य तिलक सभा करने आने वाले थे पर कोई डर के मारे जगह न देता था। दयानाथ बनमाली बाबू की जमीन लेने गए तभी उन्हें पता चला कि 'भारतदास' ने यह जमीन न केवल खरीदी है, पर भाषण एवं सभाएं करने के लिए दे दी है। आज रात को भारतदास दयानाथ से मिलने वाले थे। वे कोई और नहीं बल्कि जानकीनाथ ही थे। पिता और पुत्र दोनों गले मिले।

5. वफा का खंजर

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'खंजरे वफा' शीर्षक से नवम्बर 1918 मे 'जमाना' मे हुआ था, तथा प्रेम बत्तीसी में संकलित की गई। हिन्दी रूप 'वफा का खंजर' शीर्षक से गुप्तधन -1 और प्रेमचंद संपूर्ण कहानियाँ-2 मे संकलित है।

इस कहानी में जयगढ़ और विजयगढ़ दोनों को पड़ोसी देश बताया गया है। दोनों में बड़ा मान सम्मान था। वे दोनों देश एक दूसरे की कदर करते थे। जयगढ़ वाले होशियार थे, तो विजयगढ़ वाले के पास नई चीजें बनाने का हुनर था फिर दोनों देश एक दूसरे से अन्दर अन्दर होड़ में लगे रहते थे। जयगढ़ में महफिलें खूब सजती थीं, वह हुस्न का अड्डा था। वहॉ की शीरबाई जयगढ़ वालों को मोहित कर विजयगढ़ गई। विजयगढ़ वाले उस पर मोहित हो कर काम धाम छोड़कर उस पर पैसे लुटाने लगे। इसलिए पंडितों और सुशिक्षितों ने शीरबाई को फरमान भेजा कि वह वहॉ से चली जाए। शीरबाई का इसमें अपना अपमान लगा इसलिए उसने यह फरमान ठुकरा दिया, जिस पर उस पर मुकदमा चला। जब यह बात जयगढ़ वालों को पता चला तो जयगढ़ और विजयगढ़ वालों में काफी बहस हुई और अंत में युद्ध का एलान हुआ। जयगढ़ के युद्धतंत्री जो मिर्जा मंसूरी के बेटे थे, वही मिर्जा मंसूरी जिनको तीन साल पहले वफा करने पर भी जयगढ़ वालों ने कैद कर दिया और उनसे बहुत काम करवाया तथा अपने परिवार से अलग कर रखा था। थककर वह गंगा नदी पार करके विजयगढ़ आ गया और मिर्जा जलाल बनकर वहॉ का मंत्री बना। उसने अपने बेटे असकरी को जयगढ़ में रखा जहॉ उसने उनके पूर्वजों की रूह थी और अपने देश की सेवा करने को कहा। तीन महीने तक युद्ध चला। जयगढ़ परास्त की कगार पर था। जयगढ़ वाले असकरी को गालियॉ दे रहे थे, क्योंकि काफी स्त्रियॉ विधवा हो चुकी थीं। जयगढ़ वाले विजयगढ़ की तोपों और गाड़ियों के सामने नहीं टिक पाए। असकरी ने अपने पिता को खत लिखकर अपनी कोम की रक्षा की मांग की। पहले तो मिर्जा मंसूर (मिर्जाजलाल) जो उसूलों के बड़े पक्के थे, उनका मन डोला पर बाद में जब असकरी की सेना किले तक आई तो उन्होंने अपनी वफा का इम्तहान दिया और गोले छोड़े जिसमें उनका बेटा असकरी शहीद हुआ। यही उनका वफा का खंजर था।

7. लाग-डॉट

जिसका प्रथम केवल हिन्दी में जुलाई 1921 को प्रभा में हुआ था। बाद में मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-2 मे संकलित है।

कहानी के बारे में डॉ. कुमारी नूरजहॉ का मानना है कि--" प्रतिहिंसा की अग्नि एक के बाद दूसरे के हृदय में प्रज्वलित होती है। दोनों ही पनपने नहीं पाते हैं। आज कचहरी जाना भी जैसे ग्रामीणों की दिनचर्या का एक अंग बन गया है। 'लाग-डॉट' कहानी का प्रारम्भ ही इसी दृष्टिकोण से है।" 194

इस कहानी के जोखू भगत और बेचन चौधरी के बीच तीन साल से खानदानी झगड़ा चल रहा है। वह भी कुछ डांड़ मेंड़ का था। इनकी जायदाद गॉव में आधी थी पर उस झगड़े के कारण केवल झगड़े वाली जमीन के अलावा कुछ भी न बचा। दोनों पूरक काम करते । भगत की पार्टी का खाना-पीना अलग और बेचन का सब कुछ अलग। दोनों उस दुकान से भी कुछ न लेते जहॉं से उनका एक प्रतिद्वन्द्वी कुछ सामान खरीदता। एक सूती कपड़े पहनता तो दूसरा अंग्रेजी। उस समय स्वराज का बहुत बड़ा जोर था। बेचन चौधरी ने स्वराज का दामन पकड़ा तो भगत ने राजभक्ति का। बेचन चौधरी अपने देश की आजादी, अपना मान-सम्मान रूपया-पैसा विदेश न जाने देना चाहता था। अंग्रेजी पढ़ाई का विरोध, शराब, गॉजे का विरोध आदि बातों से लोगों को प्रभावित कर पाए पर भगत इन सब के पक्ष में न था। अब उनकी सभा में कोई न आता तथा उनकी लोग बुराई करते और उन्हें ताने मारते। भगत की पुरखों की इज्जत मिट्‌टी में मिल रही थी। इसलिए उसने इस जाती हुई इज्जत को बचाने का उपाय निकालते हुए चौधरी की सभा में चला गया। और स्वराज्य को न केवल अपनाया पर अपनी संस्कृति की पाठशाला खोलने को कहा। इसके उपरान्त चौधरी को अपना भाई मानते हुए गले लगाया। तभी से दोनें की दुश्मनी खतम हुई। अब दोनों साथ रहते हें पर अब तक किसी को यह पता नहीं चला कि लोग किससे प्रभावित हैं।

7. राजभक्त

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में फरवरी 1923 को 'माधुरी' मे हुआ था तथा मानसरोवर -6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-2 में संकलित है।

इस कहानी मे दिखाया गया है कि लखनऊ के बादशाह नासिरुद्दीन अंग्रेजो के अनुयायी बन गए थे। वे अब अंग्रेजी पहेरवेश पहनते थे। राजा बख्तावरसिहं जो बादशाही सेना के अध्यक्ष थे, वे अंग्रेजो से नफरत करते थे, जबकी रोशनुद्दौला राज्य के प्रधानमंत्री थे, जो अंग्रेजो के गुलाम थे। अंग्रेजो ने लखनऊ की सेना को खाने के लिए मुहताज कर दिया था पर बख्तारसिंह की वजह से पूरा लखनऊ सही सलामत चल रहा था। बादशाह नासिरुद्दीन भोग विलास में लिप्त थे। एक दिन बख्तारसिंह ने राजा को बताया की आपके ताज मे सुराख है बस इस वाक्य पर राजा उन्हें मार ड़ालना चाहते थे पर कप्तान एवं अन्य लोगों की वजह से उन्हें एंव उनके परिवार को काले पानी की सजा सुनाई गई। एक महीने मे उनका परिवार सूख कर कॉंटा हो गया और वे अपने आप को कोसने लगे। तभी एक कप्तान ने आकर बताया की लखनऊ मे अब दिन दहाड़े चोरी, लूटपाट शरु हो गई है जिससे प्रजा दुखी है। राजा को जब सारी प्रजा ने मिलकर बताया तो वह आज भेश बदलकर प्रजा को देखने

जाने वाले है, उनके साथ रोशनुद्दौला भी जाने वाले है और रोशनुद्दौला ने अंग्रेजी अफसरो से मिलकर राजा को उठवाने और सल्तनत के बरखास्तनामे के उपर साईन करवाकर उन्हें कलकता ले जाने का षड़यत्र रचा है। बख्तावरसिंह मे यह सब सुनकर देशभक्ति जागी और वह अपनी टुकड़ी लिए राजा को बचाने गया। इधर प्रजा की हालत देखकर राजा दु:खी हुआ तथा रोशनुद्दौला की सच्चाई भी पता चली पर तब तक काफी देर हो चुकी थी। अग्रेज राजा को बंदी बना चुके थे और राजा चिल्लाने लगे वहीं उनका घमड़ चूर चूर हो गया। बख्तारसिंह ने राजा को छुड़ाया तथा वापस ले गया। रोशनुद्दौला को बख्तारसिंह के सुपुत्र किया गया पर बख्तारसिंह ने उसे छोड़ दिया। राजा ने राजकीय पोशाक मे सिंहासन संभाला और बख्तारसिंह को पहले जैसा मान दिया तथा अपने पास बिठाया।

8.समर यात्रा

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी मे अप्रैल 1930 को हंस मे हुआ था तथा मानसरोवर-7 और प्रेमचंद संपूर्ण कहानियॉं -4 मे संकलित है।

इस कहानी की नोहरी जो काफी बूढी हो चुकी है, वह पहले अमीर थी पर आज गरीब ही नहीं पर उसका सारा वंश नष्ट हो गया वह अकेली विधवा थी। वहीं कोदई जो पहले गरीब था वह न केवल अमीर पर संपन्न परिवार का हो गया। नोहरी को पता चला की समरयात्रा आ रही है और गॉंव के सब लोग कुछ न कुछ कोदई को समरयात्रा के स्वागत के लिए दे रहे है पर नोहरी कुछ न दे पाने के कारण दुखी है। पर जब समरयात्रा आती है तो नोहरी नाचती है लोगो को भी नाचने पर मजबूर करती है। कोदई ने आज महाभोज रखा था। महाभोज के बाद स्वयंसेवक देशभक्ति पर भाषण दे रहे थे तभी पुलिस आई। सभी भाग कर छिप गए। पुलिस ने कोदई को पकड़ा तभी नोहरी ने न केवल पुलिस का सामना किया पर डंडे भी खाए। नोहरी की बहादुरी से सारे लोग प्रभावित हुए और पुलिस का सामना किया। पुलिस उनसे डरने लगी पर नोहरी ने कहा की देश के लिए जेल जाना भी एक सौभाग्य का काम है, तब कोदई के दोनों बेटो ने उसे सहर्ष विदा किया। नोहरी ने लोगो को अपने भाषण मे समरयात्रा से जुडने का उपदेश दिया और काफी लोग जुडे भी। जब दूसरे दिन समरयात्रा चली तो नोहरी भी उसके साथ चली। लोगो के पूछने पर नोहरी ने कहा की वह अपनी मृत्यु धन्य बनाना चाहती है। डॉ रत्नाकर पाण्डेय कहते है कि,''प्रेमचंद की समरयात्रा नामक कहानी राष्ट्रीय और सामाजिक परिस्थितियों मे एक क्रांति है। जिस समय सारा देश मुक्ति के लिए स्वाधीनता आंदोलन के समर की ओर उन्मुख था उसी समय यथार्थवादी कलाकार के रुप में जनता की बटी हुई

वर्गवादी भावना की पीड़ा और तडप को इस कहानी मे उत्साह और त्याग के साथ प्रकट किया गया है।''195

9. आहुति

जिसका प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1930 को 'हंस' मे हुआ था तथा कफन और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 मे संकलित हैं। उर्दू में 'जेल' शीर्षक से जनवरी 1931 को चन्दन में प्रकाशित हुई थी।

कहानी के बारे में डॉ. रत्नाकर पाण्डेय का मानना है कि--" यह कहानी असहयेग आंदोलन युग में ग्रामीण जनता के सक्रिय बलिदान के सामाजिक इतिहास को अपने आयाम में समेटे हुए है। इस कहानी में हृदय की गहारई से निकली 'राष्ट्र मुक्ति' के उपाय का सिद्धान्त स्पष्ट हुआ है।'' 196

इस कहानी के आनन्द विश्वम्भर और रूपमणि तीनों में मित्रता हैं। आनंद अमीर एवं होशियार है। जबकि विश्वम्भर कम होशियार पर जोशीला था। विश्वम्भर कांग्रेस पार्टी से जुड़ा तथा देश की सेवा करता था। यह बात आनन्द ने रुक्मणि को बताई आनंद ने यह भी बताया कि विश्वम्भर कांग्रेसपार्टी में जुड़कर देश की सेवा में लगा है, उसे अपनी कुछ भी नहीं पड़ी है। रुक्मणि यह बात सुनकर आनन्द को बताती है तो रुक्मणि विश्वम्भर को रोक लेती है। आनन्द को अपने पैसों का घमंड था। रुक्मणि को जब पता चला कि विश्वम्भर देहात जा रहा है, लोगों को तैयार करने, तो वह उससे मिलने स्टेशन गई पर आनंद घमंड की वजह से स्टेशन पर मिलने न गया। स्टेशन पर रुक्मणि ने विश्वम्भर को रोकना चाहा पर वह न रुका। अब रुक्मणि विश्वम्भर से प्रेम करने लगी थी। घर जाकर रुक्मणि ने विश्वम्भर की दी हुई सारी चीजें निकाली और सॅभालकर रखने लगी। एक महीने के बाद समाचार पत्रों में विश्वम्भर की खूब तारीफ होने लगी तथा वह गिरफ्तार हो गया। आनन्द तभी रुक्मणि को घर आकर विश्वम्भर पर कटाक्ष करने लगा। तभी रुक्मणि ने उसे देशभक्त का कड़ा पाठ पढ़ाया तथा उससे कठोर वचन कहे।

10 जेल

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी मे फरवरी 1931 को हंस मे हुआ था तथा मानसरोवर-7 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानिॉं-4 मे संकलित की गई। उर्दू में 'आशियां बरबाद' शीर्षक से मई 1931 को चंदन में प्रकाशित हुई तथा 'जादे राह' मे संकलित हुई।

इस कहानी की मृदुला विधवा थी, उसने जेल में अपनी एक सहेली बनाई, जिसका नाम क्षमादेवी था। जो आज छूटने वाली थी, पर मृदुला को अभी आठ महीने बाकी थे। वह बहुत रोई।

क्षमादेवी ने वापस आने का वादा किया। तीन महीने बाद क्षमादेवी जब जेल से आई तो हमेशा के लिए आई। मृदुला ने क्षमादेवी से पूँछा कि कि ऐसा सब कैसे हुआ। तब क्षमादेवी ने बताया कि उनके यहॉ एक विद्रोही मोर्चा निकला था, जिसमें उसके पति एवं उसकी सास गोली का शिकार हुए और न जाने एक गोली कहॉ से उसके बेटे को भी लग गई। क्षमादेवी ने इन तीनों की लाश जलाई। उसी रात शहीदों की याद में जुलूस निकला। जिसकी लीडर क्षमादेवी थी। पुलिस ने क्षमादेवी को पकड़ा तथा न्यायालय ने उसे कैदी बनाया। क्षमादेवी ने मृदुला से कहा कि उसे विश्वास है कि जो काम मैं अन्दर कर सकती हूँ, वह बाहर नहीं कर सकती। इसी पर डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं--" प्रेमचन्द को जनता की शक्ति पर पूरा भरोसा था अहिंसा की जंजीरों में अगर इस शक्ति को नहीं बॉध दिया जाता तो वह देश में अंग्रेजी सरकार कभी का अन्त कर देती। 'जेल' कहानी में पुलिस भीड़ पर गोली चलाती है और लोग चुपचाप खड़े देखते रहते हैं। परन्तु एक बुढ़िया के गिरने पर उनका संयम भंग होता है और वे पुलिस पर टूट पड़ते हैं।'' 197

11. जुलूस

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी मे मार्च 1930 को 'हंस' मे हुआ था तथा मानसरोवर-7 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ -4 मे संकलित है। उर्दू में प्रेमचालीसी में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी का केन्द्रिीय विषय स्वाधीनता आंदोलन है। इस कहानी के इब्राहिम ने सत्याग्रह करने के लिए जुलूस निकाला। तभी शंभूनाथ और दीनदयाल जो दुकानदार है उसने इब्राहिम पर टिप्पणियॉ देने लगे। उसी समय मैकू जो एक क्रान्तिकारी है उसने बताया कि सत्याग्रह अपने देश को आजाद करने के लिए किया जा रहा है। उसमें हमें हिस्सा लेना चाहिए। पर शंभू और दीनदयाल दोनों उसे पागल कहते हैं क्योंकि उन्होंने अहिंसा का मार्ग अपनाया था। उन्होंने देखा कि बीरबलसिंह जुलूस को रोकने के लिए इब्राहिम को समझा रहें हैं पर बाद में उन पर लाठी चार्ज शुरू हो गया, जिसमे इब्राहिम बहुत घायल होता है। जुलूस के लोगो पर भी लाठी चार्ज शरु हो गया। शंभू और दीनदयाल से यह न देखा गया और हजारों आदमी के साथ वो वहॉ गए। तब इब्राहिम ने हिंसा न हो इसलिए जुलूस के एक क्रान्तिकारी को जुलूस वापस ले जाने को कहा। तीन दिन बाद इब्राहिम मर गया। सारा शहर उसकी मैयत मे गया। बीरबलसिंह की पत्नी मिट्ठन ने उन्हे बड़े कटुवचन कहे। इब्राहिम की मैयत में दंगा न हो इसलिए पुलिस तैनात की गई। बीरबलसिंह वहीं पर था। उसने अपनी पत्नी को मैयत मे देखा तथा कुछ औरतों ने बीरबल को उल्हाना दी की तुम्हारे साथियों ने यह किया है पर तभी मिट्ठन ने बताया कि इन्होंने ही यह किया है। सब औरतो ने बीरबल को बड़े

कटुवचन कहे। मिट्ठन वहॉ से इब्राहिम के घर उनकी माता को मिलने गई, तब उसने देखा की बीरबलसिंह वहॉ उनकी मॉ के सामने रोते एवं माफी मॉग रहे थे।

इस पर शिवकुमार मिश्र कहते है कि-- "हृदय परिवर्तन के फलस्वरुप नौकरियो से त्यागपत्र की बातें स्वाधीनता आन्दोलन के दौर में अपवाद नहीं था। स्वत: मुंशी प्रेमचंद ने गांधीजी के आह्वान पर अपनी नौकरी से त्याग पत्र दिया था। सरकार के प्रति वफादार और कुख्यात बड़े बड़े पदाधिकारियों के त्यागपत्र भी आजादी के आन्दोलन के समूचे दौर में होते रहे। अतएव महत्वपूर्ण और ध्यान देने योग्य इस कहानी मे बीरबलसिंह का त्यागपत्र और पश्चाताप नहीं, इस कहानी मे ध्यान देने योग्य वह वातावरण है- जो स्वाधीनता आन्दोलन की स्मृतियों को ताजा कर देता है- देश की आज़ादी मे भारतीय जनगण की साझेदारी और चूंकि यह सब प्रेमचंद का स्वानुभूत था। अतएव बहुत जीवंतता से कहानी में आया है। गरीब-अमीर हिन्दू मुसलमान सबके भाईचारे की मिसाल था। आज़ादी का यह आन्दोलन एक समर्पित और सोद्देश्य रचनाकार की रचना है। 198

12.पत्नी से पति

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी मे अप्रैल 1930 को 'माधुरी' मे हुआ था तथा मानसरोवर-7 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं -4 मे संकलित है। उर्दू मे बीवी से शौहर शीर्षक से प्रेमचालीसी मे संकलित है।

इस कहानी के मिस्टर सेठ अंग्रेजी ढंग के इन्सान थे। वह अंग्रेजो की तरह रहते थे तथा अपनी बीवी गोदावरी को भी वह अंग्रेजी मेंम की तरह रहने को बोलते पर गोदावरी देशभक्त थी। जब विदेशी कपड़ो की होली हो रही थी तब वह अपने कपड़े देना चाहती थी पर मिस्टर सेठ ने मना कर दिया। वहॉ एक भिखारी गाना गा रहा था वो भी देशभक्ति पर। गोदावरी ने उसे एक रुपया दिया। वह भिखारी अन्धा था। दूसरे दिन कोग्रेस की मिटिंग थी। सब लोग चन्दा दे रहे थे। लोग दस पैसे, बीस पैसे, तीस पैसे देते, तभी उस भिखारी लड़के ने वहीं एक रुपिया दिया जो गोदावरी ने उसे भीख मे दिया था। गोदावरी ने यह देखा, तो उसने स्वंयसेवक से कहा की वे वह एक रुपया उसे दे उसके बदले मे वह दस रुपया देगी। लेकिन उस एक रुपया की नीलामी की बोली चली, जिसे गोदावरी ने पांच सौ रुपये मे खरीदा। जब यह बात पूरे शहर मे फैल गई की गोदावरी ने पांच सौ रुपये चंदे मे दिए है तो सब लोग मिस्टर सेठ पर गुस्सा हुए। मिस्टर सेठ भी पत्नी पर गुस्सा हुए। पद गोदावरी ने उन्हें अपने देश की सेवा तथा कांग्रेंस में जुड जाने को कहा। पहले तो मिस्टर सेठ को गुस्सा आया पर बाद मे उन्होनें पत्नी को स्नेह भरी दृष्टि से देखा। इस पर डॉ बलवन्त साधू यादव कहते

है कि, " प्रेमचंद मे स्वाधीनता की जो आकांक्षा थी, उसकी अभिव्यक्ति 'पत्नी से पति' की गोदावरी मे हुई है। कोई राष्ट्र किसी की गुलामी पसन्द नहीं करता है। इसलिए हिन्दुस्तानियों को भी अंग्रेजी शासन का विरोध करना चाहिए। क्योंकि अंग्रेजो की मदद करना अपने ही भाइयों का गला घोंटना है। अत: प्रेमचंद भारत से अंग्रेजो का शासन हटा देना चाहते है और अपने उद्धार के लिए आजादी की इच्छा करते है- स्वराज्य के सिवा इन गरीबों का अब उद्धार कौन कर सकता है। 199

13. अनुभव

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी मे हुआ था। प्रथम प्रकाशन अज्ञात है तथा 'समर यात्रा' और अन्य कहानियॉ (प्रथम संस्करण 1932) मानसरोवर-1 और प्रेमचंद संपूर्ण कहानियॉ-5 मे संकलित है।

इस कहानी में लेखक एक स्त्री पात्र के रुप मे दिखाई दिए है। मेरे पति ने स्वयंसेवक को पानी पिलाया तो उसकी उन्हें एक साल की सजा दी पर मैं खुश हुई क्योंकि पति ने देश की सेवा की लेकिन जब मैंने पिताजी तथा ससुर को तार किया तो उन्होनें मुझे वहॉ बुलाने को मना किया क्योंकि पिताजी को अपना प्रमोशन अटकने की और ससुरजी को पेन्शन बन्द होने का डर था। तब मुझे मेरे पति के मित्र ज्ञानचंद तथा उनकी पत्नी ने अपने घर पर रखा। उन्होनें इस बात की परवाह न की कि बाद मे उनका क्या होगा। कुछ दिन के बाद ज्ञानचंद के प्रिन्सीपल ने उन पर अभियोग लगाया की वह मुझे अपने घर मे क्यों रखते है। पर ज्ञानचंद की पत्नी बडी आत्म सम्मानी थी उसने अपने पति को इस्तीफा देने को कहा। दूसरे दिन ज्ञानचंद ने इस्तीफा दिया तो चेयरमेन और प्रिंसीपल ने ज्ञानचंद से सवाल किया की आप कांग्रेस के सदस्य नहीं हो, न ही जुलूस मे जाते हो? न ही चंदा देते हो? जब सारे जवाब उनके अनुकूल आए तो उन्होनें इस्तीफा फाड़कर फेंक दिया। यह बात ज्ञानचंद ने अपनी पत्नी को बताई तो वह बडी खुश हुई। मुझे भी बड़ा आनंद हुआ। ड़ॉ कुमारी नूरजहॉ कहती हैं कि, "प्रेमचंद की कहानियो मे राष्ट्रीय भावों का समर्थन व्याख्यात्मक रुप से हुआ है। उन्होने जहॉ एक ओर पात्रों के मनोभावों द्वारा विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार, नशाखोरी की उपेक्षा, खादी और चर्खे का समर्थन और सत्य अहिंसा की प्रतिष्ठा करने की चेष्टा की है। वहॉ दूसरी ओर झूठ राष्ट्रवादियों की पोलखोल कर सुन्दर और व्यंग्यात्मक ढ़ंग से मानव चरित्र की गम्भीरता, निष्कपटता और सत्य का पाठ पढ़ाया है अनुभव में शासन की कठोरता एवं राष्ट्रप्रेमियों के प्रति दुर्व्यवहार का चित्रण है।'' 200

8. शिक्षा से सम्बन्धित कहानियॉ

मानव-जीवन में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। मानव-जीवन को सुसंस्कृत करने और उसे पूर्णतः विकास के पथ पर ले जाने में शिक्षा सहायता करती है। मनुष्य दो विधाओं से शिक्षा ग्रहण करता है, एक तो किसी संस्था या विद्यालय के माध्यम से और दूसरा अनुभव के माध्यम से। प्रेमचंद के साहित्य में हमें तत्कालीन शिक्षा-पद्धित का विशद चित्रण प्राप्त होता है। प्रेमचंद स्वयं के अनुभव से शिक्षा सम्बन्धी अनेक कष्टों से परिचित हो गए थे, वह भी अत्यधिक निकट से। अतः उनके विचारों में उनके जीवन के अनुभव निहित है। प्रेमचंद केवल निर्धन विधार्थी ही नहीं, एक निर्धन अध्यापक भी थे। इसलिए एक निर्धन विद्यार्थी की कठिनाइयों को वे भलीभाँति जानते थे। उन्हें अपनी पढ़ने की इच्छा की वजह से कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ा। प्रेमचंद ने शिक्षा का उद्देश्य, पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली, अध्यापकों और युवकों की मनोवृत्ति,, शैक्षणिक संस्थाओं एवं पाठ्यक्रमों आदि से सभी परिचित हो इसलिए अपनी कुछ कहानियों में उनकी आलोचना प्रस्तुत की है। वे कहानियाँ इस प्रकार हैं---

1.पछतावा

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में नवम्बर 1914 को जमाना में हुआ था तथा प्रेमबत्तीसी में भी इसका संकलन किया गया। हिन्दी में मानसरोवर -6 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ -1 में इसका संकलन हुआ।

इस कहानी के पंडित दुर्गानाथ ने कॉलेज की पढ़ाई पूरी की। अब वे चाहते थे कि ऐसी कोई नौकरी करे जहाँ सच्चाई और ईमानारी तथा धर्म का नाता न टूटे, इसलिए उन्होंने कुँवर विशालसिंह जो एक सम्पत्तिशाली जमींदार थे, उनके यहाँ नौकरी करने का निश्चय किया। कुँवर विशालसिंह ने पंडित दुर्गानाथ को 20 रूपये मासिक पर चांदपुर नामक गाँव का कारिन्दा रखा। वहाँ के लोग नए मालिक के लिए कई चीजे लाए पर पंडित दुर्गानाथ ने सब चीजें लौटा दीं। पंडितजी अब लोगों को मुफ्त में औषधी देने लगे। कुंवरसाहब हर साल लोगों को अनाज के दाने के पैसे देते और फसल होते ही उसका दुगुना वसूल करते। इस बार भी कुंवरसाहब आए और पैसा वसूल करने लगे। तभी मलूका नाम के गरीब ने साहस करके कुंवर साहब से कहा कि कुछ रूपये अभी ले ले और बाकी के बाद में ले ले। कुंवरसाहब ने उसकी विनती न सुनकर उसे धमकाया तथा उसे मारा भी, जो उसका बेटा न सह पाया और उसने कुँवरसिंह के आदमियों को मारा। कुँवरसिंह यह न सह सके और इसका पूरा दोष पंडित दुर्गानाथ को दिया। कुँवर ने पंडितजी को बुलाकर न केवल धमकाया बल्कि गाँव के लोगों पर केस करके उनके विरुद्ध चालान फाड़ने की बात भी की। दूसरे दिन अदालत में पंडितजी अपने

स्वभाव वश झूठ न बोल सके। इसलिए गॉववाले मुकदमा जीत गए। गॉववालों ने पंडितजी के कहने पर सारा उधार चुका दिया, कुॅवर साहब खुश हो गये। कुंवर विशाल सिंह के चार बीबियॉ थीं, पर उनको कोई पुत्र न था। पॉचवी बीबी से एक पुत्र पैदा हुआ पर उसकी उम्र ढल चुकी थी और वह अन्तिम घड़ियॉ गिन रहा था। कुॅवरसाहब का इतना बड़ा कारोबार था। वह कुछ भी परिवार वालों ये अपने सगे संबंधियों को नहीं दे सकता था क्योंकि सबकी ऑखों में स्वार्थ था। तभी कुंवर साहब को पंडित दुर्गानाथ की याद आई और जीवन के अंतिम क्षणों में कहा कि मैं अपनी संपत्ति पंडित दुर्गानाथ के नाम करता हूॅ वही उनकी वसीयत है।

2. हार की जीत

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मई 1922 को 'मर्यादा' में हुआ था और मानसरोवर, भाग-8 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-2 में संकलित है। उर्दू में 'शिकस्त की फतह' शीर्षक से जुलाई 1922 को 'हजार दास्ता' में प्रकाशित हुई।

कहानी के बारे में डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--" प्रेमचंद की दृष्टि से असहयोग आन्दोलन स्वराज्य के लिए था। उनके लिए स्वराज्य का अर्थ था- किसान और मजदूरों का राज्य, जिसके बारे में उनके मन में कोई दुविधा नहीं रही थी। इसके लिए रूस की बोल्शेविक क्रान्ति का प्रभाव कारण था, जिसका प्रतिबिम्ब 'हार की जीत' कहानी में देखने को मिलता है। प्रेमचंद ने इस्तीफा देकर मारवाड़ी विद्यालय से अलग होने के बाद ' हार की जीत' कहानी लिखी थी, जिसमें साम्यवादी सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ है।'' 201

इस कहानी का केशव और शारदाचरण दोनों मित्र हैं। केशव शारदाचरण से हर मामले में चतुर था पर वह कुल में निम्न था। प्रो. भाटिया इन दोनों मित्रों के गुरू थें प्रो. भाटिया अपनी बेटी लज्जावती का ब्याह शारदाचरण से करना चाहते थे पर लज्जावती केशव को चाहती थी। दोनों मित्र एम. ए. हुए। केशव को नागपुर कॉलेज में आध्यापक की नौकरी मिली और शारदाचण एक ताल्लुकेदार बन गया। उसके भाषण अब अखबारों में छपने लगे। अब वह किसानों की सेवा करने लगा। लज्जावती उससे खुश हो गई। वहॉ केशव उदास था क्योंकि वह उतना धन नही कमा पा रहा था। प्रो. भाटिया ने शारदाचरण से लज्जावती का विवाह करना तय किया। लज्जावती ने मंजूरी दी। शारदाचरण भी खुश था। प्रो. भाटिया अपना ग्रंथ लिखने के लिए भारतवर्ष के सभी प्रान्त घूमने गए और लज्जावती को भी अपने साथ ले गये। लौटने पर चैत्र मास में शादी करना तय किया। शारदाचरण विरह की आग में जल रहा था। उसी समय उसको कश्मीर के दीवान लाला सोमनाथ

कपूर के पार्टी में जाना हुआ, वहाँ उनकी लड़की सुशीला के यौवन ने उन्हें मोह लिया। अब शारदाचरण को चैन न रहा। वे अब हमेशा सुशीला के ख्यालों में खोए रहते थे। लज्जावती को पत्र भी न लिख पाते। चैत्र मास आ गया। प्रो. भाटिया के नाम पर शारदाचरण ने एक पत्र लिखा कि मैं क्षय की बीमारी से पीड़ित हूँ इसलिए मैं लज्जावती से शादी करने की हालत में नहीं हूँ। दूसरे हफ्ते जब लज्जावती ने अपने पत्र में लिखा कि वह वैधव्य यंत्रणा सहने के लिए तैयार है पर शादी तो उन्हीं से करेगी, तब यह पत्र पढ़कर शारदाचरण को अपनी स्वार्थपरता पर लज्जा आ गई।

3. बोध

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में पर प्रथम संस्करण अज्ञात है। 1918 में प्रेमपूर्णिमा के प्रथम संस्करण में मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ-2 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'इबरत' शीर्षक से 'ख्वाबोखयाल' में संकलित हुई।

प्रस्तुत कहानी के पंडित चन्द्रधर प्राइमरी के शिक्षक थे, जिनकी आय 15 रूपये मासिक थी। उनके पड़ोसी ठाकुर अतिबलसिंह जो एक हेडमास्टर थे। और मुंशी बैजनाथ, जो एक तहसील में सियाहेनवीर थे। उनकी आय भी पंद्रह रूपये थी। लेकिन वे उससे ज्यादा ठाट-बाट से रहते थे। पंडितजी भी इस नौकरी से तंग आ गए थे। पंडितजी ठाकुर और मुंशी के बच्चें को सँभालते क्योंकि उनको उनकी वजह से कभी भी दूध दही के दर्शन हो जाते थे। बाजार से सस्ती चीजें भी मिल जाती थी। एक बार पंडित जी के पड़ोसियों ने अयोध्या जाने का सोचा और पंडितजी वहाँ अपने साथ बतौर वेतन ले जाने का सोचा। सब लोग अयोध्या की ट्रेन में बैठे पर सब अलग हो गये। सभी अलग-अलग डिब्बे में बैठे। ठाकुर जिस डिब्बे में बैठे थे उस डिब्बे में केवल छ आदमी थे जो ठाकुर से बड़ी नफरत करते थे। इसलिए ठाकुर को जगह न मिली और उन्हें अगले स्टेशन पर जगह बदलनी पड़ी। मुंशी का इससे से भी बुरा हाल था। उनके डिब्बे में पाँव रखने की जगह नही थी, उसमें से उसने शराब भी पी रखी थी और उसको उल्टी हो गई जिससे उसको हैजा हो गया। उन्हें भी दूसरे स्टेशन पर उतरना पड़ा। ठाकुर और पंडित भी उतरे उन्हें देखकर मुंशी की पत्नी रोने लगी। मुंशीजी को अस्पताल ले जाया गया पर वहाँ पर डॉ. धोखेलाल, जिसको मुंशी ने लगान के ऊपर अपना हक लेकर खूब सताया था, इसलिए धोखेलाल ने अपना बदला चुकाया और अस्पताल में दिन के 10 रूपये के हिसाब से बीस रूपये लिए। दो दिन बाद सब अयोध्या पहुँचे तब तक सारे भंडारे भर चुके थे। सभी को वृक्ष के नीचे ठहरना पड़ा, उसी समय बारिश हुई और सब भीगने लगे। उसी समय पंडित को एक आदमी मिला, जिसका नाम कृपाशंकर था वह पंडित का शिष्य था। वह उन लोगों को अपने घर

ले गया और तीन दिन तक उनकी खूब सेवा की । तबसे पंडितजी ने शिक्षक की नौकरी का मान समझा और हमेशा वहीं नौकरी करने का निश्चय किया।

4. परीक्षा - 2

जिसका प्रकाशन हिन्दी में हुआ था पर वह अज्ञात है तथा प्रेम प्रमोद (प्रथम संसकरण: 1926) और मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ -3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में इम्तहान शीर्षक से ' प्रेमचालीसी' (प्रथम संस्करण: 1930) में संकलित है।

इस कहानी के सरदार सुजानसिंह जो देवगढ़ के दीवान थे, वे बूढ़े हो चुके थे इसलिए वे अब काम से मुक्ति पाना चाहते थे। राजा ने सरदार सुजानसिंह से अपने जैसा कोई होशियार व्यक्ति ढूँढ़ कर लाने को कहा। सरदार सुजानसिंह समाचार पत्रों में इस्तहार छपवाते हैं और उसमें योग्यता के बारे में बताया कि व्यक्ति पढ़ा लिखा भले ही ज्यादा न हो पर विवेकी, चतुर हो वह इस पद के लिए योग्य हो सकता है। सरदार सुजानसिंह एक महीने तक सभी का निरीक्षण करने के बाद योग्य व्यक्ति को इस पद के लिए नियुक्त करेगें। इस पद का इस्तहार पढ़ने के बाद कई लोग आए। सुजानसिंह ने गुप्त रूप से सबका निरीक्षण किया। वहॉ पर आए हुए सभी प्रतिभागी वे सारी चीजें करते जो उन्होंने कभी न की थी। एक बार हॉकी का मैच हो रहा था। रात हो गई थी, सभी मैच खेल रहे थे तभी रास्ते में एक बूढ़े गरीब की गाड़ी कीचड़ में फॅस गई थी, वह बड़ी मेहनत के बावजूद भी उसे बाहर नहीं निकाल पा रहा था। यह दृश्य सभी देखते थे पर कोई भी कीचड़ में जाना नहीं चाहता था। तभी पंडित जानकीनाथ वहॉ पहॅुचा जो कि मैच में घायल हो गया था और लंगड़ा रहा था , उसने अनाज से भरी गाड़ी को कीचड़ में से बाहर निकलवाने में मदद की। एक महीने के बाद वही किसान जिसकी गाड़ी नाले में फॅस गई थी, वह और कोई नही बल्कि सरदार सुजानसिंह ही थे उन्होंने राज्य के दीवान पद का नाम घोषित किया गया तो वह नाम और कोई नहीं बल्कि पं. जानकीनाथ का था।

5. प्रेरणा

जिसका प्रकाशन हिन्दी में मई 1931 को विशालभारत' में हुआ था। बाद में मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ -4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'तहरीफ' शीर्षक से 'खाके परवाना' में संकलित है।

इस कहानी में लेखक ने आप बीती लिखी है। मैं जहॉ पढ़ता था वहॉ सूर्यप्रकाश नाम का एक लड़का रहता था जिसकी धौंस सारे स्कूल में बच्चों से लेकर अध्यापक तक चलती। सभी उससे घबराते

थे। एक स्कूल में इन्सपेक्शन (मुयाअना) होने वाला था जिस पर सभी बच्चों को साढ़े दस बजे बुलाया गया था। सूर्यपकाश के कहने पर सारे बच्चे साढ़े ग्यारह बजे आये जिस पर इंस्पेक्टर ने रिपोर्ट में डिसीप्लेन सही नहीं है लिख दिया। एक बार जब मैं पढ़ रहा था तो देखा कि मेरी आलमारी में मेढक है। लेकिन सूर्यप्रकाश हमेशा अव्वल आता था। मेरा तबादला दूसरी जगह हो गया । वहाँ से मुझे स्कोलरशिप मिली और मैं यूरोप पढाई करने चला गया। तीन साल बाद जब में वापस आया तो युनिवर्सिटी में पढ़ाने लगा। पर वहाँ सब लोग मुझसे जलते थे कुछ भी हो तो मेरा नाम आता। मुझसे यह न सहा गया और मैं देहात में पढ़ाने लगा। वहाँ एक दिन डिप्टी कमिश्नर आए। वह सूर्यप्रकाश था। मेरे पूँछने पर उसने अपने परिवर्तन का कारण बताया कि उसकी मामी के मरने पर मामी का लड़का मोहन मेरे घर आया। सूर्यप्रकाश ने उसको नहलाने, धुलाने, खिलाने पिलाने आदि की जिम्मेदारी खुद ली । अब मोहन स्वच्छ रहने लगा। सूर्यप्रकाश उसे पढ़ाता, उसके स्कूल का कार्य पूरा करवाता और खुद भी पढ़ता। स्कूल की छुट्टियों में सूर्यप्रकाश काश्मीर घूमने गया तो मोहन सूर्यपकाश से शाबासी पाने के लिए रात दिन मेहनत करके पढ़ने लगा। जिसके कारण वह बीमार हो गया और सूर्यप्रकाश के घर पहुँचने पर पता चला कि वह मर गया है। आज सूर्यप्रकाश मोहन के कारण कमिश्नर बना। मुझे तब यह अहसास हुआ कि आज वही लड़का जो पहले बड़ा शैतान था आज वही बड़ा प्रेमी हो गया है।

9. बालमनोवैज्ञानिक कहानियाँ

प्रेमचंद मनोविज्ञान को कहानी कला का सर्वोत्तम तत्व मानते हैं। आज की कहानी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और यथार्थ के चित्रण का यथार्थ दस्तावेज है। आज के लेखको का उद्देश्य स्थूल सौंदर्य नहीं, एक ऐसी प्रेरणा है, जिसमें सौंदर्य की झलक हो, इसके द्वारा पाठक की कोमल भावनाओं को स्पर्श कर सके, इसलिए उत्कर्ष काल में लिखी गई कहानियाँ स्थूल जगत के ऊँचे-ऊँचे टीलों का मोह त्याग कर सूक्ष्म जगत के आन्तरिक प्रदेश में हल्की घुसपैठ करने में व्यस्त है। निसंदेह प्रेमचंद का मनोविज्ञान विशुद्ध अनुभूति मूलक है। पात्रों के साथ-साथ संक्षिप्त घटनाओं का नियोजन व वातावरण निर्मित मनोवैज्ञानिक धरातल पर अवस्थित है। प्रेमचंद ने बालमनोवैज्ञानिक कहानियों को भी अपना आधार बनाया है तथा उन कहानियों के माध्यम से प्रेमचंद ने यह बताने का प्रयत्न करते हैं कि परेशानियाँ उम्र देखकर नहीं आती हैं।

1.रामलीला

प्रस्तुत कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अक्टूबर 1926 को माधुरी में हुआ था तथा मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-3 में इसका संकलन किया गया। उर्द में 'प्रेमचालीसी' में भी इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में प्रेमचंद एक बालक के रूप में अपने मनोभावों को व्यक्त करते हैं। मुझे रामलीला से बहुत प्यार था, आज भी है। बचपन में हमारे घर के सामने रामलीला होती, रामजी आते, हम उन्हें देखते। बड़ी धूमधाम से उन्हें विराजमान करते। मैंने आरती में एक रूपया का सिक्का डालना चाहा तो पिताजी ने न डालने दिया। रात में चौधरी जिन्होंने रामलीला का आयोजन किया था, उन्होंने आबादीजान नामक वेश्या का नाच रखा था। वहॉं बहस हो रही थी कि चंदे के पैसों का बटवारा हो जाए। मैंने ये बात सुनी तो मुझे लगा कि पिताजी इन्सपेक्टर है तो वे इसका विरोध करेगे पर मैंने देखा कि पिताजी खुद उस पर पैसा उड़ा रहे हैं। मुझे बड़ा दुख हुआ एवं उससे घिन पैदा हुई तो मैं वहॉं से चला गया। सुबह रामलीला की विदाई थी तब मैंने देखा कि वेश्या की विदाई में हजारों रूपया बहाया जा रहा है। और काफी लोग भी हैं पर रामजी की विदाई में चार लोग थे पर वे भी पैदल जा रह थे, उनको किसी ने पैसे न दिए थे। मैंने मामा का दिया हुआ एक रूपया उनको दे दिया।

इस पर शिवकुमार मिश्र कहते हैं कि--" कहानी का अर्थ और अंतर्वस्तु की दृष्टि से बहुआयामी है। समाज के दो तबके कहानी में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष मौजूद हैं-अभिजन और जन, संभ्रांति और साधारण, साधारणजन अज्ञान है, धर्म और भक्ति पर उसकी आस्थाएं परम्परागत और भावना प्रसूत है। अपने ढंग से वह उन्हें अभिव्यक्त करता है परंतु जो अभिजन है, संभ्रांत है, आधुनिक जमाने की रीति-नीति में दक्ष है, उनका एक तबक्का जन की इन आस्थाओं को धर्म और भक्ति के आच्छद में धंधे की वस्तु बनाता है, धर्म से धन को दुहता हैं। यही नही समाज में अपनी धर्म-परायणता का सिक्का भी जमाता है। परंपरा का भी सच रहा है, प्रेमचंद के अपने समय का भी सच था और हमारे समय का भी सच है। राम की राजगद्दी पर पहले वेश्यायें नाचती थीं, जश्न होते थे, आज भी हो रहे हें। जीवन की, लोकजीवन की, सामंती-संस्कारों से जड़े-मड़े लोग ग्राम जीवन की, नगरो के साधारण जन जीवन की भी यह सच्चाई है जिसे प्रेमचंद ने तल्खी और तुर्शी के साथ कहानी में उजागर किया है।'' 202

2. चोरी

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में सितम्बर 1925 को 'माधुरी' में हुआ था। मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-3 में भी संकलन किया गया। उर्दू में 'प्रेमचालीसी' में संकलित है।

इस कहानी में भी लेखक अपने आप को एक बालक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। मैं और मेरा चचेरा भाई हलधर चाचा के कहने पर मौलवी साहब के घर पढ़ने जाते थे पर वहाँ न जाकर हम दोनों सैर करने चले जाते थें बूढ़े माली की मदद करते, घूमते। बाद में मौलवी को रिझाने और बहलाने के लिए रोजा रखते। एक बार हलधर चाचा का कमाया हुआ एक रूपया जो चाची ने कहीं ऊपर रखा था उसे लेकर आया। हम दोनों ने एक रूपया कभी नहीं देखा था। मैंने हलधर को चाचा की मार पड़ने की बात की पर उसने कहा कि कोई शक नहीं करेगा। हम लोग घूमने गये और किसी को पता नहीं चला। पूरे पैसे खर्च न करके दो पैसे का अमरूद लिया। बारह आने मौलवी को उनकी तन्ख्वाह दी। हमारे पास साढ़े तीन आने बच गए, जिसे हमने मेले में जाकर उड़ाने का तय किया पर मौलवी ने एक पाठ दिया था जो सबको याद करके जाना था। मैंने तथा और सबने रट्टा मार लिया था लेकिन हलधर याद न कर पाया। पैसे मेरे पास होने की वजह से मैं अपने मित्रों के साथ मेले में गया लेकिन काफी देर तक जब हलधर नहीं आया तो में मौलवी के घर गया तो मुझे पता चला कि पापा उसे पीटते हुए मौलवी के घर से ले गए थे और मौलवी से पैसे भी ले लिए। मैं डरते-डरते घर गया और देखा कि पापा गुस्से में शराब पीकर बैठे थे। वे मुझे देखकर मारने आए तो में जोर-जोर से रोने लगा, उन्हें लगा कि मैं डर गया। पापा ने न मारा। अन्दर गया तो देखा कि हलधर को बॉध रखा है। चाची मेरे पर आरोप लगा रही थी पर मैंने हलधर को चोर कहा। मॉ और चाची में बहस हुई। चाची ने हलधर को छोड़ा और अन्दर ले गई और उसे चेवड़ा खाने को दिया। मॉ ने मुझे भी चेवड़ा दिया और बाहर आकर हम दोनों ने अपना दर्द बॉटा।

3. नादान-दोस्त

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में हुआ था पर मूल स्त्रोत अज्ञात और उर्दू में 'खाके परवाना' (प्रथम संस्करण: 1928) में संकलित हे। हिन्दी में गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉं-4 में संकलित है।

यह कहानी भाई बहन की कहानी है। इस कहानी के केशव के घर के ऊपर कार्निस पर चिड़ियॉ ने अंडे दिए हैं। केशव और उसकी बहन श्यामा ने अंडे को धूप-छॉव और पीने के लिए पानी आदि की व्यवस्था की। गर्मी बढ़ने लगी तब केशव ने अंडे को गद्दी पर रख दिया उसके बाद चिड़ियॉ उन अंडों के पास नहीं आती। एक दिन केशव ने देखा कि अंडे जमीन पर पड़े है, तब केशव ने मॉ को सारा वृतांन्त बताया तब मॉ ने बताया कि चिड़ियॉ के अण्डे जब मनुष्य छू लेता है

उसकी मॉ अपने अण्डों को सेवती नहीं हैं इसलिए चिड़ियॉ ने वे अंडे गिरा दिए। तब केशव को लगा कि तीन चिड़ियों का कातिल में ही हूॅ।

4. बंद दरवाजा

जिसका प्रथम प्रकाशन एवं संकलन प्रेमचालीसी (संस्करण: 1930) में हुआ था। हिन्दी में गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-4 में संकलित है।

यह एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। संध्या होने पर बच्चा पालने से निकल कर मॉ की तरफ गया बाद में पिता की तरफ गया। दरवाजा खुला था तो वहॉ गया। मॉ ने उसे बुलाया और उसे बहलाया पर थोड़ी देर बाद जब बच्चा दरवाजे की तरफ गया और देखा कि दरवाजा बंद है तो वह रोने लगा।

5. खेल

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में अप्रैल 1931 को 'चन्दन' हुआ था। हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य, भाग-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियॉ-4 में संकलित है।

कहानी का कुन्दन धूप में बाहर घूम रहा था। तभी उस गांव की एक बुढ़िया जिससे सब बहुत डरते थे उसे अन्दर जाने को कहा। पर कुन्दन जतीन जो एक खोमचे वाला था और अच्छी मिठाई लेकर आता था वह उसी की राह देख रहा था। जतीन और रेवड़ी लाने वाला था। इसलिए वह उसकी राह देख रहा था। काफी समय गुजर जाने के बाद जतीन अब तक न आया तो कुन्दन एक डिब्बा उठाकर उसमें कंकड़ डालकर जतीन के अन्दाज में गाने-बजाने लगा। जिससे गांव के सारे बच्चे उससे कुछ न कुछ मॉगन लगे और वह उन्हें पत्थर के अलावा कुछ न देता।

6. बीमार बहन

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जुलाई 1932 को 'कुमार' के प्रथम अंक में हुआ था तथा प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य, भाग-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ, भाग-5 में संकलित है।

इस कहानी का भोंदू और सेवती दोनों भाई बहन हैं। सेवती के बीमार होने पर भोंदू जो उससे काफी छोटा है वह किस तरह सेवती की सेवा करता है, वह दिखाया गया है। भोंदू छोटा होते हुए भी घर का सारा काम करता, सेवती को खाना पानी देता, कहानियॉ सुनाता था भगवान से उसके ठीक होने की प्रार्थना भी करता है।

7. ईदगाह

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 1933 को 'इस्मत' के वार्षिक अंक में हुआ था। हिन्दी में अगस्त 1933 को चांद में प्रकाशित हुआ था तथा मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-5 में संकलित है।

कहानी के बार में डॉ. रामवृक्ष कहते हैं कि--" यह उद्देश्य पूर्ण और प्रचाारात्मक कहानी नहीं है, बल्कि इसमें अपने आसपास का जीवन है। प्रेमचंद ने जीवन के समग्र यथार्थ को अभिव्यक्त करने के लिए एक निश्चित 'समय' चुना है। जब जीवन अधिक मुखर रूप में सामने आता है। उत्सव और त्योहार इसी तरह का समय होता है। इस कहानी में प्रेमचंद ने ईद का दिन चुना है। पॉंच छ घंटे के इस जीवन में प्रेमचंद ने विशाल जीवन की घनीभूत झॉंकी दिखायी है।'' 203 इसी तरह रामदीन गुप्त भी इस कहानी के बारे में कुछ यूँ कहते हैं कि--" ईदगाह कहानी में बाल मनोविज्ञान के अतिरिक्त मुस्लिम संस्कृति का भी एक चित्र प्रस्तुत किया गया है। प्रेमचंद दिखाते हैं कि मूलतः मुसलमानों की भी वही समस्याएं हैं, जो हिन्दुओं की है-भूख, गरीबी और अभाव। हामिद के रूप में प्रेमचंद ने एक अमर बाल-चरित्र की सृष्टि की है। हामिद के जीवन संघर्ष के द्वारा प्रेमचंद ने वर्तमान अन्यायपूर्ण समाज-व्यवस्था के संबंध में अनेक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाएं हैं। कहानी के अंत में पाठक के मन में आज की उस समाज-व्यवस्था के प्रति एक तीव्र विरोध की भावना उठे बिना नहीं रहती, जो हामिद को असमय ही प्रौढ़ जैसा व्यवहार करने पर विवश करती हैं।'' 204

इस कहानी के हामिद के माता-पिता अब इस दुनिया में नहीं थे। हामिद को उसकी दादी अमीना लोगों के बरतन, कपड़े आदि करके पालती थीं। आज तीस रोजे के बाद ईद आई थी। गॉंव के सभी लोग मेले में जा रहे थे। हामिद की दादी अमीना ने सब लोगों के लिए पैसे बचाए जो आज मॉंगने आने वाले थे, उसमें से तीन आने हामिद को भी दिए। हामिद ईदगाह जाने को तैयार हुआ पर दादी को सिंवई बनाने का सामान इकट्ठा करना था इसलिए वह नही जा रही थी। वे ईद को भी कोस रहीं थीं क्योंकि वे मॉंगने के सहारे पर ही थी। हामिद फटी हुई टोपी और बिना चप्पल पहने ईदगाह जाने के लिए अपने दोस्तों के साथ निकला। जहॉं रास्तें में शहर के बड़े-बड़े मकान, गाड़ियॉं आदि देखकर खुश होते-होते हुए ईदगाह पहुॅंचे तो उसने देखा कि वहॉं एक साथ हजारों लोग बैठकर नमाज पढ़ रहें हैं तथा एक दूसरे को गले लगाकर ईद की मुबारक दे रहे हैं। इसी पर शिवकुमार मिश्र का कहना है कि--" जब तक सब लोग ईदगाह में हैं, बराबर हैं, भाईचारे से बंधे हैं, धन और पद के भेदभाव से ऊपर है (प्रेमचंद ने इस्लाम के संदर्भ में जोर देकर उसकी विशेषताओं को रेखांकित किया है) परंतु जैसे ही नमाज़ खत्म होती है और लोग ईदगाह से बाहर आते हैं, भ्रातृत्व

बराबरी और भाईचारे की दीवार भहराकर गिर जाती है और जिसके पास पैसे हैं वह मेले का आनंद लूटता है और जिसके पास पैसे नहीं हैं, वह अलग-थलग मौज उड़ाने वालों की मस्ती देखता भर है और तरह-तरह के तर्को से अपने मन को समझाता और शांत करता है।'' 205

हामिद अपने दोस्त महमूद, मोहसिन, सम्मी और नूरे के साथ मेले में गया जहॉ चगदोड़, खोमचेवाले, खिलौनेवाले थे। हामिद के सभी दोस्तों ने रेवड़ी, रसगुल्ले, चमचम, बरफी खाई पर हामिद ने कुछ न लिया क्योंकि अगर वह अपने तीन आने इन चीजों में खर्च कर डालता तो आगे कुछ न कर पाता, सारे दोस्त उसे ललचा रहे थे बाद में सभी ने खिलौने खरीदे , जिसमें महमूद ने सिपाही, मोहसिन ने भिश्ती, नूरे ने वकील तथा सम्मी ने धोबिन ली । सभी अपने खिलौने की तारीफ कर रहे थे। तभी हामिद को एक चिमटे की दुकान दिखी। उस समय उसे याद आया कि उसकी दादी के हाथ रोटी बनाते समय जल जाते हैं इसलिए उसने उस दुकान पर से चिमटा खरीदना चाहा पर उसके पास केवल तीन आने थे और वह चिमटा छ आने का था। लेकिन भाव करने पर कहार को उस पर दया आई और उसने उसे तीन आने में चिमटा दे दिया। अब हामिद अपने दोस्तों से उस चिमटे को मौलाने का मंत्री, सिपाही तथा लोगों से लड़ने वाला शस्त्र बताकर उसे अपने मित्रों के खिलौने से सबसे अव्वल बताकार सबको जलाने लगा। इस पर सभी बच्चों ने उसे अपने खिलौने से खेलने दिया। घर पहूॅचते-पहूॅचते सभी के खिलौने टूट गये लेकिन जब हामिद की दादी को पता चला कि वह कुछ न खा-पीकर मेरे लिए चिमटा लेकर आया है तो वह फूट-फूटकर रोई।

इसी पर निर्मला जैन लिखती हैं कि--'' ईदगाह का हामिद आदर्श बच्चे की मिशाल है। उसकी दादी 'बूढ़ी काकी' की तरह अर्ध-विक्षिप्त नहीं। वह वृद्धा है, लेकिन उद्यमी। हामिद ऐसा गरीब बच्चा है जिसे गरीबी ने स्वावलम्बी और आदर्शवादी बना दिया है। गरीबी बच्चे को अकाल अनुभवी बना देती है। उसे उस स्थिति की वास्तविकता का पता बहुत जल्दी लग जाता है। इसलिए खाते-पीते घरों के बच्चे जिस उमर में बच्चे ही रह गये हैं, हामिद अब जिम्मेदार बन गया है। उसका अकाल अनुभवी रूप निहायत करुण और मार्मिक है।'' 206

8. बड़े भाई साहब

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1934 को हंस में हुआ था। मानसरोवर-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'जादे राह' में संकलित है।

कहानी के बारे में शिवकुमार मिश्र का कहना है कि--'' इस कहानी को मनोवैज्ञानिक सत्य को उजागर करने वाली कहानी माना गया है। मनोवैज्ञानिक सत्य है, बड़े भाई के बड़प्पन का अययास्थान

(Misplased) होना और छोटे भाई पर उस अययास्थानित बड़प्पन का रोब गालिब करना।'' 207 कहानी के बारे में उनका आगे भी मानना है कि--" यह कहानी एक दूसरी अहम् सच्चाई को भी बड़े कौशल और बड़े प्रभावशाली ढंग से खोलती है, जिसका संबंध चल रही और चली आ रही शिक्षा व्यवस्था से है, उसकी विसंगतियों और विडंबनाओं से है।'' 208

इस कहानी में प्रेमचंद अपने आपको एक बच्चे के रूप में दिखातें हैं। मैं अपने भाई से पॉच साल का छोटा था पर वे मुझसे मात्र तीन दरजे आगे हैं। वे रात-दिन जगकर कितनी ही पढ़ाई कर लें पर वे पास नहीं हो पाते। हम दोनों एक ही होस्टल में रहते थे। माता-पिता हम दोनों को बड़ी मेहनत करके पढ़ाते। मैं अगर पढ़ाई न करके कुछ खेलने बैठता तो भैया बहुत डॉटते। मैं उनका बड़ा आदर करता और उनके कहे अनुसार करता। इस बार भी मैं पहले दरजे में पास हुआ और भैया फेल हो गए। दूसरे साल मैंने खूब क्रिकेट खेला। भैया की बात भी न सुनता सोचता वे इतना पढ़ते हैं फिर भी फेल हो जाते हैं और मैं कम पढ़ता हूॅं तो भी पास हो जाता हूॅं। दूसरे साल भैया ने और डांटा और कहा कि मैं अगर उनके दरजे में आकर पहला नंबर ले ऑऊ तो सही मानोगे। मैंने भैया का आदेश माना। वे वाकचातुर्य थे। उनकी बात मुझे सच्ची लगी। में पढ़ाई करता पर इतना नहीं, फिर भी मैं पहले दरजे में पास हुआ और भैया फेल हो गए। इस साल भैया मुझे कुछ न कहते। वे मानते थें कि कहना बेकार है। मैं आजाद रहने लगा। थोड़ा फॉम में भी आ गया। पर एक बार जब में पतंग पकड़ने गया तो भैया ने मुझे देखा और उन्होंने मुझे डॉटा और कहा कि अगर तुम मुझसे आगे चले जाओ और मैं पीछे रह जॉऊ तो भी मैं तुमसे बड़ा ही रहूॅंगा। तभी एक पतंग कटी तो भैया उसे लेकर दौड़े। इस पर रामवृक्ष कहते हैं कि--" प्रेमचंद स्कूल मास्टर थे, अत: उन्हें विद्यार्थियों के सुख-दुख, आशा-आकांक्षा और उनके आपसी अन्तर्विरोध की गहरी जानकारी थी। इस कहानी की पृष्ठभूमि से इस व्यापक जानकरी का एहसास होता है। बड़े भाई साहब एक प्रकार के सामंती पात्र है। लेखक की सहानुभूति का बड़ा हिस्सा उन्हें प्राप्त है, फिर भी वे अन्त में दयनीयता की हद तक हास्यास्पद बन जाते हैं। वे इस शिक्षा-व्यवस्था से बहुत चिढ़े हुए और रुष्ट थे, लेकिन इस शिक्षा-प्रणाली को बहुत गंभीरता से लेते थे। कोर्स का एक -एक शब्द चाट जाते थे, फिर भी एक दरजे में दो-दो तीन-तीन बार फेल हो जाते थे।'' 209

10. पशुओं पर आधारित कहानियॉं

प्रेमचंद ने मानव जीवन के विविध पहलुओं को लेकर ही कहानियॉं लिखी हैं बल्कि मनुष्यों को सही मूल्यों का सही ज्ञान कराने के लिए पशुओं को माध्यम बनाकर उनके गुणो पर आधारित

कहानियाँ भी लिखी हैं। प्रेमचंद मनुष्य में वफादारी, मित्रता, स्वामिभक्त, भातृत्व, भाई-चारा, प्रेम, वात्सल्य, ममता, करुणा, त्याग, उदारता, नैतिकता, सुख-दुख, शौर्य, कृतज्ञता, धैर्य, खराब समय अपने विवके को बनाए रखना, दूसरों की मदद करना, कार्य कुशलता आदि गुणों का संचय करके उनकी स्वार्थवृत्ति का त्याग हो सके ऐसे उदाहरणों को पशुओं के माध्यम से कुछ कहानियों को प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार है---

1.संगे लैला (लैला का कुत्ता)

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में अप्रैल 1913 को 'अदीब' में हुआ था। हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य, भाग-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ, भाग-1 में इसका संकलन किया गया है।

इस कहानी की मिस लैला के दो आशिक थे, एक थे मिस्टर बास्टन और दूसरे थे लार्ड हरबर्ट। लार्ड हरबर्ट बातों में लाजबाब थे इसलिए उनकी बातों से मिस लैला ज्यादा आकर्षित होती थी, जो मिस्टर बास्टन को पसंद नहीं आता था। लेकिन वे कुछ नहीं कर सकते थे। एक दिन हरबर्ट बास्टन के घर गये तो बास्टन के कुत्ते रोबिन ने हरबर्ट को खूब भगाया। हरबर्ट को कुत्तों से डर लगता था इसलिए वह रोबिन को देखकर भागता था। बास्टन को यह संदेशा उसके नौकर काक ने दिया और वह खुश हुआ। अपने कुत्ते को वापस बुलाकर बास्टन ने हरबर्ट को खूब शर्मिन्दा किया। यह बात वह लैला को बताना चाहता था कि तभी उसके पास तार आया कि उसके पिता बीमार है। बास्टर्न ने कुत्ते की जिम्मेदारी लैला को दी और वह अपने पिता के पास चला गया। हरबर्ट को यह पसंद न आया इसलिए उसने काक को पच्चीस डालर देकर रोबर्ट को मारने को कहा लेकिन काक ने रोबर्ट नामक व्यक्ति के बारे में बताया जो किसी भी जानवर को दूसरे जानवर जैसा बना सकता है। दोनों में सौ डालर में बात तय हुई। दूसरे दिन जब हरबर्ट लैला के पास गया तो रोबीन सो रहा था और थोड़ा बीमार भी था। जिसके कारण हरबर्ट को पूरा दिन लैला से बात करने को मिल गया लेकिन दूसरे दिन जब वह रोबर्ट का कान खींचने लगा तो वह उसके पीछे भागा और हरबर्ट काक को गाली देने लगा तथा उसके घर जाकर उसे डॉटा पर काक ने कहा कि वह जानवर का रूप रंग बदल सकता है, स्वभाव नहीं। दो हप्ते तक हरबर्ट लैला के घर न गया। तभी बारटन वापस आया और काक ने उसे सारा हाल सुनाय। लैला ने कुत्ते को वापस अपने पास रखना चाहा, बारटन ने कहा कि वह उसके बगैर नहीं रह सकता इसलिए अब लैला बारटन एवं रोबिन तीनों के साथ रहने लगी।

3. स्वत्व रक्षा

कहानी का प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जुलाई 1922 को 'माधुरी' में हुआ था तथा मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-2 में संकलित हैं।

इस कहानी के मीर दिलावर अली साहब जो कचहरी में मोहरिर थे उन्होंने पलटन से सस्ते दाम में अच्छी नस्ल का घोड़ा खरीदा। घोड़ा अड़ियल था। वह इतवार को अपने आराम करने का अधिकार समझता था। मीर साहब के पड़ोस में मुंशी सौदागरलाल रहते थे। आज उनके बेटे की शादी थी पर कोई बग्गी न मिलने पर मीर साहब से उनका घोड़ा लेने आए। मीर साहब ने कहा कि आज इतवार है अगर वह आए तो ले जाओ। मुंशीजी दाने की लालच में उसे ले गये और किसी तरह से उसके मुँह में लगाम लगाई। घोड़े ने अपनी मान बचाने के लिए मार, आग, शराब तक सहा पर वहाँ से न हटा। रात होने लगी इसलिए आखिर में एक गाड़े के साथ घोड़े का आगे का पैर बाँधकर लोगों ने उसे खींचा लेकिन लोग उसे सौ कदम ही खींच पाए होंगे कि मुहूरत बीत गया। मुंशजी हार गए और घोड़े को वापस मीर के यहाँ छोड़ आये।

3. अधिकार-चिन्ता

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अगस्त 1922 को 'माधुरी' में हुआ था तथा मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-2 में संकलित हैं। उर्दू में 'फ़िक्रे दुनिया' नाम से 'खाके परवाना' में संकलित है।

प्रस्तुत कहानी टोमी नामक एक कुत्ते की है। टॉमी बहुत तगड़ा था, जब वह भौंकता तो सबके कान खड़े हो जाते। लेकिन उसकी श्वानोचित वीरता किसी रणक्षेत्र में प्रमाणित नहीं होती। एक बार तो उसे सब कुत्तों ने मिलकर नदी पार तक पहुँचा दिया। नदी के उस पार जाते ही टोमी की किस्मत खुल गई। वहाँ खुला मैदान था। जहाँ कई भयंकर जानवर थे। टोमी डरने लगा वह हमेशा जीतने वालों के पक्ष में से थोड़ा सा माँस चुरा कर खा लेता। वे जानवर भी टोमी को तुच्छ समझकर और जीतने के अभिमान में उसे कुछ न बोलते। धीरे-धीरे टोमी हृष्ट-पुष्ट हो गया। सारे जानवरों को लगा कि अब वह उन लोगों के ऊपर राज करेगा। तब टोमी ने दूसरी तरकीब निकाली और एक दूसरे जानवरों के कान भरकर लड़वाने लगा। इससे हुआ यह कि सारे बड़े जानवर मर गये। अब टोमी ही छोटे-मोटे जानवरों पर राज्य करने लगा। सबको लगा कि वह भगवान का भेजा हुआ कोई दूत है और वह लोंगों पर राज्य करेगा। टोमी ने सबकी रक्षा करने का वचन दिया लेकिन इसके बदलें मे उसने उन सबका शिकार पेट भरने के लिए करने का एलान किया। अब टोमी को अपने सबसे बड़े प्रतिद्वन्दी पैदा न हो इसकी चिन्ता होने लगी। इसी बीच क्वार के महीने में टोमी

का मन अपने पुराने मित्रों से मिलने को हुआ। वह नदी पार करके वहॉं गया। उसे लगा कि वह दो चार लोगों को मार गिराए, पर वहॉ जाकर वह पहले जैसा नामर्द हो गया। उसने वहॉं अपनी पुरानी प्रेमिका को देखा तो उसके पीछे हो लिया। उसे टोमी की यह बात पसंद न आई और उसने दूसरे कुत्तों को बुलाया। सारे कुत्ते टोमी पर टूट पड़े और उसे लहू-लुहान कर दिया। टोमी बड़ी मुश्किल में अपनी जान बचाकर नदी पार पहुॅंचा। अब उसे एक क्षण की शांति न थी उसे ऐसा लगता था कि वे लोग उसका अधिकार छीनने आ रहे हैं इसलिए सात दिन तक वह भूख-प्यासा घूमता रहा और अंत में सातवें दिन टोमी अधिकार -चिन्ता ग्रस्त जर्जर अवस्था में परलोक सिधार गया। कोई भी पशु उसके निकट न गया और उसकी लाश गिद्ध कौए खा गए। इसी पर डॉ. बलवन्त साधु जाधव कहते हैं कि--" अधिकार -चिन्ता में टोमी नाम के बुलडाग की अन्योक्ति के द्वारा अंग्रेजी राज्य का आना, उसका बढ़ना जमकर रहना और आखिर उसका नष्ट होना दिखाया है। कहानी में प्रेमचंद ने अंग्रेजी राज्य की हंसी उड़ाकर लोगों के मन पर फैले उसके भय को हटा देना चाहा है। अंग्रेजी राज्य को दूर करने के लिए अपने देशवासियों के मन में उसके प्रति द्वेष-भावना उद्दीप्त करने का उद्देश्य इस कहानी में समाविष्ट है।'' 210

4. सैलानी बन्दर

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में फरवरी 1924 को 'माधुरी' में हुआ था, तथा बाद में गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-3 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी के जीवनदास और बुधिया का एक ही सहारा था वह था मन्नू उनका बन्दर। पति-पत्नी मन्नू पर ही निर्भर थे और मन्नू को बेटे से ज्यादा प्यार करते थे। एक बार मन्नू एक बाग में जाकर फल खाकर उसे तहस नहस करने लगा तो उस बाग के मालिक ने उसे पकड़कर बांध दिया। तीन दिन तक मुन्नू को खाना न दिया। बुधिया तथा जीवनदास के कहने पर भी उसे मालिक ने वापस न दिया और उसे एक सरकस में बेंच दिया। तीन महीने में मुन्नू का शरीर दुबला हो गया। एक बार सरकस में आग लगने पर वह भाग कर अपने घर भाग आया पर वहॉं कोई न था। मन्नू एक महीने तक वहीं रहा। बाद में एक पगली वहॉं आयी जो बुधिया थी। मन्नू को देखकर बुधिया को होश आया। अब दोनों मॉं-बेटे साथ रहते। मन्नू तमाशा दिखाकर अपना और अपनी मॉं का पेट पालता था।

5. दो बैलों की कथा

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अक्टूबर 1931 को 'माधुरी' में हुआ था, तथा बाद में मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'दो बैल' शीर्षक से नवम्बर 1931 को 'चन्दन' में प्रकाशित हुई थी।

कहानी के विषय में डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी कहते हैं कि " प्रेमचंद में मध्यकालीन कवियों-विशेषत: कबीर, तुलसी, सूर के समान देश और परिवेश रचा-बसा है। प्रेमचंद अपने परिवेश के पशु-पक्षी जल-थल, फसल-दूब, बनस्पति, धरती, आकाश, को बहुत अच्छी तरह जानते हैं इनसे उनकी गहरी आत्मीयता है। प्रेमचंद की रचनाओं में पशुओं का जो उपयोग किया है उस पर अलग से अध्ययन किया जा सकता है। प्रेमचंद मानवीय सन्दर्भ में पशुओं का ऐसा उपयोग करते है कि पशु भी निम्नतम वर्ग के मनुष्य प्रतीत होने लगते हैं दमित शोषित। दमित शोषित का साथ देने वाले दुखी उदास और कभी-कभी सहज प्रसन्न। ऐसे प्रसन्न जैसा कि केवल दलित शोषित ही हो सकता है।'' 211

इस कहानी में झूरी काछी के दो बैल थे। एक का नाम था हीरा और दूसरे का नाम था मोती, दोनों अपने मालिक के बड़े वफादार थे। एक दिन झूरी का साला उन्हें लेने आया। बैलों को उनके साथ भेज दिया। बैलों को लगा कि उन्हें बेंच दिया गया है। इसलिए झूरी के साले को उन्हें ले जाने में काफी मेहनत करनी पड़ी। बैल झूरी के साले के घर गये तो सही लेकिन वहॉं कुछ न खाते। रात को वहॉं से रस्सी तोड़कर वापस झूरी के पास आ गये। झूरी यह देखकर खुश हुआ पर उसकी पत्नी काफी चिल्लाई। दूसरे दिन झूरी का साला वापस आया और बैलों को गाड़ी में ले गया। घर जाकर उसने पैरों में मोटी रस्सी बांध दी ओर खाने को कुछ न दिया। झूरी का साला बैलों से खूब काम लेता और खाने के लिए सूखी घास देता। वहॉं एक लड़की थी जो झूरी के साले की पहली पत्नी की लड़की थी उसको उसकी सौतेली मॉं खूब सताती थी। वह लड़की बैलों को दो रोटिया डाल देती थी वह भी चोरी से। एक बार दोनों बैलों ने भाग जाने का निश्चय किया, तभी उस लड़की ने बैलों की रस्सी खोल दी, क्योंकि उसको पता चल गया था कि घर के लोग उसे आज जहर देकर मार देगें। दोनो बैल भाग गये। रास्ता भूल जाने के कारण वे सांड़ से भिड़ गये और उससे बचने के बाद एक मटर के खेत में गये, जहॉं उसके मालिक ने उसे पकड़ लिया और उन्हें कई जानवरों के साथ रखा वहॉं कई दिनों तक भूखे प्यासे पड़े रहे अंत में दोनों बैलों ने दीवाल तोड़कर वहॉं से सारे जानवरों को भगा दिया लेकिन मोती के पैर में मोटी रस्सी थी जिससे वह न भाग पाया और हीरा भी न गया। थोड़े दिनों के बाद एक दढ़ियल कसाई के हाथ दोनों बैलों को बेंच दिया गया। दोनों बैल

उसे देखकर कॉपने लगे। वह कसाई उन्हें उसी रास्ते से ले जा रहा था जहॉ झूरी रहता था उन्हें जब अपना जाना पहचाना रास्ता मिला तो वे खुश हो गये। दोनों बैल कसाई को छोड़कर भागे और झूरी के घर जाकर पहुॅचे। झूरी उन्हें देखकर खुश हुआ और उसकी पत्नी भी तथा बैलों ने दढ़ियल कसाई को गांव से बाहर भगा दिया। इसी पर डॉ रत्नाकर पाण्डेय लिखते हैं कि--" दो बैलों की कथा' में कथानक का विस्तार मानव के लिए उपयोगी पशुओं के मनोवैज्ञानिक अध्ययन पर आधारित है। इस प्रकार का संतुलित चित्रण भारतीय साहित्य में हितोपदेश, कथासरित्सागर, मित्रलाभ आदि प्राचीन ग्रंथों के शिल्प की ओर भी पाठक का ध्यान थोड़ी देर के लिए मोड़ सकता है। ऐसी कहानियों में मनोविज्ञान और कल्पना दोनों का समन्वय सफल कथाकार ने स्थिर किया है। जन सामान्य के जीवन की आलोचना की है और प्राणीवाद को मानवता से अधिक ऊँचा और उपयोगी ठहराया है।'' 212

11. अंध श्रद्धा पर आधारित कहानियॉ

अंध श्रद्धा हमारे समाज की एक ऐसी कुरीति है, जो अन्दर ही अन्दर समाज को खत्म कर देती है। उसके कारण लोग गलतफहमी के शिकार हो जाते हैं और अपने रास्ते से भटक जाते हैं तथा अपने लक्ष्य तक पहुॅचने में सफल नहीं होते। यह समस्या एक प्रान्त या देश की न होकर सर्वत्र फैली हुई है। यह अंध श्रद्धा एक व्यक्ति की मानसिकता पर निर्भर करती है। जो व्यक्ति जितना धार्मिक होता है, परंपराओं में विश्वास करता है, वह इसका उतना शिकार होता है। उदाहरण के तौर पर हम कह सकते हैं कि किसी शुभ कार्य के लिए निकलते समय किसी विधवा स्त्री का मिलना, बिल्ली का रास्ता काट जाना, खाली बाल्टी का मिलना, एक छींक का आना, किसी का टोंकना, पीछे से बुलाना आदि हो जाने पर आज इक्कीसवीं सदी में भी लोग इस प्रकार की अंधश्रद्धा से मुक्त नहीं हो पाए हैं। आज भी पुत्र की लालसा में, धन प्राप्ति हेतु बच्चे की बलि दी जा रही है। मीडिया चिल्ला कर बता रहा है और दिखा रहा है, फिर भी लोग की अंध श्रद्धा के शिकार हो रहे हैं।

यह समस्या आज की ज्वलन्त समस्या है, जिसे दूर करना नितांत आवश्यक हो गया है। इसलिए हमारे साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से अंधश्रद्धा से ग्रसित व पीड़ित समाज को जागृत करने के लिए अपनी रचनाओं में इस समस्या को उठाने का प्रयत्न किया है। जिससे समाज किसी ऐसे वहम् का शिकार न बन सके। यहॉ पर हमने केवल प्रेमचंद की ऐसी कहानियों का चित्रण किया है जिसमें किसी न किसी रूप में अंधश्रद्धा की समस्याएॅ दिखाई देती है। अंधश्रद्धा को और

अधिक परिभाषित करने की आवश्यकता नहीं है, प्रेमचंद की वे कहानियॉ जिसमें अंधश्रद्धा का तत्व दिखाई देता है वे इस प्रकार हैं--

1.अनिष्ठ शंका

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'ख्वाबे परेशा' शीर्षक से अगस्त 1919 को कहकशा में हुआ था। 'प्रेम बत्तीसी' में संकलित भी है। हिन्दी में 'अनिष्ट शंका शीर्षक से 'आज' में 27 जून 1921 को प्रकाशित हुई तथा मानसरोवर, भाग-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-2 में संकलित है।

यह कहानी कुंवर अमरनाथ और मनोरमा की है। कुंवर अमरनाथ अपने मित्रों के साथ बुंदेलखंड जाता है, वहॉं भीषण अकाल पड़ा था लोग पशुओं को ,खाते, वृक्षों की छालों को खाते, जरूरत पड़ने पर मनुष्यों तक को भी खा जाते। अमरनाथ अपने मित्रों के साथ वहॉं पहुॅंचता है और लोगों को सही राह दिखाना चाहता है। उसकी पत्नी मनोरमा भी उसके साथ जाना चाहती है। अमरनाथ उसे ले न जाकर रोज एक खत लिखकर भेजने का वादा किया। एक हफ्ते तो बराबर खत आता रहा लेकिन हफ्ते भर बाद खत का आना बंद हो गया। एक महीना बीत जाने के बाद मनोरमा को कुछ भी अच्छा न लगता। एक रात को मनोरमा ने स्वप्न देखा कि अमरनाथ दरवाजे के सामने नंगे पैर खड़े, नंगे सर खड़े हैं और उनके ऑखों में ऑसू हैं। मनोरमा दरवाजे के पास गई पर वहॉ सन्नाटा था उसने दासियों से पूॅंछा और बाद में साधू से अपने स्वप्न का कारण पूॅछा तो साधू ने उसे बताया कि उसके पति किसी संकट में आने वाले हैं।

मनोरमा आखिरी खत के आधार पर करबई जाने के लिए रवाना हो गई। लेकिन ट्रेन में भी उसे सोते हुए बुरे-बुर स्वप्न आ रहे थे। पहला स्वप्न आया कि एक सागर में नौका है, सागर तूफानी है और उस नौका पर अमरनाथ नंगे पैर, नंगे सर ऑखों में ऑसू लिए हुए दिख रहे हैं, वह नौका डूबने वाली थी कि तभी मनोरमा जग गई। दूसरी बार उसने देखा कि एक बहुत बड़ा पर्वत है और वहॉ एक पेड़ है पर उसमें पत्ते नहीं है। वहॉं बिजलियां गिर रही हैं और एक मनुष्य जो अमरनाथ है वे नंगे पैर, सर और आंखों में आंसू लिए खड़े है तभी मनोरमा जग गई और वह ईश्वर से प्रार्थना करने लगी। तीसरा स्वप्न उसने देखा कि अमरनाथ घोड़े पर सवार होकर एक नदी में तंग पुल से जा रहे हैं, उसे डर है कि कहीं वे गिर न जांए। इसी में मनोरमा जग जाती है और उसका प्लेटफार्म आ जाता है। वह प्लेटफार्म पर उसे अमरनाथ नंगे पैर, नंगे सर दिखाई देता है और उसकी आंखों में ऑसू है। वह रेलवे का दरवाजा खोलती है तभी अमरनाथ घोड़े से गिरता हुआ दिखता है। मनोरमा अमरनाथ को बचाने की कोशिश करती है और उसे अपना हाथ देती है और वह खुद गिर

जाती है तथा मर जाती है। अमरनाथ करवई प्लेटफार्म पर आता है और उसे पूरी बात का पता चलता है। थोड़े दिनों के बाद वास्तव में अमरनाथ नंगे पैर, नंगे सर और आंखों में ऑसू लिए घर के द्वार पर खड़ा है। मनोरमा का स्वप्न सच हो जाता है। अब अमरनाथ अपनी पूरी जायदाद दान कर देता है और खुद नंगे पैर पहाड़ों पर घूमने लगता है।

2. मूठ

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1922 को 'जमाना' में हुआ था और 'ख्वाबे खयाल' में संकलित हुई थी। हिन्दी में जनवरी 1922 को 'मर्यादा' में प्रकाशित हुई और मानसरोवर, भाग-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-2 में संकलित है।

इस कहानी के डॉ. जयपाल एक कंजूस इन्सान थे। भले ही वे डॉक्टर थे पर उनकी किस्मत यह थी कि वह आज तक न अच्छा खाना-पीना खा पाये और न एक अच्छा सा घर बना पाए। डॉक्टर की मॉं तीर्थ जाना चाहती थी पर वह मुमकिन नहीं हो पा रहा था। डॉक्टर साहब घर के जरूरी कामों में भी काफी काट-छांट करते थे। एक बार बीमे की रकम सात सौ रूपये आई, जो उन्हें पोस्ट में डालना था। पोस्टमैन ने कहा कि यदि पैसे और सिक्के ज्यादा हो तो वे खुद जाकर बैंक में दे आए। अचानक उसी समय डॉक्टर साहब को किसी मरीज को देखने जाना हुआ डाक्टर साहब ने पैसे बॉक्स में रखा और उसे देखने चल दिए। जब डाक्टर वापस आए तो रात काफी हो चुकी थी इसलिए बक्से को ताला लगा दिया था और उसने दूसरे दिन जाने का निश्चय किया। दूसरे दिन जब उन्होंने बाक्स खोला और पैसे की थैली निकाली तो उन्हें उसका वजन कम लगा।

डॉक्टर साहब ने जब पैसे गिने तो उसमें पांच सौ कम निकले। वे चौंक गए उनके मन में कई ख्याल आए। उन्हें लगा कि बक्से की चाभी नहीं थी इसलिए कोई आकर ले गया होगा। डॉक्टर साहब ने पैसे ढूंढ़ना चाहा इसलिए वे बुद्धू ओझा के पास गए और उससे मूठ मारने के लिए कहा। पर उसकी मॉं ने उसे मना किया क्योंकि मूठ उतारी नहीं जाती और अगर कोई अपना होगा तो मर जाएगा। पर डॉक्टर न माना। इसी पर विचार करते हुए डॉ. बलवन्त साधू जाधव कहते हैं कि--"भारतीय समाज में गले में जनेऊ पहनकर, साधु वेश परिधान करके और हाथ में पोथी-पत्रा लेकर कोई भी मनुष्य ब्राह्मण रूप धारण कर सकता है, ओझा बन सकता है। इससे न केवल देहाती अशिक्षितों को फॅसाया जाता है, वरन् शहरवासी शिक्षितों को भी। बुद्धू चौधरी इस कला में कुशल हैं।'' 213

डॉक्टर साहब ने घर जाकर सबको बताया कि उसके पैसे खो गये हैं और उसने मूठ मारने को कहा है। घर के सारे लोग सहम गये। रात को जगिया जो डॉक्टर को पालने वाली दाई थी उसकी हालत खराब होने लगी। उसकी ऑखे पथरा गई। पता चल गया कि पैसे उसने ही लिए हैं। घरवालों ने बड़ी कोशिश की तो वह एक क्षण के लिए जागी फिर मुर्छित हो गई। डॉक्टर बुद्धू के पास मूठ उतारने के लिए बुलाने गया तो बुद्धू की मॉ ने उससे पॉच सौ रूपये मांगे। दरअसल बुद्धू ने मूठ मारी ही न थी। वह जैसे तैसे 250 रूपये में तैयार हुआ पर घर जाकर जब उसने देखा तो उसने पॉच सौ रूपये मांगे। बुद्धू ने कुछ मंत्र से बुढ़िया को बचाया और डॉक्टर ने पॉच सौ रूपये दिए। डॉक्टर साहब को पता चला कि हर बात में कंजूसी अच्छी नहीं होती। उन्होंने जगिया के पास से पैसे न लिए और उसे यात्रा के लिए दे दिए। इसी पर डॉ. साधू जाधव आगे कहते हैं कि--" जिस तरह कुछ पुरुष समाज को ठगकर अपना स्वार्थ साधते हैं, उस तरह कुछ धूर्त नारियॉ भी लोगों की ऑखों में धूल झोंककर उन्हें फॅसाती है। अगर कोई दलित नारी इस तरह किसी को ठगती है तो अधिक से अधिक अर्थाभाव ही उसका कारण हो सकता है। 'मूठ' विषयक ढोंग रचने के बाद बुद्धू की बुढ़िया के प्रयास के मूल में आर्थिक चिन्ता का हल है।'' 214

12. आत्मकथा पर आधारित कहानियॉ

प्रेमचंद जी एक प्रतिभाशाली लेखक एवं साहित्य सम्राट थे। उन्होंने अपने साहित्य में समाज के हर पहलुओं को उजागर किया है। उनकी यही वृत्ति उनके साहित्यिक विधाओं में भी देखने को मिलती है। उनकी कहानियों में हम हर तरह की विविधता एवं विभिन्न शैलियों का प्रयोग दिखाई देता है।

प्रेमचंद ने अपनी चन्द कहानियॉ आत्मकथात्मक शैली के रूप में लिखी हैं, जहॉ वे खुद कहानी के नायक के रूप में दिखाई देते हैं। ऐसी कुछ कहानियॉ इस प्रकार हैं--

1.अमृत

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'मौत और जिन्दगी' शीर्षक से मार्च 1913 को 'जमाना' में हुआ था और 'अमरित' शीर्षक से प्रेमपच्चीसी' में संकलित हुई थी। हिन्दी में 'अमृत' शीर्षक से गुप्तधन, भाग-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ, भाग-1 में संकलित है।

इस कहानी का अख्तर एक शायर था। वह बहुत उमदा शायरी लिखता था। उसकी शायरी बड़े-बड़े शायरों को परास्त कर देती थी। उसने शायरी की दुनिया में बड़ा नाम कमाया। शोहरत के साथ दौलत भी आई। इन सबके बावजूद वह अब तक अकेला था। वह अब भी किसी हसीन चेहरे को

देखता तो उसको भूलने में कई हफ्ते लगा देता। वह उस दौरान शायरी नहीं लिखता और डॉ. की सलाह पर माहौल बदल देता। पर इस बार जब वह जगह बदलने पर भी शायरी न लिख पाया तो उसने अपने मरने की खबर पत्रिका में दे दी। इस खबर से दुनिया में तहलका मच गया। जगत में उसकी पुस्तक एवं एक-एक शायरियों पर आलोचना लिखी गई लेकिन उसने उस पर ध्यान नहीं दिया। तभी एक दिन अजमेर की एक 'पब्लिक लाइब्रेरी' में वह बैठा और किताब पढ़ने लगा। उसमें अख्तर ने 'कलामे अख्तर' पढ़ी जो मिस आयशा ने लिखी थी। किताब पढ़ने के बाद उन्होंने मिस आयशा को से मिलना चाहा। और काफी कोशिशों के बाद मिस आयशा के घर गया और वहॉ उसने आइने के सामने अपनी तस्वीर देखी। अख्तर बिल्कुल भिखारी जैसा लगता था। मिस आयशा आई जो सावले रंग की बड़ी नाज़ुक स्त्री थी। अख्तर ने जब अपनी असलियत बताई तो आयशा ने विश्वास न किया पर विश्वास आने पर हम दोनों ने एक दूसरे से खुलकर बातें की। छ महीने मैं वहीं रहा। यहीं अख्तर ने नवरंग किताब का प्रारम्भ किया। अख्तर के दिल से ऐसे शेर निकले कि आज तक न निकले थे। अख्तर बड़े दिल से लिखता गया और एक दिन आयशा को अपनी दुल्हन बनाकर घर ले आया। वही नौरंग उसी मुबारक जिंदगी की याद है।

2. दरवाजा

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1917 को 'अलनाजिर' में हुआ था। हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ, भाग-2 में संकलित है।

यह एक दरवाजे की आत्मकथा है। प्रेमचंद ने इस दरवाजे के माध्यम से मनुष्य के जीवन के प्रत्येक उतार चढ़ाव, सुख-दुख को दिखाने की कोशिश की है। कहानी में दरवाजा अपने घर की इज्जत को बचाने वाला बताया गया है। दरवाजा अपनी आप बीती हुई कहता है कि छोटे बच्चे जोर से उससे टकराकर खेलते है, हवा के तेज झोंके उसे उथल-पुथल करते हैं। उसकी करकस आवाज पर गृहस्वामिनी गुस्सा करती है। उसे तेल लगाने की फुरसत नहीं। दरवाजा वसूलियों, बाजार के तकाजेवाले, भिखारियों, कुत्तों की आवाज, चोर आदि से बचाता ही है साथ ही वह अपने मालिक को कितनी लज्जा बहाने बाजी, चालबाजी से भी बचाता है। फिर भी अगर कभी डाकिया बंद दरवाजा देखकर मनीआर्डर दिए बिना ही चले जाते है तो मालिक हमें ही दोष देते है। दरवाजा हर एक पल को सबसे पहले महसूस करता है जैसे नई दुल्हन का आना, उसके कदमों को छूना, मालिक के इन्तजार में दुल्हन का दरवाजे को सिमटकर रोना, बाबूजी के बीमार होने पर मालकिन का रोना, बाबूजी के बूढ़े हो जाने पर दरवाजे से सिमटकर बैठना, जुदाई का डर रहना, आदि पलों में दरवाजा

ही साथ देता है। घर और बाहरी दुनिया को दूर रखता है। दरवाजा वह है जो मनुष्य को जीवन से मृत्यु तक साथ निभाता है।

3. ज्वालामुखी

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'शोला-ए-हुस्न' शीर्षक से मार्च 1917 को 'जमाना' में हुआ था और 'प्रेमपबत्तीसी' में संकलित हुई थी। हिन्दी में ज्वालामुखी नाम से मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-2 में संकलित है।

यह कहानी में प्रेमचंद ने अपने आप को कहानी का पात्र बनााकर आप बीती के रूप में घटना का वर्णन किया है। मैंने बी.ए. किया पर सिफारिश न होने की वजह से मुझे नौकरी न मिल पाई। तभी एक दिन एक अखबार में पढ़ा कि एक सेक्रेटरी की जगह निकली है, मैंने अपना बायोडाटा तथा फोटो भेज दी। थोड़े दिनों के बाद तार आया कि वे लोग मुझे बुला रहे हैं। मैने अपना सामान बांध लिया और वहॉं के लिए चल दिया। वह जगह दक्षिण में थी वहॉं की आबोहवा दूषित थी जिसका मुझे पता भी था लेकिन एक हजार की तन्ख्वाह ने मुझे अंधा बना दिया। मैं जब वहॉं गया तो मुंशीजी मेरे लिए गाड़ी लेकर आए। उस जगह का नाम ऐशगढ़ था जहॉं की रानी कामिनी थी। मैं महल में गया, रानी से मिला। वह बड़ी खूबसूरत थी। कई महीने तक मैंने वहॉं काम किया लेकिन रानी को देखने की तमन्ना जागने लगी। वह मुझे बहुत अच्छी लगती थी। लेकिन वह एक बूढ़े से डरती थी। एक दिन कामिनी ने मुझसे शादी का प्रस्ताव रखा पर मैंने खुद को उनके अनुसार न मानकर मना किया, जिससे कामिनी को बुरा लगा। कुछ दिन बीता तो वह बूढ़ा फिर से आया, उसने इस बार मुझे वहॉं से भगवाने की कोशिश की। बूढ़े व्यक्ति ने मुझे उस औरत की सच्चाई बताते हुए मुझे एक कमरे मे ले गया, जिसे देखकर मेरे रोंगटे खडे हो गए। वहॉं मैंने मनुष्य का शरीर, पर चेहरे जानवरों के देखे, जहॉं कोई किसी को मार रहा था, कोई किसी को निगल रहा था, कोई मांस खा रहा था। यह देखकर मैंने अपनी गठरी बांधी और वहॉं से निकल पड़ा। कई महीने बाद घर लौटा और अपने आप को अपनी खाट पर पाया। पर जब मैंने अपने दोस्तो से यह बात की तो वह हंसने लगे। उन्होंने कहा कि मैं एक पल के लिए भी बाहर नहीं गया। उन्होंने ये मेरा स्वप्न माना और अब में यह मेरा स्वप्न मानता हूॅं।

4. स्वप्न

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में जुलाई 1930 को वीणा में और पुर्नप्रकाशन फरवरी 1977 को दिल्ली में हुआ था। बाद में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य, भाग-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-4 में संकलित की गई।

यह कहानी भी प्रेमचंद ने आप बीती के रूप में लिखी है। लेखक का मानना है कि स्वप्न एक आनंद है, जिससे इन्सान को सबसे ज्यादा सुख मिलता है। मेरा मानना है कि रात को सोते समय किसी का अच्छा चेहरा देखकर सोओ तो अच्छे स्वप्न आते है। लेखक ने कल रात को किसी भाग्यवान मुंह देखकर सोया तो रात को पूरा बचपन, मेरी स्नेहमयी मां, मेरी बहन, बाल सखा, छोटा सा घर दिखाई दिया। सोते समय में वृद्ध था पर अभी पूरी काया पलट गई। स्वप्न में मैंने अपनी स्कूल, कॉलेज सारी गल्तियॉं, मस्तियॉं एवं वे सुनहरे पल जो मैने दोस्तों के साथ बिताए थे सब कुछ याद आ गए। तभी मैंने अपनी शादी की तैयारियॉं होते हुए देखी।

मेरी मॉं एवं परिवार वाले मेरी शादी करवाने के पीछे पड़े थे। मैं डर गया था क्योंकि मेरी शादी हो चुकी थी और मेरे बच्चे भी थे। मुझे लगा मेरी शादी वृद्धावस्था में दुबारा हो रही है। मुझे मंडप में जैसे बिठाया गया मैं वहॉं से भागा और एक नदी में गिर गया और मेरा स्वप्न टूट गया। मैं खाट पर था पर हॉफ रहा था।

13. आधुनिक साधनों से हो रहे नुकसान पर आधारित कहानी

बदलती दुनिया के साथ-साथ दुनिया के तौर तरीके भी बदलते हैं। लोगों का खान-पान, रहनी-करनी, और विचारों में भी परिवर्तन आता है। मनुष्य की इच्छाएं , आकाक्षाएं भी समय के साथ बदलते रहते हैं। आधुनिकता इसी परिवर्तन का परिणाम है। अंग्रेजों के आगमन के बाद भारत में मशीन युग का प्रारंभ हुआ और धीरे-धीरे भारत औद्योगिक क्षेत्र में आगे बढ़ने लगा। यातायात के नवीन साधनों का आगमन भी हुआ। जैसे - रेलवे, मोटर गाड़ी, बस, जहाज, आदि। लेकिन शुरूआती दौर में इन आधुनिक साधनों ने कई लोगों को न केवल बेरोजगार किया बल्कि कई घरों को भी बरबाद किया। जिनमें तांगेवाले मुख्यरूप से आतें हैं। प्रेमचंद ने अपनी एक कहानी में ऐसे ही तांगे वाले की वेदनाओं को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

1.तांगे वाले का बड़

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में सितम्बर 1926 को 'जमाना' में हुआ था और हिन्दी में गुप्तधन, भाग-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-3 में संकलित है।

इस कहानी में लेखक एक बार इलाहाबाद में किए हुए तांगे वाले के सफर को बया करना चाहा है। लेखक जुम्मन मियाँ के तांगे में सफर कर रहे थे। जुम्मन मियाँ पचास साल के थे। वे सफर के दौरान अपनी दरिद्रता बताते हुए कहते हैं कि मोटरों के आने के बाद उनका कितना नुकसान होता है, ऊपर से सात आठ औरते जब बच्चों के साथ बैठती हैं तो किराया भी कम देती हैं स्वराज वाले तांगे में बैठे और जब पहुंचने की जगह आई तो एक मिनट में वापस आने का वायदा करके गए जो आज तक न आए। एक सेठ जल्दी स्टेशन पहुंचने को कहा तो मेंने घोड़े को पीटा सोचा इनाम मिलेगा पर स्टेशन पहुंचकर केवल चवन्नी ही मिली तो मैंने ईनाम मांगा इस पर केवल चार पत्ते गोभी के निकालकर घोड़ी को खिला दिया। यहाँ जुम्मन यह भी कहता है कि जब मोटर नही थी तब उनकी अच्छी कमाई हो जाती थी और आराम से जीवन बीतता था। पर जब से मशीन युग आया तब से जुम्मन जैसे कई लोगों की रोजी-रोटी छिन गई। इस कहानी में हमें आधुनिक संसाधनों से हो रहे नुकसान का चित्रण साफ दिखाई देता है।

14. अन्य समस्याओं पर आधारित कहानियाँ

लेखक ने कुछ ऐसी भी कहानियों की रचना की है, जिन्हें किसी शीर्षक के अन्तर्गत तो नहीं रखा जा सकता है, लेकिन वे कहानियाँ उनकी कहानी संग्रह में प्रकाशित भी की गई हैं और अन्य कई जगहों पर संकलित भी हुई हैं। उनमें से कुछ कहानियाँ इस प्रकार हैं --

1.आखिरी मंजिल

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'मंजिले-मकसूद' नाम से अगस्त-सितम्बर 1911 को 'जमाना' में हुआ था और हिन्दी में 'आखिरी मंजिल' नाम से गुप्तधन, भाग-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ, भाग-1 में संकलित है।

गंगा घाट की बात है। वहाँ के एक मकान में लेखक रहते थे और थोड़ी दूर पर मोहिनी रहती थी। जो तीन साल पहले मर गई थी। लेखक उसके रूप, लावण्य, मुस्कराहट, प्रेम के बारे में, उसके विचार, नसीली आंखे होठ तथा प्रेमभरे पलों को याद कर रहे थे। मोहिनी बहुत सुन्दर न थी लेकिन लेखक उसकी बातों से मुग्ध था। वे उसे चाहते थे। मोहिनी अत्यन्त भावुक थी। एक छोटी सी बात भी वह अपने दिल पर ले लेती। एक शाम लेखक और मोहिनी गंगा घाट पर बैठे थे। हवा बहुत तेज थी। मोहिनी आज बहुत खुश थी और प्रेम भरी बातें कर रही थी। अचानक उसने नदी में एक दिया देखा। वह उसे देखने के लिए किनारे गई। बाद में जब वह न दिखा तो पतवार लेकर उसे

ढूँढ़ने गई। उस दिन बड़ा तूफान था। लहरे बड़ी तेज थी। लेखक को लगा शायद नहीं बचेंगे, दूर दिया देखा जो बुझने वाला था। जब दिया बुझ गया तो मोहिनी निराश हो गई। वह मुस्कराना भूल गई। कुछ दिन बाद वे दोनों फिर वहीं घाट पर मिल गये जहॉ वे उस दिन थे। आज वह मुस्करा रही थी। तभी घाट पर उसने रोशनी देखी। वहॉ चीता जल रही थी। मोहिनी के पूछने पर लेखक ने कहा कि बुढ़िया खाना बना रही है, तब मोहिनी बोली-' वह अपनी आखिरी मंजिल पर पहुँच गया।'

2. अपने फन का उस्ताद

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में सितम्बर 1916 को 'जमाना' में हुआ था और हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य, भाग-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-1 में संकलित है।

इस कहानी के प्रारम्भ में दिखाया गया है कि कलकत्ता के अलायंस बैंक के खजानची हरेन्द्र तथा उसके मित्र भवनचंद ने मिलकर बैंक लूटा और फरार हो गए। पुलिस उन दोनों को ढूँढ़ रही थी। इधर देवेन्द्र बाबू यानी मैं युनियन थियेटर का मालिक हूँ। हेमबाबू जो मेरे मित्र थे, उन्होंने 'अजमत-ए-कश्मीर' नामक एक नाटक लिखा था जिसमें वे एक एक्ट करने वाले थे। लेकिन मैने सोचा कि थियेटर में काफी लोग जमा हों, इसलिए अखबार में मैंने एक खबर दे दी कि हेमबाबू और देवेन्द्र बाबू दोनों कश्मीर का मुआयना करने गये हैं। जहॉं से वे अच्छी-अच्छी तस्वीरें लाएंगें। पहले तो हेमबाबू अपनी पहली पत्नी को छोड़ने के लिए तैयार न हुए पर बाद में धन की लालासा में देवेन्द्र के साथ कश्मीर का नाम लेकर राम नगर गये। मात्र तीस दिनों में वे ऊब गये जबकि उन्हें तीन महीने निकालने थे। एक दिन देवेन्द्रबाबू बाजार में कागज लेने गये जहॉ उन्हें एक प्रानपद नामक व्यक्ति ने पहचान लिया। प्रानपद ने अपने आपको एक्टर बताया, पर नौकरी न मिलने पर वह अपनी बेटी के साथ यहॉ आ गया है। देवेन्द्र बाबू से उसने प्रार्थना की कि वह उसे एक्टर में ले ले। जिस पर देवेन्द्र बाबू ने कल कश्मीर जाने की बात की और लौटते समय उसे नौकरी के लिए खत लिखकर बुलाने की बात की। बाजार से लोटने पर देवेन्द्रबाबू ने हेमबाबू से झटपट सामान बॉधकर और कहीं जाने की बात की ओर उसे सारी कथा सुनाई। संध्या हो गई थी और एक व्यक्ति दिया लेकर उनके घर आया तथा उन्हें हरेन्द्र और भवनचंद्र बताकर उन्हें गिरफ्तार करने को कहा। वह पुलिस था। देवेन्द्र बाबू को अपना कार्ड दिखाते हैं पर वह कहता है कि कार्ड बनवाया भी जा सकता है। देवेन्द्र बाबू पुलिस से कहते हैं कि उन्हें यहॉ कोई पहचानता भी है। उन्हें प्रानपद का नाम काफी देर बाद याद आता है। पुलिस प्रानपद को बुलाने भेजते हैं पर वह नहीं आता। हॉ इतना जरूर

कहलवाता है कि सुबह उन्हें देवेन्द्र बाबू मिले थे तब देवेन्द्र बाबू के होश उड़ जाते हैं। पुलिस देवेन्द्र बाबू से एक पत्र लिखवाती है कि मैं प्रानपद को सौ रूपये मासिक का पगार देकर अपने थियेटर में शामिल करता हूँ। वह पुलिस और कोई नहीं प्रानपद था। देवेन्द्र बाबू खुश हुए और उसे अपने फन का उस्ताद कहा।

3. पंच परमेश्वर

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'पंचायत' शीर्षक से मई-जून 1916 को जमाना में हुआ था तथा 'प्रेमबत्तीसी' और देहात के अफसाने में संकलित है। हिन्दी में 'पंच परमेश्वर' नाम से जून 1916 को सरस्वती में प्रकाशित हुई थी तथा मानसरोवर, भाग-7 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ, भाग-1 में संकलित है।

कहानी के बारे रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" पंच परमेश्वर में प्रेमचंद ने भारतीय गांवों जहाँ अभी आधुनिक व्यक्तिवादी सभ्यता का प्रवेश नही हुआ है-- के सरल निश्चल सत्यपरायण, न्यायपरायण, अकृत्रित, त्यागपूर्ण तथा उदार जीवन का एक अत्यन्त ही मार्मिक चित्र उपस्थित किया है।'' 215

डॉ. जगतनारायण हैकरवाल का मानना भी है कि--" सम्पूर्ण कथा करुणा और गहरी सहानुभूति से परिपूर्ण है। प्रेमचंद करुणा जनक कहानियों के लिखने में सिद्धहस्त थे। लेखक बिरादरी, सरपंच और अन्य लोगों द्वारा असहाय व्यक्तियों के शोषण की भर्त्सना करता है।'' 216

इस कहानी के जुम्मन शेख और अलगू चौधरी बचपन के मित्र थे। जुम्मन के पिता जुमराती से अलगू को शिक्षा प्राप्त करने भेजते हैं। अलगू का पिता पुराने ख्यालों वाला था वह गुरू सेवा करने में मानता था। अलगू ने सेवा तो की पर ज्ञान न पाया जबकि जुम्मन होशियार बना। अलगू चौधरी के पास पुराना धन था, पर जुम्मन के पास ज्ञान था और वह होशियार भी था। वह कानूनी दावपेंच जानता था। जुम्मन शेख की एक बूढ़ी खाला थी जिसके आगे-पीछे जुम्मन के अलावा और कोई न था। जब तक जुम्मन की खाला ने जुम्मन के नाम पर अपनी जमीन न की तब तक जुम्मन ने उसे बहुत अच्छे से रखा। बाद में उसका गुजारा चलना मुश्किल हो गया। तीन साल बाद खाला ने गुजारा मांगकर अलग होने को कहा। जिस पर जुम्मन ने मना किया और पंचायत बुलाई गई। अलगू अपनी मित्रता के कारण तथा जुम्मन के डर से पंच न बना। लेकिन बूढ़ी खाला ने अलगू को पंच बनाया। सबको लगा फैसला जुम्मन के हक में जाएगा पर अलगू ने अपने दायित्व को समझकर सच का साथ दिया और जुम्मन के खिलाफ न्याय दिया। तब से जुम्मन और अलगू के बीच दरार पड़ गयी। थोड़े

दिनों के बाद अलगू का एक बैल मर गया। सबको यकीन था कि जुम्मन ने किया है। तब से दोनों की पत्नियाँ आपस में लड़ने लगी। अलगू का बैल किसी काम का न था, जो समझू साहू अपनी गाड़ी चलाने के लिए ले गया और बाद में पैसे देने का वादा किया। समझू भारी-भारी सामान लादकर दो-तीन बार शहर से गांव ले जाता और बैल को पूरा खाना न देता। जिसके कारण एक बार आधे रास्ते बैल मर गया और समझू को माल की रखवाली करने के लिए वहीं सोना पड़ा। जिसमें उसके कुछ नकद और कई तेल के डिब्बे चोरी हो गये। जब अलगू साहू पैसे माँगने आया तो उसने पैसे देने से इनकार किया और उसे खरी-खोटी सुनाई। जिस पर पंचायत बुलाई गई और जुम्मन को पंच बनाया गया। जुम्मन भी से बदला लेने के लिए पंच की गद्दी पर बैठा। उसे अपनी जिम्मेदारियों का ज्ञान हुआ और फैसला अलगू के पक्ष में आया। अलगू खुश हुआ तथा जुम्मन ने अपनी गल्ती मानी और फिर दोनो में दोस्ती हो गई। इसी पर विचार करते हुए शिवकुमार मिश्र जी लिखते हैं कि--" बहुत सरल-सीधी, परम्परागत वर्णन शैली की यह कहानी प्रेमचंद के शुरुआती दौर की कहानियों में शायद सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रसिद्ध है। लोक परंपरा से चले आ रहे इस विश्वास का, कि पंच का आसन, साधारण आसन नहीं है, उस पर बैठते ही आदमी का मन निश्छल, निष्पक्ष, देवता का मन हो जाता है। यह कहानी भाष्य प्रतीत होती है। आदमी के सोए हुए जमीर को जगाने वाली कहानी है यह। सुबह के भूले को शाम तक घर वापस आने की प्रेरणा देने वाली, उसे वापस घर लाने वाली कहानी है यह। जरूर यह जीवन का एक आदर्श है, एक सद्विचार है, जिसे प्रेमचंद ने इस कहानी में रेखांकित किया है। परंतु पात्रों का जो हृदय-परिवर्तन इस कहानी में हुआ है, वे मानव-सुलभ कमजोरियों की चपेट में अपने अपने कारणों के चलते आ जाते हैं, परंतु यर्थाथ-जीवन की स्थितियाँ ही शीघ्र उन्हें अपने सवाभाविक रूप में ला देती हैं। ये पात्र यर्थाथ जीवन के पात्र हैं, अपवाद नहीं।'' 217

4. मृत्यु के पीछे

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'बाद अजमर्ग' शीर्षक से अगस्त-सितम्बर 1920 को 'सुबहे-उम्मीद' में हुआ था। हिन्दी में 'मृत्यु के पीछे' नाम से जुलाई 1924 को प्रेमप्रसून में प्रकाशित हुई थी तथा मानसरोवर, भाग-6 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ, भाग-2 में संकलित है।

यह कहानी प्रेमचंद के निजी जीवन पर आधारित हैं यह कहानी बाबू ईश्वर चंद्र की है। ईश्वरचंद्र को कॉलेज के समय से संपादन का लेख लिखने का, तथा जनसेवा का शौक था और एम. ए. कर लेने के बाद उन्हें गौरव पत्र का नया संपादक चुना गया। इसमें वे इतने रुचिगत हो गये कि

उन्होंने कानूनी परीक्षा भी नही दी। जिससे उनकी पत्नी तथा उनके पिता काफी नाराज हुए। आज सोलह साल बीत गये, ईश्वरचंद की एक लड़की की शादी हो गई, बड़ा बेटा कृष्णचंद ने बी. ए. पूरा किया तथा छोटा बेटा निचले दर्जे मे है। शहर में उनका बड़ा नाम सम्मान है पर घर की हालत काफी खराब है। उनको घर खर्च के लिए अपनी जायदाद भी बेचनी पड़ी, कर्ज भी लेना पड़ा और कई लोगों की बातें भी सुननी पड़ी। अब ईश्वरचंद को अपनी जवानी के दिन याद आते हैं। उन्हें अपनी गल्तियॉ याद आती हैं उनको अब इस काम में रस कम आने लगा। उनके बड़े बेटे कृष्णचंद को वह काम पसंद था पर वह अपनी मॉ से डरता था। ईश्वरचंद अब अखबार के प्रति उदासीनता होने लगे। जिसकी वजह से कई आलोचनाएं हुई। तभी ईश्वरचंद ने अखबार कृष्णचंद को सौंपने की बात की जिस पर मानकी नाराज हुई। इस पर ईश्वरचंद ने दिन रात मेहनत करके अखबार को उसी स्थान पर पहुॅचा दिया जहॉ वह पहले था पर इसके कारण वे इतने बीमार हो गए कि मृत्यु की शैय्या पर सो गये। उनके मरने के बाद कई दिनों तक उनके चर्चे अखबार में ,पत्रों में होते रहे, दुकानों बंद रही, शोक सभाएं हुई, उस समय मानकी को दनकी मान-प्रतिष्ठा का भान हुआ। कृष्णचंद वकालत की पढ़ाई पूरी करके अच्छा कमाता था और अच्छे लेख भी लिखता था। एक बार मानकी गंगा स्नान करने गई थी, तब उसने देखा कि एक महात्मा की प्रतिमा लोग गाज़े-बाज़े के साथे ले जा रहे थे और मंदिर उस प्रतिमा को मंदिर में प्रतिष्ठित कर रहे थे। मानकी ने जब देखा तो वह मन्दिर और किसी का नही था बल्कि ईश्वरचंद का ही था। मानकी उनकी प्रतिमा के सामने फूट-फूटकर रोने लगी और अपनी गल्तियों के लिए माफी मॉगने लगी। घर आकर मानकी ने कृष्णचंद से सारी बातें बताई, जिस पर कृष्णचंद कहता है कि यह सच की वकालत का फल है। मानकी अपने बेटे को धन की लालच छोड़कर इसी राह पर आगे बढ़ने के लिए कहती है।

5. सेवामार्ग

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'राहे-खिदमत' शीर्षक से जून 1918 को 'जमाना' में हुआ था। तथा प्रेमबत्तीसी में संकलित की गई। हिन्दी में 'स्वदेश' नाम से फरवरी 1919 को स्वदेश में प्रकाशित हुई थी तथा मानसरोवर, भाग-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-2 में संकलित है।

इस कहानी की तारा बारह सालों से मॉं दुर्गा की उपासना करती थी। सूखा खाती थी, जमीन पर सोती थी। उसका देह सूख गया था, उसकी मॉ ने उसे समझाया पर वह दुर्गा की उपासना करती रही। एक दिन मां दुर्गा प्रसन्न हुई। तब तारा ने बहुमूल्य दुनिया में जो किसी के पास न हो ऐसी वस्तुऍ सुख-वैभव आदि मॉगा। उसे मिला भी। तारा को हीरे-जवाहरात, बड़ा गगन चुम्बी महल,

दास-दासियॉ, नौकर-चाकर, हाथी दॉत का पलंग आदि के साथ गुलाब सा कोमल शरीर भी मिला। वह अपने मॉ बाप को भूल गई। जो अब तक एक झोपड़े में रहते थे। विद्युत सिंह, अग्निसिंह, मिस्टर रेडियम तारा की आज्ञा का पालन करते थे। एक दिन एक साधू वीणा बजाते हुए आया। तारा उसकी वीणा पर मुग्ध हो गई। उसने अपने धन-वैभव आदि से साधू को पाना चाहा पर वह उसके प्रलोभन में न आया। तारा ने मॉ दुर्गा की उपासना से उस साधू को पाने का रास्ता पूॅछा जिस पर मॉ ने उसे धन वैभव को छोड़कर सेवामार्ग अपनाने को कहा। अब तारा साधू की कुटी के आस-पास फूल बिछाती, महीनों उपवास करती, साधू के मार्ग से कंकड़ उठाती। तारा सूख गई। एक बार गर्मी के मौसम में गंगा सिकुड़ गई तब थककर तारा एक वृक्ष के नीचे बैठ गई। उसे मॉ दिखाई दी। मॉ के पूॅछने पर उसने बताया की उसे प्रेम से बड़ा सेवा मार्ग मिल गया है। साधू तारा के चरणों गिर गया और उसको स्वीकार कर लिया। पर तारा ने सेवामार्ग में चलने का निश्चय किया और साधू को न अपनाया। इसी पर रामदीन गुप्त कहते हैं कि--" कहानी का बाह्य आवरण अलौकिकता से परिपूर्ण है किन्तु उसके माध्यम से एक नितान्त लौकिक एवं मानवीय सत्य का उद्घाटन किया गया है। वह सत्य है निस्वार्थ और फल की आशा के बिना की जाने वाली सेवा ही सच्चे आत्मिक संतोष का मार्ग है, धन और विलास के मार्ग से वह संतोष नही प्राप्त हो सकता।'' 218

6. आबे हयात (सुधा रस)

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में मार्च 1920 को 'सुबहे-उम्मीद' में हुआ था। हिन्दी में 'सोलह अप्राप्य कहानियॉं' प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं, भाग-2 में संकलित है।

यह एक अंग्रेजी कहानी का उर्दू अनुवाद है। इस कहानी के डॉक्टर घोष हमेशा Expariment करते रहते थे। उनकी दवाइयों से कई लोग मर गये, जिनमें उनकी भावी पत्नी भी थी। शादी के कुद दिन पहले वह लड़की बीमार पड़ी और डॉ. घोष ने उसे दवाई दी और वह मर गई। डॉक्टर घोष के तीन मित्र-लाला करोड़ीयामल जो संपन्न व्यापारी था पर सारी दौलत सट्टे मैं हार गया, अब शिष्ट भिक्षावृत्ति से अपना गुजारा चलाता था। ठाकुर विक्रमसिंह जो भोग-विलास से लिप्त था, जिसमें उसने न केवल अपनी दौलत पर साथ ही उसने अपनी सेहत भी गंवा दी। अब उसका शरीर रोगों का घर हो गया है। बाबू दयाराम जो एक वकील थे पर वे किसी न किसी वजह से बदनाम होते रहते थे और अब उन्हें कोई पूॅछता भी नहीं था तथा एक लेडी मित्र श्रीमती चंचल कुॅवर जो पहले हुस्न की मल्लिका थी, पर अब उन्हें भी कोई नही पूॅछता था। चारों को घर पर

बुलाया। ये लोग अपने बुढ़ापे से तंग आ गये थे और इससे जल्दी छुटकारा पाना चाहते थे। डॉक्टर घोष के घर में भूत रहते थे और जादुई किताबें थी ऐसा लोग कहते थे। डॉक्टर घोष के मित्रों को लगा कि आज डॉक्टर साहब कोई नया तमाशा दिखाने वाले हैं। डॉक्टर घोष ने एक मुरझाया हुआ फूल निकाला जो पचास साल पहले उनकी माशूका ने उन्हें दिया था। उस पर डॉक्टर सिकन्दर का अमृतकुण्ड का पानी, जिसे पीने से आदमी जवान हो जाता है, वह डाला फूल खिल गया। डॉक्टर के मित्रों ने भी पानी पिया और वे भी जवान हो गये। पूरा जवान होने के लिए उन लोगों ने तीन गिलास पानी पिया। वे जवान हुए। अब जो पहले चंचल के लिए एक दूसरे का खून करने के लिए तैयार थे वे अब जवान होने पर चंचल को नचाने लगे। जिसमें उनसे आइना टूटा। डाक्टर ने उन्हें बिठाया और संध्या होने लगी। संध्या होते ही वे चार मित्र पहले जैसे हो गये। तभी डॉक्टर ने सलाह दी कि हम जैसे है वैसे ही रहना चाहिए, यही कुदरत का नियम है। पर उन मित्रों को अभी भी डॉक्टर का वह सुधा रस चाहिए था।

7. मनुष्य का परम धर्म

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में मार्च 1920 को 'स्वदेश' में हुआ था। तथा मानसरोवर-3 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉ-2 में संकलित है। उर्दू में 'इन्सान का मुकदस फर्ज' शीर्षक से प्रेमचालीसी में संकलित है।

इस कहानी के पंडित मोटेराम शास्त्री आज होली होते हुए थी , घर पर थे। उन्हें शहर का कोई भी सज्जन खाने पर नहीं बुलाने आया पंडितजी अपनी पत्नी से इसी विषय में बात करते हुए कहते है कि सब अब पाश्चात्य संस्कृति के अनुयायी हो गये। तभी पंडित चिंतामणि आए और सन्यासी बनने की बात की क्योंकि अब कोई तीज-त्योहार पर ब्राह्मणों को खाने पर नहीं बुलाते। तभी दोनो को एक तरकीब सूझी और गंगाघाट पर जाकर उपदेश देने लगे। मोटेराम शास्त्री ने उपदेश देते हुए लोगों को अपने पक्ष में खींचा। वे कहने लगे ब्राह्मण को ब्रह्म का अवतार माना गया है और उनके मुख से ब्रह्म की ही वाणी निकलती है। लोग मोटेराम शास्त्री की बात से सहमत हुए तथा मुख के सुख की बात करते हुए मिष्ठान्न को सर्वोत्तम बताया इसके साथ उन्होंने ये भी कहा कि गलती करने वाले को माफ करने से अच्छा सजा दो उसे अपनी गल्ती का पश्चाताप होता है। जिस पर लोगों ने उन पर फूलों की वर्षा की। इधर चिंतामणि जलभुन कर खाक हो गये और लोगों के सामने अपनी प्रतिष्ठा बनाने के लिए मोटेराम शास्त्री की मिष्ठान्न की बात का विरोध करने लगे जिस पर दोनों में द्वन्द्व युद्ध हुआ और लोगों को उन्हें छुड़ाना पड़ा।

8. गुप्तधन

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अगस्त 1922 को 'श्री शारदा' में हुआ था। तथा मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-2 में संकलित है।

इस कहानी के बाबू हरिदास का ईंटों का पजावा था। जहाँ मगनसिंह दिन-रात काम करता था। हरिदास को उस पर दया आती थी। मगनसिंह ने हरिदास को बताया कि वह उच्चकुल का लड़का है, धन बहुत था पर भाइयों की लड़ाई में चला गया। माता वृद्ध है और असाध्य रोग से पीड़ित है। हरिदास ने मगनसिंह को मैनेजर बनाया। मगनसिंह पढ़ा लिखा था, होशियार एवं चतुर था। एक बार वह तीन दिन न आया तो चौथे दिन हरिदास उसके घर गया। उसकी माँ बीमार थी। उसकी माँ ने हरिदास को बताया कि चबूतरे के नीचे धन रखा है और वह मर गई। हरिदास को लालच आई और वह चबूतरे को रात को खोदने लगा, दो महीने के बाद अमावस्या की रात को चट्टान मिली और वह घर गया। बाद में वह खूब बीमार पड़ा और तीन दिन बाद मर गया और मरते मरते अपने बेटे प्रभुदास को खजाने का राज बताया। उसने भी दीवार तोड़ी और संदूक निकला और घर ले गया, लेकिन वह ज्वर आने से मर गया। मरते-मरते मगनसिंह को वह संदूक और उसमें रखी दस हजार सोने की पुरानी मोहर को देकर मर गया।

9. चकमा

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1922 को 'प्रभा' में हुआ था। तथा मानसरोवर-6 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-2 में संकलित है। उर्दू में 'प्रेमचालीसी' में संकलित है।

इस कहानी के सेठ चंदूलाल की कपड़ों की दुकान थी जहाँ वह विदेशी माल बेचता था। उस समय विदेशी माल का बहिष्कार शुरू हुआ था। कांग्रेस पार्टी ने सेठ चंदूलाल को प्रतिज्ञा पत्र पर साइन करने को कहा पर सेठजी ने नहीं किया। तीन महीने तक सेठजी की दुकान के सामने कांग्रेस के स्वयंसेवक पहरा देते रहे। किसी ग्राहक को आने न दिया। पुलिसवाले सेठ जी का पक्ष लेते थे और ग्राहक को जाने को कहते थे पर डर के मारे कोई न जाता था तभी सेठ जी और मुनीम ने एक तरकीब निकाली। एक दिन एक पुलिसवाला तरक्की के लिए स्वयंसेवक को मारने लगा। सेठजी पुलिस तथा कांग्रेस के नेता के आने पर पुलिस का पक्ष न लेकर स्वयंसेवक का साथ दिया और पुलिस के खिलाफ गवाही दी। जिससे कांग्रेस के नेता को विश्वास हो गया कि सेठजी उनके पक्ष में है और पहरा हटा दिया। जिससे सेठजी और मुनीम दोनों खुश हुए।

10. पूर्व संस्कार

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में दिसम्बर 1922 को 'माधुरी' में हुआ था तथा मानसरोवर-8 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-2 में संकलित है।

इस कहानी में रामटहल और शिवटहल दोनों भाई थे। रामटहल ने अपनी चतुराई से खूब धन कमाया, जबकि उसका छोटा भाई शिवटहल साधु-सन्तों को खिलाने-पिलाने में पूरा धन समाप्त कर दिया। आखिर में कुछ सहारा न होने पर वह भाई से मदद माँगने गया। रामटहल ने अपनी जमीन जोतने तथा आसमियों से पैसे लेने का काम सौंपा पर किसी साधु-सन्तों को न खिलाने का भी आदेश दिया। शिवटहल ने बड़ी मेहनत की अच्छा धन कमाया पर वह भाई को बिना बताये अनाज बेंचकर साधु-सन्तों को खिलाता था। तीन साल की कड़ी मेहनत के बाद शिवटहल के शरीर ने उसका साथ छोड़ दिया। शिवटहल के मरने पर रामटहल को बड़ा दुख हुआ क्योंकि अब दूध, घी, शाक-भाजी, अनाज आदि न आता इसलिए अब वह वहीं गाँव में जाकर बस गया। रामटहल के पास बड़ी अच्छी नस्ल की गाय थी जो खूब दूध देती थी। वह गर्भवती थी। उससे एक बछड़ा आया, जो देखने में ऐसा लगता कि किसी दैवयोग से आया है। उसका नाम जवाहर रखा गया उसकी कुंडली बनाने पर पता चला कि छठे वर्ष में उसे घात है। एक बार एक साधु आया और उसने रामटहल को बताया कि यह देवात्मा है। उसकी पूजा करना वह तीन साल के बाद फिर आएगा। उसके बाद रामटहल उसका कुछ ज्यादा ख्याल रखने लगा। तीन वर्ष के बाद जब वह छ वर्ष का हो गया तो रामटहल उसका ज्यादा ध्यान रखने लगे जैसे बछड़े को खुद नहलाना, उसकी जगह साफ करना, उसे दवा देना, पशु चिकित्सक को बुलाकर टीके लगवाना आदि। एक रात जब राम टहल बछड़े को खिला रहा था तब वह साधू दिखा। रामटहल उसे देखने गया और बछड़ा गिर गया तथा मर गया। रामटहल रोने लगा और साधू को न जाने दिया। रामटहल ने बछड़े की अंतिम क्रिया की और साधू को उसके मरने का कारण पूँछा। साधू ने बताया कि तुम्हारा कोई सगा तुमसे छल करके साधु-संतों को खलाता होगा। देवता उसे स्वर्ग में स्थान देना चाहते होगें। लेकिन उस विश्वासघात के कारण वह धरती पर प्रायश्चित करने के लिए उसने जितना धन लिया था उससे ज्यादा देने आया था। छ वर्ष में प्रायश्चित खत्म होने पर वह मर गया। अब रामटहल बिल्कुल बदल गया था। वह एक सज्जन इन्सान बन गया।

11.प्रतिशोध (खूनी) (दोनों कहानी एक है सिर्फ शीर्षक अलग-अलग हैं।)

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'इन्तकाम' शीर्षक से अक्टूबर 1923 को जमाना में हुआ था। तथा प्रेमचालीसी में संकलित है। हिन्दी में 'प्रतिशोध' शीर्षक से गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-2 में संकलित है।

खूनी

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में 25 नवम्बर 1928 को 'भारत' में हुआ था तथा प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य, खण्ड-1 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-4 में संकलित है।

प्रस्तुत कहानी के मि. व्यास जो लखनऊ के बहुत बड़े वकील थे पर एक केस की पैरवी करने लाहौर गये थे। दो महीने के बाद लौटने वाले थे और जिस दिन लौटने वाले थे उसी दिन उनका खून हो गया। मिस्टर व्यास की पत्नी अपनी बेटी तिलोतिमा के साथ उस जगह पर गई जहाँ उनका खून हुआ था और वहाँ काली विद्या के द्वारा अपनी बेटी में अपने पति की आत्मा लाकर खूनी का नाम ईश्वर दत्त तथा पता शाहजहाँपुर पूँछ लिया। अब माया ट्रेन में बैठकर शाहजहाँपुर के लिए निकली पर ट्रेन में दो अंग्रेज हवसी माया पर अपनी हवस पूरी करना चाहते थे। तभी एक युवक ने माया को अंग्रेज से बचाया। वह आदमी और कोई नहीं बल्कि ईश्वरदत्त ही था। माया यह जानते हुए भी कुछ न कर पाई क्योंकि उसने माया की जान बचाई थी। यहाँ तक नये शहर में उसने माया के लिए मकान आदि की व्यवस्था करवाई। वह बड़ा विनयी भी था। एक दिन माया ने अपने प्रतिशोध को पूरा करने का निश्चय किया और ईश्वरदत्त को रात में अपने घर खाने पर बुलाया। उसे उस दिन अपने घर पर रखा, देर रात माया जब उसे मारने गई तो वह जग गया और उसे पता चला कि माया मिस्टर व्यास की पत्नी है। ईश्वर दत्त ने माया को उसके पति की सच्चाई बताई कि वह किस तरह बेगुनाहों को फाँसी पर चढ़वाता था, लोगों को मरवाता था, तथा उसने कितनी औरतों को विधवा भी बना दिया है। यह सुनकर माया ने ईश्वरदत्त को माफ किया और उसका प्रतिशोध शांत हो गया।

12. बांसुरी

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जनवरी 1920 को 'कहकशां' में हुआ था। हिन्दी में प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ, भाग-2 में संकलित है।

यह उर्दू की मूल कहानी 'तिरिया चरितर' (जमाना, जनवरी, 1913) का एक अवतरण मात्र है, जिसे प्रेमचंद ने एक स्वतंत्र कहानी के रूप में प्रकाशित करा दिया। अमृतराय ने गुप्तधन-1 में 'त्रिया-चरित्र' प्रस्तुत करते हुए इस अंश को बदलकर इस प्रकार प्रस्तुत किया है।

"रात ज्यादा आ गई थी। अष्टमी का चांद सोने जा रहा था। दोपहर के कमल की तरह साफ आसमान में सितारे खिले हुए थे। किसी खेत के रखवाले को बांसुरी की आवाज, जिसे दूरी ने तासीर, सन्नाटे ने सुरीलेपन और अंधेरे ने आत्मिकता का आकर्षण दे दिया था, कानों में आ रही थी कि जैसे कोई पवित्र आत्मा नदी के किनारे बैठी हुई पानी की लहरों से या दूसरे किनारे के खामोश और अपनी तरफ खींचने वाले पेड़ों से अपनी जिन्दगी की गम की कहानी सुना रही है।'' 219

13. विजय

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में 'फतह' नाम से अप्रैल 1918 को 'जमाना' में हुआ था। तथा प्रेमबत्तीसी में संकलित है। हिन्दी में 'विजय' शीर्षक से गुप्तधन-1 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ, भाग-2 में संकलित है।

इस कहानी के शाहजादा मसरूर और मलका मखमूर दोनों की शादी हुई थी। वे दोनों संतोष तथा सादगी से अपना जीवन व्यतीत करते थे। लेकिन उनके दरबार में बुलखत खॉं था जिसने अपने जादू से एक हवाई जहाज बनाया था। वह मखमूर को हवाई जहाज में बैठाकर देश-दुनिया की सैर कराता था तथा मखमूर के दिमाग में एशो-आराम का ख्याल बढ़ाने लगा। मखमूर मसरूर से दूर होने लगी। मसरूर ने राजपाट छोड़ दिया और दूर एक पहाड़ी में रहने लगा। मखरूर तथा बुलहवस खॉ ने अपना विस्तार किया और धन-दौलत बढ़ाया लेकिन उसी समय अन्दर ही अन्दर राजाओं ने और सूबेदारों ने मलका पर हमला बोल दिया। कर्णसिंह-संगीत, गीत, वीणा-वादन, लोचनदास-नृत्य, सुन्दर दृश्य, मिर्जा शमीम-सुगंध, अत्तार, स्प्रे, राजसिंह-मिष्ठान्न, शराब आदि हथियारों से मलका के सैनिकों को ही नहीं मलका को भी इतनी हद तक मन्त्र मुग्ध किया कि वह अपने राज्य का काफी हिस्सा देकर सुख पाना चाहती थी। इसमें मखमूर ने अपने राज्य का काफी हिस्सा गॅवा दिया। उसी समय बुलहवस खॉ ने भी मलिका को अपने जादुई केदखाने में बंद किया जहॉ पर मलका अपनी मर्जी के हिसाब से कुछ नही कर सकती थी। जहॉ तक दूर-दूर तक रेत थी अब उसको अपने पति की याद आने लगी और वह रोने लगी। तभी एक व्यक्ति आया जो संतोषसिंह था जिसने मलिका को बताया कि अगर वह अपने पति से मिलना चाहती है और यहॉ से निकलना चाहती है तो सारी मोह माया छोड़नी पड़ेगी। मलिका ने जैसे ही सब कुछ त्याग दिया वैसे ही बूलहवस मर गया। फिर दो दिन तक भूखे-प्यासे चलकर वह एक पहाड़ पर पहुॅचा। वहॉ मखमूर को पता चला कि संतोष सिंह ही उसका पति है।

14.नबी का नीति-निर्वाह (न्याय)

(इस दोनों कहानी का कथानक एक ही है। केवल शीर्षक एक है।)

नबी का नीति-निर्वाह

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में मार्च 1924 को सरस्वती में हुआ था। गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-3 में इसका संकलन किया गया।

न्याय

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में मार्च 1929 को 'माधुरी' में हुआ था। तथा मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी के हजरत मुहम्मद ने मुस्लिम धर्म को अंगीकार किया। उसकी बेटी जैनब इस्लाम धर्म अंगीकार करना चाहती है। पर अपने पति अबुलआस जो वैसे तो एक नेक इन्सान थे पर भगवान पर श्रद्धा न रखकर व्यापार पर श्रद्धा रखता था। उसके डर से इस्लाम धर्म न स्वीकार कर पाई। अरब देश में मुस्लिम धर्म के लोगों पर कुरेशियों ने हाथ कड़ा किया इसलिए मुस्लिम अब मक्का से मदीना जाने को सोचने लगे। उसी समय जैनब ने मुस्लिम धर्म स्वीकार किया पर अबुलआस ने उसे उस धर्म में स्वीकार न किया। जिसकी वजह से जैनब को अपने धर्म, समाज और पिता से अलग होना पड़ा। हजरत मुहम्मद अब मदीना गये। अब मुस्लिम ताकतवर बने। उन्होंने न केवल कुरेश्यिों पर हमला किया बल्कि उन्हें बंदी भी बनाया और जब तक उनके घरों से मुक्ति का धन न आता तब तक उसे गुलाम रखते।

इसमें एक बार अबुलआस भी पकड़े गये। अबुलआस ने जैनब को फदिया के रूप में दिया। पति-पत्नी अलग हो गये। अब अबुलआस और धन कमाना चाहता था इसलिए उसने माल की हेराफेरी बढ़ा दी जिसमें एक बार वह माल की हेरा-फेरी के साथ मुस्लिमों के हाथों पकड़ा गया। पंचायत बुलाई गई। पंच में हजरत मुहम्मद थे। अबुलआस का मुक्तिधन कोई न ला पाया इसलिए उसका सामान जप्त कर लिया गया। हजरत मुहम्मद उनकी नेकी जानते थे पर न्याय तो न्याय है। वे अबुलआस को गुलाम बनाकर बाजार में बेचने वाले थे। ये सुनकर जैनब डर गई और पंचायत में आकर पति के साथ बिकने के लिए तैयार हो गई। पर हजरत ने न्याय के बारे में बताया। सब मन्त्रमुग्ध हो गये। सबने अबुलआस को छोड़ दिया। यह देखकर अबुलआस दंग रह गया और सारा सामान बेचकर हजरत मुहम्मद के दरबार में चला गया। यह देखकर जैनब की मुराद पूरी हुई।

15.शादी की वजह

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में मार्च 1927 को 'जमाना' में हुआ था। हिन्दी में गुप्तधन-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-3 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में लेखक ने लोग शादी क्यों करते हैं ? इसका उत्तर लोगों के मुँह से दिलवाना चाहते हैं, जिस प्रकार जितने मुँह उतनी बातें उसी प्रकार शादी के बारे में अलग-अलग लोगों के अलग विचार पाए जाते है। इन सभी कारणों को पढ़ने से यह निष्कर्ष निकलता है कि इन्सान शादी को किसी लालच, मजबूरी के कारण न करके अपनी हर तरह की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए करता है। जिसमें अपनी स्वयं की आवश्यकता, बच्चें की देखभाल करना, माँ-बाप को संभालना, आदि के लिए लोग शादी करता है। पुरुष यह चाहता कि पत्नी उसकी हर प्रकार से सेवा करे और उसकी पत्नी बुढ़ापे में उसके लिए सहारा बने। इस कहानी से हमे यह प्रतीत होता है कि पुरुष वर्ग अपनी खुशी से ज्यादा अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए शादी करता है। वह पत्नी को अपनी अर्धांगिंनी समझने के बजाय उसे एक नौकर समझता है जो उसका सारा काम करे और उसकी देखभाल करे।

16.आत्मसंगति

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अगस्त 1927 को 'माधुरी' में हुआ था। तथा मानसरोवर-5 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-3 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'नग्मा-ए-रूह' शीर्षक से 'खाके परवाना' में संकलित की गई।

इस कहानी में रानी मनोरमा ने गुरू दीक्षा ली। जिसकी वजह से वह उस दिन बहुत दान-पुण्य करके सो रही थी। अचानक रानी मनोरमा को एक मधुर संगीत सुनाई दिया। वे जगी और उस संगीत के पीछे दौड़ी। बीच में एक नदी आई और रानी ने माझी को नाव चलाने को कहा। माझी रानी से कुछ न कुछ माँगने लगा। रानी ने उसे अपना कीमती हार, महल, तथा उसकी सेवा करने का वादा किया। रानी को संगीत इतना विह्वल कर रहा था कि उन्हें लग रहा था वह संगीत उसका प्राण ले लेगा। अंत में रानी माँझी के पैर पड़ी। तब से उसे पता चला कि वह संगीत उसके अन्तर मन यानी आत्मा से आ रहा है।

17. लेखक

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1931 को 'हंस' में हुआ था। तथा कफन और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियाँ-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'परवीन' शीर्षक से दिसम्बर 1931 को चंदन में प्रकाशित हुआ था और यह कहानी 'अदीब की इज्जत' नाम से उर्दू में प्रकाशित हुई है।

इस कहानी के महाशय प्रवीण एक अच्छे हिन्दी लेखक एवं कवि दर्शाये गए हैं। आम तौर पर लेखकों की जो हालत होती है वही उनकी भी थी। वे फटे हाल तथा निर्धन थे। उनकी पत्नी सुमित्रा पति का दर्द खूब जानती थी। इसलिए वे खुद काम करके घर चलाती थी और पति को कुछ न कहती थी। एक बार शहर के सबसे बड़े रईस राजा साहब ने उन्हें अपने घर पार्टी पर बुलाया। सुमित्रा ने प्रवीण को जाने से मना किया पर प्रवीण अपने पुराने कपड़े पहनकर न केवल पार्टी में गये बल्कि रास्तें में दो चार लोगों को बताकर भी गये कि मैं रायसाहब की पार्टी में जा रहा हूँ। राजा साहब ने प्रवीण की मुलाकात कई बड़े लोगों से करवाई जैसे कि मिस्टर परांजपे, डॉक्टर चड्ढा, वैरिष्टर आदि से, लेकिन सभी प्रवीण को कटाक्ष भरे नेत्रों से कहते कि अच्छा तो आप कवि है। सब वहॉं से चले गये। वहॉं एक अंग्रेजी कवियों के कायल व्यक्ति ने प्रवीण से अंग्रेजी कविताओं का अनुवाद करने को कहा पर प्रवीण ने हिन्दी की गरिमा को बरकरार रखा। तभी पार्टी के चीफ गेस्ट हाईकोर्ट के जज आए। राजा साहब ने प्रवीण से कविता सुनाने को कहा पर राजासाहब से अपना इतना अपमान सुनकर प्रवीण राजा की बात न मानकर घर वापस आ गया। अपनी पत्नी को सारा सच बताया और कहा कि आज उन्हें अच्छा सबक मिला है।

18. डिमांस्ट्रेशन

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अप्रैल 1931 को 'प्रेमा' में हुआ था। तथा मानसरोवर-4 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में जनवरी 1932 को 'हुमायूँ' में प्रकाशित हुई तथा 'आखिरी तोहफा' में संकलित है।

इस कहानी के गुरूप्रसादजी गीत संगीत के बड़े कायल थे, पैसों की उन्हें कमी न थी इसलिए उन्होंने एक ड्रामा कंपनी खोली। बहुत सारे लोगो ने गुरूप्रसादजी को वादा किया था कि वे कंपनी का बड़ा हिस्सा खरीदेगें पर ऐसा कुछ न हुआ और कंपनी बनने से पहले ही बंद हो गई। इसी बीच गुरूप्रसादजी ने एक नाटक लिखा। अब ये ड्रामा किसी कंपनी को बेचना चाहते थे। इसलिए अपने चार दोस्त विनोद विहारी, रसिकलाल, अमर, और मस्तराम को मिलाकर उस ड्रामे को एक्ट में तबदील किया। एक कंपनी के यहॉं वे गये तथा उनके दोस्तों ने कंपनी के मालिक गुरूप्रसाद जी की काफी तारीफ की और फिर ड्रामा प्रस्तुत किया। सब लोग बहुत खुश हुए और कंपनी के मालिक ने दूसरे दिन खाने पर बुलाया। एक दोस्त को मालिक पर शंका हुई पर बाकी के कहने पर दूसरे दिन सब दावत पर गये। जहॉं सब ने भर पेट खाना खाया और कंपनी के सेठ ने इस तरह से सबको लिया कि उन्होंने ड्रामा मुफ्त में दे दिया। सब दोस्त रास्ते पर आए और अपनी मूर्खता पर हॅंसने लगे।

19. कानूनी कुमार

(आंशिक रूप से नवजागरण से संबंधित है आगे के अध्याय-4 में परिवार-नियोजन पर आधारित कहानियों के अन्तर्गत इसका विवरण दिया जा चुका है।)

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में अगस्त 1929 को 'माधुरी' में हुआ था तथा मानसरोवर-2 और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में संकलित है।

प्रस्तुत कहानी में प्रेमचंद ने मिस्टर कानूनी कुमार जो एम.एल. ए. है और देश की चिंता करते हुए नये-नये बिल बनाते रहते हैं और उनके माध्यम से भारत देश की कुछ कुरीतियों को बाहर निकालते है तथा उन कुरीतियों का विरोध करके उनको सुधारने का प्रयत्न भी करते हैं। इधर कानूनी कुमार अपने ऑफिस के बाहर वाले पार्क में कई प्रकार के लोगों को देखता है, जिनको देखकर वह देश के उद्धार का कोई न कोई बिल जरूर बनाता है। पहले कुछ नौयुवानों को सिगरेट पीते देख शोक व्यक्त करते हुए देश की चिंता में **तम्बाकू-बहिष्कार-बिल** पेश करने का तय करते है। उसके बाद कानूनी कुमार की नजर बुरखे वाली महिलाओं की तरफ जाती है। तभी उन्हे देश की कूपमंडूक सोच वाले व्यक्तियों पर तरस आता है और महिलाओं पर हो रहे अत्याचारों का विरोध करते हुए **परदा-हटाव-बिल** पेश करने के बारे में सोचते है और कागज पर नोट करते है। वहीं कानूनी कुमार एक भिक्षुक को भीख मॉंगते देखते हैं और वे झुंझला उठते हैं और सोचता है कि हमारे देश में एक करोड़ भिखारी हैं तथा टीकाधारी, कोपीनधारी और जटाधारी समुदाय के लोगों को जोड़कर दो करोड़ लोग ऐसे हैं जो हरामखोर है और मुफ्त का खाना खाते है और उड़ाते हैं। इसीलिए वे **भिखमंगा-बहिष्कार-बिल** पेश करने का सोचकर कागज पर नोट करते है। आगे वह चायवाले को देखकर यह आपत्ति जताता है कि हमारे देश के लोग चाय कम पीते है इसलिए उनका दिमाग नही चलता है और देश पीछे है, जबकि इग्लैण्ड में लोग ज्यादा चाय पीते है इसलिए वह देश आगे है। तभी वहॉं मिसेज बोस आती है जिनकी कविता 'आलोक' में छपी थी उसमें बहुत दर्द छिपा था।

कानूनी कुमार उनकी तारीफ करके उनकी कविता के दर्द का कारण पूॅंछते है। जिस पर मिसेज बोस अपने पति से नाखुश होने का कारण बताती है और उनसे अलग होना चाहती है। उसी समय मिसेज एयर आती है वे भी अपने पति के बर्ताव से नाखुश है। वे अपने पति से अलग होना चाहती है। कानूनी कुमार उन दोनों की बात सुनकर **तलाक-का-बिल** असेम्बली में पेश करने का निश्चय करते है। उसी समय मिस्टर आचार्य अपने कुत्ते को लेकर आते है। कानूनी कुमार उनका होटल का हालचाल पूंछते हैं। जिस पर मिस्टर आचार्य होटल में कम रेट पर भी ग्राहक के न आने

पर अपना रोना रोते है और कानूनी कुमार से मदद मांगते हैं। कानूनी कुमार उनसे वादा करते है कि वह **होटल-प्रचार-बिल** जरूर पास करवाएंगे। सहसा कानूनी कुमार एक गर्भवती महिला को देखते है जिसकी गोद में एक बच्चा हैऔर दो पीछे चल रहें हैं। उन्हें यह देखकर समाज की दयनीय स्थिति पर रोना आता है और **सन्तान-निग्रह-बिल** पेश करने का तय करते है। तभी कानूनी कुमार की पत्नी मिसेज मिन्नी आती है और पुरुषों के हो रहे अत्याचारों, स्त्रियों को घर में रहने देने के गुनाह, दूसरी स्त्रियों से गुलछर्रे उड़ाने, दिल्लगी करने के गुनाह, आधी कमाई पत्नी को न देने के गुनाह पर **दम्पति-सुख-शान्ति** बिल पेश करने को कहती है। जिसके तहत पुरुष अपनी पत्नी को आमदनी का आधा हिस्सा न देने के गुनाह पर पांच साल का कठिन कारावास और पांच महीने काल कोठरी की सजा देने का तय करती है। तथा पन्द्रह से पचास तक के पुरुष को घर से बाहर न निकलने की हिदायत देती है और पुरुषों के न मानने पर दस साल का कारावास और दस महीने की कालकोठरी की सजा मुकर्रर करने की बात करती है। जब कानूनी कुमार अपनी पत्नी की बात पर आपत्ति जताते हैं तब मिसेज उन्हें स्त्रियों के कष्टों और पराधीनता को त्यागने का समय आता हुआ दिखाती है और पुरुषों के अन्यायों का आइना दिखाकर चली जाती है। मिसेज के जान पर कानूनी कुमार अस्वस्थ चित्त से कमरे में टहलने लगते हैं।

20. पर्वत-यात्रा

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में अप्रैल 1929 को 'माधुरी' में हुआ था तथा कफन, गुप्तधन और प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियॉं-4 में संकलित है।

इस कहानी के मु. गुलबाज खॉं सुबह-सुबह काटन साहब से मिलने के लिए बगी में जा रहे थे। जिस पर उनकी पत्नी शीरी ने उन्हें पैदल जाने को कहा क्योंकि काटन साहब का घर पास में ही था। पर मु. गुलाबखॉं ने उसे इस त्रिया चरित्र से अनजान बताया। खॉं साहब ने अपने मित्रों को तथा दुनिया के सामने यही जाहिर किया कि काटन साहब उनके मित्र है। इस बार खॉं साहब काटन के घर गये तो काटन साहब ने खॉं को उनके साथ नैनीताल चलने और उन्हें किफायती घर रहने को दिलाने को कहा। खॉं साहब ने हॉं तो कह दी पर वे कभी नैनीताल नही गये थे इसलिए वे अपने दोस्त कुंवर शमशेर सिंह के यहॉं गये जो बड़े रईस थे और नैनीताल में उनकी एक कोठी थी। खॉं साहब ने कुंवर साहब से बताया कि मैं तो कई बार नैनीताल गया हुआ हूँ पर इस बार काटन साहब जबरदस्ती ले जा रहे है। कुंवर तथा उनके दोस्तो ने इतना झूठ तो पकड़ लिया। कि वे कभी नैनीताल नही गए पर उन लोगों को काटन साहब से दोस्ती करनी थी इसलिए कुँवर तथा उसके

दोस्तों ने रात को ही नैनीताल जाकर कुंवर की कोठी साफ कर देने का तय किया। खॉ साहब घर गये। कुँवर जाने की तैयारी कर रहे थे पर उनकी साली का मुंडन था इसलिए बीबी और साली ने जाने की अनुमति नही दी। कुँवर असमंजस में पड़ गये तभी काटन साहब आए और कुँवर ने बीमारी का नाटक किया। खॉ साहब को बुलाया गया। काटन साहब ने डाक्टर को भेजा। कुँवर घबराये पर खॉ को सारी सच्चाई का पता चल गया था इसलिए खॉ ने कहा कि मोटी रकम लेना पर सुई न लगाना और सबके सामने झूठ बोलना। खॉ के कहने के अनुसार सब कुछ हुआ। काटन साहब को खॉ ने कुँवर की बीमारी का बहाना बनाया और नैनीताल उनके साथ नही गया। इधर कुँवर खॉ की चतुराई का कायल हो गया और तीन दिन सभी दोस्तों के साथ खूब जलसे किए।

21. कवच

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में दिसम्बर 1929 को 'विशाल भारत' में हुआ था तथा गुप्तधन ,भाग-2 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ, भाग-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'हर्जजा' शीर्षक से प्रेमचालीसी' में संकलित है।

इस कहानी में प्रेमचन्द अपने आपको एक पात्र के रूप में दिखलाते हैं। एक बहुत बड़े रियासत की बात है। वहॉ के राजा साहब को एक दर्जन रानियॉ थीं। उन्होंने इस बार भी एक पंजाबी लड़की से शादी किया। राजा साहब उस लड़की के प्यार और उसकी सुन्दरता पर इतना मग्न हो गये कि उन्हें कुछ भी नहीं दिखता था। मैं इस राज्य का सच्चा सेवक था। इसलिए किसी भी प्रकार के षडयंत्रों में भाग न लेता था। इस कारण से राजा को मुझ पर खुब विश्वास हो गया था। एक बार राजासाहब ने मुझे शाम को अपने पास बुलवाया। मैं डर गया था, पर उनके पास गया। राजा काफी उदास थे। शराब पी रहे थे। उन्होंने कहा कि रानी भाग गई हैं और वे उसे खतम करना चाहते हैं, इसलिए उन्होने मुझे बुलाया है। जिससे में यह काम कर सकूॅ। यह सुनकर पहले तो मैं न डरा, पर बाद में जब निकला तो मुझे लगा कि में यह नहीं कर सकता। मैंने राजा साहब के पास वापस जाकर बताया कि मुझसे यह काम नहीं हो सकता। राजा साहब को इतना गुस्सा आया कि उन्होंने मुझे रातो-रात राज्य छोड़कर जाने को कहा और मैं रातों-रात राज्य छोड़कर चला गया।

22. दारोगा जी

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अगस्त 1928 को 'माधुरी' में हुआ था तथा मानसरोवर, भाग-4 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ, भाग-4 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में ''दारोगाजी की सरगूजश्त'' शीर्षक से 'प्रेमचालीसी' में संकलित है।

इस कहानी में भी प्रेमचंद एक पात्र के रूप में नजर आते हैं। एक बार मैं एक तांगे पर बैठा तो मेरे साथ दारोगाजी भी बैठे, वैसे तो मैं दारोगा जी से चिढ़ता था। मैंने यह बात उस दारोगा को बताई जिसका नाम वशीर था, तो उन्होंने मुझसे कहा कि वह रिश्वत नहीं लेता तो भी लोग उस पर टूट पड़ते हैं। तभी वहाॅ पर एक मौलवी आ गये। दारोगा ने उनसे सलाम किया तो उसने दारोगाजी को गालिया दीं और उन पर पत्थर मारे। मैं कुछ न समझ पाया और दारोगा जी से सच पूॅछने लगा तो उन्होंने मुझे बताया कि मेरा जब सदर में तबादला हुआ, तो वहाॅ मरा लैली से प्रेम हुआ। तीन साल तक हमारा प्रेम चला, तभी मेरा तबादला हुआ। मैंने उससे वादा किया कि उसे जल्दी ही अपने पास बुला लूॅगा। पर जब में वहाॅ गया तो मेरे पिताजी ने पहले ही मेरी शादी तय कर ली थी। एक साल बाद मुझे वहाॅ दुबारा जाना पड़ा। जब मैं उसके घर गया तो पहले तो उसने दरवाजा न खोला पर बाद में दरवाजा खोला। उसने बताया कि उसकी राह देखते-देखते उसने शादी कर ली। थोड़ी देर के बाद उसका पति आया। मैं डर गया और डर के मारे एक कोठरी में छिप गया पर उसके पति ने मुझे देख लिया। मैं जहाॅ छिपा था वहाॅं मिर्जा साहब/ मीरसाहब छिपे थे। मैंने बचने के लिए उन्हें अपना मालिक बना दिया और वहाॅं से भाग गया। मीर को देखकर में लैली के बार में सब कुछ जान गया। बाद में लैली के पति ने मीर की नाक काट डाली। मैं बाद में कभी भी वहाॅं आने के बाद भी लैली तथा मीर से मिलने न गया।

23. तिरसूल

जिसका प्रथम प्रकाशन एवं संकलन उर्दू में प्रेमचालीसी’ (संस्करण:1930) में हुआ था। हिन्दी में गुप्तधन, भाग-2 और प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाॅ, भाग-4 में संकलित किया गया।

यह एक फौजी की कहानी है। इस कहानी का श्रीनाथ सिंह एक फौजी है। वह एक बरसाती रात में पहरा दे रहा था तभी उसने एक परछाई देखी। फौजी उसूलों के हिसाब से तीन बार उसने पूॅछा- कौन ? पर जब जबाब न मिला तो उसने बन्दूक तान दी। तभी एक लड़की बाहर आई। वह कमांडिंग ऑफीसर की बेटी लुईसा थी। एक फौजी का यह फर्ज होता है कि रात में उसे कोई मिले तो वह उसे कमान्डर के पास ले जाए। लेकिन लुईसा ने श्रीनाथ से याचना की वह उसे जाने दे, क्योंकि अगर वह लुईसा को कमान्डर के पास ले जाता तो उसकी नौकरी चली जाती और लुईसा की बेइज्जत भी होती। श्रीनाथ ने उसे जाने दिया। कई साल बीत गये। युद्ध खत्म हो गया तब श्रीनाथ सिंह, कप्तान नाक्स और लेफ्टिनेन्ट डॉ. चंद्रसिंह तीनों बीयर पी रहे थे। उस समय श्रीनाथ ने वह किस्सा बताया पर लड़की का नाम न लिया। तभी कप्तान नान्स ने बताया कि वह लड़की लुइसा थी

ना ? श्रीनाथ यह सुनकर अचम्भित हो गया। कप्तान ने श्रीनाथ को बताया कि वह किरपिन है। जिसने श्रीनाथ को गाली दी और उसका दरजा कम हो गया। उस रात कप्तान नान्स ने लुइसा को देख लिया था। दूसरे दिन वह कमांडिग आफीसरों को सारी सच्चाई बताने गया पर लुइसा ने उसे रोका और श्रीनाथ का नाम न आए इसलिए मेरी शर्त पर वह मुझसे शादी करने के लिए तैयार हो गई। वह मेरे से अच्छी तरह से बात करती थी। फिर मैं युद्ध पर चला गया। जब मैं आया तो मैंने देखा कि लुइसा घुल गई थी मैंने उसे हर बन्धन से मुक्त कर दिया, तथा उससे इस हाल का कारण पूँछा। लुइसा ने बताया कि उसका प्रेमी मेरी बेवफाई के कारण फौज में भर्ती हुआ और युद्ध में मारा गया। एक महीने के बाद हम दोनों की शादी हुई पर शादी की सतही लुइसा ने जहर खा लिया और मुझसे कहा कि मैने अपना वादा पूरा किया। लुइसा ने अपने भाई श्रीनाथ को एक कागज देने को कहा जिसमें लुइसा ने लिखा था कि वह उसका यह एहसान वह कभी नहीं भूलेगी। यह कह कर लुइसा मर गई। कप्तान नान्स ने मुझे वह खत दिया। श्रीनाथ सिंह और चंद्रसिंह रो रहे थे। फिर श्रीनाथ सिंह ने कप्तान नान्स को सांत्वना दी तब तक उनका शरीर ठंडा हो गया था।

24. रसिक संपादक

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में मार्च 1933 को 'जागरण' में हुआ था तथा मानसरोवर, भाग-1 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-3 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी के पं. चोखेलाल शर्मा 'नवरस' पत्रिका के संपादक दिखाए गये हैं। पं. चोखेलाल केवल स्त्रियों के ही लेख छापते थे। इसलिए पुरुष समाज में उनकी बड़ी आलोचना होती पर स्त्रियाँ उनसे बड़ी खुश थी। वे कई बार आती और पं. चोखेलाल की सेवा करती जैसे उनके लिए खाना बनाना, कपड़े साफ करना, घर साफ करना, नास्ते बनाना आदि और पं. चोखेलाल भी उनकी बड़ी खातिरदारी करते। उनके पास एक बार कामाक्षी नाम की एक औरत का पत्र आया। वह अपनी कामसूत्र से पूर्ण कविता छपवाना चाहती थी। उसकी वह कविता हर जगह से ठुकराई गई थी। बाद में उसने पं. चोखेलाल को भेजी। वह कविता पढ़कर पं. चोखेलाल ने उसके रूप की कामना करने लगे और काव्य की स्वीकृति पत्र लिखा। यह सूचना मिलते ही कामाक्षी पं. चोखेलाल के पास आने की सूचना दी। पं. चोखेलाल ने सारा ऑफिस सजाया पर जब उन्होंने कामाक्षी को देखा तो सिर पीटने लगे। कामाक्षी काली-कलूटी तथा मोटी थी और वहीं रहना चाहती थी। पर पं. चोखेलाल ने बड़ी मुश्किल से कामाक्षी से पीछा छुड़ाया।

25. कश्मीरी सेब

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में अक्टूबर 1936 को 'हंस' में हुआ था तथा कफन और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-5 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी में प्रेमचंद अपनी आप बीती कहना चाहते हैं। मैंने सुना है कि सेब में विटामिन बहुत होता है। पहले टमाटर जो कोई नहीं खाते थे, गाजर जो गरीबों के लिए थे वे अब अमीरों के लिए बन गये हैं। डॉ. साहब ने कहा था कि एक सेब खाने से बीमारी नहीं होती है। मैंने चार आने के सफरजन खरीदे लेकिन उसे मैने खुद न चुना दुकानदार को उसे एक रूमाल में रखने को कहा। रात को जब में घर गया तो सोचा कि सुबह खाऊँगा पर सुबह देखा तो उसमें से तीन तो खराब निकले, चौथा भी आधा खराब था। ये मेरी लापरवाही का नतीजा था, वरना वह मुझे अच्छे सेब देता। एक बार एक खोमचे वाले से एक पैसे की रेवड़ी ली तो में अट्ठनी दे आया लेकिन जब मुझे पता चला तो में उसके पास गया और पैसे वापस ले आया। कहना सिर्फ इतना ही है कि पाठक इससे अपने आप चेतें और बाजार जाते समय खूब ध्यान दें।

26. डामुल का कैदी

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अक्टूबर-नवम्बर 1932 को 'हंस' में हुआ था तथा मानसरोवर, भाग-2 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में नवम्बर 1935 को साहकार में प्रकाशित हुई, तथा जादे राह में संकलित हुई।

प्रस्तुत कहानी के सेठ खूबचन्दजी एक मील के मालिक थे। उन्होंने एक बड़ा कृष्ण मन्दिर बनवाया था। जहाँ वे नित्य पूजा-पाठ किया करते थे। आज उन्हें सभी अफसरों को डालियाँ देनी थी इस लिए सामान तैयार कर रहे थे। पुजारी ने जब दो बार आरती के लिए बुलाया तो वे झुंझला उठे और आरती करने न गये। जब उनके मित्र केशवराम जी उन्हें लीला से मिलने महफिल में ले जाने आए तो वे सारा काम छोड़कर चले गये। सेठजी की मील में हड़ताल चल रही थी। क्योंकि उनकी मील में स्वदेशी कपड़े बन रहे थे और स्वदेशी कपड़ों का दाम कम होने पर भी सेठजी मजदूरों की मजदूरी कम कर रहे थे। इसलिए मजदूर हड़ताल पर उतरे थे। एक रोज मजदूरों के नेता गोपीनाथ मैनेजर से मिलकर यह प्रस्ताव हटाने गया तो अपना सा मुँह लेकर वापस आ गया। उसी समय सेठ खूबपचन्द गाड़ी से आ रहे थे। उन्हें देखकर कुछ भाग गये और कुछ छिप गये। सिर्फ गोपीनाथ और उनके कुछ मित्रों ने उन्हें अन्दर नही जाने दिया। सेठ जी ने गुस्से में आकर गोली चलाई, जो गोपीनाथ को लगी और वह घायल हो गया। यह देखकर सब इकट्ठा हो गये। सेठ खूबचंद डर कर रूई के ढेर पर चढ़ गये और बन्दूक की गोली से पाँच सौ मजदूरों को डराने लगा। एक मजदूर ने

रूई में आग लगाने की सलाह दी तभी गोपीनाथ आया और सेठजी को सही सलामत गाड़ी तक ले आया जैसे ही गाड़ी में सेठ बैठे वैसे ही गोपीनाथ गिर गया। सेठजी अपने घर जाकर अपनी पत्नी प्रमिला जो धर्मभीरू थी उसे सब सच्चाई बता दी। तभी एक जुलूस निकलता हुआ दिखाई दिया जिस पर गोपीनाथ की लाश थी। सेठ खूबचन्द जी ने अपना गुनाह कबूल किया और उन्हें 14 साल की सजा हुई। प्रेमिला का सब कुछ छिन गया और सातवे महीने उसके यहाँ पुत्र हुआ जिसका नाम कृष्णचन्द रखा। प्रमिला सारे कष्ट सहती थी पर कृष्णचंद को पढ़ाती। जब कृष्णचंद पंद्रह साल का हो गया तो वह उसी मील में काम करने लगा जिसके मालिक उनके पिता थे। इस पर डॉ. जगतनारायण हैकरवाल कहते हैं कि--" कहानी का प्रारम्भ तथा प्रारम्भिक अवस्था में उसका विकास देश के आर्थिक जीवन की उन दशाओं पर आधारित है जहॉ मजदूरों ने निश्चय कर लिया है कि वे गोपीनाथ के नेतृत्व मे मिल मालिक से लड़कर जीत जाएंगे। किन्तु जैसे ही कहानी आगे बढ़ती है हम देखते है कि चेहरों की समानता और आत्मा के शरीर परिवर्तन की स्थूल चर्चा में उसका ह्रास हो जाता है। इस प्रकार वह ऐसे बिन्दु पर पहुँच जाती है जहॉ उसका सम्पूर्ण संकलन नष्ट हो जाता है और कहानी का मुख्य विषय अस्पष्ट भावुकता के आवरण से ढक जाता है। इसकी शक्ति भी नष्ट हो जाती है, क्योंकि इसमें इतने लम्बे समय का चित्रण हुआ है जिसे लेखक कहानी के विकास में पचा नहीं सका।''220

कृष्णचन्द को मिल में गोपीनाथ की पत्नी, वृद्ध माता और बेटी से मिला। कृष्णचंद की सूरत बिल्कुल गोपीनाथ की तरह लगती थी। एक बार कृष्णचंद, गोपी की पत्नी जो बीमार थी उसकी सेवा करने गया। कृष्णचंद की मॉ प्रेमिला जब वहॉ गई तो वह गोपीनाथ की तस्वीर देखकर अचम्भित हो गई क्योंकि कृष्णचंद बिल्कुल जैसा दिखता था। प्रेमिला उसे घर ले गई। प्रेमिला को पता चल गया कि कृष्णचंद गोपीनाथ का अवतार है। कृष्णचंद के पिता सेठ खूपचंदजी का कारावास खतम हुआ और वे घर लौटे कृष्णचंद को देखकर सेठजी को पुराने दिन याद आ गये। एक बार वहीं मिल में फिर से हड़ताल पड़ी। इस बार मजदूरों का नेता कृष्णचंद बना। जब कृष्णचंद मैनेजर से बात करने गया तो मैनेजर ने उसकी बात न मानी और गोली चलाई। जिसमें कृष्णचंद की मौत हुई। तभी सेठ खूबचंद जी आए और उन्हें देखकर मैनेजर ने उनसे माफी मॉगी तथा उनके जुलूस में शामिल हो गया पुत्र के वियोग में उसी रात मॉ भी मर गई। अब सेठ खूपचंद ने चंदे से एक मंदिर बनाया और वहीं नित्य पूजा पाठ करते। इसी पर अपना विचार मन्तव्य व्यक्त करते हुए डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी कहते हैं कि--" इस कहानी में लोक-विश्वास को पूरी तरह स्थापित करने के लिए घटनाओं को उसी के

अनुकूल मोड़ लिया गया है। कहानी का घटना-व्यापार गॉंव की चौपाल पर सुनी किसी लोकवार्ता की याद दिलाता है। यहॉं प्रेमचंद ने कहानी का कथानक जन-सामान्य की रुचि और विश्वास को ध्यान में रखकर गढ़ा है, आधुनिक शिक्षितों, आलोचकों, बुद्धिजीवियों को ध्यान में रखकर नहीं। जो एक समूह के लिए स्वाभाविक हो, जरूरी नही दूसरे के लिए भी स्वाभाविक हो। सेठ पुत्र और मजूदर दोनों को पूर्ण रूप से एक कर दिया गया है। हृदय-परिवर्तन है, किन्तु वह आकस्मिक नहीं, उसका आधार है।''221

27. कुत्सा

जिसका प्रकाशन केवल हिन्दी में जुलाई 1932 को 'जागरण' में हुआ था तथा मानसरोवर, भाग-2 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में इसका संकलन किया गया।

यह कहानी भी प्रेमचंद ने आप बीती के रूप में लिखी है। एक दिन में दो-तीन मित्रों के साथ बैठकर राष्ट्रीय संस्था के व्यक्तियों की आलोचना कर रहा था। जहॉं पर पद्मादेवी, उर्मिलादेवी, श्यामादेवी, भगवती सब देवियां महाशय 'क' तथा 'ग' को बुरा मानते थे पर मैनें 'ग' का समर्थन किया क्योंकि उनका इतना प्रभाव था कि वे अगर कहीं खड़े हो जाएं तो हजारों रूपये का चन्दा इकट्ठा कर ले। इसीलिए मैंने भगवती की लड़की को जिसने 'ग' को शराबी बताया उसे मैने झूठ बोलकर भी बताया कि वह इन्सान सही है, क्योंकि भले ही वह कुछ रूपये खाता हो पर वह इतना काम करता है कि जो आम आदमी नहीं कर पाता। आज झूठ बोलकर भी मुझे खुशी मिली है।

28. पं. मोटेराम की डायरी

जिसका प्रथम प्रकाशन केवल हिन्दी में जुलाई 1934 को 'जागरण' में हुआ था तथा 'कफन' और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में इसका संकलन किया गया।

इस कहानी के पंडित मोटेराम को डायरी लिखने का शौक चढ़ा। पहले जब मित्र से उन्हें डायरी मिली तो उन्होंने उसमें अपने हिसाब-किताब लिखा पर जब, अब उन्होंने अपनी डायरी पाई तो वे अब उसमें अपना अनुभव लिखा करते थे। पर पंडिताइन जो अनपढ़ थी, वे सोचती थी कि वे किसी को प्रेमपत्र लिखतें हैं। एक दिन ऐसी नौबत आई कि पंडिताइन को पं. मोटराम शास्त्री ने डायरी दी और कहा कि पढ़वा ले। पं. मोटेराम को बोम्बे से एक सेठजी का न्योता आया। वे बड़े सम्पन्न थे। पं. मोटेराम शास्त्री को मालूम था कि वहॉं बहुत कुछ मिलेगा। पंडित रेल टिकिट लेकर बाम्बे जाने निकले पर उन्हें पता नहीं था कि बाम्बे दूर है। पं. मोटेराम जी सेठजी को डॉंटने लगे। वहॉं जाकर पंडितजी को पता चला कि सेठजी कोई अनुष्ठान करवाना चाहते थे, क्योंकि सेठजी ने काफी पर सट्टा

खेला था और वे रूपये बचाना चाहते थे। पंडितजी ने कहा कि वे 250 रूपये में अनुष्ठान करवा देगें, तो सेठजी निराश हुए क्योंकि वे 12-13 हजार का अनुष्ठान करवाना चाहते है। इसलिए सेठजी ने पंडित घोंघानाथ को बुलाने को सोचा। पंडित जी को अपनी बुद्धि पर रोना आया। पंडित जी ने कहा कि मैं अनुष्ठान करवा लूँगा, लेकिन पंडितजी के दिमाग में कुछ और चलने लगा। पंडित जी जाने से पहले थोड़ा खर्चा करवाने को सोचा इसलिए उन्होंने खाने के सामान की एक लिस्ट महराज को दी और अपने हाथों बढ़िया खाना बनाया। लेकिन दूसरे दिन पेट में गड़बड़ हो गई , तब सेठ ने डॉक्टर का बुलवाया तो डॉक्टर ने टी.बी. होने का प्रमाण दिया। सेठजी ब्राह्मण हत्या का पाप चढ़ाना नहीं चाहते थे इसलिए पंडितजी को एक हजार रूपये देकर उन्हें रवाना किया, पंडितजी घर पहुँचे तो ठीक हो गये थे क्योंकि उनको कोई तकलीफ न थी केवल ज्यादा खाना खाने की वजह से तकलीफ हो गई थी। कुछ दिन बाद एक आदमी आया जो अपने माता-पिता के लिए जो बड़े चुस्त थे उनके लिए खाना पकाने के लिए बुलाने आया था पर पंडितजी ने जब ये कहा कि वे सिर्फ बताएंगें और उसकी पत्नी खाना बनाएगी तो उसने सोचकर जबाब देने को कहा।

29. मुफ्त का यश

कहानी का प्रथम प्रकाशन हिन्दी में अगस्त 1934 को 'हंस' में हुआ था तथा मानसरोवर, भाग-2 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'मुफ्त करम दास्तान शीर्षक से 'वारदात' में संकलित है।

यह कहानी प्रेमचंद की आप बीती के रूप में लिखी गई है। मैं एक उपन्यासकार हूॅं। मझे अगर कोई बड़े लोग बुलाए या कोई कहे कि बड़े लोगों की खुशामत करो तो वे मुझसे नहीं होता क्योंकि में साम्यवादी हूॅं। तभी एक दिन हाकिम जिला साहब का पैगाम आया कि वह मुझसे मिलने चाहते हैं पर मैंने सोचा कि अगर वे मिलना चाहते हैं तो वे खुद भी आ सकते हैं। फिर मैंने सोचा कि अगर वे मेरे घर आतें है तो में उनकी खातिरदारी कैसे करूॅंगा। मैंने दोस्तो की सलाह ली। सबने मुझे जाने से मना किया उसी दौरान मेरा एक विद्यार्थी आया जिसका नाम बलदेव था, जिसको खॉं साहब कितनी मेहनत एवं मार से भी न पढ़ा पाये उसे मैंने बड़े प्यार से पढ़ाया तो वह खूब पढ़ा। आज वह अपने बेटे को पुलिस के चुंगल से बचने की फरियाद लेकर आया। बलदेव ने मुझे बताया कि पुलिस ने उसके बेगुनाह बेटे को गिरफ्तार किया है। मैंने सोचा कि में हाकिम से कहकर छुड़वा लूॅंगा। मैं भूल गया कि कुछ दिन पहले बलदेव अपने बेटे को लेकर मेरे पास आया था और मेरे पैर

छूने लगा था। उसे लगा कि वह मेरी सिफारिश से छूट गया है पर मैंने कोई बात नहीं की थी मुझे मुफ्त में ही यश मिल गया था।

30 रोशनी

जिसका प्रथम प्रकाशन एवं संकलन उर्दू में 'वारदात' (पांडुलिपि तैयार : मार्च 1935, प्रथम संस्करण) हुआ था। हिन्दी में सोलह अप्राप्य कहानियॉं, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य-1 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में इसका संकलन किया गया।

यह कहानी भी प्रेमचंद आपबीती के रूप में लिखी है। लेखक कहते हैं कि आई. एस. की परीक्षा पास करने के बाद मुझे पहाड़ी इलाके में रखा गया। मुझे वैसे तो सैर करने का बहुत शौक था। वहॉं का मौसम भी अच्छा था। एक बार मैं अपने घोड़े पर बैठकर गजनपुर जाने के लिए निकला तो रास्ते में तूफान आ गया। मुझे लगा कि मैं अब नहीं पहुॅंच पाऊॅंगा। तभी एक औरत मिली। मैंने उससे गजनपुर का रास्ता पूॅंछा तो उसने मुझे सीधा रास्ता बताया, वह स्त्री घर जा रही थी वह अकेले थी। तभी अचानक तूफान आया, जिसमें वह औरत कहॉं गई पता न चला। मैं भी आगे चला गया, जहॉं वह औरत फिर से मिली। वह अपने छोटे बच्चों के साथ थी वह मुझसे बोली कि अगर उसके पति होते तो उसे गजनपुर छोड़ आते।मैं उसे देवी मानने लगा। आगे बढ़ा तो देखा कि मेरे घोड़े के आवाज से डरकर एक अंधा वृद्ध नदी में गिर जाता है। मैं उसे बचाता हूॅं पर उसी समय तूफान बढ़ जाता है। मेरा घोड़ा समाने मंदिर के पास रुक जाता है। मेंने उस अन्धे वृद्ध को बड़ी मेहनत से निकालकर मंदिर पर ले गया। वृद्ध को काफी लगा था और उस समय मेरे पास दवाई का बाक्स था। मैंने उसके जख्म पर मलहम लगाया। तभी दो व्यक्ति वृद्ध को ढूॅंढ़ने आए। लोग मुझे देवता मानने लगे। पर मैं ये मान गया कि वह औरत ही देवी है जिसने मुझे सही राह दिखाई।

31. होली की छुट्टी

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में हुआ तथा 'जादे राह' में संकलन है। (प्रथम संस्करण-1936) हिन्दी में गुप्तधन-2 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में इसका संकलन किया गया।

यह कहानी भी प्रेमचंद ने आप बीती लिखी है। मैं अपने गॉंव से 15 मील दूर एक दूसरे गॉंव में मास्टर था। जहॉं के हेडमास्टर किसी को भी एक दिन की छुट्टी न देता था। मैंने कई बार तय किया मैं होली की छुट्टी में घर जाऊॅंगा। मैंने हेडमास्टर से इस बारे में बात की पर उन्होंने आखिरी परीक्षा खत्म हाने के बाद जाने को कहा पर में न माना। स्कूल खत्म होने के बाद मैं बिना हेडमास्टर से मिले ही अपना सामान तैयार करके स्टेशन की तरफ रवाना हुआ। स्टेशन पहुॅंचकर

पता चला कि गाड़ी रवाना हो गई और अगली गाड़ी ग्यारह बजे की है। मैंने पंद्रह कोस चलना मुनासिफ समझा। नदी पार की तब तक अन्धेरा हो गया था। अन्धेरे में मैंने तीन कोस भूखे प्यासे चला। खाना था पर कोई दुकान नहीं खुली थी और न ही कोई आदमी दिखाई दे रहा था। तभी एक अंग्रेज फौजी जो रिटायर्ड हो गया था और गॉव में आकर अब लोगों की और उनके खेतों की रक्षा करता है। उससे पता चला मैं गलत रास्ते पर जा रहा हूॅ। उसने मुझे वापस जाने का रास्ता बताया। में वहीं नदी के पास आया। नदी पार की और स्टेशन पहुॅचा और ग्यारह बजे की गाड़ी में घर जाने को निकला। रात को एक बजे घर पहुॅचा तब खाना खाया।

32. क्रिकेट मेच

जिसका प्रथम प्रकाशन उर्दू में जुलाई 1937 को 'जमाना' में हुआ था। हिन्दी में गुप्तधन-2 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉं, भाग-5 में इसका संकलन किया गया।

यह कहानी क्रिकेट पर आधारित है। इस कहानी में मि. जफर जो एक क्रिकेटर हैं वह अपने साथ हुए अनुभव को दर्शाते हैं। अगर मैच में कोई खिलाड़ी सही हो पर उसका नेतृत्व सही हाथों मे न आए तो मेच अक्सर हार जाता है। आज भी ऐसा ही हुआ। हमारे खिलाड़ी बड़े अच्छे थे वे आस्ट्रेलिया को आराम से हरा सकते थे पर हमारे कैप्टन की गल्ती से हम मैच हार गये। मैं मैच के बाद घर पहुॅचा तभी अचानक मिस हेलन नाम की एक युवती आई। वह मेरी तारीफ करने लगी। मिस हेलन मुकर्जी इग्लैण्ड के डॉ. एन. मुकर्जी की बेटी थी और वह भी एक डॉक्टर थी। मिस हेलेन के पिता ने उनके नाम पर काफी रूपये रखे थे। वह काफी रमणीय थी। मिस हेलेन इन्डियन टीम की गल्तियों को जानती थी। इसलिए वह एक नई टीम बनाना चाहती थी। मिस हेलेन मेरी हर जरूरतों का ख्याल रखती थीं। मेरी हर फरमाइश पूरी करती थी तथा मेरे नखरे भी सहती थी। हमने अपने देश से कई प्लेयर चुने-जैसे वृजेन्द्र, सादिक,महेश जाफर, महेश, अर्जुनसिंह, अलीगढ़ से दो, लाहौर से तीन, अजमेर से एक, मिस हेलेन सबके साथ एक रंगीले स्वरूप में पेश आती हैं। किसी को किसी और की तरफ देखने की हिम्मत न होती थी अगर कोई किसी और की तरफ देखता तो वे उनकी ऑखे निकाल लेती। मिस हेलेन हमारी सारी जायज और नाजायज जरूरतों को पूरी करती। हमारी टीम बन गई, पहले हमारी टीम का हिन्दू टीम के साथ मुकाबला हुआ बाद में आस्ट्रेलिया के साथ। हम दोनो मेच जीत गए। सब खुश थे पर मुझे लगता था कि हम सब मिस हेलेन के नमूने हैं। उसी रात मिस हेलेन ने एक पार्टी दी। हम सब वहॉ गए, वहॉ पर मिस हेलेन एक रमणी की भॉंति साड़ी पहनकर आई थी। मिस हेलेन ने बताया कि हम लोगों को अब खुद मेहनत करके भारत को आगे

पहुँचाना है, ना कि उसके प्यार में फँसकर आगे बढ़ना है। मिस हेलेन ने कहा कि हमको खुद इग्लैंड जाकर अपने बलबूते पर मेच जीतनी है और भारत का नाम रोशन करना है। मिस हेलेन यह कहकर चली गई। हम सबने उन्हें बुलाया पर वह न रुकी। हमें हम पर शर्म आने लगी।

33. खुदाई फौजदार

जिसका प्रथम प्रकाशन हिन्दी में नवम्बर 1934 को चांद में हुआ था तथा मानसरोवर-2 और प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग-5 में इसका संकलन किया गया। उर्दू में 'इन्साफ की पुलिस' शीर्षक से उर्दू कहानी संग्रह 'वारदात' और 'देहात के अफसाने' में संकलित की गई।

इस कहानी के सेठ नानकचंद को लगातार डाकुओं की चिट्ठियाँ आ रही थी। आज तीसरी चिट्ठी आई और उसमें 25 हजार की माँग थी। पर नानकचंद न डरा उसने पुलिस अफसर को बुलाना चाहा। तभी एक पुलिस का सिपाही दिखाई दिया। जो सेठजी की रक्षा के लिए आए थे। ऐसा उन सिपाहियों ने बोला। सेठजी ने सोचा कि मेंने तो अभी तक पुलिस को खबर भी नही दी तो पुलिस को कैसे पता चल गया था कि हमको धमकी भरा खत आया है। सिपाहियों ने बताया कि हमें पहले से ही पता था कि आपके पास धमकी भरा खत आ रहा है इसलिए हम आपकी रक्षा करने के लिए आए हैं। पुलिस के सिपाहियों ने उन्हें सलाह दिया कि वे अपना कीमती सामान पुलिस लोकर में रख दें। सेठजी ने अपना सारा सामान पुलिस की गाड़ी में लादकर सिपाही के साथ बैठकर गए ताकि लोकर की चाभी ले आ सकें। रास्ते में सेठजी ने बताया कि वे तीन आना लेकर आए थे और उसमें से यह सब बनाया । सिपाहियों ने उन्हें मोह छोड़ने को कहा क्योंकि कोई ऊपर कुछ भी नहीं ले जाता है। इस पर सेठजी ने सिपाही को कहा कि वह चाहकर भी यह मोह नहीं छोड़ पा रहे हैं तभी एक सिपाही ने सेठजी को धक्का देकर गिरा दिया और तीन आना देकर कहा कि हम खुदाई फौजदार हैं। हम आपको इस मोह से मुक्त करते हैं। सेठजी सिर पकड़कर बैठ गये और विक्षिप्त नेत्रों से मोटरकार को देखते रहे।

प्रेमचंद की कहानियों में एक महान रचनाकार की प्रचुरता और विविधता है। सबसे बड़ी बात यह है कि वह अपनी बात को किसी कथानक में दोहराते नहीं हैं। प्रेमचंद हिन्दुस्तान के उन थोड़े से कलाकारों में है जो हिन्दू और मुसलमान दोनों पर समान अधिकार से लिख सकते हैं। वह बच्चों, बूढ़ों, सधवाओं, विधवाओं और पढ़ी-लिखी स्त्रियों, अनपढ़ किसान, स्त्रियों को समान अधिकार आदि का सफलता के साथ निर्वाह एवं चित्रण किया है। उनकी सबसे सफल कहानियाँ उन्हें कहा जा सकता है जिसमें किसानों के जीवन का चित्रण किया गया है। किसानों में भी अन्ध विश्वास है, राग-द्वेष है, एक

दूसरे के खेतों का नुकसान पहुॅंचाने आदि का चित्रण मिलता है फिर भी इनमें मनुष्यता को प्रकाशित करना प्रखर है। प्रेमचंद अपनी कहानियों एवं अन्य रचनाओं के माध्यम से हमे जनता में विश्वास करना तथा उसके लिए अपना जीवन बिताने की कला सिखाते हैं।

प्रेमचन्द जी का कहानी साहित्य हमारे जातीय-जीवन का दर्पण है। हिन्दी भाषी जनता के उत्कृष्ट गुण उनके पात्रों में झलकते हैं। उनके अधिकांश पात्र हास्य प्रेमी, जिन्दादिल कठिन परिस्थितियों का धैर्यता से मुकाबला करने वाले अन्याय के सामने सिर न झुकाने वाले होते हैं। प्रेमचंद ने इन सब चीजों को जनता में देखा था इसीलिए अपनी रचनाओं के माध्यम उसे चित्रित करने की कोशिश भी की है।

उनकी भाषा शैली की चित्रमयता, भाषा पर असाधारण अधिकार, चरित्र-चित्रण का कौशल और हर जगह पर व्यंग्य और हास्य ढूॅंढ़ लेने की उनकी क्षमता उन्हें एक प्रभावशाली कलाकार बनाती है। उनकी सहृदयता और मानवप्रेम उन्हें जनता का प्रिय कलाकार बना देता है।

सन्दर्भिका

1. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 202
2. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 203
3. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 208
4. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 235
5. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 238
6. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 243
7. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 89
8. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 90
9. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 90
10. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 92
11. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 93
12. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 128-129
13. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 131
14. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 155
15. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 157
16. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 170
17. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 174
18. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 174
19. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 196
20. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 197-198
21. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 200
22. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 209-210
23. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 214
24. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 215
25. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 216
26. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 229

27. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 230
28. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 234
29. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 252-253
30. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 259
31. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 259
32. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 276-277
33. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 278
34. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 278
35. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 284
36. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 285
37. कहानीकार प्रेमचंद: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-82
38. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 298
39. प्रेमचन्द और गॉधीवाद-रामदीन गुप्त, पृ.289
40. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 304
41. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.85
42. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ. 49
43. प्रेमचन्द और गॉधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-293
44. प्रेमचन्द : एक विवेचन- डॉ. इन्द्रनाथ मदान, पृ.-129
45. प्रेमचन्द : एक विवेचन- डॉ. इन्द्रनाथ मदान, पृ.-130
46. प्रेमचन्द का कथा संसार-संपादक, डॉ. बादामसिंह रावत, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, डॉ. राजेन्द्र कुमार गढवलिया, पृ.-64
47. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-123
48. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-124
49. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-43
50. कहानीकार प्रेमचन्द-डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-87
51. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-79

52. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना-डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-239
53. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-81
54. प्रेमचन्द का कथा संसार-संपादक, डॉ. बादामसिंह रावत, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, डॉ. राजेन्द्र कुमार गढवलिया, पृ.-68
55. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-161
56. प्रमेचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-162
57. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉं, पृ.-54
58. प्रेमचन्द- डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-147-148
59. प्रेमचन्द- डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-147-
60. प्रेमचन्द- डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-148
61. प्रेमचन्द और भारतीय किसान-डॉ. रामवृक्ष, पृ.-224
62. प्रेमचन्द और भारतीय किसान- डॉ. रामवृक्ष, पृ.-224
63. प्रेमचन्द का कथा संसार-संपादक, डॉ. बादामसिंह रावत, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, डॉ. राजेन्द्र कुमार गढवलिया, पृ.-70
64. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना-डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-115
65. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-62
66. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉं, पृ.-84
67. प्रेमचन्द और गॉंधीवाद- डॉ. रामदीन गुप्त, पृ.-284
68. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-111
69. हिन्दी पत्रकारित- प्रेमचन्द और हंस-डॉ. रत्नाकर पाण्डेय, पृ.-131
70. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-105
71. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-105
72. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉं, पृ.-84
73. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-98-99
74. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-99
75. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-94
76. प्रेमचन्द और भारतीय किसान- डॉ. रामवृक्ष, पृ.-157

77. कहानीकार प्रेमचन्द-डा. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-95
78. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.111
79. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-95
80. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-95
81. प्रेमचन्द जीवन कला और कृतित्व- हंसराज रहबर, पृ.-255
82. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-88
83. प्रेमचन्द जीवन कला कृतित्व- हंसराज रहबर, पृ.-256
84. प्रेमचन्द भारतीय साहित्य-संदर्भ- डॉ. निर्मला जैन, पृ.- 47
85. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.- 287
86. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-302
87. प्रेमचन्द और गॉधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.- 304
88. प्रेमन्द और उनका युग- रामविलास शर्मा, पृ. 145
89. प्रेमचन्द और भारतीय किसान- डॉ. रामवृक्ष, पृ.-159
90. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-119
91. प्रेमचन्द- डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-153
92. प्रेमचन्द- डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-153
93. प्रेमचन्द का कथा संसार-संपादक, डॉ. बादामसिंह रावत, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, डॉ. राजेन्द्र कुमार गढवलिया, पृ.-72
94. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-47
95. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-59-60
96. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-114
97. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-46
98. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-47
99. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-166
100. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-240-241
101. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-241-242
102. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-50

103. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहाँ, पृ.-87
104. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-53
105. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-53
106. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहाँ, पृ.-93
107. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-304
108. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-304
109. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहाँ, पृ.-80
110. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहाँ, पृ.-80
111. प्रेमचन्द और गॉधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.- 294
112. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहाँ, पृ.-43
113. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहाँ, पृ.-83
114. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-302-303
115. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-114
116. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-306
117. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-305-306
118. प्रेमचन्द तथा शैलेष मटियानी की कहानियों में दलित विमर्श-डॉ. कल्पना गवली, पृ.-91-92
119. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-145-146
120. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ. -108-109
121. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-233
122. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-111
123. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-107
124. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ.कुमारी नूरजहाँ, पृ.-72
125. प्रेमचन्द का कथा संसार-संपादक, डॉ. बादामसिंह रावत, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, डॉ. राजेन्द्र कुमार गढवलिया, पृ.-93
126. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ.कुमारी नूरजहाँ, पृ.-96

127. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ.कुमारी नूरजहॉ, पृ.-97-98
128. दलित साहित्य (वार्षिकी) 2005 संपादक- जयप्रकाश कर्दम, पृ.-32
129. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कॉतिमोहन, पृ.-147-148
130. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कॉतिमोहन, पृ.-147-148
131. प्रेमचन्द और भारतीय किसान- डॉ. रामवृक्ष, पृ.-201:202
132. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-73
133. प्रेमचन्द का कथा संसार-संपादक, डॉ. बादामसिंह रावत, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, डॉ. राजेन्द्र कुमार गढवलिया, पृ.- 63
134. प्रेमचन्द और गॉधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-125-126
135. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-128
136. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-70
137. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-245-246
138. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-76
139. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-159
140. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-70-71
141. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-159
142. प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना-डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-236
143. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-162
144. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कॉतिमोहन, पृ.-162-163
145. प्रेमचंद तथा शैलेष मटियानी की कहानियों में दलित विमर्श- डॉ. कल्पना गवली, पृ. -102
146. प्रेमचन्द और गॉधीवाद-रामदीन गुप्त, पृ.-290
147. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-137
148. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-139
149. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कुमारी नूरजहॉ, पृ.-52
150. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-134-135
151. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-237-238

152. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-238
153. कहानीकार प्रेमचन्द-डॉ. सुशील कुमार फुल्ल एवं आशु फुल्ल, पृ.-87
154. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-72
155. कहानीकार प्रेमचन्द- डॉ. कमुारी नूरजहॉं, पृ.-67
156. प्रेमचन्द : एक विवेचन- डॉ. इन्द्रनाथ मदान, पृ.-134
157. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-60
158. प्रेमचन्द और गॉंधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-285
159. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, पृ.-64
160. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-114
161. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-239
162. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-149
163. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-152-153
164. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-232
165. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-63
166. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-100
167. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-171
168. प्रेमचन्द : डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-161
169. प्रेमचन्द : डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-160
170. कहानीकार प्रेमचन्द : डॉ. कुमारी नूरजहॉं, पृ.-63
171. प्रेमचन्द भारतीय साहित्य-संदर्भ- डॉ. निर्मला जैन, पृ.-43
172. हिन्दी पत्रकारिता : प्रेमचंद और हंस- डॉ. रत्नाकर पाण्डेय, पृ.-135
173. हिन्दी पत्रकारिता : प्रेमचंद और हंस- डॉ. रत्नाकर पाण्डेय, पृ.-132
174. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-235
175. प्रेमचन्द और अछूत समस्या- कांतिमोहन, पृ.-154
176. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-112
177. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-76
178. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-111

179. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-233
180. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-116
181. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-295-296
182. प्रेमचन्द : डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-164
183. कहानीकार प्रेमचंद- डॉ. कुमारी नूरजहॉं, पृ.-61
184. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-293
185. कहानीकार प्रेमचंद- डॉ. सुशील कुमार फुल्ल एवं आशु फुल्ला, पृ.-86
186. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-94
187. प्रेमचंद और भारतीय किसान- डॉ. रामवक्ष, पृ.- 157
188. प्रेमचन्द : डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-145
189. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-113
190. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-110
191. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-113
192. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-110
193. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉं- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-1, पृ. 24
194. कहानीकार प्रेमचंद- डॉ. कुमारी नूरजहॉं, पृ.-74
195. हिन्दी पत्रकारिता : प्रेमचंद और हंस- डॉ. रत्नाकर पाण्डेय, पृ.-126
196. हिन्दी पत्रकारिता : प्रेमचंद और हंस- डॉ. रत्नाकर पाण्डेय, पृ.-126
197. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-117
198. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-122
199. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-117-118
200. कहानीकार प्रेमचंद- डॉ. कुमारी नूरजहॉं, पृ.-53
201. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-120
202. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-89
203. प्रेमचंद और भारतीय किसान- डॉ. रामवृक्ष, पृ.-160
204. प्रेमचंद और गांधीवाद, डॉ. रामदीन गुप्त, पृ.- 292-293
205. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-48

206. प्रेमचन्द भारतीय साहित्य-संदर्भ- डॉ. निर्मला जैन, पृ.-49
207. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-56
208. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-56
209. प्रेमचंद और भारतीय किसान- डॉ. रामवक्ष, पृ.- 161
210. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-116-117
211. प्रेमचन्द भारतीय साहित्य-संदर्भ- डॉ. निर्मला जैन, पृ.-49
212. हिन्दी पत्रकारिता : प्रेमचंद और हंस- डॉ. रत्नाकर पाण्डेय, पृ.-128
213. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-245
214. प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना- डॉ. बलवन्त साधू जाधव, पृ.-244-245
215. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-285
216. प्रेमचन्द : डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-159
217. कहानीकार प्रेमचन्द: रचनादृष्टि और रचनाशिल्प-शिवकुमार मिश्र, पृ.-285
218. प्रेमचन्द और गांधीवाद- रामदीन गुप्त, पृ.-295
219. प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियॉ- कान्ति प्रसाद शर्मा, भाग-2 पृ. 173
220. प्रेमचन्द : डॉ. जगतनारायण हैकरवाल, पृ.-162-163
221. प्रेमचन्द भारतीय साहित्य-संदर्भ : डॉ. निर्मला जैन, पृ.-38